Peer Reviewed Journal for M.Phil. , Ph.D. & Appointment of Teacher in Universities & College

ISSN : 2454-4655 VOLUME - 5 No. : 4 May - 2019

International Journal of Social Science & Management Studies

Referred & Review Journal

Indexing & Impact Factor 3.9

Indian Tech

GLOBAL CERTIFICATION SERVICES

ISRS International

UKAF

International Journal of Social Science & Management Studies

International Journal of
Social Science & Management Studies

CONTENTS

S. No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	कल्चुरी वास्तुकला का अनोखा पुरातत्त्व : नोहलेश्वर शिव मन्दिर	डॉ. चौधुरी शिवव्रत महान्ति	1-4
2	हिन्दी समाचार–पत्रों में संपादकीय विभाग की प्रबंधन व्यवस्था का विश्लेषण	सतेन्द्र नगायच	5-9
3	कक्षा नवमीं के गणित विषय हेतु गतिविधि शिक्षण का विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि एवं विद्यार्थियों की प्रतिकिया बीना शहर के विशेष संदर्भ में	डॉ. कालिका यादव वर्षा कापसे	10-12
4	छायावाद और मानव मूल्य	डॉ. भावना शुक्ल	13-17
5	बौद्ध धर्म में नारी स्वतंत्रता	डॉ0 बसंत कुमार	18-20
6	जबलपुर मण्डल में कर्मचारियों के मध्य भारतीय जीवन बीमा निगम की कार्यप्रणाली के संबध में संतुष्टि स्तर का अध्ययन	सुप्रभा	21-28
7	ग्रामीण मानव संसाधन विकास की योजनाओं का अध्ययन	डॉ. शिवेन्द्र शर्मा	29-32
8	छतरपुर जिले की राजनीतिक एवं प्रशासनिक पृष्ठभूमि	डॉ. राधिकेश जोशी	33-34
9	चौदहवीं–पन्द्रहवीं सदी में मिथिला की सामाजिक स्थिति : एक अवलोकन	अविनाश कुमार झा	35-40
10	शहरी गरीबों पर जे.एन.आर.यू.आर.एम. के प्रभावों का अध्ययन इन्दौर शहर की गंदी बस्तियों के विशेष सन्दर्भ में	निखिल कुलमी आर के शर्मा	41-47
11	आंगनवाडी केन्द्र जाने वाली ग्रामीण गर्भवती महिलाओं में पोषण सम्बन्धी शिक्षा का मूल्यांकन	माया सालवी मंजू पाटनी	48-54
12	आधुनिकीकरण का भील जनजाति की व्यवसायिक गतिशीलता व सामाजिक प्रस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन	कल्पना भण्डारी	55-63
13	गुप्तों की साम्राज्यवादी नीति में सामंतवादी व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन	प्रमिला डेहरिया	64-65
14	भारतीय समाज में घरेलू हिंसा का स्वरूप	आकांक्षा चौरसिया	66-68
15	महिलाओं के लिये संवैधानिक अधिकार एवं अधिनियम	मनीष पांडेय	69-70
16	योग की जान सूर्य नमस्कार	डॉ. लालजीत पचौरी	71-72
17	वर्तमान साहित्य में सामाजिक समरसता की चुनौती	प्रीती सिंह	73-76
18	अपराध का समाज पर प्रभाव एवं नियंत्रण हेतु किये जा रहे प्रयास का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. मिर्जा मोजिज बेग	77-79
19	बीमा विधि के अंतर्गत बिमित व्यक्तियों के अधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन	संगीता पंद्राम	80-82
20	भारतीय राजनीति में धर्म क प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन	83-87

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

कल्चुरी वास्तुकला का अनोखा पुरातत्त्व : नोहलेश्वर शिव मन्दिर

डॉ. चौधुरी शिवव्रत महान्ति
निर्देशक, कृष्णराव शोध संस्थान एवं मानद व्याख्याता–प्रा.शा.इतिहास, संस्कृति व पुरातत्त्व,रा.दु.वि.वि.,जबलपुर

जबलपुर से दमोह जाने वाले मार्ग पर 90 किलोमीटर उत्तर में एवं दमोह से 19 किलोमीटर दक्षिण में व्यारमा एवं गौरया नदियों के संगम पर नोहटा कस्बा (23''40' उत्तर, 79''34' पूर्व, जबेरा तहसील, दमोह जिला) स्थित है। कलचुरीकालीन कला एवं स्थापत्य के लिए यह स्थान प्रसिद्ध रहा है। इसी काल में नोहटा कस्बा के दक्षिण में एक भव्य मंदिर का निर्माण करवाया गया जिसे आज महादेव मंदिर के नाम से जाना जाता है। स्थानीय लोग इसे नोहलेश्वर मंदिर के नाम से भी पुकारते हैं। ऐसा माना जाता है कि इस मंदिर का निर्माण कलचुरी वंश के शासक युवराजदेव प्रथम की महारानी गुजरात के चालुक्य वंशी शासक अवनिवर्मा की पुत्री नोहला देवी ने 950–960 ई. में करवाया था। अतः संभवतः नोहलादेवी के नाम पर इस मंदिर का नाम नोहलेश्वर पड़ा होगा। कटनी के समीप स्थित प्राचीन बिलहरी से प्राप्त युवराजदेव द्वितीय के अभिलेख में नोहलादेवी द्वारा मंदिर बनवाने तथा उनके द्वारा अघोरशिव नाम के विद्वान को इस मंदिर का अध्यक्ष नियुक्त करने का उल्लख है। अभिलेख में मठ निर्माण का उल्लेख है परंतु स्थान का नाम नहीं दिया गया है न ही नोहटा के इस मंदिर से अन्य कोई अभिलेख ही प्राप्त है। अतः यह कहना की नोहला देवी ने इस मंदिर का निर्माण कराया था, अनुमान मात्र यह विवाद का विषय है। इसे शिव मंदिर' कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। इस मंदिर की यह विशिष्टता है कि सम्पूर्ण संरचना में से मण्डप की रचना तत्कालीन मंदिर निर्माण परम्परा से थोड़ा भिन्नता लिए हुए है और यही भिन्नता ही उसे इस काल एवं क्षेत्र में विशिष्ट स्थान प्रदान करती है।

निकट के खानों से प्राप्त उत्तम कोटी के बलुआ पत्थर से इस उत्तर–पश्चिम मुखी मंदिर का निर्माण किया गया है फलस्रूप इसकी प्राचीन भव्यता आज भी बनी हुई है। मंदिर के मण्डपों के स्त्म्भो की बनावट में एकरूपता का अभाव दिखलाई देता है जिससे यह आभास होता है कि जर्जर मण्डप को अतिरिक्त स्तम्भों का सहारा देकर संरक्षित अथवा पुनः निर्मित किया गया है। इस मंदिर का छायाचित्र हेनरी कॉजेंस द्वारा 1892–94 में लिया गया था। उस छायाचित्र के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि पहले भी मण्डप को सुरक्षित रखने हेतु अतिरिक्त स्तम्भ लगाकर उसे गिरने से बचाया गया था। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चरणों तक इस मन्दिर के मण्डप एवं गर्भगृह के शिखर गिर चुके थे जिसके वास्तुखण्ड छायाचित्र में भूमि पर पड़े दिखलाई देते हैं। कालान्तर में इन्हीं वास्तु अवशेषों एवं नए पत्थरों को लगाकर मन्दिर का पुनःनिर्माण किया गया।

भूमिन्यास :– मन्दिर विशाल आयताकार लगती पर निर्मित है, इस पर चारों ओर खुले प्रदक्षिणापथ हेतु स्थान छोड़ते हुए मन्दिर को निर्मित किया गया है। जगती एवं अधिष्ठान पर पहुँचने हेतु सीढ़ियों की व्यवस्था है। निरंधार श्रेणी के इस मन्दिर के प्रमुख तीन भाग हैं– 1. अर्धमण्डप, 2. मण्डप तथा 3. गर्भगृह। तीन ओर से खुला हुआ वर्गाकार अर्धमण्डप माप में छोटा है एवं चार स्तम्भों एवं दो अर्धस्तम्भों की आयताकार योजना पर आधारित है अर्धमण्डप से जुड़ा हुआ द्वार युक्त आयताकार मण्डप है जिसकी मूल अवस्था में बीच में चार एवं दोनों पार्श्वों पर कुल आठ स्तम्भों की योजना दिखलाई देती है। मन्दिर के संरक्षण को दृष्टिगत रखते हुए कालान्तर में ऊपरी रचना को सहारा देते हुए अन्य स्तम्भ सथापित किए। दोनों द्वारों के पार्श्वों पर कुल चार अर्धस्तम्भों की व्यवरूथा है। अन्तराल छोटा है जो वर्गाकार गर्भगृह को जोड़ता है। भीतर से गर्भगृह वर्गाकार है एवं बाहर से उसकी योजना ऊर्ध्वविन्यासः सादे पत्थरों से निर्मित जगती लगभग चार फुट ऊँची है एवं इसकी फर्श को समतल पटियों से आच्छादित कर निर्मित किया है। मंदिर का

अधिष्ठान पाँच प्रकार के गढ़न एवं दो अन्तरपट्ट, से अलंकृत है जिनमं सबसे नीचे पत्र अलंकरण युक्त कुम्भ एवं उसके ऊपर क्रमशः छाद्य, पतला कलश, अन्तरपट्ट, पुष्पपट्टिका, पुनः अन्तरपट्ट एवं चन्द्रशाल से अंलकृत छाद्य का गढ़न है। अधिष्ठान के दोनों पार्श्वों पर प्रतिमा युक्त तीन–तीन एवं सामने दोनों ओर एक–एक छोटे–छोटे स्तम्भित आले (मण्डप) हैं। मंदिर के मण्डप की जंघा का निचला भाग वेदिबन्ध (वेदिका सदृश) से निर्मित है जिसका ऊपरी क्षैतिज भाग स्तम्भों को घेरे हुए छज्जानुमा भीतर की ओर निकला हुआ है, जिस पर बैठा जा सकता है। इसके ऊपर का भाग बरंडिका तक प्रकाश एवं वायु हेतु खुला छोड़ दिया गया है। कृष्णदेव ने इसे काक्शासन कहाँ है' परंतु खजराहों के मंदिर के समान यहाँ काक्शासन निर्मित नहीं हैं। गर्भगृह की जंघा का भाग क्षैतिज अमालिकाओं अथवा खाद्य पट्टिकाओं द्वारा चार भागों में विभाजित है। निचला भाग छोटे एवं विस्तृत कुट, कलश एवं खाद्य जैसे गढ़न से युक्त है जिन पर स्वतंत्र एवं शिखर युक्त स्तम्भित मण्डपों में विभिन्न देवी–देवताओं प्रतिमाएँ उकेरी गई हैं। इसी प्रकार खाद्य के ऊपर आन्तरिक ऊर्ध्व पट्टिकाओं पर गज–व्याल एवं उभरी हुई पट्टिकाओं अथवा रथिकाओं पर विभिन्न प्रकार के देवी–देवताओं की प्रतिमाओं का अलंकरण सम्पूर्ण गर्भगृह की बाहरी दीवार पर किया गया है जो आमालिका अथवा खाद्य पट्टिका से मण्डित हैं। चन्द्रशाल अलंकरण युक्त पट्टिका का नियोजन है। पुनः सभी पर बाहर की ओर उभरी हुई खाद्य पट्टिका का अंकन है। ऊपर मुख्य भद्रों पर देवी–देवताओं की एवं आन्तर–ऊर्ध्व पट्टिकाओं एवं सह–रथिकाओं पर विभिन्न कियाकलापों में लिप्त सुर–सुन्दरियों की कलाकृतियाँ उत्कीर्ण हैं और वे उभरी हुई आमालिका से मण्डित हैं।

गर्भगृह की बरंडिका पर चन्द्रशाल अलंकरण युक्त रथिकाओं एवं सह–रथिकाओं के खण्ड हैं जो व्यालमुख पट्टिका से मण्डित हैं। अर्धमण्डप एवं मण्डप के स्तम्भों एवं अर्धस्तम्भों पर टिकी हुई बरंडिका कुल छः भागों में क्षैतिज रूप में विभाजित है जबकि मण्डप पर आठ भागों में विभाजित है। सबसे नीचे सर्पिलाकार पुष्प–वल्लरी पट्टिका, उसके ऊपर क्रमशः आन्तरपट्ट, छाद्यपट्टिका, खिले हुए पुष्प एवं पट्टिका–त्रिकोण से अलंकृत आन्तरपट्ट, छाद्य, पूर्व के समान अलंकृत आन्तरपट्ट एवं छाद्य हैं। मण्डपों की छत खपरेल पद्धति पर ऊपर की ओर चारों दिशाओं से घटते क्रम में क्षैतिज पट्टिकाओं के रूप में चतुष्फलकीय आकृति देते हुए निर्मित हैं। अर्धमण्डप पर पट्टिका–त्रिकोण की बडेरी के अंश विद्यमान हैं परंतु छत पर आमलक नहीं है, सम्भवता वह गिर गया है। मण्डप के छत के मध्य भाग पर पुष्पघंटा बेकी पर स्थित है जो आमलक से मण्डित है उसके ऊपर क्रमशः छोटा घंटा, पुष्प एवं पट्टिका त्रिकोण से अलंकृत यष्टि, आमलक एवं कलश स्थापित हैं। मण्डप के छत एवं आमलकों की योजना अर्थात् दोनों आमलकों मध्य अधिक अधिक दूरी इस मंदिर की विशिष्टताओं में सम्मिलित हैं। गर्भगृह का शिखर पंचरथ पद्धति पर भीतर की ओर घुमाव लेते हुए निर्मित है। भद्रों को पूर्ण रूप से अलंकृत करने हेतु परम्परागत विधि से चन्द्रशाल (जालक) आकृतियों से उकेर दिया गया है। कर्णिकापाग पर पाँच आमलकभूमि योजना दिखलाई देती है। आश्चर्य की बात यह कि गर्भगृह के शिखर के सामने, मण्डप एवं शिखर से लगा हुआ अन्तराल के भाग पर छोटी सी सुकनासिका बनाई गई है जो छुपी हुई सी है। शिखर के ग्रीवा पर वृत्ताकार दन्तित शिलाखण्ड स्थापित है जो विशाल आमलक, घंटा एवं कलश मण्डित है। शिखर पर आमलक होने के कारण यह नागर शैली का शिखर है। साथ ही शिखर के कानों पर भूमिआमलकों की व्यवस्था भी नागर शिखर होने को प्रमाणित करती है।

स्तम्भ योजना :– अर्धमण्डप के स्तम्भों की योजना फलक एवं अर्धस्तम्भों की वर्गाकार पद्धति पर आधारित है। गढ़न युक्त अठपहलू आधार पर अठपहलू यष्टि है जिसे ऊपर सोलह पहलू एवं लगभग वृत्ताकार रूप में तराशा गया है। सामने के दोनों स्तम्भों की यष्टि के मध्य में चारों दिशाओं में भारवाहकों की आकृतियाँ उकेरी गई हैं, जबकि अन्य दो स्तम्भों पर ऐसा अलंकरण नहीं है। स्तम्भ का शीर्ष पात्र परम्परा पर आधारित है। बाहर की ओर फैलते हुए गढ़न युक्त वृत्तकार पात्र पर बाहर की ओर निकले हुए चार ब्रैकेट हैं जिको चर्तुहस्त भारवाहकों की आकृतियों से अंलकृत किया गया है। इन भारवाहकों के ऊपर के दोनों हाथ ऊपर के भार को साधे हुए प्रदर्शित हैं। अर्धस्तम्भों के गढ़न युक्त आधार के ऊपर सामने की ओर नारी की आकृति का अंकन है। वर्गाकार यष्टि के मध्य में नीचे से ऊपर की ओर अलंकृति पट्टिका का अंकन है वर्गाकार यष्टि के मध्य नीचे से ऊपर की ओर अलंकृति पट्टिका का अंकन प्रत्येक फलक पर है जो ऊपर क्षैतिज पट्टिका तक विस्तृत है। स्तम्भ शीर्ष पर

घट–पल्लव का अंकन है जिसके ऊपर बाहर की ओर फैलता हुआ गढ़न युक्त वर्गाकार पात्र है, उसके ऊपर गढ़न युक्त ब्रैकेट हैं। द्वार की ओर विस्तृत भीतरी ब्रैकेट पर मानव आकृति का अंकन है। मण्डप के दोनों पार्श्वो के चार–चार स्तम्भ, मध्य में स्थित चार स्तम्भ एवं अरून स्तम्भ इसी अर्धस्तम्भ के अलंकरण पद्धति पर आधारित है अन्तर यह है कि मण्डप के स्तम्भों के गढ़न युक्त वर्गाकार आधार पर अतिरिक्त घट–पल्लव का अंकन किया गया है, इसके अतिरिक्त अठपहलू पट्टिकाओं का समावेश कर स्तम्भों को और आकर्षक बनाने का प्रयास किया गया है। मंदिर के पुनरूद्धार के समय अन्य अनेक स्तम्भ स्थापित किए गए जिससे कमजोर पड़ चुके मंदिर को सहारा दिया जा सके ये स्तम्भ मूल मंदिर के स्तम्भ नही हैं।

प्रवेशद्वार :– इस मंदिर की यह भी विशिष्टता है कि इसमें दो अलंकृत प्रवेशद्वारों का समावेश किया गया है। एक मण्डप के प्रवेशद्वार के रूप में दूसरा गर्भगृह के प्रवेशद्वार के रूप में। आमतौर पर मण्डप में प्रवेशद्वार का नियोजन नहीं होता है परंतु यहाँ इस मंदिर में इसकी योजना ठीक गर्भगृह के प्रवेशद्वार की योजना के अनुरूप निर्मित है गुप्तकाल से आरंभ हुई गंगा एवं जमुना का अंकन इस प्रवेश द्वार पर दिखलाई देता है ऐसा प्रतीत होता है कि द्वार पर इनके अंकन का उद्देश्य यह रहा है कि अपवित्र मानव गंगा–जमुना में स्नान कर पवित्र होकर मंदिर जैसे पवित्र एवं पूजित स्थान जैसे मण्डप अथवा गर्भगृह में प्रवेश करेगा। इसी प्रकार द्वार पर किए गए देवी–देवताओं के अंकन से वहाँ से प्रवेश करने वाले मावन को उनका आशीर्वाद भी प्राप्त होगा। यही नही ऐसा प्रतीत होता है कि द्वार पर अन्य सभी प्रकार के अंकनों का प्रभाव के प्रवेश के समय उस पड़े, की द्वार अंलकरण का रहा है।

मण्डप का द्वार बड़ी ही भव्यता से अलंकृत किया गया है देहली के मध्य में सूँड़ एवं सामने के पैर उठाए हाथियों का अंकन है जो सम्भवतः बीच के अज्ञात अंकन (सम्भवता शिव लिंग) के पूजार्थ उद्यत प्रतीत होते है इनके ओर मकरमुख पर विराजे भक्तगणों का अंकन है। उससे लगे हुए दृश्य में मानव, सिंह एवं गज के युद्धका अंकन है। उसके बाई ओर ललितासन मुद्रा में बैठे हुए वतुर्भुजी एव त्रिमुखी ब्रम्हा का अंकन है जो अपनी बाईं जंघा पर अपनी शक्ति को बैठाए हुए प्रदर्शित हैं। इसी प्रकार दाई ओर चतुर्भुजी लक्ष्मीनारायन का अंकन है ऊपर द्वार तीन शाखाओं एवं उप–शाखओं में विभक्त है– बाहर से भीतर की ओर तलाशाखा, मिथुनशाखा एवं पुष्पशाख है । घट के निकलते हुए के निचले भ्र पर एक ओर भैरव की खड़ी आकृति का अंकन है तो है। तो दूसरी ओर एक अज्ञात पुरूष (सम्भवतः भैरव) आकृति का, लता के घुमाओं के मध्य में मानव की युगल आकृतियाँ उकेरी गई है मध्य की मिथुनशाखा पर युगल आकृतियाँ दोनों ओर की उपशाखों पर नृत्य करती हुई मानव आकृतियाँ अंकित हैं। इस शाखा को साधे हुए भारवाहक का अंकन है। इसके निचले भाग पर बाईं ओर कच्छप पर खड़ी हुई यमुना तथा ओर मकर पर खड़ी हुई गंगा की आकृतियाँ डाल पकड़े हुए सेविकाओं के साथ द्विछत्र नुमा वृक्ष के नीचे अंकित हैं। नीचे खिले पद्म पुष्प पट्टिका का अंकन है। द्वार के ललाटबिम्ब पर वृषभ सहित नटराज की दोनों छोरों पर नारी की खड़ी आकृतियाँ हैं। मध्य के क्षैतिज भाग को तीन पट्टिकाओं में विभाजित किया गया है। नीचे की पट्टिका पर पुष्प, मध्य की पट्टिका पर माला धारी गंधर्व जिसके दोनों छोरों पर हाथ जोड़ भक्त हैं तथा ऊपरी पट्टिका पर वनग्रह की आकृतियाँ ही भव्यता से उकेरी गईं। किनारे अन्य मानव आकृतियाँ हैं। तथा ऊपरी पट्टिका पर मध्य में महेश, बाई ओर ब्रम्हा तथा दाईं ओर विष्णु की ललितासन में बैठी हुई आकृतियाँ हैं। शिव के दोनों ओर छः दिकपालों की त्रिभंग मुद्रा में खड़ी हुई आकृतियाँ उकेरी हुई है। सबसे ऊपर लताशाखा के मध्य में कीर्तिमुख का अंकन है।

गर्भगृह का द्वार भी उक्त द्वार के समान ही है। अंकन के अभिप्रायों में कुछ थोड़ी सी ही भिन्नता है। नीचे बाईं ओर सरस्वती एवं दाईं ओर गजलक्ष्मी का अंकन है। ललाटबिम्ब पर ललितासन में विराजमान शिव, बाईं ओर खड़ी ओर मुद्रा में ब्रम्हा एवं उनकी शक्ति तथा दाईं ओर लक्ष्मीनारायण की आकृतियाँ हैं, शेष आकृतियाँ मण्डप के द्वार के समान ही हैं।

वितान :– मंदिर के अर्धमण्डप एवं मण्डप के वर्गाकार वितानों के खिले हुए पद्म पुष्पों से अलंकृत किया गया है। कोनों पर बने हुए गहरे छिद्रों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि नीचे लटकते हुए झूमर की यष्टि को उनमें स्थापित किया गया होगा जो मण्डप की भव्यता की वृद्धि में सहायक रहे होंगे। मण्डप के वितान के वर्गो में से केन्द्र के वर्ग में चान्द्रिक कटावों एवं विभिन्न प्रकार के अलंकरण अभिप्रायों का भव्य अंकन दिखलाई

देता है, शेष वर्गो में केवल खिले हुए कमल पुष्पों का अंकन है। किनारों पर संभवतः देव आकृतियाँ, दिक्पाल, नवग्रह, कोनों पर कीर्तिमुख, खिले हुए पुष्प आदि का अंकन है जो धूमिल हो चुके होने के कारण बहुत स्पष्ट नहीं हैं।

कला :– कला के दृष्टिकोण यह मंदिर पूर्वमध्यकालीन कला अभिप्रयों से परिपूर्ण है। द्वार एवं मंदिर की बाहरी दीवारों पर विभिन्न प्रकार की कलाकृतियाँ अपनी भव्यता की ओर संकेत करती हैं। अधिष्ठान से उल्टा पद्म–छत्र (खाद्य प्रकार की कपोत) युक्त स्तम्भित मण्डपों में गजलक्ष्मी, वैष्णवी, सरस्वती, ब्रह्माणी, इन्द्राणी, गौरी आदि की प्रतिमाएँ उकेरी गईं। मंदिर की बाहरी दीवार (जंघा) पर प्रमुख रूप से तीन क्षैतिज पंक्तियों में कलाकृतियों का अंकन किया गया है। सबसे नीचे के कुम्भ कढ़न पर बहुत सी छोटी–छोटी सी मूर्तियों को आलो में उकेरा गया है। ऊपर की दो पंक्तियाँ कला के दृष्टिकोण से उल्लेखनीय हैं। बीच की क्षैतिज पंक्ति में बाहर की ओर उभरी हुई बड़ी प्रतिमाएँ हैं। इन प्रतिमाओं के मध्य में अन्दर की ओर गज–व्याल मूर्तियाँ स्थापित की गई हैं। मंदिर की जंघा को नटराज, चामुण्डा ब्रम्हा, पार्वती, शिव, सरस्वती, पीछे (दक्षिणी भद्र) के मुख्य भद्र पर पद्मछत्र से मण्डित स्तम्भित आले में अंधकांतक शिव, पश्चिमी भद्र के आले में नटराज एवं पूर्वी भद्र के स्तम्भित आले वीणा धर शिव (चित्र–6) की प्रतिमाएँ, इन्द्र, सूर्य, अग्नि की प्रतिमाएँ संगीत बजाते हुए एवं नृत्य करते हुए नर एवं नारी की आकृतियाँ, सुर–सुन्दरी, पैर का काँटा निकलवाते हुए नारी, सिंह–मुख, गज–व्याल भारवाहक आदि की मूर्तियाँ, मंदिर की वास्तुगत विशिष्टताओं को दृष्टिगत रखते हुए सजाई गई हैं।

मन्दिर के मूल अवयव तत्कालीन वास्तु परंपरा के अनुकूल हैं, परंतु गर्भग्रह के शिखर को छोड़कर अर्धमण्डप एवं मण्डप के शिखर स्थानीय शैली के अनुकरण पर निर्मित हैं जो कलचुरीकालीन मण्डप निर्माण शैली की विविधता की ओर संकेत करता है। दूसरी ओर मन्दिर के विभिन्न वास्तु अवयवों को अलकृंत करने हेतु पुष्पवल्लरी अथवा लता का प्रयोग इस मंदिर में हुआ है जो वनस्पति से मानव के लगाव अथवा अभिरूचि को दर्शाता है। देवी प्रतिमाओं का भरपूर प्रयोग हुआ है जो मातृपूजन को प्रेरित करता है। मंदिर पर त्रिदेवों में से शिव से सम्बन्धित प्रतिमाओं के अंकन की बहुलता है। गज–व्याल का अंकन भरपूर हुआ है जो आकर्षक ढंग से उकेरे गए हैं। इस प्रकार तत्कालीन समय में हिन्दू धर्म से सम्बन्धित विभिन्न देवी–देवताओं की प्रतिमाओं एवं पुष्पवल्लरी के अंकनों के साथ यह मंदिर विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों एवं प्रकृति के मध्य सामन्जस्य स्थापित करने की दिशा में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता रहा होगा।

सन्दर्भ :–

1. कोर्पस ऑफ इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम, 4, भाग 1, पृ. 204–205.
2. शर्मा, आर. के., मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के पुरातत्व का सन्दर्भ ग्रन्थ, पृ. 432.
3. कृष्णदेव, टेम्पुल्स ऑफ इण्डिया, वो. 1, पृ. 161–62.

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

हिन्दी समाचार पत्रों में संपादकीय विभाग की प्रबंधन व्यवस्था का विश्लेषण

सतेन्द्र नगायच
(शोधार्थी), जनसंचार एवं शोध विभाग, रा.दु.वि.वि.जबलपुर म.प्र.

संपादकीय विभाग समाचारपत्र प्रबंधन का अतिमहत्वपूर्ण विभाग होता है। इस विभाग को प्राप्त होने वाली खबरें, सूचनाओं व समाचार के आधार पर ही समाचार–पत्र का प्रकाशन निर्भर करता है। समाचार–पत्र संस्थान के रूप में परिवर्तन करने का दायित्व इसी विभाग का रहता है। यही विभाग समाचारों को काटने छांटने एवं संशोधन करने के उपरान्त खबरों व सूचनाओं को स्वरूप एवं आकार प्रदान करता हैं। संपादकीय विभाग का मुखिया संपादक होता है। जिसके ऊपर बड़ी जिम्मेदारियाँ होती है। प्रधान संपादक की जरा सी भूल यदि हो जाती है तो समाचार–पत्र को खतरा पैदा हो जाता है, संपादक की छोटी सी गलती के कारण समाचार–पत्र की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है।

जब कोई संपादक भूल करता है।
तो संकट प्रारंभ हो जाता है। –**वेडविक्स**

संपादकीय विभाग के महत्व का मूल्यांकन ''लन्दन टाइम्स'' के श्री एम.जै. मैन्स फील्ड ने इन शब्दों में किया हैं। ''किसी समाचार–पत्र कार्यालय में संपादकीय विभाग का कक्ष वह कक्ष होता है जहाँ विश्व भर की कानाफूसियाँ होती हैं। संपादकीय विभाग में समाचारों को एकत्रित किया जाता है, उसके उपरान्त एकत्रित समाचारों में से समाचारों का चयन किया जाता हैं। इन समाचारों को संपादन के पश्चात उन्हें समाचार–पत्र में किस जगह पर प्रकाशित किया जाता है साथ ही समाचारों के शीर्षक निर्माण के कार्य की भी जिम्मेदारी संपादकीय विभाग की ही होती है। इसके साथ ही स्थानीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाले समाचारों को भी समाचार–पत्र के छपने योग्य बनाया जाता है क्योंकि स्थानीय व क्षेत्रीय समाचारों के बिना समाचार पत्र चल ही नहीं सकता है।

समाचारों का संपादन :— समाचार–पत्र का संपादन संपादक, सह संपादक, संयुक्त संपादक सहायक संपादक, समाचार संपादक, मुख्य उपसंपादक, उपसंपादक बैठते हैं। ग्रामीण अंचलों से प्राप्त समाचारों की भाषा भी संशोधित की जाती है। समाचार–पत्र में छपने योग्य समाचारों का चयन किया जाता है तथा अयोग्य समाचारों को अलग किया जाता हैं। समाचार–पत्र कार्यालय को प्राप्त समाचार जैसे औद्योगिक घराने, न्यायलयों के फैसले, नगर पालिकाओं, निकायों पंचायतों, राजनैतिक दलों के सम्मेलन प्रेस विज्ञाप्तियाँ, ट्रेड यूनियन के समाचार के अलावा पुलिस विभाग, अस्पताल से प्राप्त सूचनाओं एवं समाचार ऐजेंसियों से प्राप्त समाचार तथा संवाददाताओं की जो सूचना प्राप्त होती है समाचार ऐजेंसियां ही अकेले 40000 से 50000 तक शब्द भेजती हैं। अतः यह निर्णय करना जरूरी रहता है, कि कौन सा समाचार आवश्यक है तथा कौन सा समाचार बाद में भी प्रकाशित किया जा सकता हैं। संपादक के पास इनके अलावा फ्रीलांसर के भेजे समाचार भी एकत्र होते हैं। इस टेबिल पर जो समाचार एकत्र होने की प्रक्रिया होती हैं। उसे न्यूज फाल कहते हैं। समाचार–पत्र में एक निश्चित पृष्ठ संख्या होने के कारण समाचार के आधार पर समाचारों का चयन किया जाता है तथा ऐसे समाचारों को रख लिया जाता हैं। जिनको बाद में भी प्रकाशित किया जा सकता हैं। उनका भी चयन किया जाता हैं। विशेष अवसरों पर जैसे नववर्ष के शुभारंभ दीपावली, क्रिसमस, ईद, गुरूनानक जयंती, स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस आदि पर विज्ञापन बहुतायत मात्रा में प्राप्त होते हैं। अतः ऐसी स्थिति में विज्ञापन को प्रमुखता देने के कारण और भी समाचार पत्र में जगह की कमी हो जाती हैं। ऐसी परिस्थितियों में संपादक दो तरीकों से इनको सुलझाता है।

1-समाचारों के लिए (स्पेस) कम कर :—ऐसे समाचार जिनको प्रकाशित न किया जाने पर भी समाचार पत्र की साख पर प्रभाव न पड़े या कह सकते है कि अति महत्वपूर्ण समाचारों का ही प्रकाशन किया जावे, या उन्हीं का प्रकाशन करें जो आवश्यक हों।

2-समाचार पत्रों की पृष्ठ संख्या में वृद्धि कर :— यह बड़ा ही आसान तरीका होता हैं। जिसे अधिकांश समाचार पत्र संस्थान प्रयोग में लाते हैं। इससे समाचारों को छोड़ा भी नहीं जाता हैं। तथा सभी चयनित समाचारों को सही स्थान प्राप्त हो जाता हैं। तथा विज्ञापनों को भी विज्ञापनदाताओं की इच्छानुसार जगह भी प्राप्त हो जाती है। वैसे हमारे देश में त्यौहार एवं राष्ट्रीय दिवसों पर अधिकांश संस्थान पृष्ठों में वृद्धि करते हैं। इस पद्धति के उपयोग से सबसे बड़ा फायदा यह होता हैं। कि संवाददाता के भेजे समाचार सही समय पर प्रकाशित हो जाते हैं। तथा उन्हें किसी भी प्रकार की शिकायत का मौका नहीं मिलता हैं। समाचार–पत्र ऐसे तीज त्यौहार, उल्लास के क्षणों में प्राप्त विज्ञापनों को प्रमुखता से प्रकाशित करते हैं। क्योंकि इन विज्ञापनों का एक नियत दिन सुनिश्चित होता हैं। अतः इनके प्रकाशन में परिवर्तन नहीं किया जाता हैं। ज्ञातव्य है, कि समाचार–पत्रों की मेरूदण्ड विज्ञापन ही होता हैं। क्योंकि समाचार–पत्र ही एक ऐसा व्यवसाय हैं। जिसमें आने वाली लागत मूल्य से विक्रय मूल्य कम रहता हैं। इस घाटे के लिये विज्ञापन के माध्यम से पूर्ण किया जाता हैं। संपादकीय विभाग हमेशा सृजनात्मक भूमिका का निर्वाह करता है। संपादक का कार्य सेना के प्रधान सेनापति के समान होता हैं। जिस प्रकार प्रधान सेनापति अपनी सेना का संचालन करता है, उसी प्रकार संपादक को अपने पत्र का संचालन करना पड़ता हैं। सम्पादकीय विभाग पाठक की मनोदशा को बनाता तथा बिगाड़ता है। यह विभाग अपने अखबार में यह भी कोशिश करता हैं। कि पाठक उसकी सामग्री को एक ही नजर में देख सकें यही कारण हैं। कि प्रत्येक अखबार में आजकल मुख्य पृष्ठ पर संपूर्ण अखबार के पृष्ठ की सामग्री की जानकारी देने की प्रथा का चलन हो गया है।

संपादकीय विभाग के कार्य :— समाचार–पत्र संस्थान में संपादकीय विभाग के कार्यो को मूलतः 6 हिस्सों में विभक्त किया जा सकता है।

1-समाचार एकत्रित करना।
2-एकत्रित समाचारों में से चयन करना।
3-चयनित समाचारों का संपादन करना।
4-समाचार पर अपना दृष्टिकोण रखना।
5-पाठकों का पथ–प्रदर्शन करना।
6-पाठकों की समाचार–पत्र के प्रति विश्वसनीयता बनाना।

संपादकीय विभाग समाचार–पत्र के पाठकों से सीधा जुड़ा रहता हैं। यह समाचार–पत्र प्रकाशन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। इसके बिना समाचार–पत्र के प्रकाशन की कल्पना भी नहीं की जा सकती हैं। डॉ. चतुर्वेदी ने संपादकीय विभाग के महत्व के बारे में लिखा है। कि इस विभाग की अनुपस्थिति इस प्रकार की है कि जैसे किसी सागर में दिशाहीन पतवार नाविक की दशा होती है। वही स्थिति संपादकीय विभाग की अनुपस्थिति में समाचार–पत्र की होती है।

संपादकीय विभाग के कार्य आरंभ होने के पश्चात ही मुद्रण विभाग का कार्य का शुभारंभ होता हैं। समाचार–पत्र में जो कुछ छपता हैं। उसका निश्चय करने वाला व्यक्ति संपादक ही होता है। अर्थात् समाचार–पत्र मे छपने वाली समस्त सामग्री की जिम्मेदारी संपादक की ही होती है। इसलिये समाचार–पत्र के प्रत्येक अंक पर मुद्रक, प्रकाशक के नाम के साथ संपादक का नाम भी प्रकाशित होता हैं। संपादक का मुख्य कार्य निर्धारित नीति के अनुसार अखबार को चलाना है। तथा संचालक मण्डल ने जिस योजना का निर्माण किया हैं। उसका पालन करते हुए अपने संस्थान को प्रगति पथ पर अग्रसर करना है। संपादक की प्रमुख 3 निष्ठायें होती हैं।

प्रथम निष्ठा संचालक के प्रति :— इसका अभिप्राय बिल्कुल स्पष्ट है, संचालक मण्डल द्वारा बनाई गयी योजना के अनुरूप कार्य करना क्योंकि संचालक मण्डल अपने संस्थान की उन्नति के लिये हमेशा अच्छी से अच्छी नीतियों का निर्माण करता है, अतः उन नीतियों व योजना के अनुरूप ही कार्य करना पड़ता है।

दूसरी निष्ठा संपादकीय विभाग के प्रति :— संपादक अपने विभाग के प्रति हमेशा ही नि ठावान रहता हैं। क्योंकि संपूर्ण विभाग के सहयोग से ही वह कार्य करता हैं। अतः वह अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के प्रति हमेशा विश्वास रखता है। तथा एक परिवार के मुखिया की भूमिका निभाता है।

क्योंकि समाचार–पत्र का कार्य सामूहिक होता है न कि व्यक्तिगत।

तीसरी निष्ठा पाठकों के प्रति :—संपादक की पाठकों के प्रति हमेशा निष्ठा रहती हैं। वह उन्हीं समाचारों, अग्रलेख, व्यंग्य, कार्टूनों का चयन करता हैं। जिसे उसके पाठक पसंद करें वह पाठकों की पसंद का पूरा ध्यान रखता हैं। साथ ही पाठकों के अपनी रूचि के अनुसार ढालने का प्रयत्न करता हैं। क्योंकि प्रत्येक पाठक की रूचि के अनुरूप प्रकाशन संभव नहीं हैं।

संपादकीय विभाग का संगठन :—समाचार–पत्र के संपादकीय संगठन व्यवस्था प्रकार हैं, कि संपादक ही समाचार–पत्र संस्थान के संपादकीय विभाग का प्रमुख होता हैं। संपादक की मदद के लिये प्रबंध संपादक संयुक्त संपादक सहायक संपादक समाचार संपादक मुख्य उपसंपादक उपसंपादक एवं कार्यालय संवाददाता होते हैं। साथ ही छायाकार कार्टूनिस्ट होते हैं। ये सभी संपादक के कार्यो में सहयोग प्रदान करते हैं। संपादक का समाचार–पत्र संस्थान में सबसे ऊँचा एवं महत्वपूर्ण पद होने के कारण ही सबसे ज्यादा जिम्मेदारियाँ होती हैं। जिस कारण वह हमेशा अपने कर्तव्यों के प्रति हमेशा सजग रहता हैं। तथा अपने अधीनस्थों को समय–समय पर उचित निर्देश प्रदान करता हैं। उसके कुछ महत्वपूर्ण कार्य इस प्रकार हैं।

1–कार्य योजना का निर्माण करता है–कार्य की समाप्ति के उपरान्त दूसरे दिन के कार्यों के लिये योजना बनाता है, जिससे उसके सहयोगी आकर अपने कार्यों को सुचारू रूप से कर सके।

1. चयनित विषय के संबंध में शीघ्रता से अधिक जानकारी एकत्रित करता है, तथा नवीनतम से नवीनतम जानकारी पाठकों को प्रदान करने की पूर्ण कोशिश करता है, तथा यही प्रयत्न करता है, कि कोई महत्वपूर्ण जानकारी न छूट सके।
2. यह भी निर्णय करता है, कि कौन व्यक्ति किस विषय वस्तु पर अच्छी से अच्छी रिर्पोटिंग कर सकता है उसकी कार्यकुशलता व गुणवत्ता के आधार पर विषयों का वितरण करता है।
3. स्माचार–पत्र के किस पृष्ठ पर कौन सा समाचार प्रकाशित किया जावे वह समाचार तत्व के आधार पर अपने सहयोगी को समाचार–पत्र के पृष्ठों का वर्गीकरण करता है।
4. वह फीचर, अंग्रलेख, रूपकों को पूर्ण में ही संकलित कर तैयार रखता हैं। तथा यह भी सुनिश्चित करता है, कि कौन किस समय प्रकाशित किया जावे।
5. टेलीप्रिन्टर से प्राप्त होने वाले समाचारों में से समाचारों का चयन करता हैं। तथा उसे पुनः लेखन हेतु कापी डेस्क पर भेजने (हिन्दी की मशीनों से प्राप्त समाचार देवनागरी लिपि में प्राप्त होते है अतः उन्हें संशोधित करना पड़ता है) के उपरांत कम्प्यूटर पर भेजता है यह कार्य वह अपने अनुभव के आधार पर करता है।
6. संपादित कापी को प्रूफ के आने तक सुरक्षित रखता है तथा उसे प्रूफ से पुनः निरीक्षण (चेक) करने के उपरांत उसको अलग करता हैं। तथा यह भी देखता हैं। कि समाचार यदि महत्वपूर्ण नहीं है, तो उनके स्थान पर पाठकों की रूचि के अनुरूप अग्रलेख, व्यंग्य, रूपक मनोरंजन सामग्री आदि को प्रकाशित करता हैं।
7. शीर्षक का निर्माण करवाता है। तथा कंपोजिंग के उपरान्त उन्हें मेकअप विभाग में भेजता है। तथा प्रूफ अपने पर उनका निरीक्षण करता है।
8. शीर्षक हमेशा मेटर के उपरांत ही कम्पोजिंग के लिये कम्प्यूटर में भेजे जाते हैं। अतः भूलवश या समय की कमी के कारण कभी किसी दूसरे विषय पर किसी अन्य विषय के शीर्षक न बैठा दिये जावे इसके प्रति हमेशा सजग रहात हैं। ऐसी छोटी सी गलती के कारण समाचार–पत्र की साख पर बहुत ही गलत प्रभाव पड़ता हैं। अतः वह हमेशा ही सजग रहता है। क्योंकि समाचार–पत्रों के संस्थान मे कम्प्यूटर विभाग में समाचार के उपरांत ही शीर्षक बनाये जाते हैं। अतः वह शीर्षक सही जगह पर (पेस्ट) चिपकाये गये हैं। कि नहीं इसका निरीक्षण करना अति आवश्यक होता हैं। इसीलिये अंत में प्रूफ को पुनः निरीक्षण किया जाता हैं। तदोपरान्त प्लेट निर्माण की कार्यवाही की जाती हैं।
9. समाचार–पत्र में पृष्ठ संख्या में वृद्धि करना होती हैं। तो वैसे निर्देश पूर्व में ही दे दिये जाते हैं। जिस कारण इसमें कुछ भी परेशानी न हो अतः वह पूर्व में ही निर्देश प्रदान कर देता है।

संपादक के सामने एक बहुत बड़ी समस्या यह होती है, कि पाठक अपनी अपनी रूचि के आधार पर अखबार में सामग्री चाहता हैं। एक अखबार के माध्यम से सभी पाठकों को संतुष्ट करना असंभव का कार्य है। इसलिये संपादक को अपने पाठकों के लिये अपनी रूचि के अनुरूप ढालने का प्रयत्न करना चाहते हैं। अब वे दिन गये जब संपादक के कार्य की इतिश्री केवल संपादकीय लिख देने भर से हो जाती थी अब उसका कार्य एक ऐसे वाघ् समूह के संगीत निर्देशक जैसा हो गया हैं। जो समूह के प्रत्येक सदस्य से उत्कृष्ट काम करवा सके। वह अपने कार्यालयीन परिवार के सभी सदस्यों के प्रयासों को संयोजित कर एक ऐसा समाचार–पत्र निकालने में सक्षम जिसकी अपनी अलग पहचान हो। संपादक को एक अच्छे जौहरी की तरह पारखी होना चाहिए जिसे किसी समाचार या शीर्षक में कोई त्रुटी देखते ही उसे तत्काल ही सुधार लेना चाहिए।

समाचार–पत्र प्रकाशन पर दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि सक्षम प्रबंधन की अति आवश्यकता होती है। समाचार–पत्र प्रबंधन हेतु संगठन सामन्वय की आवश्यकता होती है। समाचार–पत्र की विभिन्न इकाईयाँ जैसे–संपादकीय विभाग, विज्ञापन विभाग, उत्पादन विभाग, वितरण विभाग, लेखा विभाग के अलावा अनेक घ्टक होते है। यदि इन घ्टकों को परस्पर समन्वय स्थापित न हो तो प्रतिदिन एक अच्छा समाचार–पत्र प्रकाशित करने में भारी समस्यायों का सामना करना पड़ता है। प्रबंधन का अभिप्राय है, कि समुचित साधनों का प्रयोग करके कम से कम खर्च पर एवं उससे अधिक से अधिक लाभ कमाना इसके लिए आव यक है कि समाचार–पत्र संस्थान के सभी विभागों में आपसी तालमेल अत्यन्त आवश्यक है इस व्यवस्था को प्रबंधक द्वारा संचालित किया जाता है। प्रबंधक से समाचार–पत्र संस्थान के घ्टकों में इस प्रकार तालमेल होना चाहिए समाचार–पत्र संस्थान में किसी इकाई के द्वारा कार्य न होने पर समाचार को पठकों तक पहुचाने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आजादी के पहले समाचार–पत्रों का प्रकाशन एवं प्रबंधन और आज के समाचार–पत्र प्रबंधन में बहुत बड़ा अंतर है पहले समाचार–पत्र प्रकाशन के लिए जो समाचार प्राप्त होते थे उन्हें हाथ से लिख कर छापे के द्वारा प्रकाशित करते थे धीरे–धीरे सुधार कर मशीनों के द्वारा छपाई होने लगी छोटे–छोटे कस्बों में समाचार–पत्रों का चलन नहीं था तब समाचारों को प्रकाशित करने के लिए कस्बों में तख्ता पर समाचार लिखे जाते थे इन समाचारों को पढ़ने के लिए पाठकों की भीड़ लगती थी धीरे–धीरे रेडियो से समाचार एकत्र किये जाने लगे और उन्हें तख्तो पर सुन्दर लेखनी में लिखा जाने लगा संचार माध्यमों में हुई क्रान्ति तथा यातायात की सुविधाओं से समाचार–पत्रों का प्रकाशन करने के लिए वर्तमान में नई–नई तकनीकों का अविष्कार हो रहा है आज किसी भी क्षेत्र में कुछ ही पल में इंटरनेट के माध्यम से समाचार कार्यालय में पहुंच जाते हैं संवाददाता अपने समाचारपत्र कार्यालय को सूचना देने के लिए टेलीफोन टेलीप्रिन्टर फेक्स तथा ई–मेल के माध्यम से कुछ ही मिनिट में सूचित कर सारी जानकारी भेज देते हैं पहले जो समाचार एवं सूचनायें 7–8 दिन बाद अखबारों मे छपती थीं आज वह सूचनायें समाचारपत्र में कुछ ही समय के बाद मुद्रित होकर वितरित हो जाती है। पहले समाचारपत्रों का वितरण का क्षेत्र सीमित था। तथा एक शहर से दूसरे शहर में समाचार–पत्र को वितरित करने में बहुत समस्या का सामना करना पड़ता था। आज समाचार–पत्र के मालिक इस समस्या का निपटारा बड़ी आसानी से कर लेते हैं आज के युग में समाचार–पत्रों को वितरण करना भी कोई बड़ी बात नहीं मानी जाती है।

भारत में समाचार–पत्र का प्रकाशन एक जोखिम पूर्ण कार्य माना जाता था तथा जिसका केवल एक मात्र उद्देश्य था समाज की निस्वार्थ सेवा करना परन्तु आधुनिक समय में समाचार–पत्रों का उद्देश्य धनोपार्जन करना भी हो गया है। प्रबंध एक व्यापक शब्द है जिसे आज आद्युनिक समय में विभिन्न अर्थों में लिया है प्रबंध से अभिप्राय है कोई भी व्यवसाय मे कार्य करने वालों का समुचित प्रयोग किया जावें तथा लक्ष्य को प्राप्त किया जावें ताकि संस्थान के समस्त घटक पूँजी, मशीन, भूमि, गैर मानवीय एवं मानवीय साधन श्रम का सही यथोचित उपयोग किया जा सके तथा अधिक से अधिक लाभ अर्जित कर लक्ष्य की प्राप्ति हो सके एवं संगठन के पूर्व नियोजित उद्देश्य को प्राप्त करनें में नेतृत्व सहायता और निर्देशन प्राप्त हो प्रबंध का सही अर्थ यही है। इस कार्य को करने के लिए योग्य व्यक्तियों का चयन हो तथा सही रूप से कर्मचारियों एवं मशीनों का प्रयोग किया जाऐ। प्रबंध की व्यवस्था यदि धर्म ग्रन्थों में देखें तो यह ज्ञात होता है कि यह कला प्राचीन काल से चली आ रही है। भारतीय

समाचार–पत्रों की प्रबंध व्यवस्था सामान्य रूप से एक सी दृष्टिगोचर होती है। आधुनिक समाचार–पत्रों के मुद्रण में तीव्र गति हो जाने से उत्पादन प्रक्रिया सरल हो गई है, और अभूतपूर्व प्रसार से पाठकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है। समाचार–पत्र प्रकाशन में प्रबंधन विभागों का महत्वपूर्ण स्थान होता है जो एक साथ मिलकर व्यक्तियों के समूह के द्वारा किया जाता है। अनेक व्यक्ति मिलकर समूह के रूप में कार्य करते हैं, और समूह के सम्मुख लक्ष्य या उद्दे य को प्राप्त करने का प्रश्न पैदा होता है एवं आवश्यक हो जाता है, कि सामूहिक प्रयासों की विधि को नियोजित, संगठित, निर्देशित, समन्वित व नियंत्रित किया जाए। प्रबंध की अवधारणा कोई नई विचार धारा नहीं है वरन् यह उतनी ही पुरानी है, जितना की मानव सम्यता का इतिहास मानव सभ्यता में आदिकाल से ही प्रबंध किसी न किसी रूप में सामूहिक क्रियाओं के कुशल क्रियान्वयन के लिए उपयुक्त रहा है। प्रबंध प्रत्येक व्यवसायिक क्रिया की आत्मा है। समाचार–पत्र प्रकाशन के लिए नियोजन, संगठन, अभिप्रेरणा तथा नियंत्रण एवं जो समुदाय के प्रयासो से श्रेष्ठतम व कुशलतम उपयोग के लिए मानव, माल, मशीन, मेथड व मुद्रा का प्रयोग करता है जिससे समाचार–पत्र का प्रकाशन करके निर्धारित उद्देश्य को पूर्ण करके लक्ष्य प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :—

1–डॉ. संजीव भानावत समाचार माध्यम संगठन एवं प्रबंध यूनिवर्सिटी प्रकाशन जयपुर
2–शिवप्रसाद भारती पत्र प्रकाशन और प्रक्रिया विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी
3–बसतीलाल बाबेल पत्रकारिता एवं प्रेस विधी सुविधा लॉ हाउस प्रा. लि.
5–जी.एस. सुधा प्रबंध अवधारणाएँ एवं संगठनात्मक व्यवहार रमेश बुक डिपो जयपुर नई दिल्ली
6–एन.सी.पंत हिन्दी पत्रकारिता का विकास राधा पब्लिकेशंस नई दिल्ली
7–विजया पाठक पत्रिकारिता शोध एवं सर्वेक्षण जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान भोपाल मध्यप्रदेश
8– के.पी. यादव मीडिया मेनेजमेंट अदयान प्रकाशन नई दिल्ली
9– राकेश कुमार मीडिया मेनेजमेंट सुरेन्द्र पब्लिसर नई दिल्ली
10– बी.के. चर्तुवेदी मीडिया मेनेजमेंट ग्लोबल विजन प्रकाशन हाउस नई दिल्ली
11– रितु गोटी मीडिया प्रबन्धन लक्ष्य पब्लिकेशन्स नई दिल्ली
12– मनोज दयाल मीडिया शोध हरियाणा साहित्य आकादमी पंचकूला
13– ईश्वर देवमिश्र विश्व पत्रकारिता इतिहास की एक झलक सेंटर फार मीडिया रिसर्च प्रकाशन वाराणसी
14–अनिल किशोर पुरोहित आधुनिक समाचार–पत्र प्रबंधन आदित्य पब्लिशर्स बीना म.प्र.
15– धनंजय चोपडा सिर्फ समाचार इंस्टीयूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज इलाहाबाद

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

कक्षा नवमीं के गणित विषय हेतु गतिविधि शिक्षण का विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि एवं विद्यार्थियों की प्रतिकिया बीना शहर के विशेष संदर्भ में

डॉ. कालिका यादव
मार्गदर्शक, आचार्य सतत शिक्षा एवं विस्तार विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

वर्षा कापसे
शोधार्थी

प्रस्तावना :– गणित शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है। शिक्षा वेदो द्वारा यह माना गया है कि मातृभाषा के बाद यदि कोई विषय विद्यालयीन पाठ्यक्रम में शामिल होना चाहिए तो वह है ''गणित''। अतः शिक्षा में गणित का अग्रज स्थान है। यह अपसारी चिंतन का दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। जिससे रचनात्मक कल्पना शक्ति का विकास होतो है। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में गणित का प्रयोग प्रतिदिन किया जाता है। विश्व में प्रत्येक मनुष्य अपने दैनिक जीवन में गणित का आदि है। अतः गणित का अस्तित्व हर जगह विद्यमान है। जिस प्रकार मयूर के सर पर कलगी उसी प्रकार वेदो व शास्त्रों में भी गणित का उच्च स्थान है। गणित की कोई निश्चित परिभाषा तो नहीं लेकिन हम व्यवहारिक रूप से कह सकते है। कि गणित वैज्ञानिक संस्था शब्द तथा चिन्ह आदि है जिसके द्वारा हम वस्तु का परिमाण, दिशा व क्षेत्र का ज्ञान कर सकते है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा इस बात पर बल दिया गया कि गणित एक साधन है जो बच्चे को प्रशिक्षित करता है सोचने का कारण दूसरे विषयों से अलग होते हुए अपने पर संस्था वयवस्था रखता है। जो कि अद्वितीय है। अतः कहा जाता है कि ''गणित'' अंको का विज्ञान है।

गणित का अर्थ :– गणित शब्द का हिन्दी अर्थ गणित का आकलन करना है गणित शब्द को हम परिभाषित करते हुये कह सकते है कि गणित एक प्रकार से विज्ञान का मापन, परिमाण व परिणाम है।

गणित के सिद्धांत :– शाइनचेन के अनुसार गतिविधि शिक्षण के निम्नलिखित सिद्धांत दिये गये है।

1. शिक्षण में छात्र किया का सिद्धांत
2. करके सीखने का सिद्धांत
3. शिक्षण में खेल विधि का सिद्धांत
4. ज्ञानेन्द्रियों के शिक्षण का सिद्धांत
5. अनुशासन के स्वाभाविक स्वरूप का सिद्धांत
6. स्वयं किया द्वारा स्वतंत्रता का सिद्धांत
7. बालक की स्वाभाविक रूचियों का सिद्धांत
8. प्रत्यक्ष अनुभव का सिद्धांत
9. परस्पर सहयोग का सिद्धांत

विभिन्न आयोगों, नई राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के फ्रेमवर्क तथा एन.सी.ई.आर.टी. तथा सी.बी.एस.ई. के 2000 निर्देश जिसमें गणित पाठ्यक्रम में गतिविधि को सम्मिलित किया गया, यह गतिविधि के महत्व को रेखांकित करता है।

अध्ययन क्षेत्र एवं प्रविधिः– यह बीना शहर के मध्यप्रदेश बोर्ड के कक्षा नवमीं के विद्यार्थियों पर किया गया। प्रस्तुत शोध हेतु बीना शहर में स्थित दो विद्यालयों शासकीय सरस्वती विद्या मंदिर और सन इंडिया पब्लिक स्कूल का चयन किया गया। प्रस्तुत शोध में न्यादर्श का चयन दैव विधि द्वारा किया गया। न्यादर्श के अंतर्गत 60 विद्यार्थियों को लिया गया। जिसमें 30 विद्यार्थी प्रायोगिक समूह के अंतर्गत रखे गये। न्यादर्श में छात्र– छात्रा दोनों शामिल थे। न्यादर्श के लिये गतिविधि का माध्यम हिन्दी रखा गया। न्यादर्श में छात्र छात्राएं 12 से 16 वर्ष की आयु वर्ग के थे। इनका सामाजिक, आर्थिक स्तर औसत था। विद्यार्थियों की जानकारी निम्न तालिका में प्रस्तुत है।

विद्यालय वार, समूह बार, लिंग बार विद्यार्थियों की जानकारी

कमांक	विद्यालय का नाम	समूह	लिंग		कुल
			छात्र	छात्रा	
1	शास. सरस्वती विद्या मंदिर बीना	प्रायोगिक	20	10	30
2	सन इंडिया पब्लिक स्कूल बीना	नियंत्रित	12	18	30
कुल					60

शोध प्राकल्प :– प्रस्तुत शोध में दो समूहों का चयन किया गया जिन्हे पूर्व उपलब्धि परीक्षण दिये गये। तत्पश्चात् प्रायोगिक समूह को गतिविधि द्वारा उपचारित किया गया तथा नियंत्रित समूह को परम्परागत विधि से शिक्षण दिया गया। उपचार की अवधि 10 दिवस रही।

उपकरणः– प्रस्तुत शोध कार्य हेतु उपलब्धि परीक्षण एवं प्रतिक्रिया मापनी का उपयोग किया गया है।

1. **उपलब्धि परीक्षण** :– उपलब्धि परीक्षण शोधकर्ता द्वारा स्वयं निर्मित किया गया। यह परीक्षण विद्यार्थियों को पढायी गई गणित की विषयवस्तु पर आधारित है। परीक्षण में 15 बहुविकल्पीय प्रश्न एवं 5 खाली स्थान भरो? प्रश्नों को सम्मिलित किया गया। कुल 20 वस्तुनिष्ठ प्रश्न थे। परीक्षण की अवधि 45 मिनट थी।
2. **प्रतिक्रिया मापनी** :– प्रतिक्रिया मापन हेतु शोधार्थी द्वारा प्रतिक्रिया मापनी उपचार से संबंधित 20 कथनों को अबोध पर प्रभाव से संबंधित थे। प्रत्येक कथन हेतु तीन विकल्प रखे गये जो इस प्रकार थे :– सहमत, अनिश्चित, असहमत इनमें से किसी एक विकल्प पर विद्यार्थी को सही का चिन्ह लगाना था।

परिणाम तालिका :–

प्रदत्त गतिविधि :– शोध प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित संख्यिकीय तकनीकों को अपनाया गया।

1. गतिविधि समूह के विद्यार्थियों के पूर्व एवं पश्च उपलब्धि माध्यों की तुलना हेतु सहसंबंध टी–टेस्ट का उपयोग किया।
2. पूर्व उपलब्धि की सहचर लेते हुए प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के विद्यार्थियों के माध्यों की तुलना हेतु *One Way Analysis Of Covariance* का उपयोग किया गया।
3. विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया के संदर्भ में विकसित गतिविधि व सामग्री की प्रभाविकता के अध्ययन हेतु प्रतिशत विधि का उपयोग किया गया।

परिणाम एवं विवेचना :– प्रस्तुत शोध के उद्देश्य

1. गतिविधि समूह के विद्यार्थियों के पूर्व एवं पश्च उपलब्धि माध्यों की तुलना करना।
2. गतिविधि समूह और परम्परागत विधि समूह के उपलब्धि को सहचर के रूप में लिया गया है।
3. गतिविधि की प्रभाविकता का विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया के संदर्भ में अध्ययन करना।

तालिका कमांक 2

परीक्षण	N	$Mean$	SD	R	$t-value$
पूर्व परीक्षण	30	7.6333	2.822	0.312	8ण्831
पश्च परीक्षण	30	13.4333	3.276		

तालिका क्रमांक 3

उपलब्धि के संदर्भ में एकमार्गीय $ANCOVA$ का सार जबकि पूर्व उपलब्धि को सहचर के रूप में लिया गया है।

विचरण के स्त्रोत	dt	$S.Syx$	$Mssy.y$	F
पूर्व परीक्षण	01	71.104	.72.104	9ण्180
पश्च परीक्षण	57	441.481	7.737	
योग	58			

परिणामों की विवेचना :– उपरोक्त परीणामों के अध्ययन से पता चलता है कि कक्षा नवमीं के विद्यार्थियों के प्रायोगात्मक समूह को गतिविधि शिक्षण से पढानें पर उनकी उपलब्धि में सुधार हुआ है। अतः इस संदर्भ में दिया गया उपचार सार्थक रहा एवं परिणाम सकारात्मक रहे।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Brown R 1981: Goals of Reflection of the need of the learner. In Morris, R. (Ed.) studies in mathematics education UNESCO, Peris,
2. Buch, M.B. (Ed) 1979: Second survey of Research in Education, society for educational research and Development Baroda,
3. Buch, M.B. (Ed.) 1979: Fourth Survey of Research in Education, society for educational research and Development Baroda,
4. Chitriv, U.G 1988: Ausubel Vs Bruner Model for Teaching Mathematics, Himalaya Publishing House, Bombay.
5. Director NCERT (Ed.) 2000: Fifth survey of educational Research and Training. NCERT, New Delhi,.
6. Kapur, J.N 1989: Some aspects of Mathematics Education in India, Arya Book Depot, New Delhi,
7. Kaushik, V.K. and Sharma, S.A 2002.: Modern Method of Teaching Anmole publications Pvt. New Delhi.
8. Maheshwari B.K. 2005 Ganit Shikshan International Publishing House, Merrut.
9. NCERT 1984: Content- Cum- Methodology of Teaching Mathematics, NCERT. New Delhi.
10. Pal H.R. 2004 Education Research Madhya Pradesh Hindi Grnath Academy Bhopal..
11. Singh B 1988: Teaching-Learning Strategies and Mathematics Creativity Mittal Publication, Delhi.
12. Thilaka, S. and Rajeshwari H 2005: Simulated Experimental in Biotechnology. Journal of all India Association for education Research. Vol. 17, New Delhi, 3 and.

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

छायावाद और मानव मूल्य

डॉ. भावना शुक्ल

द्विवेदी युग की इतिवृतात्मक ,गद्यवत ,बहिर्मुखी कवितओं की प्रतिक्रिया स्वरुप छायावाद का विकास हुआ द्य हिंदी साहित्य में छायावाद विशेष रूप से के रोमांटिक उत्थान की वह काव्य–धारा है द्ययह सामान्य रूप से भावोच्छवास प्रेरित स्वच्छन्द कल्पना–वैभव की वह स्वच्छन्द प्रवृत्ति है जो देश–कालगत वैशिष्ट्य के साथ संसार की सभी जातियों के विभिन्न उत्थानशील युगों की आशा, आकांक्षा में निरंतर व्यक्त होती रही है। स्वच्छन्दता की इस सामान्य भावधारा की विशेष अभिव्यक्ति का नाम हिंदी साहित्य में छायावाद पड़ा द्यछायावाद के जनक प. मुकुटधर पाण्डेय है द्यइसमें जयशंकर प्रसाद, निराला, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा आदि मुख्य कवि हुए ये छायावाद के आधार स्तंभ है द्य । इसके आधार पर हिंदी साहित्य में छायावादी युग और छायावादी आंदोलन को भी स्थान मिला।
अचार रामचंद्र शुक्ल का मत है कि छायावाद रविंद्र के प्रभाव से और बंगला के माध्यम से हिंदी में आयाद्य वैसे अभिव्यंजना की शैली मात्र मानते थे छायावादी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिये। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहाँ उसका संबंध काव्य–वस्तु से होता है अर्थात् जहाँ कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम का अनेक प्रकार से व्यंजन करता है। इस अर्थ का दूसरा प्रयोग काव्य–शैली या पद्धति–विशेष के व्यापक अर्थ में होता है' छायावाद का सामान्यतः अर्थ हुआ प्रस्तुत के स्थान पर उसकी व्यंजना करनेवाली छाया के रूप में अप्रस्तुत का कथन।

हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है.. छायावाद शब्द का प्रचलन बांग्ला के काव्य में नहीं पाया जाता. द्विवेदी जी लिखते हैं कि छायावाद हिंदी कविता का स्वाभाविक विकास था, यह लव बंगला से आया नाइस आई संतों की छाया भाग से. छाया भाग तो हमारे संतों की वाणी से होता रहा यह उधार लिया धन नहीं. इस श्रेणी के कवि ग्राहिकाशक्ति से बहुत अधिक संपन्न थे और सामाजिक विषमता और असामंजस्यों के प्रति अत्यधिक सजग थे। शैली की दृष्टि से भी ये पहले के कवियों से एकदम भिन्न थे। इनकी रचना मुख्यतः विषयि प्रधान थी। सन् 1920 की खड़ीबोली कविता में विषयवस्तु की प्रधानता बनी हुई थी। परंतु इसके बाद की कविता में कवि के अपने राग–विराग की प्रधानता हो गई। विषय अपने आप में कैसा है ? यह मुख्य बात नहीं थी। बल्कि मुख्य बात यह रह गई थी कि विषयी (कवि) के चित्त के राग–विराग से अनुरंजित होने के बाद विषय कैसा दीखता है ? आचार्य नंददुलारे वाजपेई का अभिमत है" चारबाग को हम शुक्ल जी के अनुसार अभिव्यक्ति की एक लाक्षणिक प्रणाली नहीं मांग सकेंगे. इसमें एक नूतन सांस्कृतिक मनोभाव का उद्‌गम है.एक स्वतंत्र दर्शन की योजना भी है. पूर्ववर्ती काव्य से इसका स्पष्ट तक पृथक अस्तित्व और गहराई है."
डॉ नगेंद्र के अनुसार" छायावाद एक विशेष प्रकार की भाव पद्धति हैद्य"1920 के आसपास, युग की उद्‌बुद्ध चेतना ने बाह्य अभिव्यक्ति से निराश होकर, जो आत्मबद्ध अंतर्मुखी साधना आरंभ की, वह काव्य में छायावाद के रूप में अभिव्यक्त हुई'द्य
नामवर सिंह के अनुसार ...

' छायावाद शब्द का अर्थ चाहे जो हो, परंतु व्यावहारिक दृष्टि से यह प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी की उन समस्त कविताओं का द्योतक है, जो १६१८ से ३६ ई. के बीच लिखी गईं।' वे आगे लिखते हैं– 'छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता था और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।'
डॉ देवराज ने छायावाद को आधुनिक पौराणिक धार्मिक चेतना के विरुद्ध अलौकिक चेतना का विद्रोह मानाद्य "
जयशंकर प्रसाद के अनुसार...

'काव्य के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश–विदेश की सुंदरी के बाह्य वर्णन से भिन्न जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिंदी में उसे छायावाद नाम से अभिहित किया गया।' प्रसाद जी अंत में कहते हैं– छायावादी कविता भारतीय दृष्टि से अनुभूति और अभिव्यक्ति की भंगिमा पर अधिक निर्भर करती है। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौंदर्य, प्रकृति–विधान तथा उपचार वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृत्ति छायावाद की विशेषताएँ हैं।'

सुमित्रानंदन पंत....छायावाद को पाश्चात्य साहित्य के रोमांटिसिज्म से प्रभावित मानते हैं।

महादेवी वर्मा....छायावाद का मूल दर्शन सर्वात्मवाद को मानती हैं और प्रकृति को उसका साधन। उनके छायावाद ने मनुष्य के हृदय और प्रकृति के उस संबंध में प्राण डाल दिए जो प्राचीन काल से बिम्ब–प्रतिबिम्ब के रूप में चला आ रहा था और जिसके कारण मनुष्य को प्रकृति अपने दुख में उदास और सुख में पुलकित जान पड़ती थी'इस प्रकार महादेवी के अनुसार छायावाद की कविता हमारा प्रकृति के साथ रागात्मक संबंध स्थापित कराके हमारे हृदय में व्यापक भावानुभूति उत्पन्न करती है और हम समस्त विश्व के उपकरणों से एकात्म भाव संबंध जोड़ लेते हैं। वे रहस्यवाद को छायावाद का दूसरा सोपान मानती हैं।

प्रसिद्ध लेखक समीक्षक पंडित हरि कृष्ण त्रिपाठी के अनुसार" छायावादी काव्य शैली के प्रारंभिक पुरस्कार कर्ता है पंडित मुकुटधर पांडेय" त्रिपाठी जी लिखते हैं" जबलपुर से प्रकाशित होने वाली और पंडित नर्मदा प्रसाद मिश्र द्वारा संपादित" श्री शारदा" 1 जुलाई. सितंबर. नवंबर और दिसंबर सन 1920 के अंकों में पांडे जी ने एक लेखमाला लिखकर प्रचलित नई शैली कविता का नामाभिधान किया" छायावादद्य" इस तरह वही सर्वप्रथम इस नवीन काव्य के रूप में व्याख्याकार बनेद्य"

कवि – समीक्षक डॉक्टर पूनम चंद तिवारी का मत है की " छायावाद शब्द सर्वप्रथम मुकुटधर पांडेय द्वारा प्राप्त हुआ हैद्य" ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, मानवीकरण, प्रतीकात्मकता, गीतात्मक ता, चित्रात्मकता, आदि छायावादी शैली की विशेषताएं हैंद्य"

डॉ विनय मोहन शर्मा और डॉक्टर नामवर सिंह ने भी मुकुटधर पांडे को छायावाद के प्रवर्तक के रूप में स्वीकार किया हैद्य

सन 1990 से 1920 तक का समय छायावाद के प्रस्फुटन–प्रयोग का काल हैद्य विभिन्न विद्वानों ने' छायावाद' को अपने अपने ढंग से परिभाषित किया है द्य

प्रोफेसर शिवनंदन प्रसाद का मत है कि" छायावाद तत्कालीन राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति हैद्य"

डॉ शंभुनाथ लिखते हैं कि" 1919 से लेकर 1939 तक की हिंदी कविता में छायावाद, जिसमें पूंजीवादी और राष्ट्रीयता वादी विचारधारा की प्रधानता थी, प्रारंभ और विकास हुआद्य"

" छायावाद के उत्तर आने पर प्रगितियों का बाहुल्य हो गया और छायावादी कवि प्रबंध रचना से विरत से हो गए जो प्रबंधन के हाथों निर्मित हुए, वह भी प्रतीकात्मक ही हुएद्य"

वास्तव में छायावाद युग को गीत युग ही कहा जाना चाहिए इस युग के बहुसंख्यक कवियों की प्रवृत्ति गीत द्य रचना की ओर रही है द्य इस युग में प्रगीत, मुक्तकों, गीतों और गीत प्रबंधों का प्राधान्य हैद्य यह सब गीत काव्य के ही विभिन्न रूप हैंद्य छायावाद युग में गीत काव्य की शैली बदलीद्य काव्य और संगीत शास्त्र का काफी कुछ विच्छेद हो गया और गीतिका विनय संगीत शास्त्र शास्त्र के नियमों को शिथिल कर दियाद्य

किंतु इसका यह अर्थ नहीं कि छायावादी गीतों में संगीतात्मकता का अभाव हैद्य इस युग में संगीत तत्व भावनाओं का अनुच्छेद – बनकर गीतिकाव्य में अभिव्यक्त हुआ संगीत व के मात्रा भेद के कारण है गीत और प्रगीत मुक्तक के रूप विधान संबंधी भेद उत्पन्न हो गयाद्य छायावादी गीतों में अंतरा का विधान उसकी विशेषता है

डॉ शंभुनाथ सिंह ने अपने ग्रंथ छायावाद युग में लिखा है कि गीतिकाव्य संगीतात्मक रूप में प्रयुक्त ऐसे शब्दों की योजना है जो तीव्र वयक्तिक और संवेदनात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करते हैंद्य वस्तुतः गीति काव्य के रूप से अधिक उसके भाव पक्ष की विशेषताओं को व्यक्त करता है प्रगीत मुक्तक और गीत के साथ ही वीर गीति , शोकगीति संबोधि की थी, व्यंग गीति ,साधावासन गीति, गीतिनाट्य प्रबंध आदि प्रकार के गीतिकाव्य छायावादी कविताओं में पाए जाते हैं

छायावाद के आरंभ के संबंध में विद्वानों का यह मानना है यह अंग्रेजी के रोमांटिक साहित्य के प्रभाव का परिणाम है प्रसाद,पन्त आदि की आरंभिक कविताओं पर अंग्रेजी के वड्र्सवर्थ शैली के आदि के प्रभाव की महत्ता विद्वानों ने मानी थी इसमें सर्व विदित है कि छायावादी काव्य नितांत विदेशी प्रभाव का परिणाम मात्र नहीं है छायावाद की प्रेरणा स्रोत विदेशी साहित्य अवश्य है किंतु उसकी आत्मा पूर्ण भारतीय ही हैद्य छायावाद में जीवन का रस ग्रहण भारतीय चिंतन धारा और दार्शनिक परंपरा से किया है द्य

हिंदी साहित्य में छायावाद को साहित्यिक सौंदर्य का स्वर्णिम शिखर कहा जाता है जिसमें प्रकृति की सजीवात्मकता सौन्दर्य छटा के साथ–साथ मनुष्य का सौंदर्य बौद्ध और उसका कल्पनालोक पूर्णता आलोकित है छायावाद के चतुर्थ स्तंभ के रूप में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी जी की जो कीर्ति पताका

लहराई है उस का प्रमुख आधार आधुनिक हिंदी साहित्य का छायावादी काव्य है छायावादी साहित्य मानव मूल्यों की सर्वश्रेष्ठ साधना हैद्य व्यष्टि और समष्टि चेतना का सुंदर समन्वय इस कालजयी साहित्य में दिखाई देता है

छायावादी काव्य प्रमुख रूप से आत्मभिव्यंजन विशेषता दृष्टिगत होती है

छायावादी कवियों ने व्यक्ति की स्वयं की अनुभूतियों को कविता में इस प्रकार व्यंजित किया कि पाठक सहज भाव से उसमे इतना उसमें तल्लीन हो जाता हैद्यछायावादी काव्य में अनुभूति की इस प्रधानता प्रमुख है यहाँ कवि अंतर्मुखी होकर अपने मन के अंदर जो होकर सुख दुख की अनुभूति को व्यक्त करता है । जयशंकर प्रसाद की ये वेदना ..

''जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति सी छाई।
दुर्दिन में आँसू बनकर वह आज बरसने आई।

प्रकृति चित्रण – छायावादी कवि प्रेम और सौन्दर्य के कवि है। उन्होंने ने प्रकृति क्र सौन्दर्य को एक अलग दृष्टि से देखा है द्यधरती,पर्वत ,वन ,झरने ,अम्बर ,नदिया ,बदल आदि के सन्दर्भ में एक कवि के अनूठे भाव हैद्य

''उड़ गया अचालक लो भूधर
फड़का अपार वारिद के पर।

प्रकृति में गति का यह चैतन्य वर्णन पूरी तरह से आधुनिकता का प्रतीक है; मानो यह सुन्दर, भव्य, अलौकिक प्रकृति आज ही ऐसा क्रियाकलाप कर रही हो, इससे पहले ऐसा शायद कभी हुआ ही नहीं था। निराला के 'बादलराग, पंत के परिवर्तन, प्रसाद की 'कामायनी में चित्रित प्राकृतिक दृश्यों की मनोरमा निराली है। प्रकृति के मधुर रूपों के प्रति कवि–हृदय में प्रबल आकर्षण है क्योंकि प्रकृति में अक्षत सौन्दर्य है, यौवन की मुग्धावस्था है। सूर्य की प्रथम रश्मि नवविकसित कलियों का मुख चूमकर, उनके अंग–अंग में मुस्कान का पराग बिखेर देती है। पल–पल परिवर्तित प्रकृति के परिवेश में आनन्द, और ज्ञान, सौन्दर्य–पिपासा की वृत्ति और आत्मबोध का स्फुरण इस युग के प्रकृति–चित्राण के अंग–अंग में बसा है। प्रसाद ने रात्रि को संबोधित करते हुए कहा है–

''पगली ! हाँ संभाल ले कैसे छूट पड़ा तेरा अंचल।
देख बिखरती है मणिरानी, अरी उठा बेसुध चंचल।

निराला ने संध्या का चित्रण करते हुए इसी प्रेम को तो अभिव्यक्त कर रहे हैं–

''दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या सुंदरी परी सी
धीरे धीरे धीरे ।।

रहस्यभावना – छायावाद में अंतर्मुखी प्रकृति का चित्रण हुआ है जो कवि की आध्यात्मिक भावना का प्रतीक है। इसे ही कवि की रहस्यवादी भावना भी कहा गया।

''विश्व के पलकों पर सुकुमार, विचरते हैं जब स्वप्न अजान।
न जाने नक्षत्रों से कौन, निमंत्राण देता मुझको मौन।।

जयशंकर प्रसाद ने प्रकृति में परम सत्ता को खोजने का प्रयत्न किया–

''हे विराट! ये विश्वदेव! तुम कौन हो ऐसा होता भान।
मंद गंभीर धीर स्वर संयुत यही कर रहा सागर गान।।

महादेवी वर्मा प्रेम और वेदना के कारण इस सृष्टि के सूत्र धार के प्रति अपनी जिज्ञासा व्यक्त करती हैं–

''कनक से दिन मोती सी रात, सुनहली सांझ गुलाबी प्रात।
मिटाता रंगता बार–बार, कौन जगा का वह चित्राधार।।

नारी सौन्दर्य का चित्रण दृरीतिकाल में नारी के नख से शिख तक का वर्णन किया है द्य द्विवेदीकाल में में कुछ सयंमित भाव देखने को मिला द्य छायावादी कवि प्रेम और सौन्दर्य का पुजारी है अतः नारी सौन्दर्य के चित्राण में सूक्ष्मता और शीलता का भाव देखने को मिलता है।

''नील परिधान बीच सुकुमार, खुल रहा मृदुल गुलाबी अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल, मेघ बन बीच गुलाबी रंग।

राष्ट्रीयता की विशेषता में कवि ने कहा है यह युग भारतीय जीवन के लिए विषय संघर्ष का काल था। साम्राज्यवादियों के चंगुल में फँसे देशवासियों को महात्मा गाँधी सत्य और अहिंसा पर आधारित असहयोग आंदोलन के पथ पर ले जा रहे थे। इस युग के कवियों ने एक ओर भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए देशवासियों का आहवान किया द्यअनेक कवियों ने अपनी कलम से देश के जनमानस को जागरूक करने का सन्देश दियाद्य

''क्या? देख न सकती जंजीरों का गहना।
हथकड़ियाँ क्यों? यह ब्रिटिश राज्य का गहना।।

'नवीन पराजित और चिरदोहित होकर भिखमंगे की तरह जीवन की नियति को स्वीकार करने वाले दीन वर्ग को इन शब्दों में झकझोरते हैं–

''ओ भिखमंगे, अरे पराजित, ओ मजलूम, अरे चिरदोहित,

तू अखण्ड भण्डार शक्त कि, जाग अरे निद्रा सम्मोहित।
प्राणों को तड़पाने वाली हुंकारों से जल–थल भर दे।
अंगारों के अंबारों में अपना जवालित पलीता भर दे।
जनता का आत्मविश्वास जगाने का एक अन्य उपाय था– अतीत का गौरवगान। दूसरी ओर निराला 'दिल्ली कविता में अतीत के गौरव की तुलना देश की वर्तमान दुर्दशा से करते हैं– ''क्या यही वही देश है? माखनलाल चतुर्वेदी के पुष्प की तो यही अभिलाषा है–
''मुझे तोड़ लेना वननाली, उस पथ पर देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जाते वीर अनेक।।
मानवतावादी दृष्टिकोण – छायावादी कवियों ने 'वसुधैव कुटुम्बकम मानकर समूची मानव जाति के प्रति सहानुभूति और प्रेम का भाव व्यक्त किया। श्रद्धा मनु को निराशात्मक भावना को समाप्त करके निर्माण की दिशा में प्रेरित करते हुए कहती है–
''बनो संसृति के मूल रहस्य,
तुम्हीं से फैलेगी वह बेल।
विश्वभर सौरभ से भर जाए,
सुमन के खेलो सुंदर खेल।
पंत ने 'सुंदर है विहग सुमन सुन्दर, मानव तुम सबसे सुन्दरतम कहकर मानव के महत्त्व को प्रस्तुत किया। यही दृषिट नारी के प्रति पूज्य भाव में भी प्रकट होती है।
''नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।
मानवतावादी दृषिटकोण को ही प्रचार और प्रसार देते हुए 'निराला में शोषित वर्ग के प्रति गहरी संवेदना 'भिक्षुक 'विधवा, 'इलाहाबाद के पथ पर, 'बादल राग आदि कविताओं में दिर्खाइ देती है।
वेदना और करुणा – छायावादी काव्य में वेदना, करुणा, पीड़ा, निराशा की भी अभिव्यक्त हुइ है।पंत के वेदना और करुणा को कविता का मूल माना है–
वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान,
उमड़ कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।
महादेवी वर्मा का तो समस्त काव्य वेदना और पीड़ा से ओत
"मेरे छोटे जीवन में देना न तृप्ति का कण भर
रहने दो प्यासी आँखें भारती आंसू का सागर द्य"
पीड़ा और वेदना की तीव्र अभिव्यक्ति होने के कारण उन्हें वेदना की कवयित्री कहा गया है
स्वच्छंदतावाद विशेषता में – विषय, भाव, कला, धर्म, दर्शन आदि में छायावादी कवि ने नवीन चिंतन पद्धति को उदघाटित करते हुए, आधुनिक जीवन से संबद्ध रचनाएँ प्रस्तुत कीं। धीरे–धीरे कवि पुरानी परिपाटी को छोड़कर स्वच्छंद होता गया। 'ले चल मुझे भुलावा देकर मेरे नविक धीरे–धीरे– जैसी पंक्तियों में इसी भाव का प्रमाण हैं।
हास्य व्यंग्यात्मक काव्य विशेषता – 'इश्वरीप्रसाद शर्मा, हरिशंकर शर्मा, उग्र व बेढव बनारसी प्रभृत्ति कवियों ने इस विषय पर प्रमुख रूप से रचनाएँ लिखीं।
''बाद मरने के मेरे कब्र पर आलू बोना
हश्र तक यह मेरे ब्रेकफास्ट के सामाँ होंगे,
उम्र सारी तो कटी घिसते कलम ए बेढ़ब
आखिरी वक्त में क्या खाक पहलवाँ होंगें।
अंततः हम कह सकते हैं कि छायावाद की छाया में पल्लवित एवं पुष्पित होने वाली 'उत्तर–छायावादी' कविता हिंदी साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है जहाँ सन् 1930 के आसपास छायावादी काव्य में ही कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ उभर रही थी जिसमे कवि एक ओर छायावाद की मानवीयता और 'उस पार' से मुक्त होकर ठोस अनुभव के धरातल पर 'इस पार' की रचना कर रहे थे तो वहीं दूसरी ओर स्वतंत्रता –आंदोलन की प्रखरता में क्रांतिकारियों की धर –पकड़ और उन्हें फांसी पर लटकाया जाना आदि से कवियों की फक्कड़ाना, मस्ती, क्रांतिकारी भावना तीव्र हो उठी जिससे 'उत्तर–छायावाद' के दौर में काव्य चेतना दो दिशाओं की ओर अग्रसर हुई वैयक्तिक कविता और राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता द्य
मानव मूल्य
संसार का प्रत्येक मानव सुखी हो कर इस संसार में जीना चाहता है मानव एक सामाजिक प्राणी है वह अपने संपूर्ण जीवन में जीवनविद्या अर्थात जीवन ज्ञान अस्तित्व दर्शन ज्ञान मानवता पूर्ण आचरण ज्ञान को समझ कर सुखी होने का मार्ग बनता है प्रत्येक व्यक्ति सुखी होना चाहता है सभी का भाव एक ही प्रकार का है व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास उसके गुणों से होता है उसके उसे सही गलत अच्छे बुरे की परख जब वह विद्यालय जाता है तो उसे आती है प्राचीन काल में देखा जाए तो धार्मिक शिक्षा के साथ मूल्य आधारित शिक्षा भी अवश्य दी जाती थी लेकिन वक्त के साथ–साथ शिक्षा कम होती चली गई आज वैश्वीकरण के इस युग में मूल्य आधारित शिक्षा की भागीदारी लगातार घटती जा रही है सांप्रदायिकता जातिवाद

हिंसा अस्पृश्यता चोरी–डकैती आदि की प्रगति समाज में मूल्यों के विघटन के उदाहरण है यहां मैं एक बात जरुर कहना चाहूंगी कि शिक्षक का भी सबसे बड़ा फर्ज बनता है कि वह विद्यार्थी को मानव मूल्यों के महत्व को समझाएं उन्हें अपने जीवन अपने व्यवहार का हिस्सा बनाएं सबसे पहले तो शिक्षक का कर्तव्य है कि वह अपने व्यवहार में इन मूल्यों को हिस्सा बनाएं फिर बच्चों के दैनिक व्यवहार में इसे लाने का प्रयास करें स्कूलों से समाज की अपेक्षा होती है कि वह तर्कशील मनुष्य प्रदान करें इसलिए स्कूलों में ही जरूरी मानव मूल्यों की शिक्षा नहीं दी गई तो कहीं ना कहीं राष्ट्रपति अपनी नैतिक जिम्मेदारी निभाने से हम झुक जाएंगे यह अत्यंत आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों में उल्लिखित मूल्यों के प्रति शिक्षक समाज चिंतनशील हो उन्हें बच्चों के दैनिक जीवन में यह ले कर के आएद्य

जब हम मानव मूल्य की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य क्या है, यह समझ लेना आवश्यक है। अपनी परिस्थितियाँ, इतिहास–क्रम और काल–प्रवाह के सन्दर्भ में मनुष्य की स्थिति क्या है और महत्त्व क्या है–वास्तविक समस्या इस बिन्दु से उठती है। समस्त मध्यकाल में इस निखिल सृष्टि और इतिहास–क्रम का नियन्ता किसी मानवोपरि अलौकिक सत्ता को माना जाता था। समस्त मूल्यों का स्रोत्र वही था और मनुष्य की एक मात्र सार्थकता यही थी कि वह अधिक से अधिक उस सत्ता से तादात्म्य स्थापित करने की चेष्टा करे। इतिहास या काल–प्रवाह उसी मानवोपरि सत्ता की सृष्टि था–माया रूप में या लीला रूप में।

आधुनिक युग में मानव ने जब प्रवेश किया वैसेदृवैसे मानवीय सत्ता का ह्रास होता गया द्य मनुष्य की गरिमा का नये स्तर पर उदय हुआ और माना जाने लगा कि मनुष्य अपने में स्वतः सार्थक और मूल्यवान् हैद्यवह स्वयं अपने आप में सर्वश्रेष्ठ है द्यसम्पूर्ण संसार के केंद्र में मानव है द्य

छायावाद और मानव मूल्य विषय के अंतर्गत हम यह कह सकते है छायावाद की कविताओं में मानवीयता के दर्शन होते है

सन्दर्भ

हिंदी साहित्य का इतिहास .आधुनिक काल
उत्तर छायावाद परिवेश और प्रवृतियां
बृहत हिंदी साहित्य

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

बौद्ध धर्म में नारी स्वतंत्रता

डॉ0 बसंत कुमार

UGC NET, WOMEN STUDIES, DOCTORAL FELLOW ICSSR, NEW DELHI
ASST. PROFESSOR DEPT. OF WOMEN STUDIES, MAGADH UNIVERSITY, BODHGAYA – 824234

भगवान बुद्ध का धर्म प्राणि मात्र के कल्याण के लिए है। बौद्ध धर्म के विकास के कालक्रम में संघ में स्त्रियों के प्रवेश की बात उठी। यह विदित है कि भगवान बुद्ध प्रारंभ में स्त्रियों के संघ में प्रवेश को उचित नहीं मानतेथे, लेकिन अपने प्रिय शिष्य आनन्द के आग्रह पर कि स्त्रियाँ भी प्राणी है। उन्हें भी धर्म का लाभ मिलनाचाहिए। भगवान ने आठ कड़े नियमों के साथ स्त्रियों को संघ में प्रवेश की अनुमति दी। इससे संघ की स्थापना में स्त्रियों की भागीदारी सुनिश्चित हो सकी।

बौद्ध धर्म में स्त्री तथा पुरूष दोनों को आनागारावस्था में समान रूप से साधना कर मुक्ति एवं अर्हत् पद को प्राप्त करने का अधिकारी बताया गया है।1 थेरीगाथा में एक भी स्त्री को यह सलाह नहीं दी गई कि वह अपने पति से दुःखी होने के
कारण दूसरे व्यक्ति से पुनर्विवाह कर ले।2 बौद्ध साधक एवं साधिका संघ में प्रव्रजित होकर निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं। प्रव्रज्या हेतु उस संघ में सदस्यता भी लेनी पड़ती है। भगवान का ऐसा कहना था कि ''स्त्रियाँ भी पुरूषों के समान ही मोक्ष प्राप्त कर सकती है। इसकी प्राप्ति हेतु उन्हें भी आध्यात्मिक विकास की अवस्थाओं को अनुशरण करना होगा।'' बौद्ध मत में साधक के लिए निर्वाण को प्राप्त करने के लिए अर्हत्व की अवस्थाओं का पालन करना होता है। इन्हें ही बौद्धगण भूमियाँ कहते हैं। अर्हत्व की अवस्थाएँ निम्न प्रकार है –'स्त्रोतापन्न या स्त्रोतापति' का शाब्दिक अर्थ– साधना मार्ग पर आरूढ़ होकर साधक का अपने लक्ष्य की ओर अभिमुख होना है। अर्थात् जो साधक निर्वाण की ओर जाने वाली उन्नत्ति की धरा में पड़ गया है, अब उसका पतन नहीं होगा। सात जन्मों के
अन्दर वह अवश्य निर्वाण प्राप्त कर लेगा। इस अवस्था में साधक बुद्ध धर्म व संघ के प्रतिशील–समाधि से युक्त हो श्रद्धा रखता है। 'सकृदागामी' से तात्पर्य एक बार आने वाले से है। इस अवस्था में साधना का मुख्य लक्ष्य साधक द्वारा पूर्णरूपेण काम, राग, द्वेष आदि भावनाओं का नाश करके अनागामी अवस्था की ओर अग्रसर होना होता है। उपर्युक्त स्त्रोतापन्न और सकृदागामी अवस्थाओं के द्वारा सम्पूर्ण बन्धनों का नाश करके ही साधक या साधिका आनागामी पद का प्राप्त करते हैं। ऐसे साधक इस संसार में दोबारा जन्म नहीं लेते हैं, बल्कि किसी दिव्यलोक, ब्रह्मलोकद्ध को ग्रहण करते हैं। 'अर्हतावस्था' में साधक के लिए शेष बंधनों का भी त्याग आवश्यक होता है। ये बंधन रूप, अरूप, मान, औचत्य एवं अविद्या है। इनके नाश से साधक के सभी क्लेश दूर हो जाते हैं तथा उसके सभी दुःखों स्कन्धेंद्ध का अन्त हो जाता है और उसे निर्वाण की प्राप्ति हो जाती है। इसे ही हम जीवनमुक्ति की अवस्था भी कहते हैं तथा ये हीं बौद्ध धर्म में आध्यत्मिक उन्नत्ति प्राप्त साधकों की अवस्थाएँ हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि निर्वाण पद की इन अवस्थाओं को प्राप्त किये बिना कोई भी, चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरूष, निर्वाण की प्राप्ति नहीं कर सकता। इन अवस्थाओं के अनुशरण और पालन में भी ऐसे कोई स्पष्ट भेद नहीं दर्शाया गया है कि इन अवस्थाओं में साधना केवल पुरूष ही कर सकते है, स्त्रियाँ नहीं, क्योंकि तथागत ने स्वयं स्त्री और पुरूष दोनों को समान रूप से आनागारावस्था में मुक्ति पद का अधिकारी कहा है। अतः निर्वाण हेतु साधना की उपर्युक्त अवस्थाओं की अधिकारिणी स्त्रियाँ भी होती हैं और हुई हैं।3 भगवान ने स्वयं स्त्रियों के घृणित रूपों से प्रव्रज्या की अन्तिम प्रेरणा पाई थी, इसी कारण अपने गृह त्याग की सूचना अपनी पत्नी को न मिलने दी। इससे यह आरोपित किया जा सकता है कि बुद्ध स्त्रियों को सांसारिक दुःखों का मूल कारण मानने के साथ–साथ उन्हें दुःख विनाश में बाधक भी मानते थे, इसीलिए उन्हें 'ब्रह्मचर्य का विकार' कहा गया है।4

भगवान बुद्ध स्त्रियों को संघ के लिए घातक मानते थे क्योंकि इससे व्याभिचार को बढ़ावा मिलने के खतरे थे।5 बौद्ध संघ में भिक्षुणी संघ की स्थापना भिक्षु संघ स्थापित होने के पाँच वर्ष के पश्चात् हुई। भगवान बुद्ध की विमाता महाप्रजापति गौतमी द्वारा कपिलवस्तु में

स्त्रियों की प्रव्रज्या–अनुरोध को तथागत के अस्वीकार कर देने पर पुनः गौतमी केश कटवाकर कषाय वस्त्र धरण करके पद यात्रा करती हुई वैशाली पहुँची। वैशाली में आनन्द द्वारा पूछे जाने पर अपना उद्देश्य उन्होंने बताया। आनन्द के द्वारा स्वयं स्त्रियों की प्रव्रज्या के अनुरोध को तथागत ने अस्वीकार कर दिया, तब आनन्द ने भगवान को उन्हीं के उन उपदेशों का स्मरण करवाया, जिनमें स्त्रियों को मुक्ति व अर्हत पद की अधिकारिणी बताया गया था।6 इस प्रकार आनन्द द्वारा अनेक तर्क–वितर्क किये जाने पर बुद्ध ने अनिच्छापूर्वक स्त्रियों को संघ में प्रवेश देने और प्रव्रज्या व उपसम्पदा देने का विधन किया।7 भगवान ने स्त्रियों को संघ में पात्रता देने के साथ–साथ कुछ कठोर नियमों का उपदेश भी दिये। 'चुल्लवग्ग' इन नियमों को अष्ट 'गुरू धर्मों' की संज्ञा दी गई है।8 इन नियमों का पालन करना प्रत्येक भिक्षुणी के लिए अनिवार्य था, जिसमें मुख्य रूप से भिक्षु ही भिक्षुणी को उपदेश देगा, पन्द्रह दिनों की पक्षमानत्व, भिक्षुणी की विद्वेष या दुर्व्यवहार, साथ में वर्षावास नहीं करना, भिक्षुओं का अभिवादन, अंजली जोड़ना, कुशलक्षेम आदि का पालन करना।9

उपर्युक्त आठ गुरू धर्मों के अतिरिक्त भगवान बुद्ध ने कुछ अतिरिक्त नियम पाचित्तिय में बुद्ध मात्रा भिक्षुणियों हेतु बनाया। यह व्यवस्था संघ में ब्रह्मचर्य को स्थायी रूप से बनाए रखने के लिए किया गया था।10 स्त्री अपने स्त्रीजन्य स्वाभाव के कारण सौन्दर्य प्रसाधन आदि का उपयोग नहीं करना है।11 इस प्रकार आठ गुरू–धर्म और अतिरिक्त विशेष नियमों के साथ संघ में स्त्रियों ने पात्रता लेकर प्रव्रज्या प्राप्त की। इन स्त्रियों ने विभिन्न साधना अवस्थाओं में प्रवज्जित होकर निर्वाण प्राप्त किया। कुछ निर्वाण प्राप्त सपफल थेरियों भिक्षुणियोंद्ध के उदाहरण थेरीगाथा में निर्वाण के संदर्भ में प्राप्त होते हैं।12 इनमें एक भिक्षुणी सुमेध,13 सुन्दरीनन्दा,14 सोणा,15 सकुला,16 वाशिष्ठी,17 एवं क्षेमा नामक भिक्षुणी की चर्चा की गई है।18 कृशागौतमी ने भी मुक्ति प्राप्त कर अपने उद्गारों की अभिव्यक्ति इस प्रकार से करती है ''अहो! मैं इस अवस्था में भी उस स्थान पर पहुँची हूँ, जहाँ मृत्यु नहीं है।19'' पूर्वोक्त सपफल थेरियों के उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि भगवान ने स्त्रियों को निर्वाण की अधिकारिणी मानते हुए उन्हें संघ में प्रव्रज्या का अधिकार दिया। उन्होंने न केवल संघ में ही स्त्रियों का महत्व बताया, अपितु विभिन्न सामाजिक प्रसंगों में भी स्त्रियों की प्रशंसा की है। उदाहरणार्थ बौद्ध युग के प्रारंभ में कन्याओं के जन्म पर अत्यंत खेद प्रकट किया जाता था। सामाजिक दृष्टि के साथ–साथ धर्मिक दृष्टि से भी पुत्र प्राप्ति को ही श्रेष्ठ माना जाता था। परन्तु भगवान बुद्ध ने उक्त भेद–भाव की खाई पाटने का प्रयास किया है। पुत्रियों को भी सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से स्वतंत्रता देते हुए उन्हें पवित्र माना। साथ ही उनके साथ उन्होंने अनैतिक आचरण करने वाले को 'प्राणदण्ड' देने का उपदेश दिया। माता के रूप में भी बौद्ध युग में नारी के प्रति विशेष सम्मान प्रदर्शित किया गया। स्वयं बुद्ध ने जननी के निःस्वार्थ प्रेम की सदैव सराहना की।20

इस प्रकार बौद्ध धर्म में जात–पात का कोई महत्व नहीं रहगया और हर 'बौद्ध' को किसी भी दूसरे बौद्ध से विवाह संबंध स्थापित करने की सलाह दी एवं बाल–विवाह, वृद्ध–विवाह एवं अनमेल विवाह को हर तरह से वर्जित और निषिद्ध मानागया है।21

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बौद्ध धर्म दर्शन में तमाम वर्जनाओं का पालन करते हुए स्त्रियाँ पुरूषों के समान स्थान प्राप्त करते हुए संघ में समान मुक्ति या निर्वाण पद को सपफलतापूर्वक प्राप्त की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विनय कुमार सिंह 'निराला', बौद्ध प्रज्ञा सिन्धु, न्यू भरती कॉरपोरेशन, दिल्ली, संस्करण – 2014, पृष्ठ – 13
2. डॉ. धर्मवीर, थेरीगाथा की स्त्रियाँ और डॉ. अम्बेडकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण – 2005, पृष्ठ – 41
3. पाटाचार, सपफल स्त्रोतापन साधिका हुई, अनुपमा ने अनागामी पफल को प्राप्त किया, थेरीगाथा।
4. संयुक्तनिकाय 1/6
5. मनुस्सा तं भिक्खुनि पस्सित्वा दूसेसुं। पचितियद्ध, पृष्ठ – 306 एवं चुल्लवग्ग, पृष्ठ – 388
6. ''सचे भन्ते... मातुगामो पब्बज्जायं'' वही पृष्ठ – 377
7. ''सचे आनन्द... न तं ब्रह्मचरियं चिरट्ठिकं होति,'' वही पृष्ठ – 373
8. भगवान बुद्ध पृष्ठ – 168–169, विनयपिटक, चुल्लवग्ग– 1/1/2
9. वही 10/1/2, पृष्ठ – 374–375

10. पाचित्तिय, पृष्ठ – 384 एवं महावग्ग, पृष्ठ – 309 एवं चुल्लवग्ग, पृष्ठ – 390–391
11. ''अलंकार धरणे, गंध्वरणक नहाने, वासितक पत्रिका नहाने'' पाचित्तिय, पृष्ठ – 87–89
12. भरत सिंह उपाध्याय, थेरीगाथा, हिन्दी रूपान्तर।
13. थेरीगाथा, गाथा सं.–516
14. वही, सं.– 83
15. वही, सं.– 104
16. वही, सं.– 101
17. वही, सं.– 137
18. वही, सं. 170–171
19. वही, सं.– 221–222
20. कोमल चन्द्र जैन, बौद्ध तथा जैन आगामों में नारी जीवन, पृष्ठ – 238–239
21. डॉ. भदन्त आनन्द कौसत्यायन, बौद्ध जीवन पद्धति, बुद्धभूमि प्रकाशन, नागपुर, संस्करण – पाँचवां, 1994

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

जबलपुर मण्डल में कर्मचारियों के मध्य भारतीय जीवन बीमा निगम की कार्यप्रणाली के संबध में संतुष्टि स्तर का अध्ययन

सुप्रभा

शोधार्थी रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्यप्रदेश)

सारांश :– बीमा, सुरक्षा एवं निश्चितता प्रदान करने वाली वह व्यवस्था है जिसके द्वारा बीमा प्राप्त करने वाला व्यक्ति इस बात से निश्चिन्त हो होता है कि भविष्य में यदि कोई घटना घटित हो जाती है जिससे उसे हानि होती है तो बीमा करने वाली संस्था उसकी इस हानि की क्षतिपूर्ति करेगी, जिसके बदले बीमा प्राप्त करने वाला व्यक्ति पहले से नियत राशि प्रतिफल के रूप में निश्चित शर्तों के अनुसार बीमा करने वाली संस्था को चुकाता रहेगा।

इस अध्ययन में मुख्यतः जीवन बीमा निगम का विस्तृत वर्णन किया गया है। जीवन बीमा अनुबन्ध मानव का आर्थिक कठिनाईयों के विरुद्ध सुरक्षा का एक सहकारी उपाय है। यह ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा मृत्यु से उत्पन्न परेशानियों से मुक्ति हेतू आर्थिक सहायता का प्रबन्ध किया जाता है। इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य जबलपुर मण्डल में जीवन बीमा निगम के कर्मचारियों के संतुष्टि स्तर को जाँचना है।

परिचय :– बीमा का प्रारम्भ कब, क्यों, कैसे तथा कहाँ हुआ, इन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने की कोशिश कई विद्वान कर चुके हैं तथा कई शोधकर्ता वर्तमान में कोशिश कर रहे हैं। बीमा का अस्तित्व प्राचीन काल से ही रहा है। यद्यपि उसकी उत्पत्ति के बारे में कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ ही बीमा का विकास हुआ है।

मानव सदैव ही अपने जोखिमों को कम करने की कोशिश करता रहा हैं और बीमा जोखिमों को कम करने का एक महत्वपूर्ण साधन हैं। मानव जीवन में निरंतर विद्यमान जोखिमों ने ही बीमा व्यवसाय को प्रेरणा दी हैं। यदि मनुष्य को यह पहले से ज्ञात हो जाए कि अमुक घटना द्वारा अमुक समय हानि होगी तो बीमा की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। अतः विपरीत घटना की सम्भावना तथा इसकी अनिश्चितता ही जोखिम का कारण होती हैं। कभी–कभी ऐसी घटनाएं घटित हो जाती हैं जिनसे मनुष्य को भीषण आर्थिक हानि होती हैं। अग्नि के कारण प्रतिवर्ष करोड़ों रूपये की सम्पत्ति नष्ट हो जाती हैं। प्रत्येक उद्योगपति कारखाने में होने वाली दुर्घटना के कारण कर्मचारियों को दी जाने वाली क्षतिपूर्ति के प्रति सुरक्षा चाहता हैं। व्यापारी माल की टूट–फूट तथा अग्नि एवं बाढ़ से बचाव का साधन चाहता हैं। निर्यातकर्ता समुद्री हानियों से बचना चाहता हैं। जहाज का मालिक जहाज की सुरक्षा चाहता हैं तथा बेरोजगार बेकारी के दुष्प्रभावों से सुरक्षा चाहता हैं। मानव जीवन में विद्यमान इन जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करने के लिए समय–समय पर विभिन्न बीमा प्रणालियों का विकास होता रहा हैं। बीमा द्वारा विभिन्न जोखिमों से बचा जा सकता हैं। इससे मनुष्य अपने आपको सुरक्षित तथा चिंतामुक्त अनुभव करता हैं।

वर्तमान युग में बहुमूल्य लेख, मृदु कंठ, टाइपिस्ट की अंगुली, खिड़कियों के कांच तक का बीमा कराया जा सकता हैं। बीमा कराने से विपरीत घटना घटित होने पर बीमादार को बीमाकर्ता से आर्थिक क्षतिपूर्ति मिल जाती हैं। पीड़ित व्यक्ति (बीमादार) उस कठिन परिस्थिति का सामना कर सकता हैं क्योंकि उसकी हानि वहन करने की क्षमता बढ़ जाती हैं। बीमा के द्वारा दुर्घटना को तो नहीं रोका जा सकता हैं किन्तु दुर्घटना से होने वाली क्षति से मनुष्य को बचाया जा सकता हैं। अतः निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता हैं कि आज के जोखिम भरे जीवन में आर्थिक सुरक्षा प्राप्त करने के लिए बीमा सबसे बड़ी आवश्यकता हैं।

इतिहास बताता हैं कि सबसे पहले समुद्री बीमा, इसके बाद अग्नि–बीमा और इसके बाद जीवन बीमा तथा सबसे अंत में विविध प्रकार के बीमा का प्रचलन हुआ।

उद्देश्य

1. भारत में जीवन बीमा निगम के उद्‌गम का अध्ययन

2. जीवन बीमा निगम से होने वाले विभिन्न लाभों की जानकारी

3. जबलपुर मण्डल में जीवन बीमा कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों के संतुष्टि स्तर का अध्ययन करना।

साहित्य की समीक्षा :– मेघा श्रीवास्तव, आलोक कुमार राय ने 2016 में जीवन बीमा उद्योग के संदर्भ में ग्राहक की वफ़ादारी के बारे में बताया। इस शोध पत्र ने जीवन बीमा सेवाओं के संदर्भ में ग्राहक वफादारी की विभिन्न अभिव्यक्तिओ का पता लगाया और अनुभवी परीक्षण किया, जिससे ग्राहकों की वफ़ादारी के परिणामों की विशिष्ट प्रकृति को रेखांकित करके, जीवन बीमा उद्योग में विपणन कर्त्ताओं को उपयोगी अंर्तदृष्टि प्रदान की तथा ग्राहक वफादारी के मौजूदा ज्ञान को विस्तारित किया। इस अध्ययन ने इन अभिव्यक्तियों के परिणाम को अलग–अलग वर्गों में वर्गीकृत किया और एक दूसरे के साथ तुलना करके अनुभवी मूल्यांकन किया। इसने जीवन बीमा सेवाओं के विशेष संदर्भ में ग्राहक वफादारी परिणामों के माप के लिए एक पैमाने को विकसित और मान्य करके ग्राहक वफ़ादारी के साहित्य को समृद्ध किया, चूँकि पूरे ग्राहक अपनी बीमाकंपनी के प्रति वफादार पाए गए थे।

एनागोल एस, कोल एस और सरकार एस, ने 2017 में भारत में जीवन बीमा एजेंटो द्वारा प्रदान की गई सेवाओं की गुणवत्ता के बारे में बताया है। उन्होंने भारत में जीवन बीमा एजेंटो द्वारा प्रदान की गई सलाह की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने के लिए क्षेत्रों में अलग–अलग परीक्षण किए। एजेंटो ने अनुचित रूप से, सख्ती से, वर्चस्व वाले उत्पादों की सिफारिश की, जो एजेंट को उच्च कमीशन प्रदान करते है । एजेंट उनकी अवधारणाओं के गलत होने पर भी अनजान उपभोक्ताओं की मान्यताओं को पूरा करते हैं। उन्होंने पाया कि एजेंट ग्राहकों द्वारा भुगतान की गयी प्रीमियम की राशि को अधिकतम करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं न कि बीमा क्षेत्र के ग्राहकों की आवश्यकता की ओर।

आर. राममोरथी, अंगप्पा गुनासेन, मैथ्यू राय, भरतेंद्र के.राय और एस. ए. सेंथिल कुमार ने 2018 में भारतीय जीवन बीमा के संदर्भ में दी जाने वाली सेवाओं और ग्राहकों को मिलने वाली संतुष्टि के बारे में बताया हैं। इस पत्र का उद्देश्य भारतीय जीवन बीमा क्षेत्र के संदर्भ में ग्राहक द्वारा प्रदत् सेवा गुणवत्ता आयाम्, संतुष्टि और व्यवहारिक इरादों की जांच करना था। इस अध्ययन ने उनके आयामी स्तर पर दोनों सरंचनाओं को जोड़कर सेवा की गुणवत्ता,संतुष्टि और व्यवहार के इरादे के बीच संबंधों की खोज की। भारतीय जीवन बीमा उद्योग में सेवा की गुणवत्ता, संतुष्टि और व्यवहारिक इरादों की आयामता का अध्ययन करने का प्रयत्न किया गया।

जीवन बीमा निगम का उद्गम :– भारत में पहली बीमा संस्था 'बम्बई म्युच्युअल इंश्योरेंस सोसाइटी लि0' के नाम से 1871 में स्थापित हुई थी। इसके पश्चात् सन् 1847 में 'दी ओरियंटल लाइफ इन्श्योरेंस कंपनी लि0' तथा सन् 1897 में, 'एंपायर ऑफ इंडिया' की स्थापना की गई। सन् 1912 में 'बीमा अधिनियम' पारित किया गया, जिसमें सन् 1938 व 1950 में व्यापक संशोधन किए गए। इस समय तक बीमा व्यवसाय में अनेक कमियां विद्यमान थी। फलस्वरूप भारत सरकार ने जून, 1956 में 'जीवन बीमा निगम अधिनियम' पारित किया। इस अधिनियम के अधीन 1 सितम्बर, 1956 से भारतीय जीवन बीमा निगम ने कार्य करना प्रारम्भ कर दिया, जिससे जीवन बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। भारतीय जीवन बीमा निगम प्रत्येक वर्ष 1 सितम्बर को अपनी वर्षगांठ मनाता है। भारतीय जीवन बीमा निगम भारत की सबसे बड़ी, सबसे पुरानी और सबसे ज्यादा फायदा देने वाली इश्योरेंस कंपनी है।

जीवन बीमा :– जीवन बीमा अनुबंध मानव का आर्थिक कठिनाईयों के विरुद्ध सुरक्षा का एक सहकारी उपाय है। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा मृत्यु से उत्पन्न परेशानियों से मुक्ति हेतु आर्थिक सहायता का प्रबंध किया जाता है। यह बीमाकर्त्ता तथा बीमित के मध्य एक ऐसा अनुबंध है जिसमें एक निश्चित प्रतिफल के बदले एक निश्चित अवधि के पश्चात् या उस अवधि में किसी निश्चित घटना के घटित होने पर बीमाकर्त्ता बीमित व्यक्ति या उसके उत्तराधिकारी को एक निश्चित धनराशि के भुगतान का वचन देता है।

जीवन बीमा अधिनियम 1956 की धारा 2 (12) के अनुसार, "जीवन बीमा व्यवसाय से आशय उस व्यवसाय से है जिसके अंतर्गत मानव जीवन का बीमा किया जाता है।"

जीवन बीमा का महत्त्व :– आज के अनिश्चिताओं से भरे हुए युग में जीवन बीमा मानवीय सभ्यता के लिए एक वरदान के रूप में साबित हुआ है। इसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए प्रसिद्ध बीमाशास्त्रियों "हुबनेर एवं ब्लैक" ने कहा है "जीवन बीमा की पर्याप्त राशि एक औसत बीमाधारक को अच्छा भोजन, अच्छी निद्रा तथा अच्छे कार्य की प्रेरणा देती है।"

जीवन बीमा व्यक्ति, समाज, राष्ट्र तथा विश्व को कई प्रकार से लाभान्वित करता है, जिसका वर्णन इस प्रकार है।

1. जीवन बीमा की सहायता से बीमादार के परिवार को आर्थिक सुरक्षा प्राप्त

होती है।

2. जीवन बीमा की सहायता से व्यक्ति अपनी वृद्धावस्था में आर्थिक रूप से

आत्मनिर्भर जीवन व्यतीत कर सकता है।

3. भारतीय आयकर अधिनियम के अनुसार जीवन बीमा में चुकाई गई प्रीमियम राशि पर आयकर की छूट प्राप्त होती है।

4. जीवन बीमा से मितव्ययता व बचत की भावना को प्रोत्साहन मिलता है।

5. बीमादार की मृत्यु के बाद उत्पन्न हुए संपति–कर के दायित्व का भुगतान बीमा के दावे की राशि से किया जा सकता है।

6. बीमापत्र की जमानत पर व्यक्ति वित्तीय संस्थाओं से ऋण भी प्राप्त कर सकता है।

7. आजकल जीवन बीमा ने ऐसे बीमापत्र भी निर्गमित किए है जिनकी सहायता से बीमादार अपने बच्चों की शिक्षा के आर्थिक व्यय को आसानी से वहन कर सकते हैं।

8. जीवन बीमा, आवास समस्या का समाधान करता है।

9. जीवन बीमा, जीवन स्तर में वृद्धि करता है।

10. बेरोजगारी की समस्या का समाधान करने में जीवन बीमा कार्यरत है।

11. वर्तमान युग में, जबकि संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, जीवन बीमा छोटे परिवारों को कुछ सीमा तक सुरक्षा प्रदान करने में सहायक है।

12. जीवन बीमा संस्था समाज की मूल्यवान बचतों का उपयोग उत्पादन कार्यों में करती है, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होती है।

13. जीवन बीमा निगम द्वारा करोड़ो रुपये का प्रीमियम एकत्र किया जाता है जो देश के पूंजी बाजार को शक्तिशाली बनाता है।

14. जीवन बीमा निगम अपने द्वारा निर्गमित बीमापत्रों पर, आसान शर्तों पर साख प्रदान करता हैं।

15. साझेदारी व्यवसाय में साझेदारों का संयुक्त जीवन बीमापत्र लेकर किसी सांझेदार की अकाल मृत्यु से उत्पन्न होने वाले जोखिम के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की जा सकती है।

16. ऋणदाता द्वारा ऋणी के बीमापत्र की जमानत के आधार पर ऋण देने पर उसकी मृत्यु के बाद भी ऋण प्राप्ति की सुरक्षा रहती है।

17. कर्मचारियों का सामूहिक बीमा करवाकर व्यवसायी अपनी ख्याति व साख में वृद्धि कर सकता है।

18. बीमा कम्पनियों की आय पर सरकार को काफी बड़ी मात्रा में आयकर प्राप्त होता है। बीमा कंपनी बेरोजगार व्यक्तियों की सहायता करके उन्हें आर्थिक सहायता देती है।

जबलपुर मण्डल में जीवन बीमा निगम कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों की संतुष्टि स्तर की जांच का अध्ययन

कर्मचारियों की संतुष्टि स्तर की जांच करने से पहले कर्मचारियों की संतुष्टि का अर्थ जानना आवश्यक है।

कर्मचारियों की संतुष्टि से अभिप्रायः है कि जीवन बीमा निगम की कार्यप्रणाली, वेतन, कार्य

वातावरण, निगम की सेवा की गुणवत्ता, प्रतिष्ठा, भविष्य में प्रगति के मार्ग आदि के प्रति संतुष्टि से है। अर्थात् कर्मचारी इन सभी से खुश है या नहीं। अगर वे इन सभी पहलूओं से खुश है तो इसका अर्थ है कर्मचारी भारतीय जीवन बीमा निगम के प्रति संतुष्ट है। जबलपुर मण्डल में जीवन बीमा निगम के प्रति कर्मचारियों की संतुष्टि स्तर को जानने के लिए एक सर्वे किया गया जिसमें 60 अलग–अलग कर्मचारियों से नौ अलग–अलग पहलुओं के प्रति जानकारी एकत्रित की गई। इन नौ पहलुओं में वेतन से संतुष्टि, कार्य वातावरण से संतुष्टि, प्रतिष्ठा/बाजार स्वीकार्यता/ब्रांड जागरूकता से संतुष्टि, निगम की सेवा की गुणवत्ता से संतुष्टि, ग्राहकों के लिए प्रोमोशनल योजनाओ से संतुष्टि, करियर में प्रोमोशनल मार्ग से संतुष्टि, निगम द्वारा दी गई सुविधाओं से संतुष्टि, कमीशन का पुनःभुगतान से संतुष्टि, कर्मचारियों की आवश्यकता के अनुसार बीमा उत्पाद से संतुष्टि को शामिल किया गया है। इन सभी नौ पहलुओं की जांच के लिए पांच बिन्दु स्केल का प्रयोग किया गया जो कि बिन्दु 1 बहुत कम, बिन्दु 2 कम, बिन्दु 3 मध्यम, बिन्दु 4 उच्च, बिन्दु 5 बहुत उच्च को दर्शाता है। इन सभी पहलुओं पर कर्मचारियों की प्रतिक्रियाओं को संतुष्टि तालिका 1 से लेकर संतुष्टि तालिका 9 तक दर्शाया गया है।

तालिका 1
वेतन से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1- बहुत कम संतुष्टि	10	16.7	16.7	16.7
3- मध्यम संतुष्टि	17	28.3	28.3	45.0
4- उच्च संतुष्टि	27	45.0	45.0	90.0
5- बहुत उच्च संतुष्टि	6	10.0	10.0	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है 55 प्रतिशत कर्मचारी वेतन से संतुष्ट है। केवल 16.7 प्रतिशत कर्मचारी ऐसे है जो वेतन से संतुष्ट नहीं है।

तालिका 2
कार्य वातावरण से संतुष्टि

Response	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
2- कम संतुष्टि	10	16.7	16.7	16.7
3- मध्यम संतुष्टि	9	15.0	15.0	31.7
4- उच्च संतुष्टि	38	63.3	63.3	95.0
5- बहुत उच्च संतुष्टि	3	5.0	5.0	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 68.3 प्रतिशत कर्मचारी कार्यालय में कार्य वातावरण से संतुष्ट है जबकि 16.7 प्रतिशत कर्मचारी कम संतुष्ट है।

तालिका 3
प्रतिष्ठा/बाजार स्वीकार्यता/ब्रांड जागरूकता से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1- कम संतुष्टि	3	5.0	5.0	5.0
3- मध्यम संतुष्टि	25	41.7	41.7	46.7
4- उच्च संतुष्टि	19	31.7	31.7	78.3
5- बहुत उच्च संतुष्टि	13	21.7	21.7	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से प्रतीत होता है कि जीवन बीमा निगम की प्रतिष्ठा से 53.4 प्रतिशत कर्मचारी संतुष्ट है। 41 प्रतिशत कर्मचारी ऐसे है जिनकी संतुष्टि का स्तर मध्यम है अर्थात् वे पूरी तरह संतुष्ट नहीं है। 5 प्रतिशत कर्मचारी ऐसे है जो कम संतुष्ट है।

तालिका 4
निगम की सेवा की गुणवत्ता से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1– बहुत कम संतुष्टि	6	10.0	10.0	10.0
2- कम संतुष्टि	5	8.3	8.3	18.3
3- मध्यम संतुष्टि	12	20.0	20.0	38.3
4- उच्च संतुष्टि	24	40.0	40.0	78.3
5- बहुत उच्च संतुष्टि	13	21.7	21.7	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 61.7 प्रतिशत कर्मचारी निगम की सेवा की गुणवत्ता से संतुष्ट है। 18.3 प्रतिशत कर्मचारियों की संतुष्टि का स्तर बहुत ही कम है।

तालिका 5
ग्राहकों के लिए प्रोमोशनल योजनाओं से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
2- कम संतुष्टि	13	21.7	21.7	21.7
3- मध्यम संतुष्टि	14	23.3	23.3	45.0
4- उच्च संतुष्टि	21	35.0	35.0	80.0
5- बहुत उच्च संतुष्टि	12	20.0	20.0	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 55 प्रतिशत कर्मचारी ग्राहकों के लिए प्रमोशनल सम्बन्धित योजनाओं से संतुष्ट है जबकि 21.7 प्रतिशत कर्मचारी ग्राहकों के लिए प्रमोशनल योजनाओं से कम संतुष्ट है।

तालिका 6

करियर में प्रोमोशनल मार्ग से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1– बहुत कम संतुष्टि	6	10.0	10.0	10.0
2- कम संतुष्टि	10	16.7	16.7	26.7
3- मध्यम संतुष्टि	8	13.3	13.3	40.0
4- उच्च संतुष्टि	23	38.3	38.3	78.3
5- बहुत उच्च संतुष्टि	13	21.7	21.7	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत कर्मचारी करियर में प्रोमोशनल मार्ग से संतुष्ट है जबकि 10 प्रतिशत कर्मचारी बहुत कम संतुष्ट है।

तालिका 7

निगम द्वारा कर्मचारियों को दी गई सुविधाओं (मुफ्त मोबाइल/लैपटॉप/चिकित्सा/बीमा) से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1- कम संतुष्टि	9	15.0	15.0	15.0
2- मध्यम संतुष्टि	15	25.0	25.0	40.0
3- उच्च संतुष्टि	36	60.0	60.0	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत कर्मचारी कम्पनी द्वारा दी गई मुफ्त सुविधाएं जैसे मोबाईल, लैपटॉप, चिकित्सा आदि से संतुष्ट है जबकि 15 प्रतिशत कर्मचारी बहुत कम संतुष्ट है। ऐसा कोई भी कर्मचारी नहीं है जिसने इस सुविधा के प्रति बहुत उच्च संतुष्टि स्तर को दर्शाया है।

तालिका 8

कमीशन का पुनःभुगतान (अर्जित और भुगतान के बीच समय का अंतराल) से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
2- कम संतुष्टि	10	16.7	16.7	16.7
3- मध्यम संतुष्टि	9	15.0	15.0	31.7
4- उच्च संतुष्टि	30	50.0	50.0	81.7
5- बहुत उच्च संतुष्टि	11	18.3	18.3	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 68.3 प्रतिशत कर्मचारी कमीशन का पुनःभुगतान सम्बन्धित सुविधा से संतुष्ट है जबकि 16.7 प्रतिशत कर्मचारी ऐसे है जो बहुत कम संतुष्ट है।

तालिका 9

कर्मचारियों की आवश्यकता के अनुसार बीमा उत्पाद से संतुष्टि

Response	Response Frequency	Response Percent	Response Valid Percent	Response Cumulative Percent
1– बहुत कम संतुष्टि	5	8.3	8.3	8.3
2- कम संतुष्टि	11	18.3	18.3	26.7
3- मध्यम संतुष्टि	26	43.3	43.3	70.0
4- उच्च संतुष्टि	18	30.0	30.0	100.0
Total	**60**	**100.0**	**100.0**	

Source : Primary Data

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 30 प्रतिशत कर्मचारी, कर्मचारियों की आवश्यकता के अनुसार बीमा उत्पाद से सम्बन्धित पहलू से संतुष्ट है जबकि 8.3 प्रतिशत कर्मचारी ही ऐसे है जो संतुष्ट नहीं है या बहुत कम संतुष्ट है। ऐसा कोई भी कर्मचारी नहीं पाया गया जो बहुत उच्च संतुष्टि स्तर को प्रदर्शित करता हैं।

निष्कर्ष :– प्रारम्भ में लोगों को जीवन बीमा से अनेकों कठिनाईयां भी होती थी परन्तु जीवन बीमा निगम ने समय के साथ काफी प्रगति की तथा उन सभी कठिनाईयों को दूर करने का प्रयास किया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट है कि लगभग 58 प्रतिशत कर्मचारी भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा प्रदान की गई विभिन्न सुविधाओं से संतुष्ट है। जबकि 11.5 प्रतिशत ऐसे कर्मचारी है जो भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा प्रदान की गई विभिन्न सुविधाओं से संतुष्ट नहीं है। भारतीय जीवन बीमा निगम की प्रतिष्ठा, निगम की सेवा गुणवत्ता तथा करियर में प्रमोशनल मार्ग संबंधी पहलुओं पर कर्मचारियों ने अधिकतम संतुष्टि स्तर को प्रदर्शित किया है। भारतीय जीवन बीमा निगम इस संतुष्टि स्तर को ओर अधिक करने के लिए कार्यशील है। शोध पत्र में किए गए सर्वे से प्रतीत होता है कि काफी कर्मचारी कार्यालय के कार्यवातावरण से संतुष्ट नही हैं। अतः कर्मचारियों को कार्य के प्रति अनुकूल परिस्थितियां उपलब्ध कराई जानी चाहिए। ग्राहकों के लिए समय–समय पर प्रमोशनल योजनाएं जारी करनी चाहिए। कर्मचारियों को भविष्य में उनकी पदोन्नति के पर्याप्त अवसर दिये जाने चाहिए तथा निगम द्वारा समय–समय पर मुफ्त सेवाएं चिकित्सा, बीमा, मोबाईल आदि दी जानी चाहिए। समय–समय पर कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण शिविर लगाए जाने चाहिए ताकि कर्मचारी तकनीकी परिवर्तनों को आसानी से अपना सकें और सुविधापूर्वक अपना काम कर सके। जीवन बीमा निगम द्वारा कर्मचारियों की आवश्यकता को जानकार कर्मचारियों की आवश्यकता के अनुसार बीमा उत्पाद उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

संदर्भ–सूची

1. www.google.com
2. www.licindia.in
3. Srivastava, M., & Rai, A.K. (2016), The Manifestations of Customer Loyalty in Indian Life Insurance Industry : An Empirical examination, Management insight – The Journal of incisive Analysers, 12 (02).
4. Anagol, S., Cole, S. & Sarkar, S. (2017). Understanding the advice

of commissions – motivated agents : Evidence from the Indian the Insurance market. Review of Economics and Statistics, 99 (1), 1-15.

5. Rarnamoorthy, R., Gunasekaran, A., Roy, M., Rai, B.K. & Senthilkumar, S.A. (2018). Service quality and its impact on customers behavior intentions and satisfactions an empirical study of the Indian life insurance sector. Total Quality Management & Business Excellence, 29(7-8), 834-847.

6. https://hi.m.wikipedia.org/wiki/बीमा

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

ग्रामीण मानव संसाधन विकास की योजनाओं का अध्ययन

डॉ. शिवेन्द्र शर्मा
प्राचार्य, प्रज्ञान महाविद्यालय, कसरावद (म.प्र.)

भारत सरकार द्वारा ग्रामीण मानव संसाधन विकास हेतु पृथक मंत्रालय बनाया गया हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय ग्रामीण भारत में तीव्र और स्थायी विकास तथा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन लाने के प्रयास कर रहा हैं। पिछले कुछ वर्षो के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की प्राथमिकता दी गई हैं। इस मंत्रालय द्वारा नए कार्यक्रम शुरू करने, पहले से जारी कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए उन्हें नया रूप देने और विकास प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी को बढ़ावा देने के अनेक उपायों पर अमल किया गया।

आर्थिक उदारीकरण और ढांचागत समायोजन की आवश्यकताओं के अनुरूप गरीबों, खासकर ग्रामीण निर्धनों को सुरक्षा कवच प्रदान करने के लिए ग्रामीण निर्धनता कार्यक्रमों के अनुपालन हेतु संसाधनों के आवंटन में निरंतर वृद्धि करते हुए ग्रामीण विकास को उच्च प्राथमिकता दी गई हैं। दसवी पंचवर्षीय योजना के लिए ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए धन का आवंटन बढ़ाकर 76,774 करोड़ रूपये कर दिया गया जबकि नोवी पंचवर्शीय योजना के दौरान 42,874 करोड़ रूपये आवंटित किए गए थे। चालू वर्श यानि 2005–06 के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय का स्वीकृत परिव्यय 24,480 करोड़ रूपये है। लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप विकास का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए स्वयं–सहायता समूहों और पंचायती राज संस्थानों के जरिए विकास प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी पर बल दिया जा रहा हैं। ग्रामसभाओं को स्वशासन का सशक्त मंच बनानें के लिए उन्हें महत्वपूर्ण दायित्व सौंपे गए हैं। दो प्रमुख योजनाओं, पहली, दिहाड़ी रोजगार प्रदान करने वाली 'संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना' (एसजीआरवाई) और दूसरी, स्वरोजगार प्रदान करने वाली 'स्वर्ण जयंती ग्राम रोजगार योजना' (एसजीएसवाई), कार्यान्वित की जा रही हैं ताकि देश के ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे बड़ी चुनौती–बेरोजगारी का सामना किया जा सके।

ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त लाभकारी रोजगार और खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ स्थाई सामुदायिक, सामाजिक और आर्थिक ढांचे के निर्माण के लिए पहले से जारी दो योजनाओं, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना और रोजगार आश्वासन योजना, को मिलाकर 25 सितंबर, 2001 को संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई) प्रारंभ की गई यह कार्यक्रम स्व–लक्षित किस्म का है जिसमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और जोखिमपूर्ण व्यवसायों से निकाले गए बच्चों के अभिभावकों को दिहाड़ी रोजगार उपलब्ध कराने पर विशेष जोर दिया जाता हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के विकास हेतु ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएँ समय–समय पर आवश्यकतानुसार बनाई गई और ग्रामीण विकास के आधारभूत ढाँचे को सुदृढ़ करने की दिशा में कार्य किए गए परन्तु आज भी हम अपेक्षित सफलता हासिल नहीं कर पाये हैं। यह अवश्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में सकारात्मक बदलाव, परिवर्तन एवं विकास हुआ हैं। आज सभी राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए तीन स्तरों के ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं योजनाएं संचालित हो रही है यथा बाह्य सहायता प्राप्त, केन्द्र प्रवर्तित एवं राज्य प्रवर्तित कार्यक्रम। इस अध्याय में केन्द्रीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं योजनाओं का विस्तार से उल्लेख किया गया हैं।

जिलों में आवश्यकता आधारित आर्थिक–सामाजिक और सामुदायिक परसंपत्तियों के निर्माण के जरिए पूरक दिहाड़ी रोजगार और खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के काम को और गहन बनाया जा सके। कार्यक्रम के अंतर्गत पहली प्राथमिकता के रूप में जल संरक्षण, सूखा न पड़ने देने के उपायों और भूमि–विकास संबंधी कार्यो पर ध्यान केंद्रित किया जाता हैं। इसके अतिरिक्त आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय जरूरतों के मुताबिक बाढ़ नियंत्रण के उपायो, हर मौसम में चालू रहने वाली सड़कों के संदर्भ में ग्रामीण संचार और अन्य उत्पादन कार्यो को भी शामिल किया जा सकता हैं।

ग्रामीण संचार सुनिश्चित करना गांवो के विकास की समग्र विकास नीति का महत्वपूर्ण और अभिन्न अंग हैं। शत–प्रतिशत केन्द्र प्रायोजित प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पी.एम.जी.एस.वाई.) 25 दिसंबर, 2000 को शुरू की गई इस योजना का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में सड़क संपर्क से वंचित उन सभी गांवों को 10वीं योजना के अंत तक बाहरमासी सड़कों से जोड़ना है जिनकी आबादी 500 या इससे अधिक हैं। इस योजना के अंतर्गत यह उम्मीद की जा रही है कि विस्तारित और नवीनकृत ग्रामीण सड़क नेटवर्क से गांवों में रोजगार के अवसर बढ़ेगे, नियमित मंडियों ओर मेला बाजारों तक पहुंच बढ़ेगी, स्वास्थ्य शिक्षा और अन्य सार्वजनिक सेवाए बेहतर ढंग से उपलब्ध होंगी और ग्रामीण–ग्रामीण अंतराल पाटने में मदद मिलेगी। सुरक्षा, संरक्षण, स्वाभिमानी, सामाजिक प्रतिष्ठा, सांस्कृतिक पहचान, संतुष्टि और प्रगति के संदर्भ में आवास मानव की बुनियादी जरूरतों में से एक है। निर्धन बेघरों को मकान उपलब्ध कराने और ग्रामीण आवास की कमी शीघ्र पूरी करने के लिए मंत्रालय का एक प्रमुख कार्यक्रम 'इंदिरा आवास योजना' हैं। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रति आवासीय इकाई सहायता राशि 1 अप्रैल, 2004 से मैदानी भागों में 20,000 रूपये से बढ़ाकर 25,000 रूपये और पर्वतीय/दुर्गम क्षेत्रों में 22,000 रूपये बढ़ाकर 27,000 रूपये की गई।

प्रदेश के दूर–दराज, पहुंचविहीन और सुविधाओं से वंचित इलाकों में आधुनिकता से पूर्णतः अंजान आदिवासियों का भरा–पूरा संसार बसता है। प्रकृति के सान्निध्य में पहले वाला यह जीवन भरपूर मेहनत करने के बाद अभी भी विकास की रोशनी से महरूम है। राज्य सरकार इन धरती पुत्रों को शिक्षा, स्वास्थ्य, पीने के पानी, बिजली के साधन, आवागमन की सुविधा आदि बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराकर उनके शोषण पर पूर्ण विराम लगा देना चाहती है। सरकार का यह एक कदम जो नतीजे उपलब्ध करायेगा उसे सुदूर भविश्य तक याद किया जायेगा।

मध्यप्रदेश सरकार आदिवासी विकास पर विशेश ध्यान दे रही है। संतुलित विकास के लिए भी यह जरूरी है कि जो समुदाय विकास की दौड़ में पिछड़ गये है उन पर खास ध्यान दिया जाए। इनका पिछड़ापन दूर करने के लिए सर्वाधिक ध्यान शैक्षणिक विकास पर दिया जा रहा है। शैक्षणिक विकास के लिए किये गये कार्यो के बेहतर नतीजे सामने आ रहे है। इस दिशा में और अच्छे नतीजे हासिल करने के लिए रणनीति बनाई गई है। आदिवासियों का शैक्षणिक विकास राज्य सरकार की प्रतिबद्धता को दर्शाते है। मध्यप्रदेश, जनजातीय बहुल प्रांत है। विकास की कोई भी अवधारणा बिना इस वर्ग को शामिल किये अधूरी ही है। इन्हें विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए मजबूत प्रयास हो रहे है। शिक्षा और रोजगार के साथ जनजातीय संस्कृति के संरक्षण के बुनियादी कार्य को भी गति मिली है। इससे आदिवासी अब विकास की मुख्यधारा से जुड़ रहे है।

सुदूर अंचलों में रहने वाले आदिवासियों के जीवन खुशहाली लाने के लिए राज्य सरकार के कई कल्याणकारी कार्यक्रम शुरू किये है। इनसे उनके जीवनस्तर और रहन–सहन से अपेक्षित सुधार आया है। वनवासियों के कल्याण के लिए राज्य सरकार ने स्वास्थ्य, शिक्षा रोजगार और सामाजिक उत्थान की जो योजनाएं शुरू की हैं, वे उनके जीवन में सुखद बदलाव लाने वाली है।

उनकी संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन तथा प्रोत्साहन की विभिन्न गतिविधियों का संचालन भी किया जा रहा है। इस समुदाय में शिक्षा का स्तर भी बहुत कम है। कहा जाता है कि शिक्षा सब प्रकार के विकास का द्वार होता है। आदिवासी समुदाय में साक्षरता का कुल प्रतिशत मात्र 18.37 प्रतिशत है। इनमें पुरूषों में साक्षरता 27.84 प्रतिशत और महिलाओं में केवल 8.77 प्रतिशत है। इसलिए आदिवासियों की उन्नति एवं कल्याण के लिये शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसार सर्वाधिक जरूरी है। इसके लिए प्रदेश में विभिन्न स्तर की की शिक्षण संस्थायें कार्यरत है। राज्य में 12643 कनिष्ठ प्राथमिक/प्राथमिक शालायें, 4369 माध्यमिक शालायें, 510 हाईस्कूल, 476 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 9 आदर्श उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, 3 कन्या विद्या परिसर, 14 क्रीडा परिसर, 1166 प्री–मेट्रिक छात्रावास, 86 पोस्टमेट्रिक छात्रावास तथा 725 आश्रम शालायें संचालित है।

गत तीन वर्षो 2004 से 2006 तक आदिवासी छात्र–छात्राओं के शिक्षा के स्तर के उन्नयन करने तथा उन्हें ओर अधिक व्यापक बनाने के लिए कई कदम उठाये गये है। मुख्यतः विशेष पिछड़ी आदिवासी जाति

बैगा, सहरिया तथा भारिया के छात्रों को विशेष छात्रवृत्ति मंजूर की गई। इससे वर्ष 2005–06 में 37102 छात्र लाभान्वित हुए। इन पर करीब साढ़े चौबीस लाख रूपये व्यय का प्रावधान है।

जिला स्तर पर पूर्व में खोले गये 50 सीट के एक बालक तथा एक बालिका उत्कृष्ट छात्रावास के समान आदिवासी विकासखण्ड मुख्यालयों पर भी उत्कृष्टता शिक्षा केन्द्र खोले गये है। जिनमें छात्र–छात्राओं की आवास सुविधाओं के साथ पूरे वर्ष भर कोचिंग की भी व्यवस्था की गई है। वर्ष 2004–05 में 60 उत्कृष्ट संस्थान खुले जिन पर 213 लाख रूपये व्यय हुए। वर्ष 2005–06 में 40 संस्थाओं पर 142 लाख और वर्ष 2010–11 में 52 संस्थानों पर 210 लाख रूपये के व्यय का अनुमान है। इसी प्रकार पूर्व में जिला मुख्यालयों पर प्रारंभ किये गये उत्कृष्ट विद्यालय खोले गये है जिनमें चयनित छात्र–छात्राओं को प्रवेश दिया जाता हैं। इस प्रकार 10 लाख रूपये प्रति संस्था के मान से वर्ष 2004–05 से 2011–12 तक 140 विद्यालय खोले गये। प्रत्येक आदिवासी विकासखण्ड मुख्यालयों पर आदिवासी छात्राओं के लिए नवीन प्री–मैट्रिक छात्रावास तथा वर्ष 2008–9 में 166 लाख रूपये के व्यय से 20 छात्रावास तथा वर्ष 2011–12 में 61 लाख रूपये के प्रावधान से 6 छात्रावास स्थापित किये गये है। वर्ष 2011–12 में विशेष पिछड़ी जनजाति क्षेत्र की 70 प्राथमिक शालाओं के आश्रम में परिवर्तन के लिए 290 लाख रूपये एवं 50 नवीन आश्रमों के लिए 278 लाख रूपये का वित्तीय प्रावधान किया गया है।

आदिवासी छात्रों के उच्च अध्ययन के लिए नवीन पोस्टमेट्रिक छात्रावास प्रारंभ किये गये है।

जहाँ वर्ष 2005–06 में 19 लाख रूपये व्यय के साथ 5 और वर्ष 2006–07 में 7 लाख 68 हजार रूपये के वित्तीय प्रावधान के साथ 2 नवीन पोस्ट मेट्रिक छात्रावास में सीटों में बढ़ोतरी की गई। वर्ष 2005–06 में 111 लाख रूपये के वित्तीय प्रावधान के साथ 2000 सीटें और इसी प्रकार वर्ष 2011–12 में भी अतिरिक्त सीटों का प्रावधान 186 लाख रूपये के साथ किया गया। पूर्व में संचालित आश्रम शालाओं में 311 लाख 58 हजार रूपये व्यय कर 82000 सीटों की वृद्धि की गई। विदेशों में अध्ययन के लिये छात्र–छात्राये लाभान्वित होंगे। साथ ही इनके अभिभावकों की आय सीमा भी 3 लाख वार्षिक से बढ़कर 5 लाख कर दी गई।

इस योजना के तहत वर्ष 2007–08 में एक छात्र को करीब 13 लाख रूपये तथा वर्ष 2010–11 में भी एक छात्र को 11 लाख 36 हजार रूपयों की छात्रवृत्ति दी गई। आदिवासी आश्रम तथा छात्रावासों के सुदृढ़ीकरण और अन्य सुविधायें जुटाने के लिए वर्ष 2010–11 में 20 करोड़ तथा वर्ष 2012–13 में 5 करोड़ 74 हजार रूपये तथा मरम्मत सुधार मद में 3 करोड़ 83 हजार रूपये का आवंटन उपलब्ध कराया गया। छात्रावासों तथा आश्रमों में लोकप्रिय और विश्वस्त स्टेन्डर्ड कम्पनियों से ही सामग्री खरीदी के निर्देश भी दिये गये। इसी सिलसिले में वर्ष 2012–13 तक 1500 लाख रूपये के प्रावधान के साथ 6 नये आदर्श आवासीय विद्यालय स्थापित होंगे और इसी वित्तीय वर्ष 2012–13 में 3 नवीन एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालय 750 लाख रूपये के आवंटन के साथ प्रारंभ किये गये है।

आदिवासी इलाकों में शिक्षा का लगातार प्रसार हो रहा है। इस वर्ष 2009–10 में 25 हाईस्कूलों को उन्नत कर हायर सेकेण्डरी बनाया गया जिस पर 75 लाख रूपये का प्रावधान है। इसी प्रकार इस वित्तीय वर्ष 2011–12 में 100 माध्यमिक विद्यालयों को हाईस्कूल बनाया गया। इसके लिए 200 लाख रूपये का प्रावधान किया गया ऐसे आदिवासी विकासखण्ड मुख्यालयों में जहां कन्याओं के लिए अध्ययन के लिए अलग से हाई स्कूल नहीं है वहां 17 नवीन कन्या हाई स्कूलों की स्थापना होगी। इन पर 34 लाख रूपये का आवंटन उपलब्ध कराया गया।

जब तक कुशल और पर्याप्त शिक्षक न हो तब तक शिक्षा के स्तर में उन्ननयन नहीं हो सकता। इसी नजरियें से स्कूलों में शिक्षक–छात्र का अनुपात मानदण्डों के अनुरूप 54 प्राचार्य सेकेण्डरी स्कूल, 73 प्राचार्य हाई स्कूल, 13 संविदा शिक्षक वर्ग–1, 507 संविदा शिक्षक वर्ग–2 तथा 359 संविदा शिक्षक वर्ग–3 के नवीन पद सृजित किये गये। इस सिलसिले में आश्रम तथा छात्रावास के लिए 667 चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के पद स्वीकृत किये गये। पुस्तकालय किसी भी शिक्षा संस्थान का एक अनिवार्य अंग है।

2013–14 में प्री–मेट्रिक छात्रावास तथा 129 पोस्ट मेट्रिक छात्रावासों में पुस्तकालय प्रारंभ किये जा रहे है, जिसके लिये प्रत्येक पुस्तकालय के लिए पन्द्रह हजार रूपये का प्रावधान किया गया है। विद्यालय एवं छात्रावासों को प्रोत्साहन देने के लिए श्रेष्ठ विद्यालय/आश्रम को प्रतियोगिता के आधार पर जिला स्तर पर प्रथम पुरस्कार 25 हजार रूपये का रखा गया है।

आदिवासी युवाओं को प्रोत्साहन देने के लिये संघ लोक सेवा आयोग एवं राज्य लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में प्रारंभिक परीक्षा में उर्त्तीण होने, मुख्य परीक्षा में उर्त्तीण होने तथा अंतिम रूप से चयनित होने पर अर्थात् तीनों स्तरों पर प्रोत्साहन राशि देने का प्रावधान है। इस योजना में जहाँ वर्ष 2004–05 में 2537 आदिवासी प्रतिभागियों को 588 लाख रूपये और 2005–06 में 506 उम्मीदवारों को 60 लाख रूपये वितरित किये गये वही वर्श 2011–12 में इस कार्य हेतु 140 लाख रूपये का प्रावधान किया जो परीक्षा परिणाम आने पर पात्र प्रतिभागियों में वितरित किया गया। आदिवासी स्वभाव से ही खेल प्रेमी होते है। उन्हें प्रशिक्षण और प्रोत्साहन देकर राष्ट्रीय और राज्य स्तर की प्रतियोगिताओं में उतारा जा सकता है। इस योजना के तहत स्वर्ण, रजत एवं कास्य पदक जीतने वाले खिलाड़ियों को 2000 रूपये से लेकर 22000 रूपये तक की राशि प्रोत्साहन के रूप में दी जाती है।

वर्ष 2008–09 में 41 खिलाड़ियों को 2 लाख 60 हजार रूपये तथा वर्ष 2010–11 में 82 खिलाड़ियों को 7 लाख 72 हजार रूपये पुरस्कार के रूप में दिये गये। आदिवासी विद्यालयों में शिक्षकों की पूर्ति के लिए संविदा वर्ग के एक के 583 पद विज्ञापित किये गये जिनमें से 327 पर भरे गये। संविदा पद में 6130 पद भरे गये है। रिक्त रह गये पदों को भरने की प्रक्रिया प्रगति पर है।

बालिकाओं के आवागमन के लिए शासन की योजना के तहत वर्ष 2008–09 में 181.02 लाख रूपये की लागत से 11188 बालिकाओं को, वर्ष 2010–11 में 198.10 लाख रूपये की लागत से 12156 बालिकाओं को तथा वर्ष 2012–13 में 297 लाख रूपये की लागत से 14882 बालिकाओं को साइकिले दी गई। कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना के तहत छात्रवृत्ति के अतिरिक्त कक्षा 6 की बालिकाओं को 500 रूपये, 9वीं की बालिकाओं को 1,000 रूपये तथा कक्षा 11वीं की बालिकाओं को 2000 रूपये प्रोत्साहन स्वरूप दिये जाते है। इस योजना में वर्ष 2008–09 में 71894 कन्याओं को 428.91 लाख रूपये वर्ष 2011–12 में 78203 कन्याओं को 564.69 लाख रूपये दिये गये।

मध्यप्रदेश की स्थापना के स्वर्ण जयंती वर्ष में आदिवासी क्षेत्रों में कुछ विशेष योजनायें और कार्यक्रम संचालित किये जा रहे है। इस सिलसिले में स्वर्ण जयंती अनुसूचित जनजाति बस्तियों में आधारभूत सुविधायें सड़क, प्रकाश, पेयजल, आदि पर वर्ष 2010–11 में 9 करोड़ रूपये का प्रावधान था।

छात्रावासों तथा आश्रमों में बिजली की सुगम आपूर्ति के लिए इनवर्टर लगाये गये जिनसे बिजली अवरोध की स्थिति में विद्युत आपूर्ति बनी रहे। उ.मा. विद्यालयों में कला संकाय, कृषि, वाणिज्य, गृह विज्ञान खोलने की स्वीकृति दी गई है। प्राथमिक शालाओं में किचन शेड बनवाये जायेंगे। विद्यार्थी कल्याण योजना में अधिकतम राशि 500 रूपये तक स्वीकृत का प्रावधान था। अब इसमें 25 हजार रूपये तक का प्रावधान कर दिया गया है। आदिवासी संस्कृति के संरक्षण के लिए प्रत्येक आदिवासी जिले में डेढ़ लाख रूपये का आबंटन दिया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1) डांडवेल, एच.एच.द केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, न्यू देहली, सेज पब्लिकेशन्स
2) दुभाशी, पी.आर. रूरल डवलपमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया, मुम्बई पॉपूलर प्रकाशन, 1970
3) गौर, के.डी. (ऐडीटेड), डायनामिक्स ऑफ रूरल डवलपमेन्ट, न्यू देहली, मित्तल पब्लि, 1992
4) शर्मा बी.एम. एवं अन्य जिला सरकार अवधारणा, स्वरूप एवं संभावनाएँ, जयपुर रावत पब्लिकेशन्स, 1999
5) शर्मा शकुन्तला, ग्रासरूट पॉलिटिक्स एण्ड पंचायतीराज, न्यू देहली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, 1994
6) बोस, आशीष, पोपूलेशन ऑफ इण्डिया, 1991 सेन्शन रिजल्टस एण्ड मैथडोलॉजी देहली, बी.आर. पब्लि., 1992

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

छतरपुर जिले की राजनीतिक एवं प्रशासनिक पृष्ठभूमि

डॉ. राधिकेश जोशी
राजनीति विज्ञान, शास. महाविद्यालय, सतवास

छतरपुर, टीकमगढ़ लोकसभा क्षेत्र के अंतर्गत आता है। वर्तमान सांसद डॉ. वीरेन्द्र कुमार खटीक है। जिले में खजुराहों संसदीय क्षेत्र के पूर्व सांसद श्री जितेन्द्र सिंह बुन्देला एवं वर्तमान सासंद श्री नागेन्द्र सिंह नागोद जी हैं एवं दमोह संसदीय क्षेत्र के सांसद श्री प्रहलाद पटेल जी का भी क्षेत्र शामिल है। जिले में वर्तमान में 6 विधानसभा क्षेत्र है। छतरपुर विधानसभा की पूर्व विधायक श्रीमती ललिता यादव है। जबकि वर्तमान विधायक श्री अलोक चतुर्वेदी हैं। इसी प्रकार महाराजपुर विधानसभा क्षेत्र के पूर्व विधायक श्री मानवेन्द्र सिंह जी व वर्तमान विधायक श्री नीरज दीक्षित जी हैं। चंदला के पूर्व विधायक श्री आर.डी. प्रजापति व वर्तमान विधायक श्री राजेश प्रजापति जी हैं। राजनगर के श्री कुं. विक्रम सिंह उर्फ नातीराजा, बिजावर के पूर्व विधायक श्री पुष्पेन्द्र पाठक (गुड्डन) एवं वर्तमान विधायक श्री राजेश शुक्ला जी हैं एवं बड़ामलहरा की पूर्व विधायक श्रीमती रेखा यादव हैं एवं वर्तमान विधायक श्री कुवंर प्रदुम्य सिंह लोदी उर्फ मुन्ना भैया जी हैं। छतरपुर जिले में तहसीलों की कुल संख्या 11 है। जिसके अंतर्गत छतरपुर, नौंगांव, राजनगर, बिजावर, लवकुशनगर, गौरीहार, बड़ामलहरा, बक्स्वाहा, महाराजपुर, चंदला एवं घुवारा तहसीलें शामिल है। वर्तमान में जिले के अंतर्गत तीन नगर पालिकाऐं है। जिसमें छतरपुर, नौंगांव, व नवगठित नगर पालिका महाराजपुर शामिल है। जिले में नगर पंचायतों की कुल संख्या 12 है। इनमें हरपालपुर, बारीगढ़, राजनगर, लवकुशनगर, खजुराहों, बक्स्वाहा, बड़ामलहरा, बिजावर, घुवारा, किशनगढ़, चंदला, गढ़ीमलहरा नगर पंचायतें शामिल है। वर्तमान में छतरपुर जिला पंचायत अध्यक्ष राजेश प्रजापित, उपाध्यक्ष श्री अमित पटेरिया जी एवं मुख्य कार्यपालन अधिकारी श्री हर्ष दीक्षित जी हैं। जिला पंचायत छतरपुर के अंतर्गत 8 जनपद पंचायते हैं। इनमें छतरपुर, राजनगर, लवकुशनगर, बड़ामलहरा, बारीगढ़, नौगांव, बिजावर एवं बक्स्वाहा जनपद पंचायत शामिल है। वर्तमान में जिले की 8 जनपद पंचायतों के अंतर्गत 558 ग्राम पंचायते है।

प्रशासनिक दृष्टि से यह जिला 11 तहसीलों छतरपुर, राजनगर, नौगांव, लौंडी, गौरीहार, बिजावर, बड़ामलहरा, महाराजपुर, बक्स्वाहा, चंदला और घुवारा है। इसके अंतर्गत छतरपुर जिले में 8 विकासखंडों छतरपुर, राजनगर, नौंगांव, लौंडी, गौरीहार, बिजावर, बड़ामलहरा और बक्स्वाहा में बाँटा गया है। इस जिले में उचित मूल्य की दुकानों की संख्या (जनवरी 2011) शहरी में 94 हैं और उचित मूल्य की दुकानों की संख्या (जनवरी 2011) ग्रामीण क्षेत्रों में 562 हैं।

छतरपुर जिले का नामकरण इस क्षेत्र में महान योद्धा महाराजा छत्रसाल के नाम पर रखा गया है। यह जिला पहले विन्ध्य प्रदेश में शामिल था। 1 नवम्बर 1956 को मध्यप्रदेश राज्य के गठन के समय इसे विन्ध्य प्रदेश से अलग कर मध्यप्रदेश में शामिल किया गया था। छतरपुर जिले में 558 ग्राम पंचायतों के अंतर्गत 1192 ग्राम है। इस जिले में विकाखण्डों की कुल संख्या 8 है, जिसके अंतर्गत छतरपुर, राजनगर, नौगांव, लौंडी(लव–कुश नगर), गौरिहार, बिजावर, बड़ामलहरा एवं बक्स्वाह विकासखण्ड शामिल है। छतरपुर जिले में 7 शासकीय महाविद्यालय व अत्यधिक अशासकीय महाविद्यालय हैं। जिले में जिला अस्पताल के अलावा 10 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 37 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र व 185 उप स्वास्थ्य केन्द्र है। इसके अलावा एक सिविल अस्पताल भी है। ग्रामीण विकास एक बहुआयामी अवधारणा है जिसमें कृषि विकास, अधोसंरचना विकास (बिजली, सड़क, स्कूल, स्वास्थ्य केन्द्र, जनसंचार एवं जल उपलब्धता आदि) लघु एवं कुटीर उद्योग विकास, निर्धनता एवं बेरोजगारी में कमी आदि शामिल होते हैं। इसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक, प्रौद्योगिकी एवं ग्रामीण जीवन के प्राकृतिक तत्वों का इच्छित दिशा में राष्ट्र के लक्ष्य के अनुरूप ढ़ांचे में परिवर्तन होता हैं। वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्र के विकास के अनेकानेक कार्यक्रम कार्यरत हैं। दिसम्बर 2005 से कार्यरत भारत निर्माण योजना के अंतर्गत ग्रामीण अधिसंरचना के विकास के लिए अनेक कार्यक्रम चल रहे हैं। ग्रामीण आवासीय सुविधा प्रदान करने के लिए ''इंदिरा आवास योजना'', ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु ''राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना'', गाँवों में शुद्ध पेयजल प्रदान करने हेतु ''त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम'', प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने हेतु

गाँवों में ''ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन'' तथा 'बागवानी मिशन' के द्वारा प्रमुख खाद्यान्नों पर आत्मनिर्भरता का लक्ष्य हासिल करने का प्रयास किया जा रहा हैं। फरवरी 2006 से लागू राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम के द्वारा गाँव के प्रत्येक अकुशल गृहस्थी को 100 दिन का रोजगार प्रदान किया जा रहा है तथा स्वरोजगार हेतु स्वर्णजयन्ती ग्राम स्वराज योजना(1999) से कार्यरत हैं।

जहाँ पहले ग्रामीण विकास कार्यक्रम कृषि हेतु बनाये जाते थें वहीं अब ये ग्रामीण विकास के हर क्षेत्र में जीवन को समृद्ध बनाने के लिए निर्मित हो रहे है। प्रधानमंत्री के द्वारा प्रायोजित 15 सूत्रीय कार्यक्रम के द्वारा पिछड़े वर्गो के उत्थान से लेकर अल्पसंख्यक समुदाय की बाते समाहित हैं। वृद्धों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए जननी सुरक्षा कार्यक्रम चलाया जा रहा है। 2001 से ग्रामीण नौनिहालों को शिक्षित करने के लिए सर्वशिक्षा अभियान कार्यरत है। ग्रामीण कृषि सिंचाई हेतु भू–जल संरक्षण एवं वितरण कार्यक्रम कार्यरत हैं। इस प्रकार से ग्रामीण समाज के सर्वांगिण विकास के लिए ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रसारित किये जा रहे हैं।

संदर्भ सूची :–

1. इंडियन आर्कियालॉजी, ए रिव्यू, 1960–61, पृ. 59.
2. नीलकंठ शास्त्री, दी एज ऑफ दी नन्दाज एण्ड मौर्याज, पृ. 260
3. इपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द इकतीस, पृ. 206
4. दी. एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ. 65

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

चौदहवीं–पन्द्रहवीं सदी में मिथिला की सामाजिक स्थिति : एक अवलोकन

अविनाश कुमार झा

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास, इतिहास विभाग, जगत नारायण लाल कॉलेज, खगौल,

पटलीपुत्र विश्वविद्यालय, पटना, बिहार

अद्यतन अकादमिक विमर्श में क्षेत्रिय अध्ययन की अवधारणा काफी सशक्त रुप में स्वीकृत होकर सामने आई है। ऐतिहासिकता, इतिहास बोध एवं 'आधुनिक इतिहास लेखन' के प्रसंग में चिन्तन पश्चिम के विद्वानों के बीच 18वीं सदी से प्रारम्भ हुआ।[1] जर्मनी के प्रसिद्ध चिन्तक जे.जी. हर्डर 1774 ई. में इतिहास की प्रासंगिकता और प्रधानता के पक्ष में अपनी – **ए फिलॉसफी ऑफ हिस्टरी फॉर द एजुकेशन ऑफ ह्यूमैनिटी** के जरिये तर्कपूर्ण विचार प्रस्तुत किये – इससे इतिहास के पक्ष में विद्वानों का सोच आगे बढ़ा। एक के बाद दूसरे, के सम्मिलित प्रभाव से ऐतिहासिक दृष्टि की सामाजिक सत्यता के प्रसंग सार्थकता की पुष्टि होती गई, और ऐतिहासिकता, अर्थात् सामाजिक सत्यता की व्याख्या ऐतिहासिक आधार पर करने की बात आगे आई।[3] 19वीं सदी के अन्त तक हिस्टोरिसिज्म के प्रसिद्ध ऐतिहासिक चिन्तक रैन्के से प्रेरित वस्तुनिष्ठ (objective) इतिहास की धाराएँ दृष्टिगोचर थी। रैन्के की दृष्टि में इतिहासकार का काम मात्र ऐतिहासिक 'तथ्य' (facts) के शोध, संचयन, संकलन तक ही सीमित था – उसके मूल्यांकन का नहीं। 20वीं सदी के आरम्भिक काल में मियेनेके और क्रोचे जैसे इतिहास–चिन्तकों ने वर्तमान के प्रश्नों एवं समस्याओं के सन्दर्भ में ही इतिहास अन्वेषण, मूल्यांकन एवं परीक्षण को स्थापित किया।

फिर फ्रांस में इसी दशक से मार्क ब्लॉच, फेब्रे तथा फरनैंड जैसे **एन्नेल्स** स्कूल के इतिहासकार – चिन्तकों ने अपने विश्वविख्यात कृतियों से उपर्युक्त विचारों को परिपक्व किये और उसे विद्वद्जगत में प्रतिष्ठा दिलाये। साथ ही इंगलैंड में 1940 के दशक से उभरता हुआ 'सोशल हिस्टरी' हॉब्सबॉम और ई.पी. टॉम्पसन के बहुमूल्य प्रयास और कृतियों से 1970 तक आते–आते प्रतिष्ठित हुआ जो फ्रांस के **एन्नेल्स** स्कूल के अनुसार ही था। इससे भारत के इतिहासकार लोग भी बहुत ही प्रेरित हुए।[4] यहाँ भी 'हिस्टरी फ्रॉम बिलो', अर्थात् विभिन्न श्रेणी और पेशों के जन समुदायों (जिनका स्थान निम्न स्तर पर रहा और जिनका इतिहास लेखन में स्थान नहीं रहा) ऐसे विशाल जन–समूहों को इतिहास लेखन में स्थान देने की प्रवृत्ति प्रारम्भ हुई।[5] 1980 के दशक से **सबऑल्टर्न** प्रोजेक्ट की शुरूआत हुई।

इन विषयों के आलोक में मिथिला की ऐतिहासिक धरातल पर ध्यान देने की चेष्टा की जाय। उपेक्षित वर्ग, उपेक्षित लोक (उच्च वर्ग के व्यक्ति भी उपेक्षित होते हैं जिनके योगदान जो आज के संदर्भ में महत्वपूर्ण हैं भुलाए जा चुके हैं या भुलाए जा रहे हैं), उपेक्षित विचार–धारा, परम्परा इत्यादि जो आज के समाज के विशाल जन–समूह से संबंधित हैं, इन सबका इतिहास, जिसे हम सामान्य जनों का इतिहास (people's history) कह सकते हैं, तैयार हो सकता है। भारत के कई अन्य भू–भाग के तुलना में इस क्षेत्र पर शोध कम हुए हैं। आवश्यकता है कि शोध हो इस तरह से जो **ऐतिहासिक सम्पूर्णता** (totality) **की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त शोध प्रणाली पर आधारित हो जिससे यहाँ** के सोशल रियलिटी (social reality) का सही ज्ञान पैदा हो सके।

14वीं सदी की चण्डेश्वर ठाकुर कृत **राजनीति रत्नाकर** संपादक थे सर के.पी. जायसवाल अपने 'इन्ट्रोडक्शन' में इन्होंने बहुत बातों का जिक्र किया। मिथिला में 14वीं–15वीं सदी और उसके बाद से उभरते सामाजिक–सांस्कृतिक एवं धार्मिक प्रवृत्तियों एवं उसके विविध पक्ष की चर्चा की गई है। इनके अनुसार भारत में प्राचीन काल से चली आ रही 'अर्थशास्त्र' और 'दण्डनीति' की परम्परा 11वी सदी तक प्रायः समाप्त हो गई और धर्मशास्त्र का वर्चस्व बढ़ने लगा जिसके चलते राजतन्त्र सम्बन्धित विषयों का विवेचन भी अब धर्मशास्त्र के सिद्धान्तों के आधार पर ही प्रारम्भ हुआ।[6] महत्वपूर्ण बात यह है कि भरतीय समाज में ब्राह्मणीय/वैदिक वर्चस्व बढ़ रहा था, उदारवादी दृष्टिकोण जिससे समाज

के विभिन्न सेकुलर (secular) गतिविधियों, विधयों और पेशाओं (occupations) को बल मिलता है वह क्षीण हो रहा था। अलबेरूनी 11वीं सदी में भारत आये थे; उन्होंने भी यह महसूस किया कि यहाँ की सामाजिक और राजनीतिक माहौल ऐसे हो गये हैं कि धर्मशास्त्रीय विधाओं के अतिरिक्त सेकुलर विद्याएँ और धाराएँ न तो ठहर सकती है और नही पनप सकती है।[7] स्पष्ट है कि अलबेरूनी भी ब्राह्मणिक/वैदिक धारा के उभरते वर्चस्व और उसके संभावित परिणाम को अनदेखा नहीं कर सके। उच्च वर्णों (खासकर क्षत्रियों) से नीचे वर्णों के लोग भी विभिन्न क्षेत्रों में राजा/चीफ (प्रधान) बने रहे थे, जैसे जपला के 'खयरवाल' शासक, पाल राजकुल, वर्धन राजकुल इत्यादि।[8] ऐसे राजाओं को समाज में अपने राजा–पद की औचित्य (legitimacy) सिद्ध करने के लिये ब्राह्मणों का सहारा लेना पड़ा जो उनके लिये ऐसे (झूठे) कुर्सीनामें तैयार कर उन्हें प्राचीन काल के सूर्यवंशी या चन्द्रवंशी प्रमाणित करते थे।[9] बे.डी. चट्टोपाध्याय के अनुसार ऐसे राजे ब्राह्मणों के सहयोग पर निर्भर करने लगे जिसके बदले उन्हें काफी भू–सम्पत्ति दान में प्राप्त होने लगा।[10] एक दूसरे प्रख्यात इतिहासविद्, डेविड शूलमन, ब्राह्मणां के इस उभरते वर्चस्व की बात किये हैं।[11] प्रायः यह कम बढ़ता ही गया और के.पी. जायसवाल के अनुसार, 14वीं सदी तक आते–आते चण्डेश्वर ने यह महसूस किया कि इस प्रवृत्ति के उभरने से जाति/वर्ण और पॉलिटी का शास्त्रीय सम्बन्ध वास्तविकता में मूलतः समाज में विच्छिन्न हो चुका है, राज्याभिषेक की बात निरर्थक है और, प्रायः इसीलिये, एक तरह से क्रान्तिकारी व्यवस्था दिये कि राजा वही जो प्रजा की रक्षा करे, चाहे वह किसी भी जाति या वर्ण का हो।[12] चण्डेश्वर ठाकुर अपने समय, 14वीं सदी के प्रख्यात विद्वान राजपुरुष (statesman) थे। पी.वी. काणे के अनुसार मिथिला और बंगाल के क्षेत्रों में चण्डेश्वर के दिये गये विचार और व्यवस्था का बहुत ही व्यापक प्रभाव पड़ा।[13] इसी लिये शायद, अब ब्राह्मणों द्वारा निर्मित झूठे कुर्सीनामों का कोई प्रयोजन नहीं रहा– ऐसे कुर्सीनामों के बनने का कोई उदाहरण बाद के दिनों में प्रकाश में नहीं आये हैं – जहाँ तक मुझे ज्ञात है। चण्डेश्वर की व्यवस्था ही किसी जाति/वर्ण के राजा को मान्यता प्रदान करती गई। बहुत विश्वासपूर्ण तो नहीं कह सकते, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि चण्डेश्वर की इस व्यवस्था के चलते बहुत सी जातियों (जिन्हें हम अभी निम्न या दलित वर्गों के मानते हैं) के लोग भी अल–अलग इलाके में राजा या चीफ (प्रधान) बने, अपने शासन चलाए। 1883 ई. में (उर्दू में) प्रकाशित पुस्तक आईना–ए–तिरहुत में लेख बिहारी लाल 'फितरत' अपने फील्ड सर्वे से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर निम्न लिखित गढ़ों के अवशेष का जिक्र करते हैं; मधुबनी जिला में परगना हाटी और परगना जरैल में राजा कठेश्वरी के गढ़ों के अवशेष राजा गन्ध की गढ़ी का अवशेष प. हाटी और परगना जरैल में राजा कठेश्वरी के गढ़ों के अवशेष राजा गन्ध की गढ़ी का अवशेष प. हाटी में, राजा भर की गढ़ी के अवशेष प. चखनी में, एवं परगना हावी में दुसाध राजा के गढ़ का खण्डहर।[14] 1933 ई. में प्रकाशित भागलपुर दर्पण (हिन्दी में) में लेखक झरखण्डी झा अपने फील्ड सर्वे के दौरान प्राप्त सूचनाओं के आधार पर इस जिले में गंगा के उत्तर खासकर चेतौरी, कैवर्त और भर राजाओं/प्रधानों के दुर्गों, महलों और मन्दिरों के अवशेष का जिक्र करते हैं और मौखिक परम्परा की चर्चा करते हैं जिसके अनुसार खेतौरी राजों से पहले दक्षिण भागलपुर में नट और दुसाध राजाओं का शासन था।[15] भर राजा के साथ खण्डवला राज संस्थापक म.म. महेश ठाकुर के बालक अच्युत ठाकुर के (16वीं सदी में) संघर्ष एवं भर राज–परिवार के उन्मूलन के प्रसंग म.म. परमेश्वर झा लिखित मिथिला तत्व विमर्श में एक विवरण है[16] मिथिला के इतिहासकारों के लिये यह एक आवश्यक विषय है कि ऐसे राजाओं/प्रधानों के शासन की उत्पत्ति, उसकी व्यवस्था, उसकी प्रतिष्ठा, समाज के विभिन्न वर्गों के बीच सम्बन्ध, उत्पादन, पेशाओं, इत्यादि के प्रसंग विस्तार से शोध करें। मैं यहाँ मात्र इसे समाज में 13वीं–14वीं–15वीं सदी में उभरते उदारवाद की प्रवृत्ति के प्रमुख उदाहरण के रूप में विवेचन करने का प्रयास रहा हूँ। पहले जो जाति–वर्ण आधारित राजा होने की, याने, राजसत्ता की परम्परा थी उससे राजनीतिक क्षेत्र (political sector) को किसी न किसी हद तक स्वतंत्रता मिली।

फिर 14वीं–15वीं सदी में विद्यापति प्रेम के (राधा–कृष्ण के प्रेम के) गीत गाये, मैथिली में यह स्थापित करते हुए कि देसिल बयना सद जन मिट्ठा। 'देसिल बयना' में बहुत पहले से ही रचनाएँ हो रही थीं, जैसे पाली में बौद्ध ग्रन्थो की रचना हो चुकी थी, ज्ञानेश्वरी की रचना मराठी में हो चुकी थी। लेकिन, कभी, किसी ने सब जन मिट्ठा की सैद्धान्तिक गुणवत्ता

जाहिर नहीं की थी – प्रायः सोशियो–लिंग्विस्टिक्स (socio-linguistics) की यह प्रथम अवधारण देने वाले विद्यापति थे, जिन्होंने 'सब जन' के रूचि की बात किये – उसे सिद्धान्त के रूप में स्थापित किये, 'सब जन' को लोक (people) साहित्य की परिधि में लाये। विद्यापति लोग पक्ष की ओर झुके थे। इनसे पूर्व 14वीं सदी के पूर्वार्ध में ज्यातिरीश्वर ठाकुर द्वारा वर्णरत्नाकर की रचना हो चुकी थी–मैथिली गद्य में, जिसका महत्व इतिहास, समाजशास्त्र और मानव विज्ञान के लिये बहुत ही विशिष्ट है–सोशल सर्वे की यह प्रथम कृति है पूरे भारत में मिथिला की यह प्रथम कृति हैं पूरे भारत में मिथिला में भी अन्य (कुछ) क्षेत्रों की तरह लोक भाषा/बोली बुद्धिजीवियों के चिन्तन का माध्यम प्रायः सशक्त रूप से बन चुका था। मध्य युग में ब्राह्मणिक/वैदिक और लोक मत की बीच संघर्ष या द्वन्द्व बहुत प्रखर हों गयाय।[17] ऐसे स्वरों में किसी भाषा या विद्या के विरोध की बात नहीं की जा सकती–बात थी भाषा या विद्या–के किसी एक वर्ग में सीमित रहने से उस आधार पर उस वर्ग का समाज में अपने हित में वर्चस्व बनाये रखने के प्रयास और उस वर्चस्व का दूसरे वर्ग द्वारा विरोध/संघर्ष। इस संघर्ष को कहा गया कहीं संस्कृत विरोधी और कहीं भाषा विरोधी–लेकिन उसका अर्थ ऐसे वाक्यों से नहीं बल्कि उसमें निहित संदर्भ (वर्चस्व की राजनीति) से सही होता है। वाक्य और उसके सही अर्थ निरूपण के प्रसंग विद्यापति अपने पुरूष परीक्षा में (शास्त्रविद्या कथा में) बहुत सहज रूप से स्पष्ट किये हैं।[18] यह संघर्ष नौलेज (knowledge) और पावर (power) के सम्बन्ध के तहत था। नॉलेज (knowledge) और पावर (power) के सम्बन्धों का इतिहास हमारे यहाँ अपर्याप्त है जिस पर शोध अपेक्षित है और जिससे इस प्रसंग द्वन्द्वों और संघर्षों की सही विवेचना हो सकती है। नामवर सिंह जिसे लोकमत कहते हैं वह लोकायत है। इसकी परम्परा वैदिक युग से घटती–बढ़ती रही, जिसे देवीप्रसाद चट्टोपाध्याय और अन्य कई विद्वान वैदिक परम्परा के समानान्तर मानते हैं, जिसमें जाति–वर्ण विचार का कोई स्थान नहीं रहा, स्त्री–पुरूष के भेद भी नहीं रहे, सारे तंत्र परपम्पराएँ एवं अन्य, (खासकर जाति–वर्ण व्यवस्था के विरूद्ध जितने सेक्ट्स और कल्ट्स थे, सब प्रायः इसी लोकायत परम्परा के तहत आते हैं।[19] तंत्र मार्गों का विकास विशाल जन–समूह के बीच फैल रहा था और बुद्धिज्म भी उसमें प्रवेश पाकर जन–समुदायों में पहुँच गया और फिर नाथ सम्प्रदाय के 8वीं–9वीं सदी से जो विकास हुआ उसमं 14वीं सदी के पहले तक करीब 125 सिद्धों के नाम मिलते हैं जिनमें कई महिलाएँ हैं जो खसकर जिन्हें हम आज दलित समूह मानते हैं उसी जाति समूह के (द्विवेदी, हजारी प्रसाद, 1918 नाथ सम्प्रदाय हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली पौ.6. नई दिल्ली : राजकमल : 48), तीसरी–चौथी सदी (ई.पू.) में जब उच्च वर्ण के महिलाओं को भी वैदिक परम्परा में भागीदारी से हटा दिया गया तो वे भी कालक्रम से तांत्रिक परम्पराओं को अपनाते गये। 14वीं–15वीं सदी तक आते–आते विभिन्न धार्मिक मतों का संघर्ष (जो हिंसा पूर्ण नहीं थे) बहुत प्रखर हो गया। साथ ही, 13वीं–14वीं सदी तक सब लोग अपने को 'हिन्दू' कहने लगे, 'हिन्दू' अस्मिता अपनाये, और पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार पहली बार विभिन्न धार्मिक मतों के मानने वाले (बुद्धिज्म, जैनिज्म और इस्लाम को छोड़कर) एक कॉमन 'हिन्दू' अस्मिता से बन्ध गये– इतना बड़ा जन समूह का आधार उससे पहले किसी एक, वैदिक या लोकायत परम्परा को भी नहीं मिला था[20] विद्यापति के बाद नानक, कबीर, चैतन्य, सब सिद्धान्ततः इसी भावना के अनुसार वर्ण–जाति के विरूद्ध विचारों के प्रसार के लिये जाने जाते रहे हैं। उदारवादी प्रवृतियों को इस तरह बल मिलता रहा जो उच्च वर्णे के अतिरिक्त विशाल जन समूह में फैलता गया।

मिथिला में कबीर पन्थ के इतिहास का गहन अध्ययन पुर्णेन्दु रंजन ने किया है और इन्होंने दिखलाया है कि कैसे 17वीं सदी से इस पन्थ को उच्च वर्णे को छोड़कर अन्य निम्न और दलित वर्गों के जन समूह अपने विचार धारा (idealogy) के रूप में स्वीकार करता गया।[21] फ्रान्सिस बुकानन के पुर्णियाँ और भागलपुर के रिपोर्ट्स (19वीं सदी के आरम्भ काल) में कबरी पन्थ, नानक शाही, इत्यादि के मानने वालों की विशाल जनसंख्या निम्न वर्गों की का विवरण मिलता है। महिलाओं के बीच, उच्च वर्ण की महिलाएँ भी लोकायत के तहत विभिन्न तंत्र परम्पराओं को सदियों से अन्य वर्णों/जातियों के महिलाओं साथ एक कॉमन (common) आईडियोलोजी (ideology) का निर्वाह करती रही, जिसके चलते उनके बीच आपस में ज्यादे जातिगत भेद–भाव नहीं रहे। आज भी अगर आप किसी उच्च वर्ण के घर के भीतर जाय तो देख सकते हैं कि उनके घर की महिलाएँ अन्य महिलाओं के साथ

एक ही स्थान पर बिना किसी विशेष दूरी के अन्तरंग बातें करती हैं। महिलाओं में विभिन्न तांत्रिक परपम्परा का ज्ञान पुश्त–दर–पुश्त मौखिक परम्परा पर आधारित रहा, तांत्रिक यंत्रों पर आधारित 'अरिपन' का ज्ञान भी उन्हीं के बीच रहा–उसी से ज्यादा प्रभावित मिथिला या मधुबनी पेंटिंग का सृजन महिलाओं तक ही सीमित था–पुरूष वर्ग में इस प्रसंग कोई ज्ञान नहीं था–अब तो बाजार बढ़नें से सभी इस ओर आकर्षित हैं। बहुत सारे लोकगीत महिलाओं के बीच ही रहे जिसे सभी वर्ण की महिलाएँ साथ–साथ विभिन्न अवसरों गाते रहें।

तात्पर्य यह है कि उदारवादी विचार लोकायत के अन्तर्गत विशाल जन समूह जो मुख्यतः निम्न वर्णों और दलित जाति समूह के थे उनके बीच बहुत हद तक फलता–फूलता गया। इसके विपरीत, मिथिला में खासकर, उच्च वर्णों में, विशेषकर ब्राह्मणों में, संकीर्ण भावना पनपती रही।

के.पी. जायसवाल के अनुसार 11वीं सदी के बाद से धर्मशास्त्रीय पक्ष प्रबल होता गया। बुद्धिजीवी वर्ग जो वैदिक परम्परा के मुख्य पक्षधर थे, उन्होंने 13वीं–14वीं सदी तक विद्याओं को उफर्ध्वाधर (vertical) वर्गीकरण कर दिया। समस्तरीय (horizantal) वर्गीकरण तो प्राचीन काल से चला आ रहा था, लेकिन उसमें किसी का मुख्य या गौण होने की बात नहीं थी। यहाँ सिर्फ यह कहना चाहता हूँ कि कृषि एवं अन्य सेकुलर (secular) वृत्तियों की विद्याओं को गौण स्थान दिया गया और धर्मशास्त्र से सबंधित विद्याओं को बहुत ही प्रमुख माना गया। ध्यान देने की बात है कि कृषि पर ही पूरा समाज टिका था–बुद्धिजीव वर्ग भी उसी पर अपने जीवन निर्वाह करते थे, परन्तु इस विद्या को ही गौण बना दिया गया। समाज इस तरह अन्दर से कमजोर होता गया–उत्पादन पर असर पड़ा होगा; उत्पादन से जुड़े वर्गों के सम्बन्ध भी प्रभावित हुए होंगे। प्राचीन काल में ऐसी बात नहीं थी–सभी वर्ग के लोग कृषि कार्य में भाग लेते थे–जनक के हल चलाने (सीता जन्म प्रसंग) का जो लिजेन्ड (legend) है वह ऐतिहासिक दृष्टि से सत्यता की झलक देता है; कृषि विद्या का स्थान अन्य विद्याओं के समान ही था। मगर मध्य युग आते–आते ब्राह्मणों ने हल छूना भी पाप मान लिया–कृषि विद्या उपेक्षित हो गई। कृषि पराशर (प्रायः दसवीं सदी) के बाद कोई पुस्तक नहीं लिखी गयी। एक पोथी उपवन विनोद (संस्कृत में) का प्रकाशन कामेश्वर सिंह द. संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा 1984 ई. में हुई, लेकिन इसके लेखक और उनके काल के विषय मं कोई सूचना नहीं है।

शास्त्रों में भी जो महत्वपूर्ण माने गये उनमें न्याय या नव्यन्याय का स्थान सर्वोपरि हो गया। के.पी. जायसवाल के अनुसार पहले कहा गया, कि मौलिक चिन्तन (original thinking) का ह्रास 11वीं–12वीं सदी से प्रारम्भ हो चुका था–मिथिला में यह कुछ देर से हुआ। भारतीय दर्शन की अन्तिम मौलिक कृति तत्व चिन्तामणि दिनेश चन्द्र भट्टाचार्य के अनुसार 14वीं सदी के गंगेश उपाध्याय का है–जिससे कालक्रम में मिथिला ही नहीं, पूरा देश का बौद्धिक जगत आन्दोलित हो गया। लेकिन, उसके बाद टीकाकारों का युग आया। पांडित्यपूर्ण टीके लिखे गये। भट्टाचार्य के अनुसार गुरू–शिष्य के बीच लिखित वाद–विवाद की परम्परा प्रारम्भ हुई जिससे बहुत ही महत्वपूर्ण, स्वस्थ और ऐक्टिव (active) इन्टेलेक्चुअल \(intellectual) माहौल का सृजन हुआ, लेकिन 17वीं सदी तक आते–आते यह परम्परा विलीन हो गई जिससे मिथिला की बौद्धिक गरिमा करीब–करीब समाप्त ही हो गई।[22] बाद में ऐसे पंडितों की संख्या घटती ही गई। म.म. गंगानाथ झा के अनुसार 19वीं सदी के अन्तक तक आते–आते जिस मिथिला में पहले कभी 100 मीमांसक थे अब मात्र तीन ही बच गये थे।[23] अन्य विद्याओं के इतिहास की ओर झाँकेंगे तो यही पायेंगे कि मौलिक चिन्तन क्रिया मन्द होती गई सभी शास्त्रों में – बौद्धिक जगत ह्रास की ओर बढ़ता गया। संकीर्ण भावना के उदय होने से समाज में चली आ रही बौद्धिक परम्परा भी 14वीं–15वीं सदी के बाद क्रमशः कमजोर (ह्रासोन्मुख) होती गई।

समाज के संदर्भ में जन्म शुद्धता (purity) जाति शुद्धता पर आधारित थी–इसलिये 14वीं सदी के प्रारंभिक काल में वंशावलियों के पंजी प्रबन्ध का आयोजन हुआ। पंजी प्रसंग से यह प्रतीत होता है कि जिस मिथिला में पहले विद्या और व्यक्तित्व ही सबसे बड़ा मूल्य (value) था, 14वीं–15वीं सदी के बाद धीरे–धीरे जाति भी उसके साथ जुड़ती गई, यों कहिये कि हावी होती गई। गंगेश, वर्धमान, आयाची, इत्यादि के परिचय में उस समय के लेखों में मैथिल अस्मिता का उल्लेख तो है, लेकिन मैथिल ब्राह्मण के अन्दर की जाति–भावना की बात नहीं है। लेकिन 17वीं सदी से प्रारम्भ होते–होते 18वीं सदी तक आकार मैथिल ब्राह्मणों

के अन्तर्गत श्रोत्रिाय, योग्य, पंजीबद्ध एवं जयवार वर्गों का वर्टिकल (vertical) वर्गीकरण सुनिश्चित हो गया।[24] श्रोत्रिय पहले भी थे, लेकिन वे व्यक्ति विशेष हुआ करते थे–कोई जाति या वर्ग न हीं, अब जातीय आधार पर भेद–भाव, जैसे, विवाह, खान–पान इत्यादि में बढ़ने लगा। जाति से विशुद्धता (purity) जुड़ी जुड़ी थी (धर्मशास्त्रीय आधार पर) और धीरे–धीरे मिथिला या मैथिल होने की अस्मिता (Identity) का पंजी ही मुख्य स्तम्भ या आधार हो गया–रमानाथ झा के अनुसार।[25] चूंकि मिथिला के कर्ण कायस्थों में भी पंजी व्यवस्था प्रारम्भ से रही इसलिये उन्हें भी मैथिल अस्मिता में जगह मिली, अन्य सभी वर्ग इस पहचान (identity) से वंचित हो गये। पंजी व्यवस्था से कर्ण कायस्त समाज भी 8 श्रेणियों में बँट गये।[26] इस तरह ब्राह्मणों और कायस्थों के समाजों का भीतर से खण्ड–पखण्ड हो गया–सामूहिक कम्युनिटी (community) की भावना शिथिल होती गई–अपने–अपने श्रेणी की महत्ता, अहंकार की सर्वोपरि हो गया। मिथिला की प्राचीन काल से चली आ रही सारी सांस्कृतिक–बौद्धिक पूंजी इसके समक्ष मानो नतमस्तक हो गई। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि पंजी–पुस्तकों का महत्व मिथिला के इतिहास के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण है, उसमें दिये गये ब्यौरे हमारे लिये, असन्दिग्ध मूल्य के श्रोत हैं। बिकौआ जैसी वीभत्स प्रथा 19वीं सदी में किस तरह जाति, कुल, श्रेणी के मर्यादित मूल्यों से फली–फूली सब जानते हैं। क्षणिक स्वार्थ पूर्ति, बिना उद्यम किये सुखों की आकांक्षा, कुल और श्रेणी को ही (विद्या और व्यक्तित्व नहीं रहने पर भी) बड़प्पन का आयाम मानना, पाखंड का बोलबाला, इत्यादि, आप उस समय के प्रचलित शब्दों, कहावतों में ढूँढ़ सकते हैं।

मुख्य रूप से मिथिला में 14वीं–15वीं सदी के बाद उच्च जातियों–खासकर ब्राह्मण वर्ग में संकीर्णता की भावना बढ़ती रही जिसके फलस्वरूप यह वर्ग जो बहुत ही महत्वपूर्ण वर्ग रहा–"सोन्मुख (decadent) होता गया। मौलिक चिन्तन शिथिल होती गई, अन्दर से खण्ड–पखण्ड होता गया, जातीय विशुद्धता, क्षेत्रीय विशुद्धता सांस्कृतिक एवं बौद्धि विरासत और चेतना पर हावी होती गई, क्रियेटिव पोटेन्शियल (creative potential) बहुत ही कमजोर होता गया।

इसके विपरीत समाज के अन्य निम्न वर्गों में उदारवादी विचार धारा का प्रभाव बढ़ता गया–ज्यादे से ज्यादे लोग इस ओर झुकते गये–मिथिला का समाज इन दो विपरीत धाराओं से ग्रसित हो गया, जिसके चलते एल्टि (elite) और मासेज (masses) में विरोधात्मक संबंध बनते गये।

मिथिला के इतिहास में 14वीं–15वीं सदी के बाद ह्रास कितना भी तीव्र ही विकास किसी न किसी स्तर पर समाज के किसी न किसी क्षेत्रों में रहो होगा। प्रश्न उठता है कौन से ट्रेन्ड (ह्रास का या विकास का) ज्यादे मुखर या सशक्त एवं दृष्टिगोचर रहा है? दूसरी बात है कि हम किसे विकास कहते हैं और किसे ह्रास? विकास प्रसंग बहुत विद्वान चिन्तन में लगे हैं–उनकी बातें अकादमिक जगत तक पहुँच रही है। ह्रास की प्रवृत्ति को मैं संकुचित होने की प्रवृत्ति मानता हूँ जो उदारवादी दृष्टि के विपरीत है। संकुचित होने की प्रवृत्ति से मानववादी मूल्यों की उपेक्षा होती है, अवसरवादिता औप्र स्वार्थ पूर्ति की मानसिकता प्रबल होती है, अल्पकालिक सोच प्रभवकारी हो जाता है, अपने वर्ग/जाति की सीमा की चिन्तन का क्षितिज रह जाता है, इत्यादि। आज जब विकास की बातें हो रही हैं, विकास के मन्त्रों की तलाश हो रही है, तब क्या उचित है कि इतिहासकार वर्ग ह्रास (decadence) पर शोध करें। इस प्रसंग में उल्लेख करना चाहता हूँ जेनेट अबू–लुगहोड जैसे इतिहासकार के विचार जो 1989 ई. में विफोर यूरोपयिन हेजिमोनी, द वर्ल्ड सिस्टम ए.डी. 1250–1350, (ऑक्सफोर्ड यु. प्रेस, न्यूयोर्क) प्रकाशित हुई, जिसमें उन्होंने मध्य युग में वर्ल्ड सिस्टम ट्रेडिंग जोन जो चीन से शुरू होकर इंडोनेशिया, भारत, अरब वर्ल्ड से होते हुए यूरोपियन क्षेत्र तक फैली थी के इतिहास की विवेचना किये। इस अध्ययन के दौरान उनहोंने एक बहुत ही महत्वपूर्ण इस्सू (issue) उठाये कि पश्चिम के विकास क्रम पर शोध करने से ज्यादा महत्वपूर्ण और उपयुक्त है पूर्व (East) के ह्रास पर शोध करना।।[27] विकास के लिये रणनीति (strategy) का चिंतन तब तक उचित एवं प्रभावकारी नहीं हो सकते जब तक हम ह्रास के लक्षणों, प्रवृतियों, समाज में उसके उत्पत्ति और प्रभाव के कारणों को नहीं जान लेते हैं। ह्रासोन्मुखी प्रवृतियों पर बिना काबू पाये बिना विकास की सारी योजना निरर्थक हो जाती हैं। ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियों पर काबू पाने के लिये उन्हें जानना होगा, विश्लेषण करना होगा, उसके जड़ों तक पहुँचना होगा–और यह काम सिर्फ इतिहास के द्वारा सम्भव।

मेरी दृष्टि से इस आधार पर शोध से ही न केवल मिथिला क्षेत्र के विकास यात्रा को सही दिशा मिलेगी अपितु राज्य एवं देश के अतिरिक्त अकादमिक विमर्श के प्रासंगिता को वृहत आधार मिलेगा।

पद टिप्पणियाँ :–

1. जेमसन, प्रफेडरिक 2006 पोस्टमॉडर्निज्म और द कल्चरल लौजिक ऑफ लेट कैपिटलिज्म, नई दिल्ली : एबीएस पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्श 21–22
2. ह्वाइट, हेडेन वी. 1962 इन्ट्रोडक्शन, कार्लो एन्टोनी, प्रफौम हिस्टरी टू सोशियोलोजी, लंडन, मर्लिन प्रेस : XV-XXVII
3. टॉम्प्सम, जॉन बी. 1983 'रीचींग एन अन्डरस्टैन्डिंग', टाइम्स लिटररी सप्लिमेंट, अप्रैल 8 : 357
4. सरकार, सुमित 1997 राहटिंग सोशल हिस्टरी, दिल्ली, ओ. यू. पी. : 50
5. भट्टाचार्य, सव्यसाची 1983 'हिस्टरी प्रफॉम बिलो', सोशल साइन्टिस्ट, वॉ.11, सं.4,अप्रैल : 4
6. जायसवाल, के.पी. 1936, 'इन्ट्रोडक्शन' जा.के.पी.सं. द राजनीति रत्नाकर ऑफ चण्डेश्वर, पटनाः द बिहार एण्ड ओड़िसा रिसर्च सोसाइटी : 28
7. सचाउफ, एडवर्ड सी. 1996 अलबेरूनीज इंडिया, दिल्ली : लो प्राइश पब्लिकेशन : 152
8. शर्मा, रामशरण 1974 सोशल एण्ड इकोनोमिक कन्डीशन्स (ए. डी. 350–1200) बी. पी. सिन्हा सं. कम्प्रिहेन्सिव हिस्टरी ऑफ बिहार, वौ. 1, पार्ट–।।, पटना : के.पी. जायसवाल रिसर्च इन्स्टिच्यूट : 352–365
9. वहीं : 362
10. चट्टोपाध्याय, बी. डी. 1994 'पॉलिटिकल प्रोसेस एण्ड स्ट्रक्चर ऑफ पॉलिटी इन अर्ली मेडिएल इंडिया', द मेकिंग ऑफ अर्ली मेडिएवल इंडिया, दिल्ली : ओ.पू.पी. : 320–321
11. शूलमन, डेविड 1984 'द एनिमी विदिन : आइडिसलिज्म ऑफ पॉलिटी इन अर्ली मेडिवल इंडिया', द मेकिंग ऑफ अर्ली मेडिवल इंडिया, दिल्ली, ओ.पू.पी. : 320–321
12. जायसवाल, पू. उ. : 24–27
13. काणे, पी.वी. 1975 हिस्टरी ऑफ धर्मशास्त्र, वौ. 1, पार्ट ।।, पूना : भण्डारकर ओरयिन्टल रिसर्च इन्स्टिच्यूट : 775
14. झा, हेतुकर सं. 2001 मिथिला इन नाइनटीन्थ सेंचुरी : आईना–ए–तिरहुत ऑफ बिहारी लाल 'फितरत', कामेश्वर सिंह बिहार हेरिटेज सिरिज–5, महाराजाधिराज कामेश्वर सिंह कल्याणी फाउण्डेशन, दरभंग : 136–137
15. मिश्र, पंचानन्द और झा, अजय कुमार सं. 2006, झारखण्डी झा विरचित भागलपुर दर्पण, कामेश्वर सिंह बिहार हेरिटेज सिरिज–9, महाराजाधिराज कामेश्वर सिंह कल्याणी फाउण्डेशन, दरभंगा : 131–132
16. झा, परमेश्वर महामहोपाध्याय 1977 मिथिला तत्व विमर्श, पटना : मैथिली अकादमी : 153–154
17. सिंह, नामवर 2003 भारतीय साहित्य की प्राण धारा और लोकधर्म', दूसरी परम्परा की खोज, पू.उ. : 77
18. झा, रमानार्थ सं. 1960 ठाकुर विद्यापति कृत पुरूष–परीक्षा, पटना विश्वविद्यालय, पटना : 456–459
19. इस प्रसंग देखिये चट्टोपाध्याय, देवीप्रसाद 1959, लोकायत, नई दिल्ली, पिपुल्स पब्लिशिंग हाउस
20. द्विवेदी, हजारी प्रसाद 1998 'भारत वर्ष की सांस्कृतिक समस्या', हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली वौ, 9, नई दिल्ली : राजकमल : 294
21. देखिये रंजन, पूर्णेन्दु 2008 हिस्टरी ऑफ कबीर पन्थ, ए रिजनल प्रोशेस, नई दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स
22. भट्टाचार्य, दिनेशचन्द्र 1958 हिस्टरी ऑफ नव्य न्याय इन मिथिला, दरभंगा : मिथिला इन्स्टिच्यूट ऑफ पोस्ट ग्रैजुएट स्टडीज एंड रिसर्च इन संस्कृत लर्निंग : 122–123
23. झा, हेतुकर सं. 1976 द औटोबायोग्राफिकल नोट्स ऑफ म.म.डा. सर गंगाानार्थ झा, इलाहाबाद : गंगानाथ झा केन्द्रिय संस्कृत विद्यापीठ : 37–38
24. वहीं,
25. झा, रमानाथ 1970 'मैथिल ब्राह्मणक मंपजी व्यवस्था', मिथिला भारती, अं. 2, भाग – 1–4 : 109–112, एवं मिथिला भारती 1969 अं. 1, भाग 1–2, मार्च–जून : 12

26.वहीं, : 7

27. कॉलिन्स, रैन्डल 1999 मेक्रोहिस्टरी, एस्सेज इन द सोशियोलॉजी ऑफ द लौंग रन, कैलिपफोर्निया स्टैनपफार्ड यु. प्रेस : 5

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

शहरी गरीबों पर जे.एन.आर.यू.आर.एम. के प्रभावों का अध्ययन इन्दौर शहर की गंदी बस्तियों के विशेष सन्दर्भ में

निखिल कुलमी
पीएच. डी. शोधार्थी, समाज कार्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, म.प्र.
आर के शर्मा
सहायक प्राध्यापक, इन्दौर स्कूल ऑफ सोशल वर्क, इन्दौर, म.प्र.

1.1 प्रस्तावना :– म.प्र. की औद्योगिक राजधानी इन्दौर शहर में तीव्रगति से आबादी के साथ–साथ गंदी बस्तियों एवं शहरी गरीबों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। वर्ष 2011 की गणना अनुसार 439801466 मिलियन लोग शहरों में रहते हैं और यह देश की आबादी का कुल 27.8 प्रतिशत है। स्वतंत्रता काल में भारत की आबादी में तीन गुना वृद्धि हुई है, जबकि शहरी आबादी में पाच गुना वृद्धि हुई है। बढ़ती आबादी में झुग्गीवासियों की संख्या बढ़ी है, जिससे शहर की बुनियादी सेवाओं पर अत्यधिक दबाव पड़ा है। इस समस्या से निपटने के लिये जवाहरलाल नेहरू शहरी नवीनीकरण मिशन के अंतर्गत इन्दौर शहर को भी सम्मिलित किया गया है। इन्दौर शहर की 722 गंदी बस्तियों में लगभग 7.5 लाख गरीब निवास करते हैं, महानगरों की दौड़ में शामिल इन्दौर शहर की गन्दी बस्तियों में रहने वाले गरीबों को बेहतर आवास एवं बुनियादी सुविधाऐं प्रदान करने के उद्देश्य से सन् 2007 में जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन की बी.एस.यु.पी. परियोजना में सम्मिलित किया गया तथा आवश्यकता एवं प्राथमिकता के आधार पर शहरी गरीबों के विकास हेतु गन्दी बस्तियों का चयन इस योजना के अन्तर्गत किया गया।

1.2 जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) एक परिदृश्य :–

शहरी क्षेत्र विकास के लिए आवश्यकता – 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121 करोड़ है जिसमें से लगभग 28 प्रतिशत अथवा 285 मिलियन लोग शहरी क्षेत्रों में रहते हैं। भारत सरकार द्वारा अपनाई गई उदारीकरण की नीतियों के परिणामस्वरूप वर्ष 2021 तक शहरी आबादी का शेयर कुल आबादी के लगभग 40 प्रतिशत तक बढ़ना संभावित है। शहरी आर्थिक गतिविधियां नागरिक इन्फ्रास्ट्रक्चर, सफाई एवं ठोस कचरा प्रबंधन का मिलाकर इन्फ्रास्ट्रक्चर जैसे कि पावर, टेलीकॉम, रोड, जल आपूर्ति तथा जन परिवहन पर निर्भर है।

शहरी क्षेत्र में आवश्यक निवेश आवश्यकता :– यह अनुमान लगाया गया कि सात वर्षों की अवधि में, शहरी स्थानीय निकायों (यू.एल.बी.) को 1,20,536 करोड़ रुपये के कुल निवेश की आवश्यकता होगी। इसमें बुनियादी इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा सेवाओं में निवेश करना शामिल था, जिससे कि 17,219 करोड़ रुपये की वार्षिक निधि की आवश्यकता थी। यह भली–भांति ज्ञात था कि इन निवेशों को लाभदायक बनाने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर पहल की आवश्यकता मेहसूस की गयी जो कि राज्य सरकारों को एक साथ लायी तथा स्थानीय शहरी निकायों (यू.एल.बी.) को शहरी इन्फ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र में निवेश के प्रवाह को पोषित करने में समर्थ हुयी।

1.3 सुधार पहलुओं के लिए आवश्यकता :–

शहरी इंफ्रास्ट्रक्चर में साधनों की संभाव्यता को बढ़ाना – चूंकि 74वां संविधान संशोधन अधिनियम तथा मॉडल नगरपालिका जैसी कई कानून सुधार पहल की जा रही है। तो विकास लक्ष्यों को पूरा करने के उद्देश्य से और सुधार अभिमुखी कदम उठाने की संभावना है। सुधार पहलुओं को और आगे बढ़ाने की आवश्यकता है तथा निवेश अनुकूल वातावरण बनाने के उद्देश्य से राज्य सरकारों द्वारा सुस्पष्ट करने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय स्तरीय सुधर संबंधी निवेशों के लिए आवश्यकता – देश में सभी राज्यों में शहरी इंफ्रास्ट्रक्चर में सुधार पहलुओं को स्वीकृत करने तथा निवेश उपार्जन के प्रयास बढ़ाने की आवश्यकता है। ऐसी पहले करने की जरूरत महसूस की गई थी जो कि देश में राज्य सरकारों तथा यूएलबी को सुधार से संबंधित सहायता प्रदान करे।

सतत इंफ्रास्ट्रक्चर विकास हेतु आवश्यकता – अन्य महत्वपूर्ण पहलू जिस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता थी वह यह कि शहरी क्षेत्रों में निर्मित वास्तविक इन्फ्रास्ट्रक्चर परिसम्पत्तियां अपर्याप्त ध्यान और/या असमुचित ओ एंड एम के कारण सामान्यतः निष्क्रिय होती जा रही थी। क्षेत्र में राजकोषीय प्रवाह ने केवल वास्तविक परिसंपत्तियों के सृजन पर बल दिया था। इन परिसंपत्तियों के दक्षतापूर्वक प्रबंधन के लिए

स्वतः निरन्तरता को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किए गए। अतः यह आवश्यक हो गया था कि परिसंपत्ति निर्माण और प्रबंध्न के बीच संबंध स्थापित किया जाए, क्योंकि निरंतर सेवा आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए दोनों महत्वपूर्ण संघटक हैं। इसे सुधार एजेंडा के माध्यम से सुरक्षित करना प्रस्तावित हुआ।

दक्षता बढ़ाने हेतु आवश्यकता :– संवैधानिक सुधारों के साथ समवर्ती, जैसे कि मॉडल नगर पालिका कानून का अधिनियमन, स्टाम्प ड्यूटी में कमी, शहरी भूमि (सीमा एवं विनियमन) अधिनियम, 1976 (यूएलसीआरए) आदि को निरस्त करना, शहरी सेवा आपूर्ति में दक्षता को बढ़ाने के लिए उपाय करने की तत्काल आवश्यकता पर अधिक जोर दिया गया।

अध्ययन के उद्देश्य :– गन्दी बस्तियों में निवास करने वाले गरीबों को योजना अन्तर्गत पक्के और सुविधा युक्त आवास प्रदाय किये जा रहे हैं। इसके चलते उनकी जीवन शैली में आये परिवर्तन और उन्नयन का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र :– मध्य प्रदेश के इन्दौर जिले को उद्देश्यपूर्ण विधि से चयनित कर प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया है। इसमें इन्दौर महानगर की मलिन बस्तियों में जीवन की गुणवत्ता एवं विकास कार्य की प्रभाविता के प्राप्त आकड़ों के आधार पर शोध अध्ययन किया गया है।

अध्ययन का समग्र :– मध्यप्रदेश के इन्दौर महानगर की मलिन बस्तियों में निवासरत समस्त जनसंख्या को अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की ईकाई :– मध्यप्रदेश के इन्दौर महानगर की मलिन बस्तियों के चयनित परिवार को अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया है।

निदर्शन विधि :– शोध अध्ययन क्षेत्रियता की परिधि में वृहद आकार की संभावना लिये होता है। अतः बड़े समुदाय में से कुछ प्रतिनिधि इकाईयों का चयन कर लिया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में चयनित परिवारों का वर्णन इस प्रकार है–

तालिका 1 अध्ययन क्षेत्र में चयनित परिवारों का वर्णन

क्र.	बस्तियों के नाम	कुल परिवार संख्या	चयनित परिवारों की संख्या
1	पंचशील नगर	546	120
2	भीम नगर	220	50
3	अहीर खेड़ी	350	90
4	नेनोद	80	20
5	भूरी टेकरी	115	20
	कुल	**1311**	**300**

अध्ययन की जाने इन 5 बस्तियों में 1311 परिवार निवासरत है। समग्र के प्रतिनिधित्व हेतु 5 बस्तियों के 1311 परिवार में से 300 परिवारों को न्यायदर्श बतौर अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

प्राथमिक स्त्रोत :– प्रस्तुत शोध अध्ययन में तथ्य संकलन के प्रथामिक स्त्रोत के रूप में साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन तथा समूहचर्चा आदि का प्रयोग किया गया है।

द्वितीयक स्त्रोत :– प्रस्तुत शोध अध्ययन में तथ्य संकलन के द्वितीय स्त्रोत के रूप में विद्वानों द्वारा लिखित ग्रन्थ, सर्वेक्षण प्रतिवेदन सरकार द्वारा प्रकाशित दस्तावेजों, पत्र–पत्रिकाओं आदि का उपयोग किया गया है।

विश्लेषणात्मक पृष्ठभूमि :– समस्त संकलित आंकड़ों एवं सूचनाओं को चयनित क्षेत्र से संकलित किया गया है जिसके आधार पर मास्टर चार्ट तैयार किया गया, तत्पश्चात् सारणीयन कर विश्लेषण एवं विवेचन किया गया।

तालिका 2 उत्तरदाताओं की लिंग से सम्बन्धित जानकारी

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पुरूष	241	80.3
2	महिला	59	19.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 80.3 प्रतिशत पुरूष उत्तरदाता पाये गये जबकि 19.7 प्रतिशत महिला उत्तरदाता पाये गये।

तालिका 3 उत्तरदाताओं के धर्म का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हिन्दू	239	79.7
2	बौद्ध	61	20.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उत्तरदाताओं के धर्म से सम्बन्धित विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 79.7 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू धर्म को मानने वाले पाये गये जबकि 20.3 प्रतिशत उत्तरदाता बौद्ध धर्म को मानने वाले पाये गये।

तालिका 4 उत्तरदाताओं के वर्ग का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अनुसूचित जाति	289	96.3
2	अनुसूचित जनजाति	2	.7
3	अन्य पिछड़ा वर्ग	9	3.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में दिये गये आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 96.3 अनुसूचित जाति के पाये गये जबकि सबसे कम 0.7 प्रतिशत उत्तरदाता अनुसूचति जनजाति के पाये। अन्य पिछड़ा वर्ग के कुल 3 प्रतिशत उत्तरदाता पाये गये।

तालिका 5 उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	विवाहित	217	72.3
2	अविवाहित	16	5.3
3	विधवा	59	19.7
4	विधुर	8	2.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 72.3 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित पाये गये जबकि सबसे कम 2.7 प्रतिशत उत्तरदाता विधुर पाये गये। 5.3 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये जो कि अविवाहित पाये गये वहीं 19.7 प्रतिशत विधवा उत्तरदाता पायी गयी।

तालिका 6 उत्तरदाताओं के परिवार के प्रकार का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	संयुक्त	217	72.3
2	एकाकी	83	27.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में दिये गये आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 72.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का प्रकार संयुक्त पाया गया जबकि 27.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का प्रकार एकाकी पाया गया।

तालिका 7 उत्तरदाताओं का शैक्षणिक स्तर

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अशिक्षित	239	79.7
2	प्राईमरी	39	13.0
3	माध्यमिक	15	5.0
4	हाईस्कूल	5	1.7
5	हायर सेकेण्डरी	2	.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के शैक्षणिक स्तर से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत किया गया जिसके विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 79.7 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित पाये गये जबकि सबसे कम 0.7 प्रतिशत उत्तरदाता हायर सेकेण्डरी तक की शिक्षा ग्रहण किये हुए पाये गये। 13 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने प्राईमरी तक की शिक्षा ग्रहण की हुयी थी जबकि 5 प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक शिक्षा ग्रहण किये हुये पाये गये। हाईस्कूल तक की शिक्षा ग्रहण करने वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत 1.7 पाया गया।

तालिका 8 उत्तरदाताओं के पास उपलब्ध आश्रय का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	स्वयं का	13	4.3
2	शासन द्वारा प्रदत्त	287	95.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के पास उपलब्ध आश्रय का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 95.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास शासन द्वारा प्रदत्त आश्रय पाया गया जबकि 4.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया उनका आश्रय स्वयं का है।

तालिका 9 उत्तरदाताओं के आश्रय की जगह पर कब्जे का प्रकार का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	वैध कब्जा	3	1.0
2	शासन द्वारा आंवटित	297	99.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के आश्रय की जगह पर कब्जे का प्रकार का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 99 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास शासन द्वारा आंवटित आश्रय पाया गया जबकि 3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया उनके आश्रय पर वैध कब्जा पाया गया।

तालिका 10 उत्तरदाताओं के आश्रय के स्वरूप का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पक्का	294	98.0
2	अर्द्ध पक्का	6	2.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के आश्रय के स्वरूप का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 98 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पास पक्का आश्रय पाया गया जबकि 2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया उनके पास अर्द्धपक्का आश्रय पाया गया।

तालिका 11 उत्तरदाताओं के आश्रय में खाना बनाने का ईधन का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	लकड़ी	6	2.0
2	गैस	294	98.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के आश्रय में खाना बनाने का ईधन का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 98 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आश्रयों में खाना बानाने के ईधन के रूप में गैस का उपयोग किया जाता है जबकि 2 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आश्रयों में खाना बानाने के ईधन के रूप में लकड़ी का उपयोग किया जाता है।

तालिका 12 उत्तरदाताओं की पेयजल प्राप्ति के श्रोतों का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	स्वयं का हैण्ड पम्प	9	3.0
2	सार्वजनिक टंकी	291	97.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं की पेयजल प्राप्ति के श्रोतों का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 97 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आश्रयों में पेयजल प्राप्ति के श्रोत के रूप में सर्वाजनिक टंकी पायी गयी जबकि 3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आश्रयों में पेयजल प्राप्ति के श्रोत के रूप में स्वयं का हैण्ड पम्प पाया गया।

तालिका 13 उत्तरदाताओं के आश्रयों मं नल की लाईन से आपूर्ति के समय का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	1 घण्टे	170	56.7
2	1 से 2 घण्टे	10	3.3
3	सप्ताह में दो बार	9	3.0
4	एक दिन छोड़ के एक दिन	111	37.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के आश्रयों में नल की लाईन से आपूर्ति के समय का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 56.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में नल की आपूर्ति दिन में 1 घण्टे की जाती है जबकि सबसे कम 3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में नल की आपूर्ति सप्ताह में दो बार की जाती है। 37 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में एक दिन छोड़ के एक दिन पानी की आपूर्ति की जाती है वहीं 3.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में 1 से 2 घण्टे पानी की आपूर्ति की जाती है।

तालिका 14 उत्तरदाताओं के जल पूर्ति के श्रोत की दूरी का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	0.5 किमी	178	59.3
2	0.5 से 1 किमी	111	37.0
3	1 किमी से अधिक	11	3.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के जल पूर्ति के श्रोत की दूरी का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 59.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में नल की आपूर्ति 0.5 किमी की दूरी पर पायी गयी जबकि सबसे कम 3.7

प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में नल की आपूर्ति 1 किमी से अधिक की दूरी पर पायी गयी। 37 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मौहल्ले में नल की आपूर्ति 0.5 से 1 किमी की दूरी पर पायी गयी।

तालिका 15 उत्तरदाताओं के आश्रयों में शौचालय की उपलब्धता का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	नहीं है	13	4.3
2	स्वयं का शौचालय	183	61.0
3	सझा शौचालय	94	31.3
4	समुदायिक शौचालय	10	3.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के आश्रयों में शौचालय की उपलब्धता का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 61 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके आश्रय में स्वयं का शौचालय पाया गया जबकि सबसे कम 3.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे सामूदायिक शौचालय का उपयोग करते हैं। 31.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे साझा शौचालय का उपयोग करते हैं वहीं 4.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास कोई शौचालय नहीं पाया गया।

तालिका 16 उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास की उपलब्धता का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	282	94.0
2	नहीं	18	6.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास की उपलब्धता का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 94 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास उपलब्ध हो पाया जबकि 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास उपलब्ध नहीं हो पाया है।

तालिका 17 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्ध होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	297	99.0
2	नहीं	3	1.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्धता होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 99 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्ध हो पाया जबकि 1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्ध नहीं हो पाया है।

तालिका 18 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त वस्त्र उपलब्ध होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	297	99.0
2	नहीं	3	1.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त वस्त्र उपलब्धता होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 99 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त वस्त्र उपलब्ध हो पाया जबकि 1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त वस्त्र उपलब्ध नहीं हो पाया है।

तालिका 19 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पोषण स्तर में सुधार होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	84	28.0
2	नहीं	216	72.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पोषण स्तर में सुधार

होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पोषण स्तर में सुधार हो पाया है जबकि 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पोषण स्तर में सुधार नहीं हो पाया है।

तालिका 20 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	67	22.3
2	नहीं	233	77.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 22.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि हो रही है जबकि 77.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि नहीं हो रही है।

तालिका 21 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में आये परिवर्तन का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	216	72.0
2	नहीं	84	28.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में आये परिवर्तन का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में परिवर्तन आया है जबकि 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में परिवर्तन नहीं आया है।

तालिका 22 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात अपराधिक प्रवृत्ति में कमी होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	106	35.3
2	नहीं	194	64.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् अपराधिक प्रवृत्ति में कमी होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 35.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् अपराधिक प्रवृत्ति में कमी आयी है जबकि 64.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् अपराधिक प्रवृत्ति में कमी नहीं आयी है।

तालिका 23 उत्तरदाताओं कों सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात बाल अपराध में कमी होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	125	41.7
2	नहीं	175	58.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं को सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् बाल अपराध में कमी होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 41.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् बाल अपराध में कमी आयी है जबकि 58.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् बाल अपराध में कमी नहीं आयी है।

निष्कर्ष :– उपरोक्त विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 94 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास उपलब्ध हो पाया जबकि 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त आवास उपलब्ध नहीं हो पाया है। वहीं कुल उत्तरदाताओं में से 99 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास

मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्ध हो पाया जबकि 1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पर्याप्त भोजन उपलब्ध नहीं हो पाया है। 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के प चात् पोषण स्तर में सुधार हो पाया है जबकि 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् पोषण स्तर में सुधार नहीं हो पाया है। 22.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि हो रही है जबकि 77.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् प्रजनन दर में वृद्धि नहीं हो रही है। 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में परिवर्तन आया है जबकि 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् कचरे का निस्तारण करने की तकनीकि में परिवर्तन नहीं आया है। 35.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् अपराधिक प्रवृत्ति में कमी आयी है जबकि 64.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् अपराधिक प्रवृत्ति में कमी नहीं आयी है। 41.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् बाल अपराध में कमी आयी है जबकि 58.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको सुविधा युक्त आवास मिलने के पश्चात् बाल अपराध में कमी नहीं आयी है।

संदर्भ :–

1. आहुजा, राम (2014), ''सामाजिक समस्याएं'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
2. गाबा, ओमप्रकाश (2003), ''विवेचनात्मक सामाजिक विज्ञान कोश'', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
3. ऑर्गेन, कुमारी विजविन्को (2001–02), ''प्रवासी एवं तंग बस्ती के बाल श्रमिकों के शिक्षा का स्तर, आकांक्षाएं एवं बालश्रम के कारणों का अध्ययन'', डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महू (अप्रकाशित शोध)।
4. सक्सेना, पूजा (1998–99), ''कानपुर की शहरी मलीन बस्तियों में अनुसूचित जाति वर्ग में स्वास्थ्य एवं शिक्षा का अध्ययन'', डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महू (अप्रकाशित शोध)।
5. प्रकाश, ज्ञान (1997), ''समन्वित बाल विकास परियोजना का इंदौर नगर के मलिन बस्तियों की महिलाओं एवं बच्चों पर प्रभाव : एक अध्ययन'', डॉ. आंबेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका, अंक 5 (5), पृ. क्र. 44–53।
6. झा, राजेश कुमार (सित.2014), ''दो नगरों की कहानी'', योजना, अंक 9, वर्ष 58, पृ. क्रं. 5।
7. भगत, आर. बी. (सित.2014), ''भारत में शहरी नीति और कार्यक्रम अतीत और भविष्य'', योजना, अंक 9 वर्ष 58, पृ. क्रं. 7–10।
8. कुण्डु, अमिताभ (सित. 2014), ''झुग्गीमुक्त भारत का एक दृष्टिकोण'', योजना, अंक 9, वर्ष 58, पृ. क्रं. 15–18।
9. बिष्ट, सुजाता (1989), ''पर्यावरण, प्रदुषण और हम'', तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
10. सिंह रामगोपाल (2003), ''अनुसूचित जाति के नगरीय जीवन में सामाजिक परिवर्तन'' भारतीय समाज में परिवर्तन की दशायें'', प्रकाशन डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान महू (म.प्र.), पृ. क्रं. 21, 23।

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

आंगनवाडी केन्द्र जाने वाली ग्रामीण गर्भवती महिलाओं में पोषण सम्बन्धी शिक्षा का मूल्यांकन

माया सालवी
पीएच. डी. शोधार्थी (गृह विज्ञान) माता जीजाबाई शास. स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोतीतबेला इन्दौर, म.प्र.
मंजू पाटनी
प्राध्यापक (गृह विज्ञान) माता जीजाबाई शास. स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोतीतबेला इन्दौर, म.प्र.

1.1 प्रस्तावना :– भारत देश एक विकाशील राष्ट्र है जो कि, अभी सम्पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुआ है आज भी भारत देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है जिसके कारण 70 प्रतिशत आबादी तक आधारभूत, सुविधाएँ (सडक, बिजली, पानी) उपलब्ध नहीं हो पाती हैं तो ऐसी परिस्थितियों में स्वास्थ्य चिकित्सा उपलब्ध होना या समय पर उपलब्ध होना एक गम्भीर चिंता का विषय है इस विषय से निजात पाने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण महिलाओं को स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधा उपलब्ध कराने हेतु केन्द्र शासन ने 1985 एकीकृत बाल विकास सेवा कार्यक्रम के नाम से आंगनवाडी केन्द्रों की स्थापना की थी, जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गर्भवती महिलाओं को उचित चिकित्सा सुविधा समय पर उपलब्ध कराना था क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधा के अभाव के साथ–साथ माता एवं शिशु, मृत्यु दर काफी अधिक थी जो कि, चिंता का विषय था, जिससे निजात पाने हेतु आंगनवाडी केन्द्रों की स्थापना की गई।

आंगनवाडी वास्तव में गाँव या बस्ती में स्थिति अपने ही आंगनवाडी में बच्चों की देखभाल तथा खेलकूद का एक केन्द्र है। यह सामुदायिक स्तर पर छः वर्ष से कम आयु के बच्चों व गर्भवती व स्तनपान वाली महिलाओं व किशोरियों को सेवाएं प्रदान करने का एक केन्द्र हैं। इसके अलावा आंगनवाडी मिलने–जुलने का एक ऐसा स्थान है जहाँ पर गर्भवती महिलाओं ग्रामीण स्तरीय कार्यकर्ताओं के साथ विचारों का आदान–प्रदान कर सकते हैं। गर्भावस्था में महिलाओं को अपने आहार के सम्बन्ध में विशेष ध्यान देना चाहिए। गर्भवती माँ को अपने लिए और अपने गर्भ में पनपते बच्चे के लिए खाना चाहिए। इस काल में विकासशील शिशु अपनी वृद्धि के लिए पूर्णतः अपनी माता पर निर्भर करता है। इस नौ माह की अवधि में माता के गर्भ में शिशु एक सुक्ष्म कोशिका से पूर्ण निर्मित लगभग 3 किलो वजन वाले शिशु का रूप धारण करता है। यह तभी संभव होता है जबकि गर्भवती महिला गर्भस्थ शिशु के निर्माण में सारी सामग्री प्रदान करती है। यह सारी सामग्री उसे अपने आहार से प्राप्त होती है। वर्तमान में इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि इनमें बचाव के उपाय बच्चों एवं माताओं तक किसी भी माध्यम से पहुँचाया जाये इसी कड़ी में मध्यप्रदेश में कई संस्थाओं द्वारा पोषण व शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम भी चलाये जा रहे हैं इन कार्यक्रमों का महिलाओं को कितना लाभ मिलता है और वे स्वयं अपना पोषण स्तर कैसे अच्छा रख सकती हैं।

आँगनवाड़ी का अर्थ :– आंगन से आश्रय होता है यह भारतीय सार्वजनिक देखभाल प्रणाली का एक हिस्सा है आपूर्ति पोषण शिक्षा अनुपूरक एवं जनसंख्या नियंत्रण डिपों के रूप में कार्य किया जाता है। आँगनवाड़ी बच्चों का पोषण स्वास्थ्य और स्कूल से पहले की शिक्षा स्कूल की शिक्षा के बेहतर बनाने के लिए एक सामुदायिक कार्यक्रम है आज के समय में इसके अंतर्गत वो गांव एवं बस्तियां आती है सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर पिछडे हुए है इसके अंतर्गत 6 साल से कम बच्चों को शामिल किया जाता है निम्न रूप से वर्गीकृत कर सकते है। स्वास्थ्य लाभ, आहार की पूर्ति, स्वास्थ्य की शिक्षा, माँ के लिए पोषण सम्बन्धी शिक्षा टीकाकरण और विटामिन–ए की आपूर्ति एवं स्कूल से पहले की शिक्षा जिन्हें हम दो उप वर्गो में वर्गीकृत कर सकते है।

1. एक माह से 36 माह का तक समय 36 माह के कम उम्र के बच्चे अपनी माताओं के साथ आँगनवाड़ी केन्द्र द्वारा पालन–पोषण टीकाकरण इत्यादि सुविधाओं का प्रदान किया जाना होता है।
2. 36 से 72 माह दूसरे वर्ग में 36 में 72 माह के बच्चों को शामिल किया जाता है स्कूल के पूर्व की शिक्षा उपलब्ध करायी जाती है।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता की भूमिका :–

1. आंगनवाड़ी कार्यकर्ता को सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी गर्भवती महिलाएं आंगनवाड़ी केन्द्र में पंजीकृत हैं और 3–4 प्रसव पूर्व देखरेख करने में उनकी मदद की जानी चाहिए।

2. सुनिश्चित करें कि सभी प्रसव पूर्व एवं प्रसव पश्चात् सेवाऐं प्राप्त करने के लिए उचित समय पर और आवश्यक जानकारी प्राप्त करते हैं।
3. गर्भवती महिलाओं को खान पान की स्वास्थ्य आदतों, पोशक आहार तथा अंधविश्वासों एवं खान पान की गलत धारणाओं से बचने के लिए परामर्श प्रदान किया जाता है।
4. गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण सम्बन्धी स्थिति पर नजर रखने के लिए साप्ताहिक आधार पर उनके घर जाना चाहिए।
5. महिलाओं के गर्भधारण की स्थिति को सुनिश्चित करने के लिए नवविवाहित तथा अन्य जोड़ों को ''निश्चय गर्भधारण किट'' के प्रयोग के बारे में जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।
6. गर्भवती महिलाओं कों नियमित रूप से पूरक आहार तथा आयरन फोलिक एसिड टेबलेट प्रदान की जानी चाहिए।

आंगनवाड़ी वास्तव में गाँव या बस्ती में स्थिति अपने ही आँगनवाड़ी में बच्चों कि देखभाल तथा खेलकुद का एक केन्द्र है। यह सामुदायिक स्तर पर छः वर्ष से कम आयु के बच्चों व गर्भवती व स्तनपान वाली महिलाएं व किशोरियों को सेवाएं प्रदान करने का एक केन्द्र हैं इसके अलावा आँगनवाड़ी मिलने – जुलने का एक ऐसा स्थान है जहाँ पर गर्भवती महिलाओं ग्रामीण स्तरीय कार्यकर्ताओं के साथ विधारों का आदान – प्रदान कर सकते है। गर्भावस्था में महिलाओं को अपने आहार के संबंध में विशेष ध्यान देना चाहिए गर्भवती माँ को अपने लिए और अपने गर्भ में पनपते बच्चे के लिए खाना चाहिए इस काल में विकाशील शिशु अपनी वृद्धि के लिए पूर्णतः अपनी माता पर निर्भर करता है इस नौ माह की अवधि में माता के गर्भ में शिशु एक सुक्ष्म कोशिका से पूर्ण निर्मित लगभग 3 किलो वजन वाले शिशु का रूप धारण करता है यह तभी संभव होता है जबकि गर्भवती महिला गर्भस्थ शिशु के निर्माण में सारी सामग्री प्रदान करती है यह सारी सामग्री उसे अपने आहार से प्राप्त होती है। वर्तमान में बात की अत्यन्त आवश्यक है कि इनमें बचाव के उपाय बच्चों एवं माताओं तक किसी भी माध्यम से पहुंचाया जाये इसी कड़ी में म.प्र. में कई संस्थाओं द्वारा पोषण व शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम भी चलाये जा रहे है इन कार्यक्रमों का महिलाओं को कितना लाभ मिलता है और वे स्वयं अपना पोषण स्तर कैसे अच्छा रख सकते है।

1.3 अध्ययन के उद्देश्य :– आंगनवाडी केन्द्र जाने वाली ग्रामीण गर्भवती महिलाओं में पोषण सम्बन्धी शिक्षा का मूल्यांकन करना।

1.4 शोध अध्ययन की परिकल्पना :– आंगनवाडी केन्द्र जाने वाली तथा नही जाने वाली गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य शिक्षा का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पडता।

अनुसन्धान प्ररचना :– प्रस्तुत शोध अध्ययन में सामाजिक शोध अध्ययन की विधि के अन्तर्गत शोध प्ररचना का निर्माण कर शोध उद्देश्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक शोध प्ररचना का उपयोग किया गया है।

शोध समस्या का चुनाव :– एक महिला ही महिला की समस्याओं को समझ सकती है और उसकी समस्याओं का समाधान भी महिला ही महिला को बता सकती है जिसके कारण उसके द्वारा महिलाओं के सामने सर्वाधिक चुनौती गर्भावस्था के आने वाली समस्याएँ एवं शिशु के पोषक आहार की जानकारी प्रदान करना जैसे– विषय का चयन किया गया और पाया गया कि शासन द्वारा चलाए जा रहे आंगनवाडी स्वास्थ्य केन्द्रों की योजनाओं मे से गर्भवती महिलाओं हेतु पोषण सम्बन्धी योजनाओं विषय पर शोध कार्य करने की आव यकता है। जिससे कि गर्भवती महिलाएँ स्वयं के जीवन में आने वाली समस्याओं और उनके समाधान को प्रस्तुत किया जा सके। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन हेतु आंगनवाडी केन्द्र की स्वास्थ्य एवं पोषण सम्बन्धी योजनाओं का ग्रामीण गर्भवती महिलाओं एवं उनके शिशुओं पर प्रभाव का अध्ययन विषय का चयन प्रस्तुत भोध हेतु किया गया।

अध्ययन क्षेत्र :– महू अधिकृत नाम डॉ. अम्बेडकर नगर भारतीय राज्य मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र के इन्दौर जिले का एक छोटा सा कस्बा है यह मुम्बई–आगरा रोड पर इन्दौर भाहर के दक्षिण में 23 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार महू तहसील की जनसंख्या 85,023 है जिसमें से 54 प्रतिशत पुरुष जनसंख्या और 46 प्रतिशत महिला जनसंख्या है। महू तहसील की साक्षरता दर 72 प्रतिशत है। 0 से 6 वर्श के बच्चों की जनसंख्या 9308 पायी गयी जोकि कुल जनसंख्या का 11.39 प्रतिशत है। यहा का लिंगानुपात 862 है जबकि 0 से 6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात 908 है। प्रस्तुत अनुसंधान के

उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इन्दौर जिले की महू तहसील में कार्यरत आंगनवाडी केन्द्रों को चयनित किया गया। इन केन्द्रों द्वारा जिन हितग्राही महिलाओं को लाभ प्रदान किया गया उनका चयन कर समय सीमा को ध्यान में रखते हुए महू तहसील में कार्यरत आंगनवाडी केन्द्रों सम्पूर्ण अनुसंधान कार्य महू तहसील स्थित सीमाओं के अन्दर किया गया।

अध्ययन का समग्र :– प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले की महू तहसील में निवासरत समस्त गर्भवती महिलाओं को अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया।

अध्ययन की इकाई :– प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले की महू तहसील में निवासरत चयनित गर्भवती महिला को अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया।

निदर्शन विधि :– निदर्शन किसी बड़े समग्र का प्रतिनिधित्व करता है। इसके अंतर्गत शोध विषय से सम्बन्धित सम्पूर्ण जनसंख्या व क्षेत्र को सम्मिलित किया जाता है जिसके आधार पर समग्र का चयन सावधानी पूर्वक किया जाता है जो कि आधारभूत विशेषताओं का उचित प्रतिनिधित्व करता है। महू तहसील की ग्रामीण गर्भवती महिलाओं को चयनित किया गया तथा तुलनात्मक अध्ययन किया गया एवं वैज्ञानिक विधियों के आधार पर बहुस्तरीय दैव–निर्देशन पद्धति का उपयोग किया गया।

प्रथम चरण :– प्रस्तुत अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले की महू तहसील को उद्देश्यपूर्ण विधि के आधार पर चयनित किया गया।

द्वितीय चरण :– प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र महू तहसील के ग्रामीण क्षेत्र में कुल आंगनवाड़ी केन्द्र 228 हैं। कुल 228 आंगनवाडी केन्द्रों में से 46 (20 प्रतिशत) आंगनवाडी केन्द्रों को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

तृतीय चरण :– यह अध्ययन 204 ग्रामीण गर्भवती महिलाओं पर किया गया जिसका विवरण निम्नानुसार होगा।

तालिका क्र. 1 ग्रामीण गर्भवती महिलाएँ

<table>
<tr><td colspan="8">आंगनवाडी जाने वाली</td></tr>
<tr><td colspan="2">18 से 25 वर्ष</td><td colspan="2">25 से 32 वर्ष</td><td colspan="2">32 से 40 वर्ष</td><td rowspan="3"></td></tr>
<tr><td colspan="2">34</td><td colspan="2">34</td><td colspan="2">34</td></tr>
<tr><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td></tr>
<tr><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>102</td></tr>
<tr><td colspan="8">आंगनवाडी नहीं जाने वाली</td></tr>
<tr><td colspan="2">18 से 25 वर्ष</td><td colspan="2">25 से 32 वर्ष</td><td colspan="2">32 से 40 वर्ष</td><td rowspan="3"></td></tr>
<tr><td colspan="2">34</td><td colspan="2">34</td><td colspan="2">34</td></tr>
<tr><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td><td>शिक्षित</td><td>अशिक्षित</td></tr>
<tr><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>17</td><td>102</td></tr>
<tr><td colspan="8">कुल योग 204</td></tr>
</table>

तथ्यों का संकलन :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक आंकडों का संग्रहण किया गया तथा उनका विश्लेशण करके निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

प्राथमिक आँकड़ें :– प्राथमिक आँकडों का सग्रहण निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जाकर उत्तरदताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर साक्षात्कार कर, क्षेत्र का निरीक्षण एवं अवलोकन तथा समुह चर्चा के माध्यम से एकत्र किये गये। साक्षात्कार अनुसूची में अध्ययन के उददेश्यों के अनुरूप प्रश्नों का समावेश किया गया।

द्वितीयक तथ्य :– द्वितीयक तथ्यों का संकलन गर्भवती महिलाओं से सम्बन्धित साहित्य, शोध पत्र–पत्रिकाएँ, शासकीय प्रतिवेदन, जनगणना प्रतिवेदन, जिला सांख्यिकीय विभाग, जिला गजेटियर, समाचार–पत्र, इंटरनेट के आधार पर किया गया है।

तकनीक एवं उपकरण :– संमक एकत्रित करने हेतु अवलोकन पद्धति, समूह चर्चा, अनुसूची, साक्षात्कार पद्धति, अनौपचारिक वार्तालाप, एस. पी. एस. एस., सारणीयन एवं फोटोग्राफी का उपयोग किया गया है। तुलनात्मक अध्ययन हेतु आवश्यकतानुसार काई वर्ग या सहसम्बन्ध (कार्ल पियर्सन) के सहसम्बन्ध गुणांक विधि का उपयोग किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण :– अध्ययन क्षेत्र महू तहसील से साक्षात्कार अनुसूची द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया है। संग्रहित तथ्यों को अलग–अलग नम्बर (कोड) दिये गये, इन कोड के आधार पर कम्प्युटर द्वारा एस. पी. एस. एस. पैकेज का प्रयोग करते हुऐ तथ्यों का सारणीयन एवं सांख्यिकी विश्लेषण किया गया है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्याओं के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्याओं के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं की आय** एवं **गर्भ के समय होने वाली समस्याओं** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	105.555[a]	16	.000
N of Valid Cases	204		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 16 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 26.296$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 105.555$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात $26.296 < 105.555$ अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्याओं के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्याओं के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्या के कारणों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्या के कारणों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं की आय** एवं **गर्भ के समय होने वाली समस्या के कारणों** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	158.758[a]	16	.000
N of Valid Cases	204		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 16 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 26.296$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 158.758$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात $26.296 < 158.758$ अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्या के कारणों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं गर्भ के समय होने वाली समस्या के कारणों के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं की आय एवं समस्याओं के उपचार कराने के स्थान के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं की आय एवं समस्याओं के उपचार कराने के स्थान के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं की आय** एवं **समस्याओं के उपचार कराने के स्थान** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	**144.158[a]**	**20**	**.000**
N of Valid Cases	**204**		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 20 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 31.410$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 144.158$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात $31.410 < 144.158$ अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं समस्याओं के उपचार कराने के स्थान के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं की आय एवं समस्याओं के उपचार कराने के स्थान के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं की आय एवं पोषण प्राप्त करने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं की आय एवं पोषण प्राप्त करने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं की आय** एवं **पोषण प्राप्त करने** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	**62.789[a]**	**12**	**.000**
N of Valid Cases	**204**		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 12 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 21.026$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 62.789$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात $21.026 < 62.789$ अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं** की आय एवं पोषण प्राप्त करने **के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं** की आय एवं पोषण प्राप्त करने **के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय दिनचर्या के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय दिनचर्या के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर** एवं **गर्भकाल के समय दिनचर्या** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	**78.259[a]**	**30**	**.000**
N of Valid Cases	**204**		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 30 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 43.773$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 78.259$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात 43.773<78.259 अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिश्ठ सम्बन्ध है। अतः भून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय दिनचर्या के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय दिनचर्या के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर** एवं **गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	9.750[a]	6	.136
N of Valid Cases	204		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 6 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 23.685$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 56.075$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात 23.685<56.075 अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।''** स्वीकृत की जाती है।

उपकल्पना

H_0 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने की आवृत्ति के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

H_1 गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने की आवृत्ति के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।

उपरोक्त उपकल्पना का परीक्षण के लिए **गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर** एवं **गर्भकाल के समय नियमित जाँच कराये जाने की आवृत्ति** के समंकों की तुलना के आधार पर काई–वर्ग परीक्षण किया गया है। काई–वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	108.914[a]	24	.000
N of Valid Cases	204		

उपर्युक्त उपकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 24 स्वातन्त्र संख्या के लिए χ^2 का सारणी मूल्य $\chi^2_t = 23.685$ है तथा χ^2 का परिणत मूल्य $\chi^2_c = 56.075$ (.000 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है। अर्थात 23.685<56.075 अर्थात $\chi^2_t < \chi^2_c$ है स्पष्ट है कि काई–वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं इसलिए दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शून्य परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित जांच कराये जाने की आवृत्ति के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।''** अस्वीकृत की जाती है एवं वैकल्पिक परिकल्पना **''गर्भवती महिलाओं के शैक्षणिक स्तर एवं गर्भकाल के समय नियमित**

जाँच कराये जाने की आवृत्ति के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध है।'' स्वीकृत की जाती है।

सन्दर्भ :–

1. मानव संसाधन मंत्रालय महिला एवं बाल विकास संस्थान, नई दिल्ली (2012–213)
2. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय रिपोर्ट (2014–2017)
3. आई सी डी एस, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय रिपोर्ट 2017।
4. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय (htpps://mohfw.gov.in)
5. ब्लॉग टीकाकरण अनुसूची भारत 2016 (www.hatepsm.com)
6. प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय www.wcf.in/schemes
7. www.icds.nic.in सोशल मीडिया सहभागिता (2014)
8. www.gov.in.vaccinution यूआईपी कार्यक्रम
9. e.sanchayika.mp.gov.in ई सचायिका आई सी डी एस।
10. https://sarkariinfo.in (गर्भावस्था में सहायता योजना 2017)।
11. www.mpcwd.nic.in इंदिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना 2011।
12. www.amarujala.com
13. www.danikbhaskar.com
14. नई दुनिया (2018) आंगनवाड़ी की गर्भवती को मिलेगा गर्म भोजन।
15. पत्रिकाएँ राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मासिक पत्रिका म.प्र. स्वास्थ्य संचार (दिसम्बर 2011)।

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

आधुनिकीकरण का भील जनजाति की व्यवसायिक गतिशीलता व सामाजिक प्रस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

कल्पना भण्डारी
पीएच. डी. शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, म.प्र.

प्रस्तावना :– परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है, जो निरन्तर हर व्यवस्था में विद्यमान है। बदलाव किसी भी समाज की निरंतरता एवं जीवंतता का परिचायक होता है। जैसे–जैसे जीवन के लिए संसाधनों में परिवर्तन संभव होता है उसी के अनुरूप जीवन स्तर प्रभावित होता है। जब किसी व्यक्ति या जाति समुदाय की जीविका का आधार बदलता है तो उसकी पूर्व की स्थिति पर एवं अवस्था भी परिवर्तित होती है। जो व्यक्ति वर्तमान एवं भविष्य में सम्भावित परिवर्तनों के अनुरूप जीविका के उन्नत आधार को चुनता है, वह अपना अस्तित्व बनाए रख पाता है तथा बेहतर विकास करता है, परिवर्तन बदलते परिवेश में सामाजिक जीवन को गतिमान रखने के लिए आवश्यक भी है और अनिवार्य भी है[1]।

भारतीय परिवेश में देखें तो विभिन्न विद्वानों ने आधुनिकीकरण को परिभाशित किया है। एम. एन. श्रीनिवास ने आधुनिकीकरण के तीन क्षेत्र बताये हैं (1) भौतिक संस्कृति का क्षेत्र (2) सामाजिक संस्थाओं का क्षेत्र (3) ज्ञान, मूल्य एवं मनोवृत्तियों का क्षेत्र। उपरोक्त तीनों क्षेत्र एक क्षेत्र में होने वाले परिवर्तन दूसरे क्षेत्र को भी प्रभावित करते हैं। एस. सी. दुबे के अनुसार भारत में परम्परा और आधुनिकता विरोधाभास के रूप में मौजूद है। इनके अनुसार आज भी भारतीय लोग गांव में निवास करते हैं, परम्परावादी हैं एवं दूसरी ओर आधुनिकता से बिल्कुल अछूते भी नहीं हैं। यातायात, रेल, मोटर, संचार, रेडियो, समाचार पत्र, शिक्षा, प्रशासन, सामुदायिक योजनाएँ आदि ने यहाँ आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ही परिवार का स्वरूप, स्त्रियों का परिवार में महत्व, विवाह, व्यवसाय, संस्तरण, कर्म–काण्ड व पवित्रता की धारणाओं में परिवर्तन हुआ है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिकीकरण के कारण आज भील जनजाति में सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं। सामाजिक क्षेत्रों में आधुनिकीकरण होने से गतिशीलता बढ़ी है, पुरानी प्रथाओं के स्थान पर नवीन जीवन मुल्य पनपे हैं। राजनीतिक क्षेत्र में सत्ता को अलौकिक भाक्ति की देन नहीं माना जाता, बल्कि सत्ता का लोगों में विकेन्द्रीकरण हुआ है। आर्थिक क्षेत्र में मशीनों का उपयोग बढ़ा है, उत्पादन में वृद्धि हुई है।

आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप नगरीकरण व औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है। जिसके कारण जनजाति जीवन भी प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। इस प्रक्रिया से परम्परावादी विचारों, मान्यताओं, संस्कृति आदर्शों आदि को छोड़कर नवीन विचारों, मूल्यों आदि को आत्मसात करने लगा है। जनजाति समाज भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहा है।

विभिन्न शोध अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि भारतीय जनजातियों में पिछले दो दशकों से बहुत बड़ा परिवर्तन देखने को मिला है जैसे संचार के साधन, आवागमन के साधन, औद्योगिकीकरण, शिक्षा एवं योजनाबद्ध कार्यक्रमों के कारण कभी जंगलों और पहाड़ों में रहने वाले ये आदिवासी जो सभ्यता के सम्पर्क से कटे हुए थे आज संचार श्रृंखला में बंध जाने से सभ्य समाज के निकट आ गए हैं। आधुनिकीकरण का जो प्रभाव उन पर पड़ रहा है वह अन्य समूहों से भिन्न है। शिक्षा के प्रसार ने जनजातीय लोगों को विभिन्न व्यवसायों में प्रवेश पाने योग्य बना दिया है जैसे अध्यापक, डॉक्टर, इंजीनियर अन्य राजकीय योग्यता प्राप्त करने लग गए हैं।

अब भील जनजाति के लोग भी हिन्दू पद्धति से भी विवाह करने लगे हैं। वैवाहिक स्थिति पर भी आधुनिकता का प्रभाव पड़ा है। शिक्षा के प्रति इसकी जागरूकता बढ़ी है। आधुनिकता से बढ़ता सम्पर्क इनमें सीमित परिवारों को लोकप्रिय बना रहा है। भील आदिवासी विद्यार्थी जो आधुनिकता के सम्पर्क में हैं, पूर्ण रूप से न तो आधुनिकता को ग्रहण कर पा रहे हैं, नहीं परम्परागत रहे हैं। इनके परम्परागत सामाजिक नियम

[1] निकुंज, एम.एल. बर्मा (1995) ''भीलों की सामाजिक व्यवस्था'', मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद, भोपाल।

व्यक्तिगत कमजोरियाँ एवं इसके पूर्वज इन्हें आधुनिक संस्कृति से अनुकूलन करने में बाधा बने हुए हैं। इनकी भाषा भी आधुनिकता से प्रभावित हुई है। नगरीय मित्रों से अभी भी ये अपने आपको पिछड़ा अनुभव करते हैं। अर्थात् इनमें हीनता की भावना है। आधुनिकता से सम्पर्क के कारण इनके परम्परागत मूल्यों का पतन हो रहा है।

शोध प्रविधि :–

अनुसंधान प्ररचना :– प्रस्तुत अध्ययन में शोध उद्देश्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक शोध प्ररचना का उपयोग किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :– आधुनिकीकरण का भील जनजाति की व्यवसायिक गतिशीलता व सामाजिक प्रस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

उपकल्पना :– भील जनजाति के जीवन पर शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं सूचना प्रोद्योगिकी का व्यवसायिक गति ीलता तथा सामाजिक प्रस्थिति पर प्रभाव पड़ा है।

अध्ययन क्षेत्र :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य जिला झाबुआ को चयनित किया गया।

अध्ययन का समग्र :– प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र झाबुआ जिले के ग्रामीण जिले के ग्रामीण क्षेत्र में निवासरत भील जनजाति के समस्त परिवारों को अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की इकाई :– प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र झाबुआ जिले के ग्रामीण क्षेत्र में निवासरत भील जनजाति के चयनित उत्तरदाता को अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया है।

निदर्शन विधि :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु स्तरीकृत निदर्शन विधि का उपयोग कर उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया है जो कि निम्न प्रकार है :–

तालिका 1

झाबुआ जिले में उत्तरदाताओं का चयन

जिला झाबुआ (उद्देश्यपूर्ण विधि)					
चयनित तहसील (जनसंख्या विधि)					
थांदला	**पेटलावाद**	**मेघनगर**	**झाबुआ**	**रानापुर**	**कुल गांव**
112	240	110	256	95	813
चयनित गांव (निदर्शन संख्या तालिका Random Number Table)					
8	8	8	8	8	40
चयनित उत्तरदाता (कोटा पद्धति एवं उद्देश्यपूर्ण विधि)					
80	80	80	80	80	400

जिले का चयन :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य जिला झाबुआ को उद्देश्यपूर्ण विधि के आधार पर चयनित किया गया।

तहसील का चयन :– अध्ययन क्षेत्र झाबुआ जिले की समस्त तहसीलों जिनमें थादला, पेटलावाद, मेघनगर, झाबुआ एवं पटलावाद को जनसंख्या विधि के आधार पर चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

गांवों का चयन :– प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु झाबुआ जिले की पाँच तहसीलों में से **(प्रत्येक तहसील से 8 गांव)** कुल 40 गांवों को दैव निदर्शन विधि द्वारा चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया। इस हेतु सर्वप्रथम सभी तहसीलों के गांवों की सूची शहर से दूरी के आधार पर तैयार की गयी तत्पश्चात् 20 गांव शहर के नजदीक एवं 20 शहर से दूर स्थित गांवों का चयन दैव निदर्शन संख्या तालिका का उपयोग कर की गयी।

उत्तरदाताओं का चयन :– अध्ययन में चयनित प्रत्येक गांव से 10 भील जनजाति के उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण विधि का प्रयोग कर 200 उत्तरदाता शहर के नजदीक के गांवों से एवं 200 उत्तरदाता शहर

से दूर स्थित गांवों से कुल 400 उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

आँकड़ों का आधार एवं एकत्रण :– प्रस्तुत शोध कार्य में प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों का उपयोग किया गया है।

प्राथमिक स्त्रोत :– प्राथमिक स्त्रोतों का सग्रहण निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जाकर उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क एवं साक्षात्कार, क्षेत्र का निरीक्षण एवं अवलोकन तथा समुह चर्चा के माध्यम से एकत्र किये गये। साक्षात्कार अनुसूची में अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप प्रश्नों का समावेश किया गया।

द्वितीयक स्त्रोत :– द्वितीयक स्त्रोतों के अन्तर्गत विद्वानों द्वारा लिखित ग्रन्थ, सर्वेक्षण प्रतिवेदन, संस्मरण, यात्रा–वर्णन, पत्र डायरी, ऐतिहासिक प्रलेख, शासकीय आंकड़े अनुसंधान प्रतिवेदन, समाचार पत्र, पत्रिका, शोध पत्रिका, संबंधित सरकारी विभागों के वार्षिक प्रतिवेदन, इन्टरनेट, अप्रकाशित सामग्री, अनुसूचित जनजाति विभाग, आदिम जाति कल्याण विभाग, जिला सांख्यिकी कार्यालय, एवं विभिन्न पुस्तकालय आदि से द्वितीयक स्त्रोत एकत्रित किये गये।

तकनीक एवं उपकरण :– संमक एकत्रित करने हेतु अवलोकन पद्धति, समूह चर्चा, अनुसूची, साक्षात्कार पद्धति, एस. पी. एस. एस. सारणीयन एवं फोटोग्राफी का उपयोग किया गया है।

वि□लेषणात्मक पृष्ठभूमि :– आंकड़ों के संकलन के पश्चात् संग्रहित आंकड़ों की छंटनी करके, कम्प्यूटर में प्रविष्ट किया गया तथा एस.पी.एस.एस. (SPSS) पैकेज का प्रयोग करते हुए सारणीयन के पश्चात् विश्लेषण करके उपयुक्त निष्कर्ष निकाले गये हैं।

तालिका क्र. 2

भील जनजाति में हस्तकला की वस्तुओं की जानकारी

हस्तकला की वस्तुएँ बनाते हैं			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	135	33.75
2	नहीं	265	66.25
	कुल योग	400	100.0
यदि हाँ तो विवरण			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	टोकरी	42	31.11
2	मिट्टी के खिलौने	32	23.71
3	मिट्टी की कोठी	23	17.03
4	उपर्युक्त सभी	38	28.15
	कुल योग	135	100.00

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

भील जनजाति में हस्तकला की वस्तुओं की जानकारी का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 33.75 प्रतिशत उत्तरदाता हस्तकला की वस्तुएँ बनाते हैं जबकि 66.25 प्रति ात उत्तरदाताओं ने बताया कि वे हस्तकला की वस्तुओं की जानकारी नहीं रखते हैं और ना ही बनाते हैं।

हस्तकला की वस्तुओं को बनाने वाले कुल 135 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 31.11 प्रतिशत उत्तरदाता टोकरी का निर्माण करते हैं जबकि सबसे कम 17.03 प्रतिशत उत्तरदाता मिट्ठी की कोठी बनाते हैं। 23.71 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये गये जोकि मिट्टी के खिलोने बनाते है वहीं 28.15 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये गये जिन्होंने बताया कि वे उपर्युक्त सभी हस्तकला की वस्तुओं का निर्माण करते हैं।

तालिका क्र. 3
भील जनजाति उत्तरदाताओं की वनों से संग्रहित प्राप्त आय का विवरण

क्र.	प्राप्त आय का विवरण	पूर्वजों के समय		वर्तमान समय में	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	₹ 2000 – ₹ 5000	237	59.25	203	50.75
2	₹ 5000 – ₹ 10000	75	18.25	82	20.50
3	₹ 10000 – ₹ 15000	51	12.75	68	17.00
4	₹ 15000 से अधिक	37	9.25	47	11.75
	कुल योग	**400**	**100.0**	**400**	**100.0**
स्वतन्त्रता की मात्रा = 3				5 प्रतिशत स्तर पर अन्तर सार्थक है।	
काई–वर्ग (χ^2) = 6.589				सारणी मान = 7.815	

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

भील जनजाति उत्तरदाताओं की वनों से संग्रहित प्राप्त आय का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 59.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पूर्वजों की वनों से संग्रहित आय 2000 रुपये से लेकर ₹ 5000 तक पायी जाती थी वहीं सबसे कम 9.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी वनों से संग्रहित आय ₹ 15000 से अधिक पायी जाती थी। 18.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पुर्वजों के समय वनों से आय ₹ 5000 से लेकर ₹ 10000 तक पायी जाती थी वहीं 12.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ वनों से संग्रहित आय ₹ 10000 से लेकर ₹ 15000 तक पायी जाती थी।

वर्तमान समय में वनों से संग्रहित आय के विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 50.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया कि उनकी वनों से संग्रहित आय ₹ 2000 से ₹ 5000 तक है कि जबकि सबसे कम 11.75 प्रति ात उत्तरदाताओं की आय ₹ 15000 से अधिक पायी गयी। 20.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी वनों से संग्रहित आय ₹ 5000 से ₹ 10000 तक पाया गयी जबकि 17 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी वनों से संग्रहित आय ₹ 10000 से ₹ 15000 तक पायी गयी।

तालिका से स्पश्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 3 स्वन्त्रता की मात्रा के लिए काई–वर्ग (χ^2) का सारणी मान 7.815 है जो परिकलित मान 6.589 से अधिक है इसलिए कहा जा सकता है कि काई–वर्ग (χ^2) सार्थक है। अतः दोनों पूर्वजों के समय भील जनजाति उत्तरदाताओं की वनों से संग्रहित प्राप्त आय एवं वर्तमान समय में भील जनजाति उत्तरदाताओं की वनों से संग्रहित प्राप्त आय सम्बन्धित नहीं है स्वतन्त्र हैं। इसलिए शून्य परिकल्पना स्वीकार की जाती है।

तालिका क्र. 4
भील जनजाति में प्रचलित वस्तु विनिमय प्रणाली सम्बन्धी विवरण

क्र.	विवरण	पूर्वजों के समय		वर्तमान समय में	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	खाद्य पदार्थ	264	66.0	43	10.8
2	मक्का	78	19.5	70	17.5
3	ज्वार	36	9.0	94	23.5
4	गेंहू	22	5.5	120	30.0
5	चावल	00	0.0	73	18.3
	कुल योग	**400**	**100.0**	**400**	**100.0**
स्वतन्त्रता की मात्रा = 4				5 प्रतिशत स्तर पर अन्तर सार्थक है।	
काई–वर्ग (χ^2) = 508.726				सारणी मान = 9.488	

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

भील जनजाति में प्रचलित वस्तु विनिमय प्रणाली सम्बन्धी विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पूर्वजों के समय खाद्य पदार्थों का विनिमय किया जाता था वहीं सबसे कम 5.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पूर्वजों के समय गेंहू का विनिमय किया जाता था। 19.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ मक्का का विनिमय किया जाता था वहीं 9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ ज्वार का विनिमय किया जाता था।

वर्तमान समय में भील जनजाति में सर्वाधिक 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ गेंहू का विनिमय किया जाता है जबकि सबसे कम 10.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ खाद्य पदार्थों का विनिमय किया जाता है। 17.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ मक्का का विनिमय किया जाता है वहीं 23.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके यहाँ ज्वार का विनिमय किया जाता है। 18.3 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये गये जिन्होंने बताया कि उनके यहाँ चावल का विनिमय किया जाता है।

तालिका से स्पश्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 4 स्वन्त्रता की मात्रा के लिए काई–वर्ग (χ^2) का सारणी मान 9.488 है जो परिकलित मान 508.726 से अत्यधिक कम है इसलिए कहा जा सकता है कि काई–वर्ग (χ^2) सार्थक है। अतः दोनों पूर्वजों के समय भील जनजाति में प्रचलित वस्तु विनिमय प्रणाली एवं वर्तमान समय में भील जनजाति में प्रचलित वस्तु विनिमय प्रणाली सम्बन्धित है स्वतन्त्र नहीं। इसलिए शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है।

तालिका क्र. 5

भील जनजाति के उत्तरदाताओं द्वारा पशुपालन करने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	227	56.75
2	नहीं	173	43.25
	कुल योग	**400**	**100.0**
यदि हाँ तो पाले जाने वाले पशुओं का विवरण			
क्र.	**विवरण**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1	गाय	51	22.46
2	बैल	24	10.57
3	भैंस/बकरी/मुर्गी	96	42.29
4	सभी प्रकार के पशु	56	24.67
	कुल योग	**227**	**100.0**

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

भील जनजाति के उत्तरदाताओं द्वारा पशुपालन करने का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेशण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 56.75 प्रतिशत उत्तरदताओं ने बताया कि वे पशुपालन करते हैं वहीं 43.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे पशुपालन नहीं करते हैं।

पशुपालन करने वाले कुल 227 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 42.29 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे भैंस/बकरी/मुर्गी का पालन करते हैं जबकि सबसे कम 10.57 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे बैल का पालन करते हैं। 22.46 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे गाय क पालन करते हैं वहीं 24.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे सभी प्रकार के पशुओं का पालन करते हैं।

तालिका क्र. 6
पशुओं की खरीद एवं बिक्री करने के स्थान का विवरण

क्र.	विवरण	पूर्वजों के समय		वर्तमान समय में	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	साप्ताहिक हाट बाजार	376	94.00	62	15.50
2	बाजार	24	6.00	105	26.25
3	उपर्युक्त दोनों	00	0.00	233	58.25
	कुल योग	**400**	**100.0**	**400**	**100.0**
स्वतन्त्रता की मात्रा = 2			**5 प्रतिशत स्तर पर अन्तर सार्थक है।**		
काई–वर्ग (χ^2) = 601.567			**सारणी मान = 5.911**		

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

पशुओं की खरीद एवं बिक्री करने के स्थान का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 94 प्रतिशत उत्तरदताओं के द्वारा बताया गया कि उनके पूर्वजों के द्वारा साप्ताहिक हाट बजार से पशुओं की खरीदी व बिक्री की जाती थी वहीं सबसे कम 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके पूर्वज बाजार से पशुओं की खरीदी व बिक्री करते थे।

वर्तमान समय में पशुओं की खरीदी व बिक्री के स्थान के विवरण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 58.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा साप्ताहिक हाट बाजार एवं बाजार से पशुओं की खरीदी व बिक्री की जाती है जबकि सबसे कम 15.50 प्रतिशत उत्तरदाओं ने बताया कि साप्ताहिक हाट बाजार से पशुओं की खरीदी व बिक्री की जाती है। 26.25 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये गये जिन्होंने बताया कि वे पशुओं की खरीदी व बिक्री करते हैं।

तालिका से स्पश्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 2 स्वन्त्रता की मात्रा के लिए काई–वर्ग (χ^2) का सारणी मान **5.911** है जो परिकलित मान **601.567** से अत्यधिक कम है इसलिए कहा जा सकता है कि काई–वर्ग (χ^2) सार्थक है। अतः दोनों पूर्वजों के समय **पशुओं** की खरीद एवं बिक्री करने के स्थान एवं वर्तमान समय में पशुओं की खरीद एवं बिक्री करने के स्थान सम्बन्धित है स्वतन्त्र नहीं। इसलिए शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है।

तालिका क्र. 7
खेतों में लागत के प्रबन्धन सम्बन्धी विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	बैंक से लोन लेकर	84	21.00
2	साहुकार से कर्ज लेकर	132	33.00
3	रिश्तेदारों से	68	17.00
4	स्वयं की बचत से	116	29.00
	कुल योग	**400**	**100.0**
यदि साहूकार या बैंक से ऋण लिया है तो ब्याज दर			
क्र.	**विवरण**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1	5 प्रतिशत या इससे से कम	97	44.90
2	5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत	35	16.20
3	10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत	38	19.59
4	15 प्रतिशत से अधिक	46	21.29
	कुल योग	**216**	**100.0**

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

खेतों में लागत के प्रबन्धन सम्बन्धी विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं ने बताया कि सर्वाधिक 33 प्रतिशत उत्तरदाता साहूकार से कर्ज लेकर खेतों में लागात लगाते हैं जबकि सबसे कम 17 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे रिश्तेदारों से कर्ज लेकर खेतों में लागात लगाते हैं। 29 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे स्वयं की बचत से खेतों में लागत का प्रबन्धन करते हैं वहीं 21 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे बैंक से लान लेकर खेत में लागत के प्रबन्धन करते हैं।

बैंक या साहुकार से ऋण लेने पर ब्याज दर का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि कुल 216 उत्तरदाताओं में से 44.90 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्होंने 5 प्रतिशत या इससे कम ब्याज दर पर ऋण प्राप्त किया जबकि 16.20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक की ब्याज दर पर ऋण उपजब्ध हो पाया। 19.59 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत की ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध हो पाया वहीं 21.31 प्रतिशत उत्तरदाताओं को 15 प्रतिशत और इससे अधिक की ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध हो पाया।

अतः उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि साहूकारों द्वारा अदिवासियों को दिया जाने वाला ऋण की ब्याज दर 10, 15, और 15 प्रतिशत से अधिक भी होती है जिससे यहाँ जनजातिय समूदाय ऋणग्रस्तता के शिकार हैं। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति बहुत ही चिंतनीय है।

तालिका क्र. 8

भील जनजाति की कृषि विकास पर आधुनिकीकरण का प्रभाव का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	240	60.00
2	नहीं	160	40.00
	कुल योग	**400**	**100.0**
यदि हाँ तो विवरण			
क्र.	**विवरण**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1	हाइब्रिड बीज का प्रयोग	75	31.2
2	उत्पादन में वृद्धि	90	37.5
3	आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग	38	15.9
4	समय की बचत	37	15.4
	कुल योग	**240**	**100.0**
कृषि हेतु आधुनिक पद्धतियों को न अपनाये जाने के कारण			
क्र.	**विवरण**	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1	तकनीकि जानकारी का अभाव	20	12.50
2	धन की कमी	38	23.75
3	सामान्य जानकारी का अभाव	62	38.75
4	कृषि के आधुनिक तरीकों का अभाव	40	25.00
	कुल योग	**160**	**100.00**

प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

भील जनजाति की कृषि विकास पर आधुनिकीकरण का प्रभाव का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 60 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि आधुनिकीकरण से उनके कृषि विकास पर प्रभाव पड़ा है जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि उनके कृषि विकास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

कुल उत्तरदाताओं में से 240 उत्तरदाताओं ने बताया कि आधुनिकीकरण का कृषि विकास पर प्रभाव

पड़ा है जब इन उत्तरदाताओं से पूछा गया कि आधुनिकीकरण का कृषि विकास पर पड़ने वाले प्रभावों को बताईए तो सर्वाधिक 37.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि आधुनिकीकरण से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है जबकि सबसे कम 15.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि आधुनिकीकरण से उनके समय की बचत हुई है। 31.2 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाये गये जिन्होंने बताया कि आधुनिकीकरण से हाइब्रिड बीजों का प्रयोग बड़ा है वहीं 15.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि आधुनिकीकरण से आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग बढ़ा है।

कृषि हेतु आधुनिक पद्धतियों को न अपनाये जाने के कारणों के विश्लेषण से ज्ञात होता कि कुल 160 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 38.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि सामान्य जानकारी के अभाव के कारण उन्होने आधुनिक कृषि पद्धतियों को नहीं अपनाया जबकि सबसे कम 12.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे तकनीकि की जानकारी के अभाव के कारण कृषि हेतु आधुनिक पद्धतियों को नहीं अपनाते हैं। 25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि कृषि के आधुनिक तरीकों के अभाव के कारण कृषि हेतु आधुनिक पद्धतियों को नहीं अपनाते हैं वहीं 23.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि धन की कमी के कारण वे कृषि हेतु आधुनिक पद्धतियों को नहीं अपनाते हैं।

तालिका क्र. 9
पशुपालन से वार्षिक आय प्राप्त होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	₹ 5000 से कम	22	5.50
2	₹ 5000 से ₹ 10000	51	12.75
3	₹ 15000 से ₹ 20000	37	9.25
4	₹ 20000 से ₹ 25000	225	56.25
5	₹ 25000 से ₹ 30000	41	10.25
6	₹ 30000 से अधिक	24	6.0
	कुल योग	**400**	**100.00**

स्त्रोत : प्राथमिक क्षेत्र सर्वेक्षण जिला झाबुआ 2017

पशुपालन से आय प्राप्त होने का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 56.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं को ₹ 15000 से ₹ 20000 रुपये तक की आय प्राप्त होती है जबकि सबसे कम 5.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं को ₹ 5000 से कम आय प्राप्त होती है। 12.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं को पशुपालन से ₹ 5000 रुपये से ₹ 10000 रुपये तक की आय प्राप्त होती है वहीं 9.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं को पशुपालन से ₹ 15000 रूपये से ₹ 20000 तक की आय प्राप्त होती है। 10.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं को पशुपालन से ₹ 25000 से ₹ 30000 रुपये तक की आय प्राप्त होती है जबकि 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको पशुपालन से ₹ 30000 रुपये से अधिक आय प्राप्त होती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :– भील जनजाति के शैक्षणिक विकास को संचालित शासकीय योजनाओं के माध्यम से उचित मात्रा में शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराये जाने की अति आवश्यकता है। इसके साथ ही इनके शैक्षणिक स्तर को अधिक विकसित करने के लिए शासकीय स्तर पर उचित कदम उठाए जाने की आवश्यकता है साथ ही इनकी संस्कृतिक विरासत को संरक्षण प्रदान कर इसमें आधुनिक सांस्कृतिक मूल्यों को जोड़ने की अति आवश्यकता है। आर्थिक समस्याओं के निराकरण हेतु भील जनजाति के लोगों का उचित मात्रा में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने एवं इनको रोजगार और आर्थिक हितों की शिक्षा प्रदान कर उचित कदम उठाए जाने की आवश्यकता है। भील जनजाति क्षेत्रों में आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने हेतु आधुनिक लघु उद्योग व कुटीर उद्योगों की स्थापना किये जाने की आव यकता है। जनजाति समूह को प्रशिक्षण व उद्योग हेतु सब्सिडी प्रदान करने की अति आव यकता है।

कृषि के विकास के लिए आधुनिक तकनीकी ज्ञान को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए। उन्नत खेती के तरीके, उन्नत बीज, उर्वरकों का प्रयोग कर उत्पादन बढ़ा सकें। मिश्रित फसल पद्धति को मिले इसके प्रशिक्षण के लिए अन्य स्थानों पर परिभ्रमण कार्य किया जाना चाहिए। झाबुआ जिले की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए अधिक से अधिक पेड़ लगाने हेतु प्रेरित करना चाहिए। कृषि सिंचाई हेतु तालाबों का निर्माण किया जाना चाहिए। अनाज भण्डार हेतु टीन वितरित के स्थान पर प्लास्टिक के ड्रम (अनाज की कोठी) प्रदाय किये जाने चाहिए। पलायन को कम करने हेतु जनजातिय लोगों के लिए रोजगार सृजन के कार्यक्रम वृहद स्तर पर प्रारम्भ करना चाहिए।

सन्दर्भ :–

1. **राधेशरण (2002),** ''भारत की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना संस्कृति के मूल तत्व'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ आकादमी, भोपाल।
2. **नरेन्द्र, मोहन (2008),** ''भारतीय संस्कृति'', प्रभात प्रकाशन आसफ अली रोड, नई दिल्ली।
3. **चौहान श्याम सुन्दर सिंह (2005),** ''कुरुक्षेत्र (दिसम्बर 2005)'', 'भारत की सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षक हस्तशिल्प उद्योग', ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
4. **शर्मा अभिनय कुमार (2006),** ''कुरुक्षेत्र (फरवरी)'', 'भारतीय संस्कृति की विश्व की अमूल्य देन', ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
5. **अग्रवाल, एल. एन. तथा सिंह एस. डी. (2009),** ''सामाजिक सहयोग'', राष्ट्रीय त्रैमासिक शोध पत्रिका, शोध प्रबंधन अभिवद, श्रीकृष्ण शिक्षण संस्थान उज्जैन।
6. **बसु सलिल (2007),** ''आदिवासी स्वस्थ्य पत्रिका'', क्षेत्रिय जनजाति आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र, जबलपुर।
7. **कुमार राकेश (2002),** (योजना), कार्यालय योजना भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली।
8. **बी. एल. नागदा (2008),** ''आदिवासी स्वास्थ्य पत्रिका'', जनवरी एवं जुलाई, (2008), क्षेत्रिय जनजाति आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र भारतीय आयुर्विज्ञान आनुसंधान परिषद, जबलपुर।
9. **सीमा शाह जी (2012),** म.प्र. सामाजिक शोध समग्र दिसम्बर 2012, लोक विकास एवं अनुसंधान ट्रस्ट, 301 ईशान अपार्टमेन्ट, 13/2 स्नेहलता गंज, इन्दौर।
10. **नरगुन्दे सोनाली (2012),** म.प्र. सामाजिक शोध समग्र, लोक विकास एवं अनुसंधान ट्रस्ट।
11. **निकुंज, एम.एल. बर्मा (1995),** ''भीलों की सामाजिक व्यवस्था'', मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद, भोपाल।

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

गुप्तों की साम्राज्यवादी नीति में सामंतवादी व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन

प्रमिला डेहरिया
रिसर्च स्कॉलर, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

मौर्य साम्राज्य के अंतर्गत विजित राज्यों की क्या स्थिति थी, इसका स्पष्ट अनुमान नहीं दिया जा सकता, पर जो कुछ उपलब्ध है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि विजित शासक समूल नष्ट कर दिये जाते थे परन्तु गुप्त साम्राज्य के अंतर्गत सर्वथा एक नई बात देखने में आती है कि जिन राजाओं ने अपनी पराजय मानकर गुप्त साम्राज्य की अधीनता स्वीकार कर ली, उन्हें उन्होंने अपने राज्य का अधिकारी बना रहने दिया। उससे पूर्व हमें सामंतवादी व्यवस्था की पूर्ण जानकारी प्राप्त करेंगे। जैसा समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में वर्णन है।

सामंतवाद :– वह शासन व्यवस्था था, जिसमें राज्य की भूमि बड़े बड़े जमींदारों के हाथों में होती थी। सामंतवाद शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द फयूडम में हुई थी जिसका अर्थ जमींदार होता है। वह व्यवस्था जिसमें शासन व्यवस्था जमींदारों या सामंतों के हाथ में होती है। अतः हम कह सकते हैं कि सामंतवाद एक ऐसी प्रणाली है जिसमें स्थानीय शासक उन शक्तियों और अधिकारों का उपयोग करते थे, जो सम्राट राजा अथवा किसी केन्द्रीय शक्ति को प्राप्त होते हैं। सामजिक दृष्टियों में समाज दो वर्षों में विभक्त था – सत्ता और अधिकारों से युक्त राजा और उसके सामंत तथा अधिकारों से वंचित कृषक व दास। इस सामंतवादी व्यवस्था के प्रमुख तीन तत्व थे '– जागीर, सम्प्रभुता और संरक्षण। कानूनी रूप में राजा या सम्राट सम्पूर्ण भूमि का स्वामी होता था। समस्त भूमि विविध श्रेणी के स्वामित्व के सामंतों में और वीर सैनिकों में विभक्त थी। सामंतों में वितरित यह भूमि जागीर होती थी। वे सामंत आवश्यकता पड़ने पर सम्राट की सैनिक सहायता करते थे और वार्षिक निर्धारित कर देते थे। सामंत अपनी भूमि में प्रभुता सम्पन्न होते थें।

गुप्त शासकों की सामंतवादी नीति :– मौर्य शासकों की तरह गुप्त शासकों ने अपने विजित राज्य नष्ट नहीं किये गुप्तों ने उन राजाओं को सामंती व्यवस्था के रूप में अपने अधीन बनाकर स्वतंत्र छोड़ना श्रेष्ठकर समझा इसीलिए गुप्त साम्राज्य सम्पूर्ण भारत वर्ष के अधिकांश भू–भाग फलित फूलित हुआ। गुप्तों ने सामंतों को उनके क्षेत्र में राजा की भांति पद का उपभोग कर दिया। गुप्तों की इस व्यवस्था को सामंती रूप में इसलिए समझा गया क्योंकि जागीर भूमि चाहे सम्राट द्वारा अपने अधिनस्थों को बांटी गई हो या विजित राज्य के राजाओं को अधिनस्थ बनाया हो दोनों ही अवस्था में सम्राट को कर देना तथा उनकी नीतियां स्वीकारना सामंतवादी व्यवस्था ही है।

प्रयाग प्रशस्ति में स्पष्ट हे कि समुद्रगुप्त के काल से ही सामंत अधिपत्य बढ़ावें सम्पूर्ण प्रकार के कर देते थे कहा जाता है कि समुद्रगुप्त को सामंत कर देते थे, राजधानी में आकर प्रणम करते थे तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करते थे। उदयगिरि के शैव लेख जो चंद्रगुप्त द्वितीय के काल का है से पता चलता है कि सनका लीक लोग (पूर्वी मालवा) में गुप्तों की आधीनता स्वीकार करते थे।

गुप्तकालीन सामंतों के विशेषाधिकार :– गुप्तकालीन सामंत वर्ग विशेषाधिकारों से युक्त वर्ग था। वे सामंत अपने अपने शासन क्षेत्र में परम्परागत आधार पर एक नरेश की ही भांति राज्य करते थे। उन्हें सेना रखने का अधिकार प्राप्त था तथा निजी भू–भाग में वे कर आदि वसूल करते थे। इसके बदले में उन्हें गुप्त सम्राट की पूर्व निर्धारित वार्षिक धन राशि भेंट स्वरूप में देना होती थी तथा युद्ध के अवसर पर सैनिक सहायता भी प्रदान करनी पड़ती थी।

गुप्तकालीन प्रमुख सामंत :– गुप्तकालीन प्रमुख सामंतों के नाम एवं क्षेत्र निम्नानुसार है –

1. **मौखिक एवं उत्तर गुप्त** – नागार्जुनी एवं बराबर के लेखों के प्राप्त स्थान से यह जानकारी मिलती है कि सम्भतः पहले भीखरी लोग विहार प्रांत के गया में शासन करते थे बाद में यहां से हटकर कान्यकुब्ज कन्नौज चले गये।

2. **पारिब्राजक** – रीवों एवं जबलपुर (दंभाल) वाले भागों में परिवारजक महाराज गुप्तों की आधीनता में राज्य करते थे।

3. **उच्चकल्प** – बुन्देलखण्ड में अजयमंड एवं जामों में उच्चकल्प वंश के नरेश गुप्तों के सामंत थे।

4. **औलिकर वंश** – मालवा के औलिकर वंश के लोग गुप्तों के आधीन थे। मंदसौर शिलालेख के अनुसानर।

5. **मैत्रक वंश** – मालवा के पश्चिम में गुजरात एवं कठियावड़ में मैत्रक वंश गुप्तों की अधीनस्थता को स्वीकार करते थे।

गुप्त साम्राज्य के विघटन में सामंतवादी व्यवस्था की भूमिका :– सामंतवादी व्यवस्था जहां गुप्त साम्राज्य की साम्राज्यवादी नीति की प्रथम कड़ी थी वहां कालांतर से गुप्तों के लिए सामंतवादी व्यवस्था घातक सिद्ध हुई स्कन्दगुप्त के समय तक सामंतों ने अधीनता बनाई रखी परन्तु स्कन्दगुप्त की मृत्यु के उपरांत सार्मथशक्ति के अभाव में गुप्तों की शक्ति क्षीण होती गई। सर्वोच्च शक्ति को दुर्लभ होते देख सामंत शासकों ने लाभ उठाकर सैन्य बल का दुरूपयोग कर अपनी स्वतंत्रता स्वीकार कर ली। एरण अभिलेख स्कन्दकालीन जूनागढ़ अभिलेख, खोजह ताम्रलेख, प्रवाग प्रशस्ति आदि लेखों से स्पष्ट है कि अवनति काल में महत्वाकांक्षी सामन्त कुलों से स्वतंत्र शासकों जैसा व्यवहार करना प्रारंभ कर दिया था। सामंतों की स्वतंत्राता के अनुसार मैत्रक वंश के शासकों ने सर्वप्रथम अपने राज्य को स्वतंत्र कराया था छठी शताब्दी के मध्य काल में भीखरी वंश तथा कुमार गुप्त के काल से उत्तरगुप्त राजवंश स्वतंत्र हो गया। बंगाल क्षेत्र में गौण समुदाय ने अलग राज्य की स्थापना कर ली।

सामंतवादी व्यवस्था की समीक्षा :– गुप्तकाल में सामंतवादी व्यवस्था अपने चर्मोत्कर्ष पर थी, गुप्त सम्राटों ने विजित राष्ट्रों के अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए जिस नीति का अनुसरण किया उसे हम गुप्तकालीन सामंतवादी स्वरूप से देखते हैं, सामंत (विजित शासक) अपने अण्धिकारों का गुप्तों की अधीनता में निर्वहन करते थे। सामंती व्यवस्था का यह स्वरूप पराजित शासकों की महत्वाकांक्षा के साथ साथ मजबूरी मात्र थी। वे निरन्तर अवसर की तलाश में रहते थे कि उन्हें स्वतंत्र होने का कोई रास्ता मिल जाए। जहां सामंतों ने अधिनस्थ शासक होते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वहन किया वही सर्वोच्च सत्ता की दुबैलता के समय एक राष्ट्र न बनाकर अपनी अपनी स्वतंत्रता पर विशेष बल दिया इससे यह स्पष्ट है कि सामंत महत्वकांक्षी थे और वह अवसर की प्रतीक्षा में रहते थे। वहीं गुप्त शासकों की यह नीति साम्राज्यवादी भावना के आधार पर उच्च कोटी की थी। गुप्तों का यह मानना कि राज्यों को पूर्णतः नष्ट किए बिना अधीन बनाना राज्य की विस्तारवादी नीति के साथ साथ राज्य की समृद्धता का संरक्षण भी था। विजित राज्यों को मूलतः नष्ट नहीं किया जाता था इसमें जन धन की हानि होने से राज्य को पूर्णतः बचा लिया जाता था। राज्यों की सुरक्षात्मक दृष्टि से यह सामंती व्यवस्था श्रेयष्कर थी। वहीं सामंती व्यवस्था ने ही अवसर का लाभ उठाकर गुप्त साम्राज्य को एक छोटे भू–भाग तक सीमित कर विघटन के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया।

स्पष्टतः गुप्तों की सामंतवादी नीति राज्य के लिए श्रेष्यकर होते हुए भी विघटनकारी भी राज्य विस्तार में सामंत सहयोगी थे परन्तु कालान्तर से सर्वप्रथम सामंतों ने अवसर का लाभ उठाकर स्वतंत्रता प्राप्त करने में देरी न की।

संदर्भ सूची :–

1. राय उच्च नारायण, गुप्त सम्राट और उनका काल लोकभारती, प्रकाशन (इलाहाबाद नई दिल्ली पटना)
2. गुप्त, परमेश्वरी लाल, गुप्त साम्राज्य विश्व भारती प्रकाशन
3. अग्रवाल डॉ. पृथ्वचीकुमार, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, विश्व भारती प्रकाशन
4. गुप्त, परमेश्वरी लाल, गुप्त कालीन मुद्राएं
5. बनर्जी, आर डी – एज ऑफ इम्पीरियल गुप्ताज

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

भारतीय समाज में घरेलू हिंसा का स्वरूप

आकांक्षा चौरसिया
शोधार्थी, शोध केन्द्र–रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

हमारे भारतीय समाज में जो सदियों से व्यवस्था चली आ रही है, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है। जिससे भारतीय नियमों, रीति–रिवाजों, प्रथाओं, कुप्रथाओं, शास्त्रों, वेदों, संस्कृति का निर्माण हुआ है। यह सब पुरूषों की इच्छा के अनुसार व उनकी सुविधा के लिये ही निर्मित किये गये हैं, किन्तु इन सबके कारण स्त्री के पक्ष की सभी सुविधाओं एवं अधिकारों को छीन लिया गया है। स्त्रियों को दोयम दर्जे का प्राणी मान लिया गया है क्योंकि उनके पास कोई अधिकार नहीं थे या अधिकार दिये ही नहीं गये।

किन्तु आज वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति में कम ही सही लेकिन कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन अवश्य आये हैं। स्त्री समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। स्त्री के बिना समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती हैं, किन्तु पुरूष द्वारा सदैव से स्त्रियों की अनदेखी की जा रही है। उन्हें परम्पराओं, रीति–रिवाजों में जकड़कर घर की चाहरदीवारी में कैद रखा जाता है, जिसके कारण स्त्रियों में पीड़ा, घुटन, छटपटाहट उत्पन्न होती है और यही घुटन, छटपटाहट ने स्त्री को अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों से मुक्त होने को मजबूर भी किया।

आज आधुनिक समय में स्त्रियों की परम्परागत छवि टूट रही है, क्योंकि आज आधुनिक युग की स्त्रियाँ परम्परावादी नियमों, रीति–रिवाजों, बंधनों, निषेधों में बँधकर अपना जीवन–यापन नहीं करना चाहती हैं। वह अपना पक्ष परिवार व समाज के सामने निर्भयता, साहस के साथ रखती हैं तथा अपने अधिकारों की माँग करतीं हैं। उन अधिकारों की जिस पर उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, अर्थात् ''स्त्री अपना अधिकार प्राप्त करने के लिये संघर्ष के मार्ग पर है।''[1]

आज की स्त्री जागृत अवस्था में आ चुकी है, क्योंकि उसके हृदय में समानता की भावना ने जन्म ले लिया है। वह पुरूष के समान अधिकारों की बात नहीं करती है। वह अपने स्वयं के अधिकारों की बात करती है। जो उसे उसके जीवन जीने व जीवन के लिये आवश्यक अधिकार है। वह पुरूष के नहीं पुरूष की दूषित मानसिकता के विरूद्ध है। वह पुरूष के किसी भी अधिकार को छीनना नहीं चाहती है, किन्तु अपने भी अधिकारों को छोड़ना नहीं चाहती है। इसलिये आज साहस के साथ ''स्त्री अपना अधिकार हासिल करने के लिये अपना भाग्य स्वयं निर्मित करने के लिये संघर्ष की राह पर है।''[2]

अतः आज की स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति सचेत व सजग है, क्योंकि उसमें अपने आत्म सम्मान के प्रति नई चेतना का जन्म हुआ है। जिसके परिणाम स्वरूप वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था के प्रति क्रोधित होकर अपना आक्रोश व्यक्त करती हैं। इसके साथ ही विभिन्न महिलाओं व दलों द्वारा स्त्रियों के अधिकारों के प्रति न जाने कितनी लड़ाईयाँ लड़ी गई ? कितने महिला संगठनों का गठन किया गया ताकि स्त्रियों को कानून व्यवस्था से न्याय मिल सके।

इस संबंध में डॉ. रेणुका नैय्यर लिखती हैं कि ''महिलाओं ने राजनीति में प्रवेश कर कई महिला संगठन गठित किये। महिला मंडलों ने घर–घर जाकर महिलाओं में देश के प्रति स्वाधीनता की अग्नि प्रज्जवलित की। 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' 'महिलाओं की राष्ट्रीय समिति', विश्वविद्यालय महिला संघ', 'कस्तूरबा स्मारक समिति', 'स्वामी श्रद्धान्न की पोती श्रीमती सत्यवती देवी द्वारा गठित 'कांग्रेस महिला समाज' और 'कांग्रेस देश सेविका दल' आदि अनेक महिला संगठनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। घर से बाहर निकलने के बाद नारी ने सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध ही नहीं, काम करने वाली श्रमिक महिलाओं के लिये संवैधानिक लड़ाई भी लड़ी।''[3]

अर्थात् स्त्रियों को भले ही संविधान की तरफ से स्वतंत्रता का अधिकार दे दिया गया है। वह भी सिर्फ कागजी तौर पर किन्तु आज भी व्यवहारिक रूप से स्त्रियाँ स्वतंत्र नहीं हो पाई है। आज भी परिवार में समाज में उन्हें उनके अधिकार व वह सम्मान प्राप्त नहीं जो सरकारी कागजों में है।

स्त्री को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिये तथा शोषित, प्रताड़ित, पीड़ित स्त्रियों को पीड़ा से निकालकर उन्हें समाज में उनका उचित स्थान दिलाने में साहित्य अपनी अहम् भूमिका निभाता है, क्योंकि साहित्य समाज के पीड़ित शोषित वर्ग को न्याय दिलाकर उन्हें समाज में सम्मानीय स्थान दिलाने के साथ ही मानवीयता को समाप्त होने से बचाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है तथा वह वर्ग जो हाशिये पर है, उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास किया व समाज के घिनौने चेहरों को बेनकाब करने का कार्य भी किया।

स्त्री आधारित जो पूर्व में साहित्य की रचना की गई थी, उसमें महिला साहित्यकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इनके द्वारा सृजित साहित्य में वह स्त्रियों के ऊपर होने वाले अत्याचारों का चित्रण करती थी। साथ ही पुरूषों की निंदा भी करती थी, किन्तु स्त्रियों को अत्याचार से मुक्ति दिलाने का कोई प्रयास नहीं करती थी, किन्तु आधुनिक समय की महिला लेखिकाओं ने स्त्रियों को अत्याचारों से मुक्ति दिलाने के सुझाव अपने साहित्य के माध्यम से दिये भी और पुरूषों के इस व्यवहार की अलोचना भी की है।

अतः ''पूर्ववर्ती लेखिकाएँ नारी की दीन स्थिति का चित्रण कर दबे स्वर में पुरूष की निन्दा किया करती थी, जब कि परवर्ती लेखिकाओं ने और दृढ़ स्वरों में पुरूषों की आलोचना की है। उन्होंने पुरूष से लोहा लेने का प्रयास किया है।''[4]

स्त्री और स्त्री जीवन से जुड़ी सभी समस्यायें साहित्य की विषय वस्तु है, क्योंकि आज का अधिकांश साहित्य स्त्री केन्द्रित साहित्य है, अर्थात् स्त्रियों द्वारा स्त्रियों के लिये सृजित किया गया साहित्य है। क्योंकि आज के साहित्यकारों ने स्त्री के मन की गहराईयों के अंदर झांककर देखा ही नहीं, अपितु उसके दुख, दर्द, पीड़ा को स्वयं महसूस भी किया है। स्त्री के ऊपर होने वाले अत्याचारों, पीड़ाओं का जितनी ईमानदारी व तटस्थता के साथ चित्रण एक स्त्री करती है, उतना कोई पुरूष नहीं।

स्त्री–पुरूष की स्वानुभूति व सहानुभूति में सबसे बड़ा अंतर होता है। स्त्री द्वारा स्त्री के लिये लिखा गया स्त्री साहित्य स्वानुभूति का साहित्य होता है, क्योंकि एक स्त्री ही स्त्री की पीड़ा व दर्द को स्वयं महसूस करती है या कहीं न कहीं किसी रूप में वह पीड़ा या अत्याचार उन्होंने भी सहा होगा, एक स्त्री होने के कारण। जबकि पुरूषों द्वारा स्त्रियों के लिये लिखा गया साहित्य सहानुभूति का साहित्य है, क्योंकि एक पुरूष कभी भी स्त्री का दर्द व पीड़ा को हृदय से महसूस नहीं कर सकता है।

अर्थात् स्त्री के सम्पूर्ण जीवन की त्रासदी को पूर्ण ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करने में पुरूषों की तुलना में महिला लेखिकाएँ अधिक सक्षम है। राजेन्द्र यादव के अनुसार ''पुरूष कथाकारों की तरह अपनी स्थिति और नियति के प्रति सामाजिक–मानसिक रूप से प्रबुद्ध कथा लेखिकाओं के आने से पहले हिन्दी कथा साहित्य प्रायः हवाई, प्रियदर्शनी और प्रदर्शनी नारियों से भरा रहा है। यह भी कहा जा सकता है कि सजीव व्यक्तित्व वाले नारी–पुरूष संबंधों के वास्तविक तनाव, लगाव और उन्हें निर्धारित करने वाले दबाव पहली बार सामने आ रहे हैं। इस दिशा में कृष्णा सोबती, ऊषा प्रियंवदा, मन्नु भंडारी, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, निरूपमा, मालती जोशी के नाम लिये जा सकते हैं।''[5]

स्त्री संबंधी समस्याओं को प्रखर रूप से साहित्य में चित्रित करने में महिला लेखिकाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने परम्पराओं को तोड़कर साहस का परिचय देने वाली स्त्रियों का परिचय अपने साहित्य में दिया है। इतना ही नहीं सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक धरातल में संघर्षरत स्त्रियों का चित्रण अपने साहित्य के माध्यम से कर उनके अस्तित्व को उनके वजूद को स्थापित करने का भरसक प्रयास किया है। राकेश कुमार इस संदर्भ में कहते है कि ''आज के स्त्री लेखन में स्त्री अपनी स्थिति को नियति मानकर नहीं देखती, अपितु उन स्थितियों के जिम्मेदार तत्वों, पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना के अर्न्तविरोधों के कारणों को भी तलाशती है कि उनकी निष्क्रिय कमजोर उपेक्षित उत्पीड़ित स्थिति किसने बनाई है और क्यों ? यही स्त्री लेखन सोच में बुनियादी बदलाव है।''[6]

परम्पराओं और रीति–रिवाजों को स्त्रियों के द्वारा तोड़ा जाना, उनकी साहसिकता का परिचय है, क्योंकि जब किसी इंसान के पास कुछ खोने का डर नहीं रहता है, या यूं कहा जाये कि उसे अपनी सुरक्षा का कोई भय नहीं होता है, तो वह ज्यादा ही खतरनाक हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप वह अपने साहस से

परम्पराओं को परिवर्तित कर उनका अन्त ही कर देता है। यह साहस और संघर्ष ही स्त्री के अस्तित्व की नई पहचान है।

स्त्री की इस नई पहचान को साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज में सजीव रूप से प्रस्तुत करने का भरसक प्रयास कर रहा है, जिसमें वह काफी हद तक कामयाब भी हो गया है। अमृता प्रीतम द्वारा स्त्रियों पर निर्भयता के साथ टिप्पणी की गई है कि ''हमारे शास्त्रों में भी औरत को जंजाल और सभी विपत्तियों की जड़ माना गया है। पुरूष की पाशविक प्रवृत्ति को नहीं जिसके कारण सीता हरी गयी या द्रोपदी निवर्सना और अपमानित की गयी पर चूँकि सैक्स और औरत दुनियाँ के सबसे बड़े आकर्षण है, उसके चटकारेपन में लोग न डूबे, ऐसा मुमकिन नहीं होता।''[7]

हमारे भारतीय देश में महिलाओं की दिशा व दशा सुधारने के लिये बहुत से नियम व कानून बनाये गये व आज भी बनाये जा रहे हैं। प्रायः यह देखने को मिलता हैं कि महिलाओं को इन कानूनों का लाभ प्राप्त नहीं होता हैं, क्योंकि ज्यादात्तर महिलाओं को कानून की जानकारी नहीं होती हें तो कभी पुलिस व्यवस्था की उदासीन व्यवस्था के कारण भी महिलाओं को महिला संबंधी कानून का लाभ नहीं मिल पाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. कल्पना वर्मा, स्त्री विमर्श : विविध रूप, पृ.सं. 216
2. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, पृ.सं. 384
3. डॉ. रेणुका नैय्यर, नारी स्वतंत्रता के बदलते रूप, पृ.सं. 126
4. डॉ. उर्मिला प्रकाश, नारी जागरण और महिला उपन्यासकारों की स्त्री–पुरूष परिकल्पना, पृ.सं. 25
5. अरविंद जैन, हँस पत्रिका 6 दिसम्बर 1996, पृ.सं. 79
6. राकेश कुमार, नारी वादी हिवमर्श, पृ.सं. 56
7. डॉ. बीनारानी यादव, हिन्दी उपन्यासों में स्त्री अस्मिता की अभिव्यक्ति, पृ.सं. 41

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

महिलाओं के लिये संवैधानिक अधिकार एवं अधिनियम

मनीष पांडेय
विषय–समाजशास्त्र, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर

सदियों से नारी की स्थिती विरोधाभाषी रही है, एक तरफ तो कहा जाता था जहां नारी का सम्मान होता है, वहां देवता भी निवास करते हैं। जबकि दुसरी ओर वहीं सती की प्रशंसा करते हुए बतलाया कि जो स्त्री सती हो जाती है, वह अपने पति को स्वर्ग में पुनः प्राप्त करके करोड़ों वर्षों तक उनके साथ निवास करती है।

पुरूष के अभाव में स्त्री को और स्त्री के अभाव में पुरूष को अपूर्ण माना गया है। इसी कारण हिन्दू समाज में स्त्री को पुरूष की अर्धांगिनी कहा गया है। यहां वैदिक काल से अब तक स्त्रियों की प्रस्थिती परिवर्तीत होती रही है। एवं धीरे–धीरे नारी स्वतंत्र से रूढिवादी व अंधविवास के गर्त में डूबती चली गई तथा परतन्त्र हो गई। इसलिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व एवं पश्चात् में भारतीय महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक दशा में सुधार करने के लिए कई प्रकार के संवैधानिक प्रावधान किए गए हैं। **(बसु, 2013)** जो कि निम्न है–

1. अनुच्छेद 14 में संविधान के समक्ष कानूनी समानता।
2. अनुच्छेद 15 में जाति, धर्म, लिंग एवं जन्म स्थान आदि के आधार पर भेदभाव न करना।
3. अनुच्छेद 16 में लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता।
4. अनुच्छेद 19(1) में समान रुप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।
5. अनुच्छेद 21 में स्त्री और पुरुष दोनों को प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता से वंचित न करना।
6. अनुच्छेद 23–24 में शोषण के विरुद्ध अधिकार समान रूप से प्राप्त।
7. अनुच्छेद 25–28 में धार्मिक स्वतंत्रता, धर्म को मानने, आचरण एवं प्रचार करने का अधिकार समान रुप से प्राप्त।
8. अनुच्छेद 29–30 में शिक्षा एवं संस्कृति का अधिकार।
9. अनुच्छेद 32 में संवैधानिक उपचारों का अधिकार।
10. अनुच्छेद 39(क) पुरूष एवं स्त्री सभी को समान रूप से जीविका के साधन प्राप्त करने का अधिकार।
11. अनुच्छेद 39(घ) में पुरुषों एवं स्त्रियों दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन का प्रावधान।
12. अनुच्छेद 41 में बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और अन्य अनर्हभाव की दशाओं में सहायता पाने का अधिकार।
13. अनुच्छेद 42 में महिलाओं हेतु प्रसुति सहायता प्राप्ति की व्यवस्था।
14. अनुच्छेद 47 में पोषाहार, जीवन स्तर एवं लोक स्वास्थ्य में सुधार करना सरकार का दायित्व है।
15. 243(घ 2) ग्राम पंचायत एवं नगरपालिका में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था। (73वें संविधान संशोधन अधिनियम)

संवैधानिक प्रावधानों**(बसु, 2013)** के अतिरिक्त भारत सरकार ने महिला अपराधों के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करने एवं महिला भेदभाव की प्रकृति को देखते हुए उनकी स्थिति में सुधार लाने हेतु कई अधिनियम बनाए। जिनका विवरण निम्नानुसार है–

हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 इस अधिनियम ने हिंदू विधवाओं को पुनर्विवाह की स्वीकृति दे दी है। ईश्वर चंद्र विद्यासागर के प्रयासों से विधवा पुनर्विवाह अधिनियम बनाया गया।इस अधिनियम के तहत पुनर्विवाह संबंधी कानूनी अड़चनों को दूर किया गया।

बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम, 1929 के द्वारा बाल विवाह पर रोक लगाई गई। विवाह के समय लड़के की आयु 18 वर्ष तथा लड़की की आयु 15 वर्ष सुनिश्चित की गयी थी। भारत सरकार ने उपरोक्त अधिनियम का अब संशोधन कर दिया है। बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1978 विवाह की न्यूनतम आयु स्त्रियों के लिए 15 से बढ़ाकर 18 वर्ष करने और पुरूषों के लिए 18 से बढ़ाकर 21 वर्ष करने के लिए बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1919, भारतीय क्रिश्चियन विवाह अधिनियम, 1872 तथा हिंदू विवाह अधिनियम,

1955 में संशोधन करता है। संशोधन को अक्टूबर 1978 में प्रभावी किया गया है।

संपत्ति पर अधिकार अधिनियम, 1937 इस अधिनियम के द्वारा हिंदू विधवाओं को मृत पति की संपत्ति में अधिकार दिया जाता है।

विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के द्वारा किसी भी धर्म या जाति को मानने वाले स्त्री पुरुष को परस्पर विवाह करने की छूट दे दी गई।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 एक पत्नी विवाह पर कानूनी मोहर लगा दी गई एवं विवाह विच्छेद न्यायिक पृथक्करण के प्रावधान किए गए एवं हिंदू विवाह की प्रचलित विभिन्न विधियों को मान्यता प्रदान की गई। साथ ही सभी जातियों के स्त्री पुरुषों को विवाह एवं तलाक के साथ ही सभी जातियों के स्त्री पुरुषों को विवाह एवं तलाक के अधिकार प्रदान किए गए। जिसमें 1976 एवं 1981 में कई संशोधन भी किए गए।

वेश्यावृत्ति निवारण संशोधन अधिनियम, 1986 इस अधिनियम के तहत महिलाओं एवं बालिकाओं के यौन शोषण को रोकने एवं यौन व्यापार की शिकार महिलाओं एवं लड़कियों के बचाव तथा पुनर्वास के लिए कई प्रावधान रखे गए हैं। इसके विरुद्ध दंडनीय कार्यवाही 3 वर्ष से लेकर आजीवन कारावास की व्यवस्था की गई है। यदि किसी स्त्री के साथ शारीरिक संबंध बनाने के उद्देश्य से अपहरण किया जाता है या डराया, धमकाया जाता है तो दोषी व्यक्ति को 10 वर्ष तक कारावास की सजा हो सकती है।

गर्भधान पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीक (लिंग चयन का निषेध) अधिनियम, 1994 पीसी एण्ड पीएनडीटी अधिनियम 2003 में यथा संशोधित यदि कोई व्यक्ति अपने बच्चे के लिंग का चयन करता है या किसी महिला को लिंग चयन करवाने के लिए मजबूर करता है तो उसे 30 साल तक की सजा और 10,000 रुपए का जुर्माना हो सकता है।

डायन प्रथा निषेध अधिनियम, 1999 डायन के नाम पर महिलाओं की हत्या तथा उन पर विभिन्न प्रकार के अत्याचार सदियों से होते आ रहे हैं। अंधविश्वास की आड़ में स्त्री हत्या पर रोक लगाने हेतु 1999 में यह अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार यदि कोई व्यक्ति किसी भी महिला को डायन के नाम पर प्रताड़ित करता है तो उसे 6 माह की अवधि के लिए कारावास तथा 2000 रुपए जुर्माना अथवा दोनों ही सजा उसे दंडित करने का प्रावधान है।

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 इस अधिनियम का उद्देश्य घरेलू हिंसा से महिलाओं को बचाना है। यह अधिनियम 2006 से लागू है।

कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न प्रतिषेध निवारण प्रतितोषण अधिनियम, 2013, यह कानून कार्यस्थलों पर दैनिक मजदूर अंशकालिक या पूर्णकालिक कर्मी, स्वयंसेवक इत्यादि महिलाओं के यौन उत्पीड़न से सुरक्षा और इसकी रोकथाम के लिए बनाया गया है।

महिलाओं का अश्लील चित्रण निवारण अधिनियम 1986 एवं **स्त्रियों व कन्याओं पर अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम 1956** आदि।

इन अधिनियमों एवं अधिकारों ने महिलाओं की स्थिति को उच्च आयाम तक पहुंचाने में मदद की है और कुप्रथा, रूढ़ियों और अंधविश्वास की बेड़ियों में बंधी नारी कुछ हद तक मुक्त हुई है।

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

योग की जान सूर्य नमस्कार

डॉ. लालजीत पचौरी
पी.एच.डी. योग, सहा. प्राध्यापक, रविन्द्रनाथ टैगौर वि.वि., जिला–रायसेन (म.प्र.)

भौतिक जीवन में सूर्य नमस्कार एक ऐसा अभ्यास है जिसका प्रारंभ प्राचीन काल से उस समय हुआ जब सबसे पहले मनुष्य अपने अन्दर स्थित आध्यात्मिक शक्ति के प्रति सजग हुआ था। यह सजगता ही योग की आधार शिल्प है। इसका शाब्दिक अर्थ है। सूर्य को नमस्कार करना। या फिर सूर्य देवता की उपासना करना। योग की दृष्टि से सूर्य नमस्कार के अभ्यास से मानव प्रकृति का सौर पक्ष जागृत होता है। तथा सर्वोच्च चेतना का विकास करने हेतु जीवनदायिनी ऊर्जा प्राप्त होती है। हमारे यहाँ प्राचीन परम्पराओं में सूर्यापासना को किसी ना किसी रूप में स्वीकार किसी न किसी रूप में किया गया है। भारत में भी अनेक भागों में सूर्योपासना को दैनिक कर्मकाण्ड के रूप में की जाती है। सूर्योपनिषद् में कहा गया है कि जो व्यक्ति सूर्य को ब्रम्हा का स्वरूप मानकर उसकी उपासना करता है। वह व्यक्ति शक्तिशाली क्रियाशील, बुद्धिमान तथा दीर्घजीवी होता है। अक्षयोपनिषद् में सूर्य को ईश्वर के उस रूप में चित्रित किया गया है। जो अनगिनत किरणों वाले सूर्य का रूप धारण करता है। तथा सम्पूर्ण मानवता के हित में चमकता रहता है। वृद्धाख्यक उपनिषद् में भी सूर्य का वर्णन इस प्रकार से किया गया है। प्रकाश के सारतत्व, ओदेव!

तू मुझे असत से सत की और,
अंधकार से प्रकाश की ओर,
मृत्यु से अमरत्व की आरे ले चल।

किसी न किसी रूप में अनेक सम्प्रदायों में मिलेगे। कही उगते सूर्य की, कही डूबते सूर्य की और कही मध्य दिवसीय सूर्य की उपासना का भी विधान मिलता है। यद्पि लोग सूर्य की उपासना ब्रम्ह रूप से ही करते है। परन्तु वास्तव में यह प्रतीक मात्र है। मुख्य उद्देश्य तो यह है कि इनके माध्यम से परबम्ह की उपासना करना, जो सृष्टि का रचयिता, पालनकर्ता तथा संहारकर्ता भी है तथा सूर्य जिसका प्रतीक मात्र है। हमारे भारत देश में आज भी सूर्य के अनेक मंदिर मिलते है। जिसमें से सबसे विख्यात मंदिर कोणार्क (उड़ीसा) का सूर्य मंदिर है जो 13 वीं शताब्दी में निर्मित हुआ था। तथा कश्मीर, गुजरात, आन्धप्रदेश में भी सूर्य मन्दिर स्थित है। हमारी आधुनिक काल में धार्मिक मान्यताओं की नीव पर ही सूर्य से संबंधित जानकारी को वैज्ञानिक रूप दिया गया है। इस प्रकार सूर्य के गर्भ में छिपे रहस्यों का उद्घाटन हुआ है। कभी–कभी सूर्य के तल पर विशाल धधकती अग्नि का विस्फोट होता है। पृथ्वी से विस्फोट सूर्य पर धब्बो की तरह दिखाई देते है। ये धब्बे कभी भी एक जैसे नहीं दिखायी देते कभी तेज तो कभी क्रम यह चक्र चलता रहता है। अनुमानतः इनका यह चक्र वर्षों में पूर्ण होता है। वैज्ञानिकों ने शोध के अन्तर्गत यह पाया कि धब्बों की तीव्रता का चक्र प्रारंभ होता है तो इससे पृथ्वीवासी भी प्रभावित होते है। तथा उस बीच युद्ध क्रान्तियां तथा अनेक प्रकार से उथल पुथल होती है। सूर्य का पृथ्वी पर पाये जाने वाले जीवन का एक आवश्यक अंग है। पृथ्वी पर सूर्य के लगातार पड़ने वाले ऊष्मायक्त प्रभाव समझने के पश्चात् ये चौकाने वाले नहीं लगते। हमारे जीवन पर सूर्य के इन प्रभावों को ठीक से समझने के पश्चात् सूर्य नमस्कार से हमारे शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों को अनदीखे, अनजाने आयाम जो हमारे सामने उत्पन्न होने लगते है। जिससे हमें समझ में आता है कि हमारे पूवर्जों ने इसे इतना अधिक महत्व क्यों दिया है। यह अभ्यास एक प्रकार से अपने आप में एक सम्पूर्ण रूप से अपनी अन्तनिहित शक्तियों को जागृत करता है। शक्ति व स्फूर्ति से परिपूर्ण होकर नव जीवन प्राप्त कर सकते है। अपनी चेतना शक्ति को जागृत कर सकते है। सूर्य नमस्कार यह एक प्रकार से अलग–अलग आसानों की श्रृंखला है। यह आसन 12 प्रकार की शारीरिक स्थितियों से मिलकर बना है। इन आसनों को बारी–बारी से आगे और पीछे की ओर छुककर किया जाता है। इन आसनों के माध्यमों से शरीर के विभिन्न अंगों तथा मेरूदण्ड में खिचाव उत्पन्न होने के साथ–साथ शरीर की मॉस पेशियों में खिचाव उत्पन्न होने से शरीर लचीला बना रहता है। अन्य कई अभ्यासों की अपेक्षा सूर्य नमस्कार कही अधिक प्रभावशाली माना गया है। जब कोई अभ्यार्थी शुरूआती दौर में इस अभ्यास को प्रारंभ करता है। उस वक्त उस अभ्यार्थी की मांस पेशियों से तथा जोड़ों में विषाक्त पदार्थ जमा होने से कडापन आदि रहता है। सूर्य नमस्कार को करने से व्यक्ति के जीवन में सजगता

आती जायेगी। साथ ही शरीर लचीला एवं स्वस्थ्य बनाये रखने के लिए सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास एक शक्तिशाली तथा प्रभावशाली आसन है। शुरूआत में जब व्यक्ति अभ्यास करे तो पूर्ण रूप से सजगता के साथ एवं तनाव रहित रहते हुए हर एक आसन को धीरे–धीरे करे। आसन करने के दौरान श्वास लेने और छोड़ने की प्रक्रिया को जोड़ना चाहिये। श्वास लेने और छोड़ने की प्रक्रिया में जब हम पीछे की ओर मूड़ते है तो श्वास अन्दर ली जानी चाहिये। क्योंकि सीना फैलता एवं फेफड़े भी फैलते है। तथा आगे की ओर झुकते समय श्वास को बाहर छोड़नी चाहिये, जिससे छाती तथा उदर में संकुचन पैदा होता है। हमारे स्थूल शरीर में सात चक्र विध्यमान रहते है। स्थूल शरीर में इसकी उत्पन्नता स्नायु जाल को तथा अन्तः स्त्रावी ग्रंथियों के रूप में होती है। सूर्य नमस्कार अभ्यास के दौरान चक्रों पर मन को केन्द्रित किया जाता है। एकाग्र करने के पश्चात् चक्रो का जागरण होता है। आसनों के माध्यम से प्राण शक्ति में वृद्धि होती है। मानसिक तथा शारीरिक ऊर्जा को एकाग्र करने में सहायता मिलती है। मन में सजगता, मानसिक रूप से होने से शरीर में इडा और पिंगला नाडी में सामस्य स्थापित होता है चक्रों की स्थिति।

संदर्भ ग्रंथ :–

(1) सूर्य नमस्कार – डॉ. राजीव रस्तोगी
(2) प्राकृतिक आयुविज्ञान– राकेश हजंदल
(3) सम्पूर्ण योग विधा – राजीव जैन

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

वर्तमान साहित्य में सामाजिक समरसता की चुनौती

प्रीती सिंह
शोधार्थी, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

वर्तमान भारतीय समाज भूमंडलीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी के आलोक में ज्ञानाधारित समाज की दिशा में विकसित हो रहा है। इस क्रम में वर्तमान साहित्य में समय सापेक्ष विकसित गुण और प्रवृत्तियाँ साहित्य की सृजन प्रक्रिया के मूल में निहित चिंतन को स्पष्ट करती हैं। विगत 30–35 वर्षों में विश्व में और मुख्य रूप से भारत में जिन नई आर्थिक और सामाजिक प्रक्रियाओं का विकास आरंभ हुआ वह भारत में मानव संबंधों और जीवन मूल्यों को बेहद प्रभावित कर रहा है। आर्थिक, सामाजिक क्षेत्रों में परस्पराश्रितता और अन्योन्याश्रितता वर्तमान वैचारिकी को प्रभावित करने वाला प्रमुख तत्त्व बन जाता हैं। ऐसे में भारत की बहुलतावादी सामाजिक और सामुदायिक स्थितियों, वर्तमान मानव संबंधों और जीवन मूल्यों में संतुलन स्थापित करने के लिए समरसता की वैचारिकी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष में सामाजिक, सांस्कृतिक धरातल पर संतुलन स्थापित करने के लिए और मानवाधिकार के नये प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिए समरसता का सिद्धांत ही भारतीय साहित्यकारों का पथ प्रदर्शन कर सकता है। भारतीय चिंतन परंपरा समरसता को आरंभ से ही प्रोत्साहन देती आ रही है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने इलेक्ट्रानिक संचार माध्यमों के द्वारा विश्व को एक सूत्र में बाँध दिया है। इस प्रक्रिया के तहत नये उपकरण, नये संगठन, नये बाजार और व्यक्ति और समाज के स्तर पर विकसित होने वाले नये मानव संबंधों के अलावा वैश्वीकरण की प्रक्रिया के नाम पर भारत की बहुलतावादी व्यवस्थाओं और संरचनाओं को गतिशीलता मिली है। इस प्रक्रिया के कारण पूरे भारतीय समाज में 'डिजिटल–डिवाइड' दिखाई देता है। नयी डिजिटल संस्कृति के अनुरूप जहाँ भारतीय मध्य वर्ग और उच्च वर्ग में मानव संबंध प्रभावित हो रहे है वहाँ दूसरी ओर अस्मिता के नाम पर सामुदायिक स्तर पर कुछ नई समस्याएँ महत्त्वपूर्ण होती जा रही हैं। बहुजन, दलित, आदिवासी, नारी, अल्पसंख्यक और किन्नर समुदायों की समस्याएँ भारतीय समाज के समुदायों के असमान विकास की ओर ध्यान आकृष्ट करती हैं। उपभोक्तावाद, ब्रांड संस्कृति का विकास भारत के सभी सामाजिक समुदायों में समस्याओं को उत्पन्न कर रही हैं। वैश्विक अर्थ–तंत्र का भारतीय लोक–तंत्र पर हावी हो जाने के कारण मानव संबंधों, मानवीय और नैतिक मूल्यों में बेहद परिवर्तन आ रहा है। वैश्वीकरण के अनुरूप भारतीय समाज अपने आपको अनुकूलित करने की चेष्टा कर रहा है। इस क्रम में स्वस्थ भारतीय सामाजिक, सामुदायिक परंपराओं को भुलाया जा रहा है। भौतिक समृद्धि और अस्मिताओं की पहचान के नाम पर सामुदायिक स्तर पर मानव संबंधों में दरार पैदा करने की कोशिशें की जा रही हैं। इस पृष्ठभूमि में वर्तमान साहित्य में सामाजिक समरसता की चुनौती महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

भारत में स्वतंत्रता के बाद राष्ट्र–राज्य के निर्माण की कल्पना की गयी थी। फिर इस दिशा में भारत के नवनिर्माण की कोशिशें भी जारी रहीं । इस क्रम में 1980–90 के बाद विकसित वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने भारत के नव निर्माण की प्रक्रिया को बेहद प्रभावित किया। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में पूंजी के साथ तकनीकी विकास और शांति की राजनीति को महत्त्वपूर्ण कारकों के रूप में स्वीकार किया गया । इलेक्ट्रानिक संचार माध्यमों ने विश्व को एक सूत्र में बाँध दिया है। लेकिन वैश्वीकरण की प्रक्रिया के नाम पर बहुलतावादी व्यवस्थाओं और संरचनाओं को भी इस प्रक्रिया ने गलिशीलता दी है। इस प्रक्रिया के तहत जो परिवर्तन आया है, उसमें नयी परस्पर विरोधी अभिवृत्तियाँ भी उभर कर सामने आयीं। स्टुअर्ट हॉल (Stuart Hall) ने इन द्वैतों को हमारे सामने रखा। सार्वभौमीकरण बनाम विशिष्टीकरण (Universalization Vs. Particularism) सजातीयीकरण बनाम विभेदीकरण (Homogenization Vs. Differentiation) एकीकरण बनाम विखण्डन (Integration Vs. Fragmentation) केंद्रीकरण बनाम विकेंद्रीकरण (Centralization Vs. De-centralization) सान्निध्यता / साथ–साथ बराबर होना बनाम तुल्यकालन/समकालीकरण (Juxtaposition Vs. Synchronization) ऐसे द्वैत हैं जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया में सक्रिय दिखायी देते हैं।

इस प्रक्रिया ने कई प्रश्नों को हमारे सामने रखा है। विश्व व्यापार, बहु–राष्ट्रीय उद्यम (Multi National Enterprises), अंतरराष्ट्रीय श्रम विभाजन, सामाजिक–सांस्कृतिक वैश्वीकरण, मानवाधिकार, भूमण्डलीय पर्यावरण, वैश्विक और स्थानीय संबंध कुछ ऐसे मुद्दे हैं जो इन वैश्वीकृत व्यवस्थाओं की समस्याओं को और वर्तमान साहित्य की वैचारिकी के स्वरूप को हमारे सामने प्रस्तुत करते हुये सामाजिक समरसता की चुनौती के प्रश्नों पर विचार करने के लिए मजबूर करती हैं।

प्रव्रजन और विस्थापन वर्तमान समाजों की नियति बन गया है। आजकल हम जिन 'समार्ट शहरों' की बात करते हैं, उनमें रहने वाले नागरिकों के लिए 'जियो'.... 'काम करो' .... 'खेलो' ..... और 'सीखो' ये चार बिंदु जीवन के आदर्श बन जाते हैं। एक छोटा–सा लैपटाप, एंड्रायड फोन, मानव संबंधों में स्थान और काल के प्रत्यक्ष संबंधों का हनन कर रहे हैं। अब मनुष्यों के बीच सीधा संबंध नहीं बल्कि वर्च्युअल संबंध महत्त्वपूर्ण हो रहा है। अस्थिर वर्तमान और सामाजिक गतिशीलता समकालीन मानव संबंधों और जीवन–मूल्यों के नये रूपों का परिचय दे रही है। एक तरह की आभासी वास्तविकता अब वर्तमान मानव संबंधों और जीवन–मूल्यों को संचालित कर रही है। इस वास्तविकता में स्थिरता नहीं होती है। निरंतर गतिशीलता इसका लक्षण होता है। संयुक्त परिवार पहले ही टूट गये थे। अब जीवन में दूसरे व्यक्तियों से सीधे आपसी संबंध निभाने के मौके कम होते जा रहे हैं। भावोद्वेगों पर नियंत्रण रखना भी मुश्किल होता जा रहा है। एक प्रकार की असुरक्षा की भावना, अकेलापन, मन पर असीम दबाव, समाज और चारों ओर रहने वाले व्यक्तियों के प्रति उपेक्षा, मानव संबंधों और जीवन–मूल्यों को इस तरह से प्रभावित कर रही है कि व्यक्ति यह निर्णय नहीं ले पा रहा है कि आगे किस तरह के मानव संबंधों और जीवन–मूल्यों को आदर्श के रूप में स्वीकार करें।

भारतीय समाज बहुलतावादी समाज है। बहुल–सांस्कृतिकता, बहुभाषिकता, ग्रहणशीलता और अनुकूलनशीलता इस समाज के सामान्य लक्षण हैं। 1960–70 के आसपास भारत के विभिन्न सामाजिक समुदायों में, राज्य के द्वारा स्थापित होने वाले कल्याणकारी समाज के प्रति मोहभंग हो गया है। अब भारतीय समाज के विभिन्न समुदायों में अस्मितामूलक चिंतन विकसित होने लगा। दलित–लेखन, महिला–लेखन, आदिवासी–लेखन, अल्पसंख्यकों का लेखन जैसी प्रवृत्तियाँ हिंदी साहित्य के विकास की मात्रा और गुणवत्ता को प्रभावित कर रहीं है।

हिंदी उपन्यासों में अलका सरावगी का 'शेष कादम्बरी', सुरेन्द्र वर्मा का 'मुझे चाँद चाहिए' आदि भूमण्डलीकरण की सच्चाइयों के पास हमें ले जाते हैं. मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'कहीं इसुरी फाग' जो बुंदेलखण्ड के लोक–जीवन पर भूमण्डलीकरण के प्रभावों को प्रस्तुत करता है। रवीन्द्र वर्मा ने 'मैं अपनी झांसी नहीं दूँगा' में भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को ऐतिहासिक कालक्रम के अनुसार वर्णित किया है। काशीनाथ सिंह का 'रेहन पर रग्घु', राजु शर्मा का 'विसर्जन', कुनाल सिंह का 'आदिग्राम उपख्यान' आदि इस श्रेणी के उपन्यास हैं। 'आदिग्राम उपख्यान' में बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भूमि अधिग्रहण कर उनकी उपजाऊ भूमि से बेदखल करने की पीड़ा अभिव्यक्त होती है। कमल कुमार का उपन्यास 'पासवर्ड' में अमेरिकीकरण के दर्शन होते हैं। पंकज बिस्ट का उपन्यास 'पंकवाली नाव' में पुरुष समलैंगिकता, गीतांजली चटर्जी के 'तीसरे लोग' में भूमण्डलीय अपसंस्कृति का चित्रण हुआ है।

1990 के बाद प्रकाशित लगभग 150 से अधिक उपन्यासों और 90 के बाद की लगभग सभी कहानियों पर समकालीन वैचारिकी का प्रभाव देखा जा सकता है। मुख्य रूप से इस वैचारिकी के प्रभाव के अधीन लिखनेवाले कथाकारों में काशीनाथ सिंह (रेहन पर रग्घू), प्रदीप सौरभ (मुन्नी मोबाइल), रणेंद्र(ग्लोबल गॉव के देवता, गायब होता देश), मधु कांकरिया (सेज पर संस्कृत), ममता कालिया (दौड़), चित्रा मुद्गल (आवॉ), राजू शर्मा (विसर्जन), रवींद्र वर्मा (निन्यानवे, मैं अपनी झॉसी नहीं दूँगा, दस बरस का भँवर), अलका सरावगी (कलिकथा वाया बायपास, शेष कादंबरी, एक ब्रेक के बाद), शुष्मा जगमोहन (जिंदगी ई–मेल), एस आर हरनोट (हिडिंब), संजीव (सावधान नीचे आग है, धार, रह गई दिशाएँ इसी पार) उल्लेखनीय हैं।

भूमण्डलीकरण के प्रभाव के अधीन लिखनेवाले कहानीकारों में उदय प्रकाश, कैलाश बनवासी, एस आर हरनोट, सत्यनारायण पटेल, चरणसिंह पथिक, हरि भटनागर, राकेश कुमार सिंह, भगतराम, सुभाषचंद्र कुशवाहा, प्रियदर्शन, प्रदीप पंत, ओम शर्मा, सुभाष शर्मा,

हरिओम, रामेश्वर प्रेम, प्रत्यक्षा, महुआ माझी, राजकुमार राकेश, उमाशंकर चौधरी, पंकज मित्र, आलोक रंजन, मनोज रूपड़ा, वंदना राग, मीनाक्षी सिंह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

भारत के भूमण्डलीकरण और वर्तमान वैचारिकी के संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय बात यह है कि भारतीय समाज के उच्च और शहरी वर्ग आधुनिक ज्ञानाधारित समाज की दिशा में बहुत जल्दी अनुकूलित होते जा रहे हैं और नवउदारवादी नीतियों का फल उनको मिल रहा है। लेकिन, भारतीय समाज की कुछ ऐसी वास्तविकताएँ हैं जो भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के अनुकूलन में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक कारणों से सकारात्मक योग नहीं दे पा रही हैं। दलित, आदिवासी और बहुजन समाज की वास्तविकताएँ विशेष रूप से भारतीय परिस्थितियों से बंधी हुई हैं। भूमण्डलीकरण और उदारीकरण की नीतियों से इन समाजों में शहरी, ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों के विकास में अंतर दिखाई देता है। दलित, आदिवासी, बहुजन और अल्पसंख्यक समाजों में भी प्रव्रजनन और प्रवासी जीवन की समस्याएँ महत्त्वपूर्ण हो गई हैं। इनके अलावा दलित, बहुजन और अल्पसंख्यक समाजों में भी एक नये मध्यवर्ग का विकास हो गया है। इन सामाजिक समुदायों में मंजस्य और समरसता स्थापित करने की दिशा में नहीं, बल्कि एक समुदाय को दूसरे समुदाय के विरोध में खड़ा करते हुए समुदायों में प्रतिरोध की भावनाओं को फैलाने की कोशिशें हो रही हैं। भारत में भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के कारण उत्पन्न आर्थिक सुधारों के सवालों पर प्रश्न–चिह्न लगाए जा रहे हैं और इस परिघटना के विकल्पों को ढूँढ़ने का प्रयास भी किया जा रहा है। इस संदर्भ में भूमण्डलीकरण और विश्व व्यवस्था के विचार को शंकाकुल दृष्टि से देखा जा रहा है और विकास के एशियायी प्रारूप के प्रति भी ध्यान दिया जा रहा है।

समग्रतः वर्तमान हिंदी साहित्य में चित्रित वैचारिकी के मुद्दों में प्रमुख रूप से निम्नलिखित मुद्दे उल्लेखनीय हैं–

1. सामाजिक–सांस्कृतिक उप–स्तरों में संघर्ष।
2. नारी की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों की दृष्टि से पितृसत्तात्मक संस्कृति का विरोध।
3. दलित और आदिवासी संस्कृति की नई पहचान के लिए आंदोलन।
4. अल्पसंख्यक और बहुजनों के आर्थिक–सांस्कृतिक विकास और पहचान की माँग।
5. भारत में ही उत्पन्न होने वाली प्रव्रजनन की समस्याओं के अलावा प्रवासी भारतीय जनता की संस्कृति या विदेशों में रहने वाले भारतीयों के सांस्कृतिक संक्रमण की समस्याएँ।

बहुभाषिकता और बहुलसांस्कृतिकता समकालीन भारतीय समाज के लक्षण बन गये हैं और भूमण्डलीकरण के अलावा भारतीय लोकतंत्र और बहुल–सांस्कृतिक अस्तित्व भारत में नये सांस्कृतिक विकल्प की माँग कर रहे हैं। भारत में नये–नये राज्यों का निर्माण हो रहा है तो स्थानीय धरातल पर वैश्वीकरण के प्रभाव के अधीन नई संस्कृति का उत्सवीकरण और बाजारीकरण भी हो रहा है। नारी दिवस, युवा दिवस, मातृ दिवस या पितृ–दिवस, बच्चों का दिवस, प्रेमियों का दिवस आदि नये आयोजनों के बल पर नये बाजार की संस्कृति विकसित हो रही है। दूसरी ओर, ग्रामीण और लोक–जीवन में भी मिली–जुली संस्कृति का विकास हो रहा है। भारत में सामुदायिक अस्मिताओं का संघर्ष हो रहा है। विघटन और नवनिर्माण का दौर चल रहा है। इस तरह से समकालीन वैचारिकी को बहुलतावादी वैचारिकी और इक्कीसवीं सदी को बहुलताओं की सदी और समग्र रूप में वर्तमान समय को 'डिजीटल युग' कहा जा रहा है। हिंदी साहित्य भी भारतीय लोकतंत्र द्वारा समर्थित इस बहुल–सांस्कृतिकता का प्रतिफलन कर रहा है।

भारत, वैश्वीकरण के अनुरूप अपने आप को बहुत तेज गति से अनुकूलित करने की कोशिश करते हुए 21 वीं सदी में आगे बढ़ रहा है। परिवर्तनशील आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा और रोज़गार की दिशा में भारत की युवा पीढ़ी दौड़ रही है। तेज गति से परिवर्तनशील जीवन की प्रक्रिया में हम विकास के नाम पर आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन कई बार हम यह भूल जाते हैं कि हम कौन थे ? हमारी परंपराएँ क्या थीं ? हमारी जीवन दृष्टि क्या थी ? हम किस दिशा में जा रहे हैं ? जैसी बातों के प्रति ध्यान दिये बिना विकास के नाम पर हम आगे बढ़ते जा रहे हैं। हम अपने आपको यह कहते हुए सांत्वना देने की कोशिश करते हैं कि यह सब हम भौतिक समृद्धि के लिए करते आ रहे हैं। लेकिन भारतीय परंपराएँ, भारत का इतिहास, भारतीय दर्शन, जीवन की एक समग्र दृष्टि को हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

भारतीय दार्शनिकों ने इस दृश्यमान विश्व के अस्तित्व को पहचानते हुए अंतिम सत्य की खोज की कोशिश की। भारत की परंपराएँ और भारतीय जीवन परिणाम के क्रम में क्रमशःयूरोपीय चिंतन के दबाव में आ गया है। फिर भी भारतीय समाज में समय–समय पर जीवन के मौलिक सूत्रों की पुनः व्याख्याएँ समय–समय पर होती आयीं। भारतीयों ने जीवन के सारतत्त्व को ग्रहण करते हुए जीवन के निर्देशित सूत्रों के अनुसार आगे बढ़ने की कोशिश की। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से संबंधित पुरुषार्थों की व्याख्या समय के अनुरूप करते हुए आगे बढ़ते आये हैं। इस क्रम में संदर्भ के अनुसार भारतीयों ने कभी व्यक्ति को और कभी समाज को प्रधानता दी। भारतीय इतिहास, भारतीय संस्कृति और आचार व्यवहारों में बहुलता दिखाई देने पर भी उनके अंतर्गत पथ प्रदर्शन करने वाली ताकत भारतीय ऋषि मुनियों की परंपरा से आती है। ऋग्वेद ने समरसता के मंत्र की उद्घोषणा की जो वर्तमान साहित्यकारों का सामाजिक समरसता स्थापित करने की और पथ प्रदर्शन करता है। यह मंत्र सार्वकालिक ही नहीं वैश्विक भी है।

''समानी व आकूतिः समाना हृदयानिवः ।
समानास्तु वो मनो, यथा वः सुसहासति'' ।।

भारतीय चिंतन समरसता को समाज के लिए आवश्यक सांस्कृतिक और वैधानिक समाधान के रूप में स्वीकार करता है। अर्थात सुख समृध्दि और उन्नती के इच्छुक मनुष्यों तुम्हारा नारा एक सा होना चाहिए। तुम्हारे हृदय के अंतर भाव समान होना चाहिए। तुम्हारा चिंतन और विचार समान हो तुमहारे लक्ष्य समान हो। तुम्हारे सभी कार्य, व्यवहार तथा चिंतन इस प्रकार का होना चाहिए ता कि मानव मात्र आनंद में रहें। वर्तमान साहित्य में पनपरहे संघर्षकारी तत्त्वों को समाप्त करते हुए समरसता के मूल्य के आलोक में भविष्य के समाज को रूपायित करना आज की आवश्यकता है। आज के डिजिटल युग में समरसता का सिध्दांत ही भारतीय जीवन का पथ प्रदर्शन कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1– महाभारत अनुशासन पर्व
2– यजुर्वेद–26/2
3– यजुर्वेद–36/18
4– श्रीमद्भगवद्गीता–12/4
5– श्री राम चरित मानस, उत्तर काण्ड–29/3
6– अथर्वेद–19/62/1
7– ऋग्वेद–10/191/2
8– यजुर्वेद–18/48

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

अपराध का समाज पर प्रभाव एवं नियंत्रण हेतु किये जा रहे प्रयास का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. मिर्जा मोजिज बेग
शासकीय विधि महाविद्यालय, इंदौर

चुनौतिपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में एक ओर पुलिस के सामने नित्य प्रति नवीन समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। दूसरी ओर समाज की अपेक्षाएँ भी पुलिस से बढ़ती जा रही है। अपनी भूमिका के कुशल निर्वाह हेतु उसे अपनी कार्यप्रणाली में कुछ सुधार लाने होंगे।

समाज को पुलिस से बहुत सी अपेक्षाएँ हैं इन्हें पूरा करने के लिए पुलिस को जिन साधन–सुविधाओं की जरूरत हैं उन्हें प्रदान करने में राज्य एक सीमा तक ही समर्थ है। आर्थिक ही नहीं, वरन् अन्य क्षेत्रों में भी, जैसे एक मजदूर के काम में घण्टे निश्चित हैं, परंतु पुलिसकर्मी के नहीं। पुलिस का दायित्व अपराध की विवेचना या रोकथाम तक ही सीमित नहीं है, वरन् महत्वपूर्ण राजनीतिज्ञों की सुरक्षा की जिम्मेदारी भी पुलिस पर ही है। और इस सम्बन्ध में खेदजनक तथ्य यह है कि सुरक्षा की जिम्मेदारी के नाम पर पुलिस को सेवा–टहल करनी पड़ती है।

इतने पर भी बस नहीं, पुलिस–कार्यों में राजनीतिज्ञों का हस्तक्षेप भी बहुत ही अधिक है, जिसे स्वीकार न करने वाले पुलिसकर्मी का भविष्य नष्ट भी हो सकता है। तबादलों के नाम पर परिवार से दूर इधर–उधर भटकना और झूठी विभागीय शिकायतों व जाँच ही उसकी नियति बन जाती है, इसके लिए –

1) पुलिस विभाग राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त हो।
2) पुलिसकर्मियों के काम के घण्टे निश्चित हो।
3) महत्वूपर्ण व्यक्तियों की सुरक्षा और अपराध की विवेचना तथा कानून व्यवस्था की शाखाएँ अलग–अलग हों।
4) पुलिस अधिकारी भी अपने स्टाफ, साधन–सुविधा व आर्थिक आदि मांगें प्रभावपूर्ण तरीके से भाासन के समक्ष रखें।

विकास के साथ बहुत सी समस्याएँ और अपराध बढ़े हैं। जैसे – औद्योगीकरण को ही लें। इसमें जहाँ लाभ हुए हैं वहीं श्रमिक व मालिकों के टकराव से संघर्श, हड़ताल, तालाबंदी, घेराव, सफेदपोश व बाल अपराध, स्त्री के विरूद्ध उभरे हैं।

अतएव प्रत्येक क्षेत्र की समस्या के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त स्वतंत्र शाखा स्थापित की जा सकती है। इससे मामले जल्दी निपटेंगे।

विकास का एक उपहार है नगरीकरण, परंतु वेश्यावृत्ति, मद्यपान, नशीली दवाईयाँ, गन्दी बस्ती के अपराध नगरीय समाज की देन है। पुलिस इन्हें सामाजिक समस्या मानती है, परंतु इसके कारण उत्पन्न अपराधों से पुलिस को ही निपटना पड़ता है।

यद्यपि ये समस्याएँ सामाजिक हैं, परंतु अपने समाज सुधारक रूप की स्थापना द्वारा पुलिस को छवि अच्छी बनानी है। साथ ही अपराधों की रोकथाम के लिए भी पुलिस इनका दायित्व सामाजिक संस्थाओं की मध्यस्थ बनकर ले। इससे पुलिस की छवि भी सुधरेगी और भविष्य में अपराधों की संभावना भी कम होगी।

इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में जमींदारों, साहूकारों द्वारा शोषण हिंसा आदि की समस्याएँ हैं जिनका निराकरण भी पुलिस इसी विधि से कर सकती है।

सांस्कृतिक अपराध, जैसे ब्ल्यू फिल्में, अश्लील चित्र और साहित्य व्यभिचार आदि की समस्याओं से निपटने के लिए पुलिस को सक्षम बनाना होगा। सामाजिक कानून में तेजी से बढ़ रहे हैं, जैसे – दहेज, बाल–विवाह, अस्पृश्यता अधिनियम आदि; परंतु इनका पालन करवाने में व्यावहारिक बाधाएँ हैं। यदि पुलिस संस्थाओं के माध्यम से जनता की मानसिकता बदलने का प्रयत्न करे तो इन कानूनों को लागू करवाने में आसानी होगी। कई बार उच्च अधिकारियों के आवागमन पर की गई विशेष स्वागत व्यवस्था में बहुत व्यय हो जाता है। इसकी वसूली जनता से किसी न किसी रूप में होती है। अतएव इस तरह के आयोजनों पर कठोर प्रतिबंध हो।

न्याय प्रक्रिया में विलम्ब के लिए पुलिस यद्यपि दोषी नहीं होती, फिर भी इस वजह से पुलिस पर जनता की आस्था कम हो जाती है। देश में विकास,

संवैधानिक व्यवस्था और कानूनों की संख्या में वृद्धि के बावजूद भी न्याय व्यवस्था गतिहीन है।

जो पक्ष मामले को लटकाना चाहता है, वह अदालत का सहारा लेता है, क्योंकि न्याय प्रक्रिया हनुमान की पूंछ जैसी लम्बी होती चली जाती है। कई अपराधों के पीछे तो यही वजह होती है, क्योंकि न्याय प्रक्रिया में विलम्ब से व्यक्तियों को कानून हाथ में लेने की दुष्प्रेरणा मिलती है। न्याय जल्दी मिले इसके लिए पुलिस को प्रयत्न करना होगा। एक बार व्यापक पैमाने पर प्रत्यत्न करके नागरिकों को भी अपने साथ मुकदमों का फैसला एक निश्चित समय–सीमा में करवाने हेतु कठोर कानून बनाये जाए। तभी पुलिस व न्याय व्यवस्था में जन आस्था पैदा होगी।

अतएव आज जबकि देश आजादी के अर्धशतक को पर कर रहा है, न्यायालय अपना मान बनाये रखने हेतु सभी मामलों को निपटाने की समय–सीमा तय करके उसका कठोरतापूर्वक पालन में भी करे।

अपराध नियंत्रण हेतु किये जा रहे प्रयास :– एमनेस्टी इंटरनेशनल ने भारतवर्ष में मानवाधिकारों की सुरक्षा हेतु 10 सूत्रीय कार्यक्रम लागू करने की संस्तुति की है। यद्यपि यह संस्था पश्चिमी देशों में है और कभी–कभी भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप का भी प्रयास करती है। इसकी वार्षिक रिपोर्ट में एशिया महाद्वीप के बारे में भी अधिक टिप्पणी की जाती है। 10 सूत्रीय कार्यक्रम में उसने अत्याचारों के रोकथाम व मानवाधिकारों की सुरक्षा के संबंध में संस्तुति की जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

1) कार्यालयों में मानवाधिकार सुरक्षा की प्रक्रिया अपनायी जाये। इसके अंतर्गत सरकार सभी कार्यालय, थाना, चौकी अन्य स्थानों पर जन साधारण को मानवाधिकार की जानकारी देने की व्यवस्था करे ऐसे स्थानों पर जहां जनता को निरूद्ध किया जाता है वहाँ उत्पीड़न के रोकथाम हेतु उच्च प्राथमिकता देनी चाहिए और ऐसी व्यवस्था देशभर में की जाये।
2) सभी शिकायतों, उत्पीड़न की अवश्य जांच विवेचना की जाये। इसके अंतर्गत सभी उत्पीड़न के शिकायतों की न्यायिक जांच कराई जाए जो इसमें बलात्कार अभिरक्षा में मृत्यु की जो सूचनायें समाचार पत्र, पत्रिकायें, रेडियों, टी.वी. आदि में मीडिया प्रकाशित करता है या अन्य सामान्य ऐजेसियाँ प्रकाशित करती है उनकी तुरंत एवं प्रभावी जांच कराई जाए और यह जांच निश्पक्ष संस्था द्वारा कराई जाये। न्यायिक अधिकारियों को जांच हेतु सभी वैधानिक अधिकार प्राप्त होना चाहिए तथा संसाधन उपलब्ध होना चाहिए। इसमें गवाहों का परीक्षण, बुलावा तथा अभिलेखों का परीक्षण सम्मिलित है। जांच के सभी गवाहों की सुरक्षा की जाए। जांच एक उचित निर्धारित समय में पूरा किया जाए तथा परिणाम से जनता को अवगत कराया जाये। अशिक्षित एवं गरीब व्यक्तियों के प्रकरणों में विशेष ध्यान दिया जाए और उसको सरकारी मशीनरी द्वारा सुरक्षा दी जाये न कि डराया धमकाया जाये। स्त्रियों के साथ क्रूरता व बलात्कार के मामलों में विशेष संवेदनशीलता व सावधानी बरती जाये। चाहे बलात्कार साबित हो या न साबित हो तब भी सावधानी बरती जाये।
3) सभी को न्याय दिलाया जाये। पुलिस व सुरक्षा बलों के लिए ऐसी व्यवस्था हो कि वह अधिकारों का दुरूपयोग न करे और न्यायिक व्यवस्थानुसार ही कत्तव्यों का निर्वहन करे। पीड़ित व्यक्ति उसके विधिक प्रतिनिधि एवं अन्य संबंधी जो पुलिस द्वारा आपराधिक मामलों में परीक्षण किये गये हो उन्हें सभी अभिलेखों की प्रतियाँ पुलिस के अभिलेखों सहित दी जानी चाहिए।
4) सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि ऐसी विधिक व्यवस्था लागू रखी जाये जिससे उत्पीड़न से प्रत्येक हालत में सुरक्षा होती रहे। ऐसी व्यवस्था हो कि नियमित 24 घंटे में गिरफ्तार व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत किया जा सके।
5) थाना इन्चार्ज अभिरक्षा के लिए उसके अधिकारों को अवश्य बतायेगा पुलिस और सुरक्षा बलों को मानवधिकारों के संरक्षण हेतु प्रशिक्षित किया जाये और पुलिस में सुधार लाया जाये।
6) सरकार प्रशिक्षण पद्धति के पुनरीक्षण के लिए आदेश करे तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के मानक लगातार पाठ्यक्रम तैयार करे तथा ऐसी प्रशिक्षण पद्धति लागू करे जिससे पुलिस व सुरक्षाबलों उत्पीड़न पद्धति की रोकथाम की जा सके और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों के स्तर को बढ़ाया जा सके।
7) पीड़ित को क्षतिपूर्ति दिया जाये। इसके अंतर्गत पीड़ित व्यक्ति को वैधानिक अधिकार होगा कि वह उत्पीड़न और गलत उपचार जिसमें बलात्कार और

अभिरक्षा में मृत्यु भी सम्मिलित है वैधानिक सहायता व क्षतिपूर्ति के लिए उसका परिवार या पीड़ित स्वयं अधिकारी होगा। विधिक एवं व्यवहारिक प्रक्रिया को आसान करते हुए सरकार इसके लिए अधिकरण की स्थापना करे जिससे मानवाधिकार हनन के सभी पीड़ित को सही उपचार मिल सके। क्षतिपूर्ति राज्य सरकार दे तथा सेना, केन्द्रीय बलों कि दशा में केन्द्रीय सरकार क्षतिपूर्ति करे। क्षतिपूर्ति की धनराशि लोक सेवक से काटी जानी चाहिए।

8) उत्पीड़ित व्यक्तियों को चिकित्सा सहायता व सुविधा दी जाये। देशभर में क्रूरता अमानवीय व्यवहारों से पीड़ित व्यक्तियों को उचित मेडिकल सुविधा व सहायता दी जाये।
9) उत्पीड़न के कारण एवं प्रकार की विवेचना की जाये। सरकार उत्पीड़न की कुछ घटनाओं को चुनकर उनके कारण एवं प्रकार की सक्षम प्राधिकारी द्वारा विवेचना कराये। यदि आव यक हो तो विशेष ढांचा एवं मशीनरी रिपोर्ट प्राप्त करने के लिए खड़ा किया जाये जैसे बलात्कार और अभिरक्षा में मृत्यु के मामलों में विभिन्न राज्यों में ऐसी शिकायत पर कृत कार्यवाही का पर्यवेक्षण निष्पक्ष बाड़ी द्वारा किया जाये। राष्ट्रीय स्तर राजनीतिक या विभिन्न पार्टियों के सदस्यों की एक संसदीय कमेटी बनाई जायें जो विवेचना, उत्पीड़न के तरीकों एवं अभिरक्षा में मृत्यु के मामलों का पर्यवेक्षण करे।
10) भारत अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार स्वीकारोक्तियाँ करे। इसके अंतर्गत भारत सरकार उत्पीड़न के रोकथाम हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत संस्थाओं की संस्तुति की विवेचना कर उन्हें स्वीकार कर लागू करे जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय घोषणा पत्र (अत्याचार/उत्पीड़न के विरूद्ध) 1979 में निर्गत किया गया है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत पीड़ित शास्त्र का स्पष्ट विधायन तो निर्मित नहीं कर पाया है अपितु केवल पीड़ित को अप्रत्यक्ष रूप से संरक्षण देने का कार्य अवश्य ही किया हैं। जहाँ भारतीय संवैधानिक प्रावधानों का प्रश्न है वहाँ उत्पीड़न शास्त्र का स्थान नहीं है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि पीड़ितों को उपचार उपलब्ध नहीं है और जहाँ तक अन्य विधियों में प्रावधान या नियम का प्रश्न है वहां अल्प मात्रा में पीड़ित व्यक्ति के लिए प्रावधान दृष्टिगोचर होते हैं। यहाँ उठता है कि ऐसे प्रावधानों का निर्माण कौन कर सकेगा तब यह उत्तर देना सार्थक होगा कि यह तो राज्य का दायित्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1) डॉ. परांजपे एन.वी. अपराध शास्त्र एवं दण्ड प्रशासन षष्ठम संस्करण पृष्ठ 25–27
2) यादव लेखराम मानव व्यवहार एवं मनौविज्ञान प्रथम संस्करण, 1999 पृष्ठ 243
3) जाखड़ दिलीप मानवाधिकार और पुलिस संगठन प्रथम संस्करण 2000 पृष्ठ 77
4) यादव लेखराम मानव व्यवहार एवं मनौविज्ञान प्रथम संस्करण, 1999 पृष्ठ 246
5) डॉ. बघेल डी.एस. अपराध शास्त्र विवेक प्रकाशन दिल्ली दसवां संस्करण 2001 पृष्ठ 535

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

बीमा विधि के अंतर्गत बिमित व्यक्तियों के अधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

संगीता पंद्राम

(शोधार्थी)

बीमा का अर्थ है कि हानियों की क्षतिपूर्ति करना, अन्तर्निहित अर्थ यह है कि, बीमा के यंत्र–विन्यास का उपयोग लाभ कमाने के लिए नहीं किया जा सकता है। मोटे तौर से यह क्षतिपूर्ति का सिद्धांत है। दावे के रूप में जो राशि दी जाती है वह हानि हुई राशि से अधिक नहीं हो सकती। बीमा एवं बीमाधारक में स्थापन करना चाहिए। जिस स्थिति में वह हानि होने के पूर्व था, उससे बेहतर नहीं।

इस सिद्धांत के अनुसार बीमाकर्ता द्वारा बीमित की क्षतिपूर्ति कर देने के पश्चात बीमित के तृतीय पक्षकारों के विरूद्ध सभी अधिकार बीमाकर्ता को हस्तान्तरित हो जाते हैं। "यह बीमाकर्ता का बीमित के तृतीय पक्षकारों के विरूद्ध अधिकारों से लाभ प्राप्त करने का अधिकार है, जो उसे बीमित द्वारा उठाई गई हानि को पूरा करने के बाद प्राप्त होता है।" इस सिद्धांत में यह बात महत्वपूर्ण है कि, यदि बीमित ने बीमा न करवाया होता तो वह क्षति पहुँचाने वाले पक्षकार से क्षतिपूर्ति करवा सकता था। किंतु जब बीमित ने बीमाकर्ता से बीमा करवा लिया तो बीमित बीमाकर्ता से ही क्षतिपूर्ति माँगता है।

एक ही बीमा विषय–वस्तु पर बीमाधारक अनेक बीमा ले सकता है यदि वह इन सभी बीमा आवरणों के अंतर्गत अपनी हानि की वसूली करता है तो उसे हानि के द्वारा मुनाफा होगा। इससे क्षतिपूर्ति के सिद्धांत का अतिक्रमण होगा। अतः सामान्य विधि ने अंशदान सिद्धांत प्रतिपादित किया। विधि के अनुसार "पॉलिसी के अन्तर्गत हानि का भुगतान करने के पश्चात उस बीमाकर्ता का अन्य बीमाकर्ताओं से आनुपातिक राशि वसूल करने का अधिकार है, जो उसी हानि के प्रति दायी है।" बीमाकर्ता को अधिकार होता है कि, वह अपनी इच्छा से किसी भी अन्य बीमाकर्ता से हानि की पूर्ण राशि वसूल कर सकता है।

बीमा अनेक प्रकार का होता है, जैसे – अग्नि बीमा, फसल बीमा, वाहन बीमा, सामुद्रिक बीमा इत्यादि। किंतु शोधार्थी के शोध का विषय जीवन बीमा से संबंधित है। अतः जीवन बीमा क्या है? उसका उदगम किस प्रकार हुआ है, उसके लक्षण क्या है? मानव जीवन में उसका क्या महत्व है? इन्हीं मुद्दों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

बीमांकिक सिद्धांत :– बीमांकिक का आशय यह देखना होता है कि, बीमाकर्ता अपने कर्तव्यों को पूरी तरह निभा सके। इसके लिए कंपनी को हर एक जोखिम के बारे में अनुमान लगाना होता है और उसे धन की दृष्टि से आंकना होता है। इसके लिए उसे और भी कई कार्य तथा गणितीय गणना करनी पड़ती है। यह गणना वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर की जाती है, जिसे बीमांकिक विज्ञान कहा जाता है।

जीवन बीमा में जोखिम, प्रीमियम के भुगतान के बदले में अनेक व्यक्तियों द्वारा बाँट ली जाती है, जैसा कि, हम जानते हैं मृत्यु की जोखिम सभी व्यक्तियों के लिए एक समान नहीं होती है। यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग–अलग होती है। यह व्यक्ति की आदतों, स्वास्थ्य एवं वैयक्तिक जानकारी आदि के आधार पर एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होती है।

यद्यपि प्रीमियम जोखिम के अंश पर आधारित होती है इसलिए अलग–अलग मात्रा की जोखिम के लिए अलग–अलग राशि प्रीमियम के रूप में देनी होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि, प्रीमियम की गणना करने से पूर्व जोखिम का मूल्यांकन कर उसका पूर्वानुमान लगा लिया जाए। बीमांकन विज्ञान ने ऐसे सिद्धांत और तकनीक विकसित की है, जो ऐसे पूर्वानुमान और मूल्यांकन कर सके। ये सिद्धांत जीवन बीमा व्यवसाय के प्रबंधन के लिए अतिमहत्वपूर्ण है जिन्होंने बीमांकन विज्ञान में महारथ प्राप्त कर ली है, उनको बीमांकक कहा जाता है। जीवन बीमा कंपनियाँ इन बीमांककों के बगैर कार्य नहीं कर सकतीं हैं। बीमांकक वह व्यक्ति है, जो सिद्धांततः तथा व्यवहारतः विशेषकर मृत्यु दर, रूग्णता, सेवानिवृत्ति और बेरोजगारी संबंधी आँकड़ों में विशेषज्ञता प्राप्त होता है।

इसकी प्रीमियम निम्न तीन आधारों पर आँकी जाती है –

1) लोगों की मृत्यु दर
2) बीमाकर्ता द्वारा अर्जित की जाने वाली संभावित ब्याज दर
3) प्रशासन के खर्च

बीमा की उपयोगिता :– बीमा सुरक्षा प्रदान करता है और अपनी अनेक विधाओं द्वारा व्यवसाय, समाज और व्यक्तियों के लिए लाभकारी भी सिद्ध होता है। बीमा का महत्व एक व्यक्ति या परिवार तक ही सीमित नहीं है वरन् इसका महत्व सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रत्येक क्षेत्र में है। विख्यात लेखक एवं दार्शनिक प्रो. रोयस ने इसके महत्व को समझाते हुए लिखा है कि, "आधुनिक युग में बीमा का उपयोग एवं उपयोगिता अधिकाधिक बढ़ रही है। यह केवल किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के उद्देश्यों की पूर्ति ही नहीं करता है बल्कि यह हमारी आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में अधिकाधिक समाहित होता जा रहा है तथा इसके परिवर्तन में योगदान दे रहा है। यह केवल शुद्ध एवं व्यावहारिक विज्ञानों का ही नहीं अपितु निजी एवं सार्वजनिक हितों तथा व्यक्तिगत विवेक का भी सम्मिश्रण है तथा यह सामान्य कल्याण, मितव्ययिता एवं दान आदि का पर्याप्त ध्यान रखता है।

जीवन बीमा समाज के सभी वर्गों एवं सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए उपयोगी है। आधुनिक विश्व में कोई भी व्यक्ति बीमा के बिना नहीं रह सकता है। समाज के सभी वर्गों के लिए बीमा की सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से उपयोगिता है। बीमा सम्पूर्ण विश्व–व्यवस्था के लिए उपयोगी है। यह सम्पूर्ण मानव जाति एवं इससे संबंधित सभी वर्गों को सामाजिक एवं आर्थिक रूप से लाभ पहुँचाता है। यह जीवन की आर्थिक जोखिमों के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करते हुए दुर्घटना एवं आकस्मिक संकटों में भी आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है। यह बीमितों को मानसिक शांति प्रदान करता है, जिसके परिणाम स्वरूप बीमितों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। यह बीमितों के परिवारों को विघटित होने से बचाता है तथा उनके परिवार के सदस्यों को एक निश्चित जीवन स्तर बनाये रखने में सहयोग प्रदान करता है। बीमा के द्वारा ही उद्योगों का विकास, रोजगार के अवसरों का विकास, बचत में वृद्धि, पूंजी निर्माण एवं सम्पूर्ण राष्ट्रीय विकास का मार्ग प्रशस्त करता है इसीलिए आज के युग में बीमा अतिउपयोगी है।

सूक्ष्म बीमा की उपयोगिता :– आज के युग में बीमा का महत्व दिन दूने रात चौगुने बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति के जीवन में जितनी अधिक अनिश्चितताएँ एवं जोखिमें हैं। बीमा की उपयोगिता में भी उतनी ही तेजी से वृद्धि हुई है। आज दुनिया का प्रत्येक व्यक्ति जोखिमों से घिरा हुआ है। कहते है कि, जीवन की शर्ते जितनी कठिन हैं बीमा की शर्ते उतनी ही सरल हैं। तात्पर्य है कि, मनुष्य जिस रास्ते पर चलता है वह रास्ता बहुत कठिन है। उस रास्ते पर चलते–चलते कब कोई किस दुर्घटना का शिकार हो जाए? कब वृद्धावस्था आ जाए? या कब मृत्यु को प्राप्त हो जाए? कुछ कहा नहीं जा सकता। ऐसी स्थिति में सबसे अधिक चिंता होती है संचय करने एवं आश्रितों के भरण–पोषण की और वे व्यक्ति जो प्रतिदिन मजदूरी करके अपने परिवार में आश्रित सभी सदस्यों का भरण–पोषण करते हैं उनके जीवन की सुरक्षा के लिए पहले सूक्ष्म बीमा योजना की इतने कम प्रीमियम की एवं साप्ताहिक, पाक्षिक प्रीमियम वाली अभी तक कोई बीमा योजना नहीं थी। सूक्ष्म बीमा योजना के प्रारंभ होने से निर्धन, आर्थिक दृष्टि से कमजोर एवं अशिक्षित मजदूर वर्ग के लोगों को उनकी वृद्धावस्था या उन पर आश्रित परिवार के सदस्यों को एक सीमा तक आर्थिक सुरक्षा का सहारा दिया जा सकता है। सूक्ष्म बीमा योजना के माध्यम से ये व्यक्ति चिंता से मुक्त हो सकते हैं। समाज के निर्धन आर्थिक रूप से कमजोर एवं गाँव के अशिक्षित एवं अर्द्धशिक्षित सभी वर्गों के लिए सूक्ष्म बीमा योजना की सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से उपयोगिता है। सूक्ष्म बीमा योजना सम्पूर्ण समाज के लिए महत्वपूर्ण है। यह आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के व्यक्तियों के लिए सामाजिक एवं आर्थिक रूप से लाभ पहुँचाता है। सूक्ष्म बीमा योजना की सामाजिक एवं आर्थिक उपयोगिता का निम्न प्रमुख वर्गों के दृष्टिकोणों को ध्यान में रखकर अध्ययन किया गया है।

सूक्ष्म बीमा योजना का सबसे बड़ा लाभ यह है कि, यह अनिश्चितताओं के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। सूक्ष्म बीमा योजना के माध्यम से निर्धन वर्ग के व्यक्ति को भी जोखिम के विरूद्ध सुरक्षा प्राप्त हो सकती है। बीमाकर्ता बीमित को बीमा पत्र में उल्लेखित कारणों से होने वाली हानि की पूर्ति का वचन देता है। इससे बीमित की सुरक्षा होती है। सूक्ष्म बीमा योजना के द्वारा वृद्धावस्था में पूर्ण सुरक्षा तो प्राप्त हो ही जाती है किंतु समय से पूर्व मृत्यु हो जाने की स्थिति में सम्पूर्ण आश्रित परिवार को भी जीवन व्यतीत करने में आसानी होती है।

सूक्ष्म बीमा योजना बीमितों को आकस्मिक मृत्यु या दुर्घटना होने के निरंतर भय से मुक्ति प्रदान करता है। वास्तव में, अधिकांशतः निर्धन वर्ग के व्यक्तियों के लिए अनिश्चितता एक बहुत बड़ी मानसिक पीड़ा होती है और सूक्ष्म बीमा योजना उन्हें इस पीड़ा से मुक्ति प्रदान करता है।

जिस व्यक्ति को भविष्य के विषय में कम चिन्ताएँ होती हैं, वह अधिक अच्छा कार्यकर्ता होता है। सूक्ष्म बीमा योजना से प्रत्येक निर्धन वर्ग के व्यक्ति को अनिश्चितताओं से मुक्ति मिलती है। इसका परिणाम यह होता है कि, उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। दुर्घटनाओं के कारण कई व्यक्तियों एवं परिवारों की आर्थिक आत्मनिर्भरता समाप्त हो जाती है। परिवार के मुखिया की मृत्यु हो जाने से सम्पूर्ण परिवार की ही आर्थिक आत्मनिर्भरता समाप्त हो सकती है। ऐसी दशा में परिवार का पालन–पोषण करने वाले व्यक्ति का बीमा होने पर सम्पूर्ण परिवार आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो जाता है। उपयुक्त ढंग से ली गयी सूक्ष्म बीमा योजना आर्थिक आत्मनिर्भरता बनाये रखने में योगदान देती है।

सूक्ष्म बीमा योजना बचत की प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित करती है। प्रो. रीगल मिलर तथा विलियम्स के शब्दों में "बीमा बचत को प्रोत्साहन देने वाला वातावरण प्रदान करता है।" किसी भी व्यक्ति की कितनी भी आय क्यों न हो, किंतु एक सामान्य व्यक्ति को बचत करने में अनेक कठिनाईयाँ आती हैं। फिर सूक्ष्म बीमा योजना तो गरीब, मजदूर एवं निर्धन वर्ग के लोगों के लिए है इनके लिए परिवार का पालन–पोषण करना ही मुश्किल होता है और परिवार का पालन–पोषण करने के बाद बचत करना अत्यंत ही मुश्किल कार्य है। ऐसी स्थिति में जो व्यक्ति सूक्ष्म बीमा योजना के अंतर्गत जीवन मधुर एवं "जीवन मंगल" पॉलिसी लेते हैं वे बीमा प्रीमियम के भुगतान को बैंक में धन जमा करवाने की अपेक्षा अधिक गंभीरता से लेते हैं और वे बचत भी आसानी से कर लेते हैं। इसीलिए प्रो. एन्जेल ने ठीक लिखा है कि, "बचत के साधन के रूप में जीवन बीमा का जबरदस्त मनोवैज्ञानिक लाभ है क्योंकि बीमा अर्द्धअनिवार्य प्रकृति का है।

सूक्ष्म बीमा निर्धन वर्ग में भविष्य की आवश्यकताओं का आसानी से नियोजन कर सकता है। एक तरफ व्यक्ति को भविष्य में अनेक आकांक्षाएँ रहती हैं तो दूसरी तरफ उसे भविष्य के दायित्व की चिन्ता चौन की नींद नहीं सोने देते किंतु सूक्ष्म बीमा योजना के द्वारा कोई भी निर्धन वर्ग का व्यक्ति अपनी सभी आवश्यकताओं का भली प्रकार नियोजन कर सकता है। भविष्य में बच्चों की शिक्षा, विवाह, उपयुक्त आवास आदि आवश्यकताओं का भी नियोजन कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय डॉ. जी.एस. : अपकृत्य विधि एवं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम चतुर्थ संस्करण, 2008
2. पाण्डेय डॉ. जे.एन. : अपकृत्य विधि, सत्रहवाँ संस्करण, 2010
3. वावेल डॉ. वी.एल : संविदा विधि, द्वितीय, सातवां संस्करण, 2003
4. कपूर डॉ. एस.के. : संविदा विधि 1872, प्रकाशक – सेंट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहबाद –2
5. कपूर डॉ. एस. के. : माल विक्रय अधिनियम, 1930, द्वादश संस्करण, 2002

International Journal of Social Science & Management Studies (Peer Reviewed & Refereed Research Journal) I.J.S.S.M.S.
& Impact factor - 3.9 Research Journal
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 5, No. – 4 May 2019

भारतीय राजनीति में धर्म क प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन
सहा. प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय महाविद्यालय साजा, जिला–बेमेतरा (छ.ग.)

सारांश :– धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र होने के कारण भारतीय संविधान ने अपने नागरिकों को किसी भी धर्म को मानने व स्वीकारने तथा उसका प्रचार प्रसार करने की स्वत. त्रता प्रदान करते हुए मौलिक अधिकारों में शामिल किया है। पुरातन काल से ही धर्म को मानव जीवन की प्रमुख धुरी मानकर ही मानवीय आदर्श व्यवहार को स्थापित करने का प्रयास किया है। भारतीय राजनीतिक इतिहास में धर्म और राजनीति एकमिक होते हुई स्पष्ट दिखलाई देती है, अपितु धर्म आधारित राजनीति को ही सर्वोत्त्म राजनीति की संज्ञा दी है। पूर्व काल में असभ्य मानव समुदाय ने प्रकृति जनित आपदाओं और अज्ञात के प्रति भय से बचने के लिए एक अदृश्य, अव्यक्त का अवलम्बन लिया तथा उस पर अपनी आस्था को आरोपित कर लिया जो धीरे धीरे धर्म का आधार बनता चला गया। राजनीति में भी धर्म का आगमन भी कदाचित इसी कारण हुआ कि कुछ लोगों के मत में धर्म विपरीत परिस्थितियों में व्यक्ति का सहयोग व मार्गदर्शन करेगा, किंतु वैदिक काल में धर्म कोई मत, मतांतर अथवा मान्यता ना होकर व्यतिगत भाव था जिससे व्यक्ति ने स्वयं के जीवन को संतुलित व व्यवस्थित करने हेतु स्थापित किया, कालांतर में धर्म का स्वरूप परिवर्तित होता चला गया जिसके साथ साथ विभिन्न पंथो का विस्तार होता गया। व्यतिगत व सामाजिक जीवन में धर्म का ज्यों–ज्यों प्रभाव व विस्तार हुआ व्यक्ति का राजनीतिक जीवन भी ढलता चला गया, अपितु धर्म का राजनीति पर इतना गहरा प्रभाव है कि शासन, प्रशासन, सत्ता तथा मतदान व्यवहार आधार मात्र धर्म हो गया। धर्म के आधार पर सरकार बनती व गिरती नजर आई है। आधुनिक काल में धर्म ने व्यापक रूप में अपनी जगह बनाई है चाहे कोई भी राजनीतिक गतिविधि हो उस पर धर्म का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रभाव स्पष्ट दिखलाई पडता है।

की वर्ड :– राजनीति, धर्म, प्रशासन, धर्मनिरपेक्ष, मतदान व्यवहार, भारतीय, लोकतंत्र, स्वतंत्रता, राष्ट्रवाद।

प्रस्तावना :– भारत एक लोकतांत्रिक राष्ट्र है जहॉ प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार किसी भी धर्म को स्वीकारनें तथा उसका परिपालन करने की स्वतंत्रता है। चूंकि प्राचीन काल से ही भारतीय सामाजिक व्यवस्था में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है तथा सामाजिक व राजनैतिक व्यवस्थाओं के स्वरूप निर्धारण में धर्म का विशेष महत्व रहा है। आदिकालिन असभ्य ने प्रकृति की सरल, सुखद और वीभत्स दोनों ही घटनाओं के अंतर स्त्रोत के रूप में एक अवचेतन अस्तित्व को स्वीकार कर लिया तथा संपूर्ण प्रकृति का उसी अवचेतन से संचालित होना माना। इस प्रकार वह धीरे धीरे धर्म को स्वीकार करने लगा, तत्कालिक समाज में राजनीति व्यवस्था में धर्म का आरूढ़ स्पष्ट दिखलाई पड़ता है जिसके अन्तर्गत पुरोहितों का राज्य पर प्रभाव अधिक था जो पूजा, बलि आदि कार्य राज्य के हित एवं आम जनता की हित साधने का कार्य करते थे। इस प्रकार जाने अनजाने विभिन्न रूपों में मानव अपने समस्त कार्यो में धर्म पर आश्रित होने लगा और यह माना जाने लगा कि धर्म राजनीति व समाज के विभिन्न भागों को सीधे प्रभावित करती है तथा धर्म का राजनीति पर प्रत्यक्ष व परोक्ष प्रभाव पड़ता है।

कालांतर में धर्म का आक्षेप राजनीति पर दिखलाई पड़ता है वहीं वर्तमान युग में भी राजनीति धर्म पर आक्षेपित दिखलाई देती है व लगातार रूप से उसे प्रभावित करती हुई नजर आती है, आज चाहे वोट बैंक की राजनीति हो अथवा सरकार बनाने की अथवा राजनीतिक स्वार्थ को साधने की। धर्म का विस्तृत प्रभाव राजनीति पर अवश्य दिखलाई पड़ता है। वास्तव में राजनीति और धर्म दोनों ही मानव आचरण से संबध्द है और दोनों का ही लक्ष्य मानव व समाज के कल्याण हेतु किया जाता है। एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति ही सफल राजनेता हो सकता है क्योंकि वही धर्म के आधार पर सबके साथ उचित न्याय कर सकता है। वास्तव में धर्म है क्या, जिस पर कई बार विचार करने की आवश्यकता है, धर्म एक सहज दर्शन है वह किसी प्रकार का आडंबर नही है जिसे व्यक्ति धर्म मान लेता है। एक 'परम सत' के भाव के साथ एकमिक हो जाना ही धर्म है। वहीं इमेनुअल काण्ट का दृष्टिकोण है कि धर्म देवीय अथवा ईश्वरीय आदेश के रूप में मिलते हैं तथा अपने कर्तव्यों का पालन सच्ची निष्ठा व ईमानदारी से करना ही धर्म है। वास्तव में धर्म केवल कर्तव्य पालन ही नही अपितु

सबके उपजीवन और प्रस्थिति का कारक है। एक ऐसा भाव है जिससे प्राणीमात्र की भावना सृजित व संपोषित होती है। आज के वर्तमान परिपेक्ष्य में धर्म एक पवित्र भाव ना होकर सम्प्रदायिकता का उद्वेश हो गया है जो समाज के सभी कारको को प्रभावित कर रहा है। चाहे वह आर्थिक हो सामाजिक हो अथवा राजनीतिक हो धर्म के प्रभाव से अछूता नही है। राजनीति में धर्म का प्रवेश कुछ इस प्रकार हो गया है कि दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए प्रतीत होते है। और निश्चित तौर पर एक दूसरे को पर्याप्त प्रभावित करते हुए नज़र आते है। वर्तमान में धर्म ही राजनीति की दिशा व दशा निर्धारित करते हुए नजर आता है। धर्म के संकीर्ण दृष्टिकोण के चलते राजनीतिक संस्थाएं कई बार लत निर्णय लेती है जो देश की सुरक्षा व अखण्ड़ता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है।

प्राचीन भारतीय राजनीति और धर्म :– प्राचीन काल से ही भारत में धर्म परायणता देखा गई है। भारतीय सस्कृंति का आधार धार्मिक प्रवृतियॉ ही रही है। वास्तव में समस्त मानवीय सामाजिक व्यवस्थाएँ धर्म पर ही आरूढ़ रही है नैतिक क्रियाएँ धर्म द्वारा संचालित होती है तथा अनजाने का भय व सुरक्षा की भावना व्यक्ति को धर्मभीरू बनाता है। धीर–धीरे सभ्यताओं का विकास होता गया किन्तु जन्म और मृत्यु का भय मनुष्य को सदैव बना रहा और तब धर्म का प्रभाव और उसकी प्रासंगिकता यथावत बनी रही। धर्म वास्तव में ''धृ'' धातु से बना है जिसका अर्थ है धारण करना अथवा पालन करना। अधिकतर स्थानों में धार्मिक अनुष्ठानों, क्रियों संस्कारों व धार्मिक विषयों से जुड़े तथ्यों व विचारों को धर्म के अंतर्गत माना गया। कई शाखाओं ने यज्ञ, अध्ययन, तपस्या, दान आदि को धर्म के अन्तर्गत रखा किंतु कालांतर में यह मानव के विशेषाधिकारों का घोतक होता गया एवं उसका व्यक्तित्व बन गया। भारतीय साहित्यों में धर्म से संबधित नियमों व व्यवस्थाओं का पर्याप्त उल्लेख मिलता है। जिसके अन्तर्गत माना जाता रहा कि धर्म व्यक्तियों के आचरण को निर्धारित करती है तथा एक नैतिक सामाजिक संहिता के रूप में होती है तथा कुछ नियमों के तहत व्यक्ति का जीवन संचालित होने लगा जिससे निश्चित सामाजिक बंधनो की शुरूआत होने लगी तथा एक आदर्श समाज के भीतर व्यक्ति के अधिकारों एवं कर्तव्यों की स्थापना धर्म के माध्यम से होने लगा इस प्रकार प्राचीन भारत में धर्म का क्षेत्र बहुत विस्तृत तथा व्यापक माना है धर्म नैतिक नियमों से लेकर सामाजिक व्यवस्था की स्थापना तथा धार्मिक उपासना माना जा सकता है।

प्राचीन भारतीय राजनीति की विस्तृत व्याख्या करने पर राजनीति और धर्म का अर्न्तसंबध दिखलाई पड़ता है। डनिंग के अनुसार भारत में दर्शन की प्रचुरता पाई गई है और एक स्वतंत्र विधा के रूप में राजनीति विज्ञान का विकास नही पाया चूंकि भारतीय राजनीति चिंतन धर्म और अध्यात्म के प्रभावों से ही ओतप्रोत रही व उनसे कभी भी स्वंतत्र नही हो पाई तथा एक निश्चित बौध्दिक विवेचन का अभाव भारतीय राजनीति संस्थाओ का मिलना था। वही कई विचारकों ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन तथा राजनीतिक संस्थाओं को धर्म निरपेक्ष अर्थात् राजनीति से धर्म का कोई संबध अथवा राजनीति पर धर्म के प्रभाव को अस्वीकार करते हुए माना कि धार्मिक विचार धाराओं से प्राचीन भारतीय राजनीति लगभग अप्रभावित रही हैं। ए.एस अल्तेकर ने ''स्टेट एण्ड़ गवर्नमेन्ट इन ऐन्शयेन्ट इण्डिया ''में निष्कर्ष के अन्तर्गत यह माना कि भारतीय शासन पध्दति धार्मिक विचार धाराओं से प्रभावित नही होती।

राज्य के उदय के पूर्व सामाजिक संरचनाएँ धर्म द्वारा संपोषित एवं सचालित होती रही। वही राज्य के प्रारंभ में भी धार्मिक भावनाओं की प्रमुखता रही व धर्म के द्वारा ही राज्यों का संचालन किया जाता रहा जो कालांतर में राज्यो के सशक्त हो जाने पर राज्य द्वारा धर्म को संरक्षण दिया जाने लगा इस प्रकार धर्म और राजनीति किसी ना किसी रूप में एक दूसरे को प्रभावित करती रही व भारतीय शासन तत्रं पूर्ण रूप से धर्म से विलग नही हो पाया तथा प्रशासनिक संगठन एवं राजैनिक संस्थाएं कही ना कहीं धार्मिक परपंराओं एवं उपासनाओं द्वारा प्रभावित होती रही।

आधुनिक भारत में राजनीति और धर्म :– प्राचीन काल से ही राजनीति एवं धर्म के मध्य अर्न्तसंबंध पाया जाता रहा है। ब्रिटिश काल के औपनिवेशिक शासन तथा पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण शिक्षित भारतीय समुदाय की राज्य के प्रति प्रतिक्रियाएं सामने आने लगी जो ब्रिटिश शासन के विरोध में रही तब औपनिवेशिक सत्ता तथा राजनैतिक लाभ के उद्दे य के योजनाबद्ध ढ़ंग से स्वार्थ सिद्धि के कारक के रूप में धर्म के आधार पर ''फूट डालो और शासन करो'' की नीति अपनाई गई जो राजनीति व धर्म के अन्तरावलम्बन का स्पष्ट विभाजन था। इन सभी के फलस्वरूप सामाजिक सुधारों की दिशा में भी अनेक प्रतिक्रियाएँ उभरी तथा कई संगठनों के माध्यम से तत्कालिक समाज में परिवर्तन की दिशा में कार्य किया। ब्रम्हसमाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, अलीगढ़ कालेज तथा सर

सैयद अहमद खान, राम कृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसाइटी जैसे संगठनों का उद्देश्य धार्मिक विचारों तथा बुनियादी नैतिक विचारों के माध्यम से समाज का पुनरूध्दार करना था। कुछ संगठन सीमित क्षेत्रों में कार्य कर रहे थे वहीं कुछ व्यापक आधार पर धार्मिक व सामाजिक सुधार हेतु प्रत्यनशील थे किंतु ये राजनीतिक प्रकृति के नहीं थे, अपितु धार्मिक रूढ़ीवादी विचारों का खंड़न था। कांग्रेस के नरम पंथियों ने धर्म को व्यक्तिगत महत्व का विषय माना किंतु धार्मिक आंदोलनों के माध्यम से उन्होंने जन राजनीति में प्रवेश किया। दुर्गा पूजा, गणेश पूजा के माध्यम से बंगाल तथा महाराष्ट्र में धार्मिक एकता द्वारा राजनीतिक एकता का परिचय देते हुए एक शाक्तिशाली आंदोलन को खड़ा किया। बालगंगाधर तिलक, अरबिन्दो घोष, सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी, पंजाब में लाला लाजपत राय ने इसी आधार पर एक विशाल जन राजनीति में प्रवेश किया तथा 1905 में जब बंगाल का विभाजन मुस्लिम बहुल प्रांत का सृजन करने के उद्देश्य किया गया तो एक विशाल व उग्र राजनीतिक आंदोलन प्रारंभ हो गया व राष्ट्रवादी राजनीति का वास्तविक रूप नजर आया। उग्र राष्ट्रवाद की नई राजनीति का सृजन मूलतः तात्कालिक परिस्थितियों के विरोध में हुआ और वे अपने लिए उपर्युक्त स्थान की मांग करने लगे। वहीं बंगाल में दो उग्र राष्ट्रवादी दल स्थापित हो गए। एक दल शक्ति की उपासना को महत्तव दे रहा था तो दूसरा दल वेदांतों की शिक्षा दीक्षा का उपासक था किंतु दोनों ही दल हिंसा को आवश्यक रूप में स्वीकार कर रहे थे। वास्तव में धर्म ही वह भाव था जिसने तत्कालिक राजनीतिक व्यवस्था पर चोट पहुचांने हेतु नवयुवकों में राष्ट्रवाद को पोषित कर रहा था। धर्म असाधारण रूप से राष्ट्रवाद को जीवंत बना रहा था। बाल गंगाधर तिलक तथा अरबिन्दो घोष की स्पष्ट मान्यता थी कि धर्म के आधार पर आह्वान से भारतीय राष्ट्रवाद को असाधारण बल मिलेगा वहीं दोनों दलों के विषय में लाला लाजपत राय कहते है– ''वे न तो विनाशवादी है ना अराजकतावादी वे राष्ट्र भक्त हैं, जिन्होंने अपनी राष्ट्रभक्ति एक धर्म के धरातल से उठाई है। उनका धर्म असाधारण रूप से उनके राष्ट्रभक्ति से साम्य रखता है और वह धर्म राष्ट्रभक्ति को अनिर्वचनीय रूप से प्रचण्ड एवं सजीव बना देता है।''

तत्कालिक राजनीतिक व्यवस्था के प्रभावित करने के उद्देश्य से ही धार्मिक उत्सवों से ऐतिहासिक वीरों की याद में मनाया जाना सुनिश्चित किया गया ताकि धार्मिक आधार पर जनता में जनजागृति पैदा की जा सके। किंतु इन्हीं भावनाओं के विस्तार से मुस्लिम समाज के भीतर भय और अलगाव की स्थिति बनती चली गई। चूंकि शिवाजी महाराज मुगलों के विरूध्द युद्ध लड़े और उनकी प्रशंसा को महाराष्ट्र में विजय गान के रूप में गाया गया जिससे मुसलमानों में हिंदू धर्म के प्रति दूरी स्वभाविक हो गई, वहीं ब्रिटिश सरकार की फूट डालो और शासन करो की राजनीति से तकरीबन तत्कालिक 6 करोड़ 20 लाख मुसलमान देश में अलगावाद की भावना से भर गए। 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य भारतीय मुसलमानों का राजनीति, सामाजिक हित साधना व ब्रिटिश सरकार के प्रति आभार को दर्शाना था। ब्रिटिश सरकार ने धर्म के आधार पर हिन्दू, मुस्लिम विभेद को बढ़ाना प्रारंभ कर दिया जिसके प्रतिफल के रूप में सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व का सिद्वांत आया ताकि राजनीतिक भेदभाव की शुरूआत हो सके। वास्तव में यहीं से सम्प्रदायवाद धर्म की आड़ में छुप गया और लगातार वैमनस्यता का बीज हिंदू मुसलमानों के बीच बोता चला गया, और इसका अन्त धार्मिक आधार पर बने नए राष्ट्र पाकिस्तान के रूप में दिखाई दिया। धर्म के आधार पर देश का विभाजन होना बेहद ही दुर्भाग्यपूर्ण था किंतु तत्कालिक परिस्थितियों में इसके बेहतर कोई अन्य उपाय भी नही था। भारतीय राजनीति पूर्णतः धर्म के द्वारा संचालित होती हुई नजर आती है जो भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के समय अपनी चरम सीमा था।

वर्तमान भारतीय राजनीति और धर्म :– स्वतंत्रता के उपरांत भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में आमूल चूल कई परिवर्तन हुए अब राजनैतिक स्वतंत्रता तथा स्वायता का वातावरण देश में व्याप्त हो गया था। राजनैतिक प्रशासनिक संस्थाओं का विकास होने लगा तथा व्यापक रूप से देश को विकासशील राष्ट्र के रूप में पहचान मिलने लगी। सामाजिक स्वतंत्रता तथा समभाव का सिद्वांत संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों से प्राप्त होने लगा जिसके अन्तर्गत व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा समानता व मानव जीवन के मूल्यों के स्थापित करने वाले मौलिक अधिकार संविधान ने अपने नागारिकों को प्रदान किए जिसके अन्तर्गत अनुच्छेद 25 (1) में धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों का वर्णन किया व राज्य को आदेश दिया कि वे धर्म, मूल लिंग वंश, जाति के आधार पर विभेद नहीं करेगा। अर्थात् भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य होगा और धर्म के आधार पर किसी भी व्यक्ति के साथ कोई विभेद नही किया जाएगा। वास्तव में भारतीय

संविधान ने अक्षरशः इसका पालन किया भी है तथा भारत एक विशाल धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के रूप में विश्व पटल पर अपनी पहचान स्थापित करता है किंतु धर्म ने भारतीय राजनीति को सदैव ही न्यूनाधिक रूप में प्रभावित किया ही है। भारत की राजनीति धर्म पर अवलम्बित होती हुई नजर आती है। आज धर्म और सम्प्रदायिकता की भावना के राजनीति की आड़ में भुनाने का प्रयास किया जाता है और धर्म का हौवा खड़ा करके राष्ट्रीयता की भावना को कोसों दूर कर के सम्प्रदायिकता का बीज बो दिया जाता है और लोगों के मन में देश प्रेम की भावना के स्थान पर आपसी वैमनस्व जन्म लेने लगता है। कट्टर पंथी ताकतें अपना हित साधने हेतु ईष्या और द्वेष का भाव लोगों के मन में भरते है और साम्प्रदायिता को बढ़ावा देते हैं। परिणामतः मजहब के नाम पर ही कई हिसांत्मक घटनाएं घटती है और निर्दोष लोग मारे जाते हैं, देश की सुरक्षा तथा आंतरिक शांति व एकता भंग होती है। वास्तव में धर्म के बेहद संकीर्ण रूप के कारण ही साम्प्रदायिकता प्रारंभ होती है जबकि धर्म अपने विशालतम रूप में प्रेम और सौहार्द बढ़ाने वाला होता है। जिसका आधार ही मानवमात्र में एकत्व की भावना का संचार करना है, तथा परमतत्व की प्राप्ति है किंतु जब केवल धर्म के बाहरी स्वरूप के रूप में उसका आडंबर मात्र रह जाता है तो सम्प्रदाय प्रारंभ हो जाता है। जो कि राष्ट्रीय एकता का गंभीर शुत्र है। हिंदू–मुस्लिम संम्प्रदायों में वैमनस्व व अलगाव की भावना का विस्तार भारतीय राजनीति में आम बात हो गई है। सम्प्रदायिकता का अर्थ इस तथ्य से लगा सकते है जिसके अन्तर्गत किसी समूह या जाति के हितों की पूर्ति के सर्वोत्तम स्थान देकर उसे ही प्राथमिकता प्रदान करना व अन्यों को गौण स्थान प्रदान करना है। भारत एक विशाल राष्ट्र है यहॉ हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई, जैन, बौध्द पारसी जैसे कई धर्मो के मानने वाले निवास करते है। तथा निश्चित तौर पर सभी अपने अपने हितो को साधने हेतु कई सामाजिक व राजनीतिक उपायों का सहारा लेते है। किंतु भारत में मुख्यतः हिंदू, मुस्लिम, धर्म पर अनेक विवाद समय समय पर खड़े होते है। जो विभिन्न संगठनो यथा हिंदू महासभा अथवा मुस्लिम लीग, अकाली दल आदि के रूप में पहचाने जाते है जिनका एकमात्र उद्देश्य अपने हितो को साधना है वे इसके लिए राष्ट्रीय हितो की अवहेलना करने से भी नही चूकते। सत्तासीन शासको पर कई प्रकार के राजनीति दबाव वे समय समय पर बनाते रहते है जिससे वे अपने समूह के राजनीतिक हितों तथा सत्ता को प्राप्त कर सके। वहीं राजनीतिक दल अपने हितो की प्राप्ति व वोट बैंक बढाने के उद्देश्य से विभिन्न धर्मो व सम्प्रदायों का सहारा लेते है। भारत देश में मुसलमानों में पृथकता की भावना आना भी सम्प्रदायवाद के कारण है जिसके कारण देश का एक बहुत बड़ा वर्ग ही राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बंध नही पाया। जहॉ राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ मुसलमान विरोधी विचारधाराओं से है वही मुस्लिम लीन की हिंदू विरोधी सुर ही बने रहे है। वास्तव में वर्तमान राजनीति अस्थिरता धर्म की कट्टरता का ही परिणाम है क्योंकि सम्प्रदायिकता एक ऐसी स्थिति उत्पन्न कर देती है जिसके फलस्वरूप राजनीति प्रभावित होती है तथा राष्ट्रीय एकता को इससे गहरा आघात पहुॅचता है। इन साम्प्रदायिक दलों ने देश की राजनीति में धर्म का स्थान मानों सुनिश्चित कर लिया है और देखने से ही पता चलता है कि कोई राजनीतिक दल किसी धर्म विशेष को महत्तव देते है।

प्रो. मोरिस जोन्स ने कहा है ''यदि साम्प्रदायिकता को संकुचित अर्थ में लिया जाए अर्थात् कोई राजनीतिक पार्टी किसी वि ोष धार्मिक समुदाय के राजनीति दावों की रक्षा के लिए बनी हो तो कुछ पार्टियॉ ऐसी है जो स्पष्ट रूप से अपने को साम्प्रदायिक कहती है जैसे मुस्लिम लीग जो भारत में सिर्फ दक्षिण भारत में रह गई है और जो मालाबार मोपला समुदाय के बल पर केवल केरल में ही शक्तिशाली है, सिख्खो की अकाली पार्टी जो सिर्फ पंजाब में ही है, हिंदू महासभा जो सिधांत रूप में एक अखिल भारतीय पार्टी है कितुं मुख्य रूप से मध्यप्रदेश और उसके आसपास के इलाको में शक्तिशाली है।'' सम्प्रदायिता और धार्मिकता, राजनीति पर पूर्णतया आरोपित नजर आती है जिसके चलते नागालैंड में भी इसाईयों ने धर्म के आधार पर पृथक राज्य की मांग की थी और ऐसे विभिन्न क्षेत्र है जहॉ धर्म की राजनीति की जाती है अथवा राजनीति पर धर्म हावी हुआ दिखलाई पड़ता है।

निष्कर्ष :– भारत एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है, विभिन्न धर्म, भाषा जाति, के लोग यहॉ निवास करते है और यह विविधता ही भारत की पहचान है किंतु जिस एक विघटनकारी तत्व के कारण अंग्रेजो ने 200 साल तक भारत में शासन किया वह था ''फूट डालो और राज करो'' की नीति और इसी नीति का अंतिम फल हमें देश के विभाजन के रूप में सहना पडा जिसमें धार्मिक मतभेद की भावना ही कार्य कर रही थी। धर्म ही वह तत्व था जिसके कारण हिंदू मुस्लिम, सिख, इसाई आपस में अपनी निजी हितों हेतु देश की राष्ट्रीयता और

एकता को दांव पर लगाते रहे। वास्तव में धर्म की विशालता और बहुलता को समझे बिना सम्प्रदायिकता के कारण राजनीति में इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा और धर्म के नाम पर आए दिन हिंसात्मक घटनाएं जन्म लेती रही। विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता धर्म के नाम पर ही वोट मांगते हुए नजर आते है तो कई वोट बटोरने हेतु मठाधीशों से मस्जिद के इमाम मिलकर उनके निजि हितो को साधने लगते है जिस कारण भारत के धर्मनिरपेक्षता की भावना को ठेस पहुँचता है और राष्ट्र के विकास में बाधा पहुँचती है। वास्तव में भारत को धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित करने के पीछे संविधान निर्माताओं का यही उद्देश्य था कि कभी भी राजनीतिक, सामाजिक संस्थाएं धर्म का आधार लेकर व्यवस्था में बदलाव अथवा हित साधने का प्रयास ना करें। अपितु धर्म को राजनीति में आड़े ना आने दे और ना ही राजनीति में धर्म का आक्षेप ही किंतु वर्तमान परिदृश्य में धर्म और राजनीति एक दूसरे से इस प्रकार एक हो गए है कि आज इनको एक दूसरे से दूर करना मुश्किल हो गया है ये एक दूसरे से इतना घुल गया है कि मानों राजनीति से धर्म को हटाना लगभग नामुमकिन सा हो गया है जिसके पीछे कारक यह भी है कि धर्म लोगों के व्यवहार को प्रभावित व नियंत्रित करता है, और इसके साथ ही साथ व्यक्तियों की भावनाओं से सीधे तौर पर जुड़ा हुआ है। जिसके कारण इसका प्रभाव राजनीति पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जबकि स्थिति यह है कि राजनीति पूर्णरूपेण धर्म द्वारा नियत्रित की जाने लगी है। और धर्म जिस प्रकार चाहे राजनीतिक नियमों का निर्माण करा सकता है। वास्तव में इस प्रकार भी सम्प्रदायिकता मानवता के लिए एक गहरा अभिशाप है और भारत देश की एकता व अखण्ड़ता के लिए बडा ही घातक है। जिसे सही रूप से नियोजित करने की आवश्यकता है। यह पूर्ण रूपेण सत्य है कि प्राचीन काल से ही धर्म की व्यापकता ने राजनीति को प्रभावित किया है राजनीति की शुरूआत ही धर्म की इसी अवधारणा के साथ हुआ था। सबकी रक्षा व सुरक्षा राज्य के हाथों में होती है और राज्य अपने नागरिको के हितो की पूर्ति करेगा। अर्थात् धर्म ने सदैव हर युग में राजनीति को प्रभावित किया है वास्तव में धर्म मनुष्य को भीतर से महान बनाने वाला तत्व है तथा राजनीति भी व्यक्तित्व के विकास समाज के कल्याण व राज्य के विकास का अनिवार्य तत्व है राजनीति धर्म के द्वारा दूषित नहीं होती क्योंकि धर्म और राजनीति दोनो ही सद्भाव व सद्नीत से बने हुए है अतः धर्म और राजनीति को एक दूसरे से पृथक करना संभंव नही है अपितु साम्प्रदायिकता के प्रभाव से राजनीति के बचाना अनिवार्य है। क्योकि धर्म के नाम पर अनेक सामाजिक कुरीतियॉ व राजनीतिक बंदरबार होते है। धर्म के नाम पर ही भोली भाली जनता को बहला फुसलाकर आपस में लड़ाया जाता है और राजनेतागण अपनी रोटी उसी हिंसा की आग में सकते है।

आज के परिपेक्ष्य में राज्य सबसे अधिक शक्तिशाली साधन है जो व्यक्तियों के हितो की पूर्ति कर सकता है। किंतु नैतिक व आदर्शो से रहित निष्ठुर व भावहीन हो गया है जो एक समूह के हितो की पूर्ति हेतु राष्ट्र को बलिवेदी पर चढ़ा सकता है। वास्तव में आज इसी धर्म की संकीर्णता ने राजनीति को ग्रस लिया है जैसे महात्मा गांधी ने माना कि ''जैसे भयानक बवडंर अंत में उड़ जाता है वैसे ही अनीतिमान पुरूष का नाश हो जाता है असीरिया और बेबीलोन में अनीति का घड़ा भरा नही कि फूट गया। रोम ने जब अनीति का रास्ता पकड़ा तब उसके महान पुरूष भी उसे न बचा सके। ग्रीस की जनता बुध्दिमान थी, पर उसकी बुध्दिमानी अधर्म को न टिका सकी। अनीति यदि राजगद्दी पर बैठी हो तो वह टिकने को नही।''

इस प्रकार वास्तविक धर्म जो तात्विक है राज्य के लिए अतिआवश्यक है किंतु सम्प्रदायिकता से भरा भाव राज्य के लिए सर्वथा अनुपयुक्त व विनाशकारी है। जो राष्ट्र की एकता व अखंड़ता को नष्ट कर देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दुर्गादत्त पाण्डेय धर्म दर्शन पृ. 72
2. जिमर फिलासफी आफ इंडिया पृ. 28–35
3. लवानिया डॉ.एम.एम. धर्म का समाजशास्त्र रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर पृ. 12
4. महाभारत शांति पर्व अध्याय 58
5. राय लाजपत लालाः राइटिंग एण्ड स्पीचेज वॉल. 2, दिल्ली, 1966
6. ऋग्वेद 1.187.1
7. ऋग्वेद 10.9.2
8. Immanual kant : The Phylosophy of Relision P-7
9. Mahatma Gandhi: Views on Relision

Vikramaditya Arts & Commerce College, Jabalpur

(Affiliated to the Rani Durgawati Vishwavidyalaya, Jabalpur)

7th National Conference on Multidisiplinary Research in the Field of Development

VENUE

Vikramaditya College,
Vijay Nagar, Jabalpur (M.P.)

DATE : 14th July 2019, Sunday

THEMES AND SUB-THEMES

● Agriculture Development ● Agriculture Based Industries ● Corporate Social Responsibility ● Digital India ● Development in the field of E-Commerce ● Eco-Tourism Development. ● Education Development ● Entrepreneurship Development ● Environment Development ● Effect of Environmental Factors on Personality Development ● Export & Import Development of India with other country ● Economic Growth of India & China Strategic Differences: infrastructure Development ● Financial Inclusion Programme of Nabard ● Financial Inclusion for Rural Development ● Foreign Direct Investment & Economic Growth ● Inter-Linkages between Infrastructure & Development in India ● Gandhian Concept of Development., Dr. Ambedkar Concept of Development ● Growth of Rural Women Entrepreneurship ● History of Modern India & its Development Period ● Human Resource Development ● Industrial Development & Employment ● Human Development ● Impact of Development on Biodiversity ● Management of Social Welfare & Development ● Micro Finance in India and Rural Development ● NAREGA and its Impact on Rural Economy ● Personality Development ● Population, Environment & Economic Growth ● Rural Development ● Role of Indian Culture in Rural Development ● Role of Gram Panchayat ● Role of NGOs in Rural Development ● Rural Banking Scheme on the Development of Rural Areas ● Rural Development through Education ● Role of Media & Development ● Sustainable Development ● Science & Technology ● Socio-Economic Development ● Sports & Yoga for Personally Development ● Strategic Difference of India and China with Reference to Human Capital Development ● Tourism Development ● Tribal Development Program ● Tribal Women and their Socio-Economic Development ● The Role of Education in Promoting Socio Economic Development ● Women Development & Empowerment ● Water Resource Management & Development ● Wasteland Development and Rural Employment ● Urban Development Program and others themes and sub themes also accepted

REGISTRATION FEES

Research Scholar - 500/-, Academicians - 800/-, Spot Registration +100

Mr. Brahma Dutta, State Bank of India, Kamla Nehru Nagar, Jabalpur
A/c No. - 20017262528, IFSC - SBIN0007665,

Please Send Paper in Email : ncmrd2019@gmail.com
Paper published in ISSN Journal , Peer Reviewed, Impact Factor 4.2
Hard Copy Charges 500/- will be extra .

REGISTRATION FORM

Please fill the Registration Form and submit

Name: .....
Designation: .....
Department/Institute: .....
Address: .....
Mobile No. ..... Whatsapp No. .....
Subject of Education .....
Title of Paper: .....
Email.-.....
Detail of payment Bank Draft/Online .....
Draft No. .....
Accommodation Required: YES/No

Signature of the applicant

International Social Science & Management Welfare Association

4th International Conference on Multidisiplinary Research in Global Warming & It's effects on Socio-Economic Development

Date 9-2-2020, Sunday

BHOPAL, MADHYA PRADESH (INDIA)

Themes and sub-Themes

- Climate Change its Impact on :
  1. Agriculture 2. Biodiversity 3. Health 4. Environment.
- Changing Dimensions of Human Rights in India.
- Economic Growth of India and China Strategic Differences.
- Right to Education : Challenges and Opportunities.
- Environmental Education in Present time.
- Management of Social Welfare & Development.
- Mass Media and Development of India.
- Mobile Money in Replacing Case.
- Wild Life Conservation and Management.
- Effect of Environment Factors on Personality Development.
- Sustainable Water Resources Management Challenges & Opportunities.
- Inclusion Growth and Role of SHGS, Micro and Small Scale Industrial Sector.
- Environment Management Biodiversity Conservation and Climate Change : Issues and Challenges.
- Impact of Global Warming on Biodiversity and its Conservation : Present Status & Future Strategy.
- Global Climate Change Challenges before Human Beings.
- Global Warming and its Impact on Ecology.
- Environmental Pollution and ways to counter it.
- Natural Resources of Medicinal use.
- Energy Efficiency and Green Energy.
- Sustainable Development and Role of Eco-Tourism.
- Global Warming and Climate Change.
- Tribal Environmental and Biotechnology.
- Plants Species in Socio, Economics Development Literature, art & other fine arts.

REGISTRATION FEES

Research Scholar - 1000/-, Academicians - 1500/-

Mr. Brahma Dutta
State Bank of India, Kamla Nehru Nagar, Jabalpur
A/c No. - 20017262528, IFSC - SBIN0007665

Please send papers in **Email : icmrgw2020@gmail.com**

CONTACT

DR. D. K. VISHWAKARMA
CELL- 9131312045, 9993332299, 0761-4036611
Email : issmwa.int@gmail.com
Website : www.issmwa.com
OFFICE ADDRESS
320, Sanjeevni Nagar, Veer Sawarkar Ward
Garha, Jabalpur (M.P.) 482003

SRF
International & National Research Journal & Publication House

OFFICE - 320 Sanjeevni Nagar Veer Sawarkar Ward, In front of Income Tax Water Tanki, Garha, Jabalpur, Madhya Pradesh - 482003,
Email - srfjbp@gmail.com
Website : www.srfresearchjournal.com **Mob. :** 09131312045, 09993332299, 0761-4036611

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

(JIFE Impact Factor: 3.934, Approved by UGC Journal No. 41336)

Patron:
Hon'ble Justice K.D. Shahi
Retired Judge, Allahabad High Court, Allahabad

Professor B.C. Nirmal
Ex. Vice Chancellor of National University of Study & Research in Law, Ranchi
Former Head & Dean, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi

Editor in Chief:
Chandra Nath Singh
Assistant Professor, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
LL.B. (BHU), LL.M. (RMLNLU), Ph.D. (BHU), UGC-NET/JRF/SRF

Mode of Citation:
(Ad Valorem), Volume 5, Issue IV, 2018, <Page No.>

VOLUME: 5 ISSUE: IV PART-I OCTOBER –DECEMBER 2018

Published by:
Future Fact Society, Lanka, BHU, Varanasi (U.P.) India

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

ISSN: 2348-5485

@ Approved By UGC

Correspondence Address:

Editor in Chief:
Chandra Nath Singh
Ad Valorem *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com,***
chandralaw@gmail.com
Website: ***advaloremjournaloflaw.com***

Copyright /Published since 2014 @ Chandra Nath Singh ©2018

All rights reserved.

*No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, or stored in any retrieval system of any nature without prior permission. Application for permission for other use of copyright material including permission to reproduce extracts in other published works shall be made to publishers. Full acknowledgement of author, publishers and source must be given. The views expressed in the journal "**Ad Valorem"(Journal of Law)** are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. Although every care has been taken to avoid errors or omissions, this publication is being sold on the condition and understanding that information given in this journal is merely for reference and must not be taken as having authority of or binding in any way on the authors, editors, publishers and sellers who do not owe any responsibility for any damage or loss to any person, a purchaser of this publication or not, for the result of any action taken on the basis of this work.*
All disputes are subject to Varanasi jurisdiction only.

Managing Editor:
Brijendra Nath Singh

Printed and Binding by:
Baba Binding, Lanka, BHU, Varanasi-221005, Utter Pradesh, India.

EDITORIAL BOARD:

Prof. R.P. Rai, Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Sharma, Ex. Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. C.P. Upadhyay, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. G.S. Tiwari, Ex. Dean, School of Law, H.S. Gour University, Sagar, M.P
Prof. S.K. Gupta, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Sibaram Tripathi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Priti Saxena, Head, Legal Study of Human Rights, BBAU, Lucknow
Prof. S. K. Bhatnagar, Ex. Dean, Legal Study, BBAU, Lucknow
Prof. Tabrez Ahmad, Director, Legal Studies, U.P. E.S, Dehradun, Uttarakhand, India
Prof. Akhilesh Ranaut, Professor, UILS, Chandigarh University, Chandigarh
Prof. L.M. Singh, Faculty of Law, Allahabad University
Prof. B.Kumar, Director, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Prof. Jay Prakash Yadav, Dean, Jagran School of Law, Dehradun
Prof. Chai-Jui Cheng, Secretary-General of Academy of International Law.
Prof. David Tushaus, Missouri Wistern Criminal Justice, U. S.
Prof. Chia- Yin Hung, Dean, School of Law, Soochow University, Taipei
Prof. V.L. Mony, Ex. Dean, School of Law, VIBS, New Delhi
Prof. T.N. Prasad, Director, Law School, BBD University, Lucknow
Prof. Moin Athar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. A.P. Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. G.P. Sahoo, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. R.K. Patel, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. N.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Pathak, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Raju Majhi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Saroj, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Adesh Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. M.K. Malviya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.P. Singh, Assistant Professor of Law, IIM Lucknow, Lucknow
Dr. K.S. Brijwal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Anil Kumar Maurya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Pradip Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Prabhat Saha, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. B. K. Das, Senior faculty, L. R. Law College, Sambalpur Odisha, India
Dr. Rajneesh Yadav, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. S. Kandasamy, Head, Law and Governance, Central University of Rajasthan
Dr. Abhishek Tiwari, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Rajasthan, Jaipur
Dr. Yogendra Singh, School of Law IFTM University, Moradabad, Uttar Pradesh

PANEL OF REFEREES:

Dr. B. K. Das, L.R.Law College, Sambalpur Odisha
Dr. Aparna Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow.
Dr. Rajeev Kumar Singh, Law School, Uttaranchal University, Dehradun
Dr. Anjali Agrawal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Sudhir Kumar, Assistant Professor, Faculty of Law, HNB Garhwal University, Utterakhand
Dr. S. D. Sharma, HOD, School of Law, NIMS University, Jaipur, Rajasthan
Dr. Surendra Singh, Officer, Charted Accountant of India, New Delhi
Dr. Amit Mehrotra, National Judicial Academy, Bhopal, M.P.
Dr. Shaiwal Satyarthi, Chankya National Law University, Patna
Dr. Sudhir Kumar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. Digvijay Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Deo Narayan Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Akilesh Kumar Pandey, Assistant Professor, West Bengal
Dr. Amandeep Singh, Assistant Professor, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. Pramod Kumar, Sant Kripal Singh Institutte of Law, Banda, UP
Dr. Prashant Srivastava, SRM University, Lucknow
DR. Vivek Kumar, Assistant Professor, Law College Dehradun
M/s. Bandna Shekhar, Assistant Professor, Manav Bharti University, Solan
M/s. Yasha Sharma, Assistant Professor, School of Law, UPES, Dehradun
Mr. Krishna Murari Yadav, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Delhi, Delhi
M/s. Shashya Mishra, Assistant Professor, Amity University, Lucknow
M/s. Sweta Chaturvedi, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Alok Kumar Yadav Faculty of Law, HNB Garhwal University
Mr. Anurag Agrawal, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Abhishek Rai, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Vishnu Dutt Sharma, District and Session Judge, Rajasthan
Mr. Indra Kumar Singh, Assistant Professor, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Mr. R. Bharat Kumar, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam
Ms. Soma Bhattacharyya, Assistant Professor, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam.
Mr. Abhiranjan Dixit, Assistant Professor, Law College Dehradun
Mr. Avishek Raj, Assistant Professor, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Mr. Vinay Kumar Pathak , Assistant Professor, Shri Rama Krishna College of Law, Satna, M.P.

EDITORIAL BOARD OF LEGAL RESEARCH SCHOLARS:

Mr. Amitabh Srivastava, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Anil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ajay Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Akash Ram, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ashutosh Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Amrendra Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Arvind Nath Tripathi, National Law University, Vishakhapattanam
Mr. Amit Kumar Maurya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Abhishek Kumar Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Babita Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
Mr. Eshfagholrahman Sabouri, Deprt. Of Mass Commu., BHU, Varanasi
Mr. Indresh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Kuldeep Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Lav Lesh Kumar, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Mojtaba Sadeghi Moghadam, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mani Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mukesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Munish Swaroop, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Pradeep Kumar Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Pratima Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Praveen Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Roksana Hassanshahi Varashti, Faculty of Law, BHU, Varanasi
Mr. R.V. Dhumal, Center for Law and Governance, JNU, New Delhi
Mr. Rohit Kumar, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Randhir Saroj, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ranjeet Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ramesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Raghvendra Kumar Chaudhary, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Shiv Kumar Sintu, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Sandeep Kumar, Institute of Management Studies, B.H.U., Varanasi
M/s. Shiva Pandey, Research Scholar, Faculty of law, B.H.U, Varanasi
Mr. Sunil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Smita Goswami, Amity Law School, Noida
Ms. Swati, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Suchi Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Upendra Sah, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vipin Bihari Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinod Kumar Chaursia, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinayak Kumar Chaursiya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vijay Bhan, Faculty of Law, Banaras Hindu University

From the Chief Editor

It is our pleasure to present the Volume 5, Issue IV, Part-I, October-December, 2018 of ***Ad Valorem (Journal of Law) ISSN: 2348-5485.*** *The experience has been splendid and full of challenges. Our team faced all challenges with never-ending energy and attitude. It depicts boundless enthusiasm, emotions, imagination and of course talent of the young minds. We applaud this creative endeavor with fine contribution from academicians and Research Scholars for the success of the journal.*

Ad Valorem (Journal of Law) *is a blind two fold peer reviewed quarterly Journal. Accordingly, it brings to the readers only select articles of high standard and relevance. In a country governed by the rule of law, it is important that awareness about the research is created among those who are supposed to be concerned with these researches. Academicians can play a very important role in the development of the higher research, and there is need to encourage young minds to participate in development of research based on the needs of the changing society and technical advances. This Journal provides an excellent platform to all the academicians and Research Scholars to contribute to the development of sound Research for the country.*

We would like to express our gratitude to the Editorial Advisory Board and the Panel of Referees for their constant guidance and support. Appreciation is due to our valued contributors for their scholarly contributions to the Journal. We would also like to thank our Editorial members, whose valuable suggestions and continuous support to make this edition a success. We are also thankful to those who facilitated quality printing of this Journal.

We wish to encourage more contributions from academicians as well as Research Scholars to ensure a continued success of the journal.

We hope that this issue of ***Ad Valorem (Journal of Law)*** *will prove to be of interest to all the readers. We have tried to put together all the articles coherently. Suggestions from our valued readers for adding further value to our Journal are however, solicited.*

Thank you.

Editor in Chief
AD VALOREM *(Journal of Law)*

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM *(Journal of Law)*
An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal
Volume 5, Issue I, Part-I, October-December, 2018

CONTENTS

	SPECIAL SCHEMES AND DEVELOPMENT PROGRAMMES FOR PERSONS WITH BENCHMARK DISABILITIES IN INDIA ***Dr. A.K. Navin***	1-9
	DOMESTIC VIOLENCE IN INDIA: PRESENT LEGAL PROVISIONS AND FUTURE PROSPECTS ***Dillip Kumar Behera***	10-16
	GENDER INEQUALITY IN INDIA- A CHALLENGES IN 21ST CENTURY ***Panchanan Sabat***	17-21
	PROTECTION OF CYBER DATA: ISSUES AND CHALLENGES ***Abhiranjan Dixit***	22-24
	PREVENTION OF ATROCITIES AGAINST SCS AND STS: NEED FOR MORE SOCIAL MEASURES ***Dr. Vineeta Singh***	25-27
	ENVIRONMENTAL PROTECTION & JUDICIAL CONSCIOUSNESS ***Rakesh Kumar Pathak***	28-30
	LAND ACQUISITION AND SOCIAL SECURITY ***Kaustubha Nand Joshi***	31-36
	DR. AMBEDKAR'S VISION FOR CONSTITUTIONAL GOVERNMENT ***Dr. Prem Kumar Gautam***	37-40
	RELEVANCY OF SEPARATION OF POWERS IN WELFARE STATE ***Mukti Jaiswal***	41-45
	CRIMINALIZATION OF POLITICS: STRUGGLING TO FIGHT IN LAW AND JUSTICE ***Nitya Nand Pandey***	46-49
	THE MAINTENANCE OF OLD PARENTS IN INDIA: A STUDY ***Vishva Nath Sharma & Dr. A.K. Navin***	50-52
	INDIAN POWER SECTOR SCENARIO-AN OVERVIEW ***Prof. R.K. Maheshwari & Dr. Raza Shabbir***	53-57
	LEGAL SERVICES AUTHORITIES ACT: AN EXPLORE AND.. ***Dillip Kumar Tripathy***	58-64
	HUMAN RIGHT AND CYBER SPACE USE AND MISUSE ***Mohd Shuaib***	65-69
	RATIONALE FOR DIFFERENTIAL SENTENCING TO CHILD . ***Gunjan Srivastava***	70-74
	CYBER SECURITY IN INDIA: AN ANALYSIS ***Anand Prakash Singh***	75-78
	ELECTIONS IN INDIA: AN ANALYSIS ***Pankaj Kumar***	79-82
	PERSPECTIVES OF WATER CONSERVATION ***Anil Kumar Soni & Kumar Gaurav Bajpai***	83-84
	पुलिस बनाम महिला अधिकार *चन्दन कुमार& मनीष कुमार*	85-89
	भारत में ऊर्जा सुरक्षा की धारणीय प्रगतिशीलता *डॉ चन्द्र किशोर मणि पाण्डेय*	90-94
	छ.ग. में मतदान व्यवहार परएक विश्लेष्णात्मक अध्ययन *डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन*	95-98
	ग्रामीण विकास में महिला जनप्रतिनिधियों की भागीदारी *डॉ0 आकांक्षा गौर*	99-100

छ.ग. में मतदान व्यवहार पर एक विश्लेष्णात्मक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन*

सारांशः–

आदिवासी परंपराओं से फलीभूत छ.ग. की संस्कृति ना केवल सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से उन्नत है अपितु राजनैतिक रूप से सुगहित होने के कारण यहॉ की जनता सत्ता परिवर्तन करने का भी दम रखती है। यूँ तो छ.ग. राज्य निर्माण को अधिक समय नही हुआ है लेकिन इसका यह अर्थ नही कि यहॉ की जनता में राजनैतिक व्यवहार की कमी है । अपितु अविभाजित म.प्र. में छत्तीसगढ के कई ऐसे स्थानीय नेतागण हुए है जिन्होने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को चलाया अपितु स्थानीय राजनीति को भी बखूबी संचालित किया। छ.ग. राज्य के पहले मुख्यमंत्री के रूप में श्री अजीत जोगी ने शपथ सय ली तथा कांग्रेस की सरकार बनी 2003 में पुनः चुनाव हुए जिसमें भारतीय जनता पार्टी के डॉ. रमन सिंह मुख्यमंत्री के रूप में चुने गए जो लगातार 3 विधान सभा चुनावो में मुख्यमंत्री के पद पर बने रहे । 2018 में हुए विधानसभा चुनावो में कांग्रेस दल के श्री भूपेष बघेल जी ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली आज छ.ग. में पढे लिखे युवा राजनीति में आगे आ रहे है व विभिन्न मुद्दो पर अपनी राय बेबाकी से रख रहे है । ऐसे समय में जब छ.ग. भी विकास और षिक्षा के नए पायदानों को छू रहा है, मतदान व्यवहार भी इससे प्रभावित जरूर होता है, छ.ग. में मतदान को प्रभावित करने वाले अनेक कारक है जो स्थानीय राजनीति को तो प्रभावित करने ही है कही ना कही देष की राजनीति भी इससे जुडकर प्रभावित होती है।

छ.ग. की सामाजिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः–

छ.ग. राज्य एक आदिवासी बाहुल्य राज्य है करीब एक तिहाई जनसंख्या आदिवासी समुदाय की है, जो प्रदेष की राजनीति को निष्चित तौर पर प्रभावित करने है। वही 16 प्रतिषत जनसंख्या पिछडी जातियों की है तथा 80 प्रतिषत जनसंख्या गांवो में निवास करती है, जो आजीविका के साधन के रूप कृषि पर पूर्णतया निर्भर करती है। यद्पि बीते वर्षो के दौरान छ.ग. के कुल घरेलू उत्पाद में प्राथमिक क्षेत्र की हिस्सेदारी बढी है जो इस बात की सूचक है कि राज्य में औद्योगिक विकास हो रहा है छ.ग. की संस्कृति में आदिवासी प्रथाओं की सुवास देखने के मिलती है।लोकगीत, लोकनृत्य तथा जनजातीय प्रथाएं अपने आप में ही छ.ग. की संस्कृति को विषिष्ट बनाती है। यू तो प्राचीन काल में ही छ.ग. दक्षिण कौषल का एक हिंस्सा रहा है क्षेत्र में बहने वाली महानदी का मत्स्य प्रराण महाभारत के भीष्म पर्व तथा ब्रम्ह पुराण के भारत वर्ष वर्णन प्रकरण में उल्लेख मिलता है। वाल्मिकी रामायण में भी छ.ग. के बीहड वनो का स्पष्ट वर्णन मिलता है , श्रृंगी ऋषि सिहावा पर्वत के आश्रम में निवास करते थे तथा वनवास काल में श्री राम यहॉ आए थे।

इतिहास के प्राचीनतम उल्लेख के अन्तर्गत 639 ई. में चीनी यात्री हवेन सांग की यात्रा वर्णन में भी छ.ग. का उल्लेख मिलता है जिसकी राजधानी सिरपुर, थी छ.ग. में अनेक राजवंषो का शासन रहा जिसमें सातवाहन, वाकाटक, मौर्या, गुप्तो, राजर्षितुल्य पुरीय, सोमवंषीय, नल वंषीय, शासको का प्रमुख शासन रहा। अविभाजित म.प्र. की स्थापना 1 नवंबर 1956 को हुई थी उसके पूर्व म.प्र. सी.पी. एण्ड बरार का एक भाग था और उसकी राजधानी नागपुर थी। जब म.प्र. की स्थापना हुई तब छ.ग. उसका एक भाग था 1 नवंबर 2000 को जब छ.ग. भारत के 26 वें राज्य के रूप में स्थापित हुआ उस समय छ.ग. में केवल 16 जिले थे वर्तमान में 27 जिले तथा 5 संभाग है।

* **सहा.प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) पं. देवी प्रसाद चौबे शास. महाविद्यालय साजा जिला– बेमेतरा (छ.ग.)**

मतदाता जागरूकता क्या है? :–

एक मतदाता जागरूक बनेगा तभी तो अपने मत देने के अधिकार का सही उपयोग कर पाएगा और तभी लोकतंत्र मजबूत बनेगा आज देष के नागरिकों में मतदान को लेकर जागरूकता बहुत ही कम दिखाई देती है यही कारण है, कम वोंटिग तथा चुनाव में गडबडी की षिकायत आने की, और इसका सीधा असर लोकतंत्र की मजबूत नींव का कमजोर होना है। 25 जनवरी 1950 को भारत में निर्वाचन आयोग की स्थापना हुई थी इसी कारण वर्ष 2011 से 25 जनवरी को मतदाता दिवस के रूप में मनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देष्य नए मतदाताओं को पंजीकृत करने के साथ ही साथ मतदान की अनिवार्यता के प्रति लोगों को जागरूक बनाना भी है। जानकारी के अभाव के कारण मतदाताओं का एक बडा वर्ग अपना बहुमुल्य मतदान करने से वंचित रह जाता है। कुछ लोग दुष्प्रचार कर मतदाताओं को भ्रमित करते है जिससे मतदाता अपने बहुमुल्य मत की कीमत चंद रूपयो में लगाते है। वही जाति नस्ल, समुदाय धर्म के आधार पर भी स्वार्थी तत्व मतदाताओं को प्रभावित करते का प्रयास करते है निवार्चन आयोग द्वारा मतदाता जागरूकता के अन्तर्गत मतदाताओं को जागरूक करने का प्रयास किया जाता है जिससे किसी प्रलोमन या स्वार्थी तत्वों के प्रभाव में आए बिना मतदाता अपने मतदान का पूर्णरूपेण प्रयोग कर पाएं जिसके तहत छोटे छोटे नुक्कड नाटकों के माध्यम से अथवा समाचार पत्रों, इलेक्टानिक मीडिया एवं स्कूलो कॉलेजो में जागरूकता कार्यक्रम चलाता जाता है जिसमे रैली भाषण कविताओं का प्रयोग किया जाता है एवं मतदान संबंधी नारो का प्रचार प्रसार ग्राम स्तर से लेकर नगरों तक में किया जाता है ताकि व्यक्ति निष्पक्ष होकर मतदान कर सके एवं किसी भय अथवा प्रलोभन या स्वार्थ में आकर मत का दुरूपयोग करने से बच सकें।

छ.ग. में मतदान व्यवहार :–

मतदान व्यवहार मुख्यतः एक देष में अधिकतर मतदाताओं के राजनैतिक व्यवहार का एक प्रकार है, मतदान व्यवहार की एक स्पष्ट समझ होने से यह समझना आसान होता है कि लोक निर्णायक गण मतदान के प्रति अपना निर्णय क्यों और कैसे ले। राजनीतिक नेताओं द्वारा एक मतदाता के व्यवहार को प्रभावित करने के लिए अनेक कारको पर विचार किया जाता है, जैसे– षिक्षा, संस्कृति, धर्म मूलवंष जाति और लिंग शामिल है वंषवाद की राजनीति, भष्टाचार, सत्ता विरोधी लहर, महिला केन्द्रित अपराधों की बढती संख्या उचित प्रषासन का अभाव जैसे कुछ कारक है जो मतदान व्यवहार को जबरदस्त तरीक से प्रभावित करते है। छ.ग. में मतदान व्यवहार पर अनेक कारको का प्रभाव दिखलाई पडता है। यहॉ पर मुख्यतया आदिवासी बाह्ल्य क्षेत्र है जहॉ षिक्षा का प्रचार प्रसार भी नही है वस्तुतः पूरे छ.ग. में षिक्षा की भारी कमी है जिसके कारण मतदाता गण अपने बहुमूल्य वोटों की कीमत नही समझ पाते जिसके तहत या तो न मतदान ही नही करते अथवा प्रलोभन में आकर मतदान करते है।वस्तुतः मतदान के प्रति समझ लोकतंत्र के प्रति आस्था और राजनैतिक जागरूकता जैसे कुछ तत्व है जसे आपस में जुडकर मतदान व्यवहार का निर्माण जो किसी भी प्रकार के आर्थिक प्रलोभनो अथवा भावनात्मक उदृविग्नो से प्रभावित ना हो।

मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक :–

छ.ग में. मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक है :–

1. महिला अपराधो की बढती संख्या
2. भावनात्मक कारक
3. अशिक्षा
4. किसानो की हितो की अनदेखी
5. जातिवाद
6. भ्रष्टाचार
7. कार्यकर्ताओं में असंतोष
8. सत्ता परिवर्तन की लहर
9. छ.ग. में तीसरे दल का उदय होना
10. शराब खोरी

उक्त ऐसे कई कारक है जो छ.ग. की राजनीति को प्रभावित करते है जिसके तहत मतदाताओं का व्यवहार प्रभावित होता है। विगत चुनावों में छ.ग. की राजनीति में मतदाताओं का व्यवहार कई तरह से प्रभावित होता हुआ दिखलाई पडता है। भावनात्मक कारको के अन्तर्गत कई बार मतदाताओं में नाराजगी और रोष सत्ता पक्ष के लोगो के प्रति दिखाई पडता है जिसका कारण है उन मांगो का पूरा नही हो पाना जो चुनाव से पहले सत्तारूढ दल ने अपने घोषणा पत्र में कहा इसके कारण मतदाताओं में नाराजगी के चलते उनका मतदान व्यवहार परिवर्तन होता है।'' इसके साथ ही साथ षिक्षा एक ऐसा कारक है जिसकी आवष्यकता समूचे छ.ग. में के मतदाताओं के है क्योकि षिक्षित मतदाता ही अपने मत के द्रूपयोग होने से बचा सकता है और लोकतंत्र की नींव को मजबूत बनाने में अपना बहुमूल्य योगदान दे सकता है क्योकि एक षिक्षित व्यक्ति यह भली भांति समझता है कि अपने शीर्ष नेत्त्व का चुनाव करते समय उसकी जाति, परिवार, संम्पति अथवा धर्म को देखकर मतदान नही करेगे अपितु उस व्यक्ति का चरित्र देखकर उसे अपना नेता चुनेगे।

उपकल्पनाः–

किसी भी शोध का आधार उपकल्पना है इसके बिना एक अच्छा शोध संभव नही हो सकता मतदान व्यवहार से संबंधित उपकल्पना निम्नानुसार है–

1. शिक्षा का मतदान व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव पडेगा।
2. मतदान व्यवहार किसी क्षेत्र की राजनीतिक व्यवहार का महत्वपूर्ण तत्व हो सकता है
3. जाति, धर्म व भाषायी अलगाव मतदान व्यवहार को प्रभावित कर सकते है।
4. स्वस्थ मतदान व्यवहार से एक स्वस्च्छ राजनीतिक माहौल का निर्माण हो सकता है।
5. छ.ग. मतदाता जागरूकता अभियान चला कर मतदान व्यवहार के प्रभावित किया जा सकता है।

शोध के उद्देष्यः

प्रस्तुत शोध पत्र का विषय छ.ग. में मतदान व्यवहार का एक विष्लेष्णात्मक अध्ययन है,जिसके अन्तर्गत शोध के उद्देष्य निर्धारित किए गए हैः–

1. छ.ग. में मतदान व्यवहार का अध्ययन करना।
2. छ.ग. में मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारको का अध्ययन करना।
3. छ.ग. की सामाजिक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
4. मतदान व्यवहार व राजनैतिक अपराधीकरण का अध्ययन करना।
5. मतदान व्यवहार को प्रभावित करने वाले आर्थिक , भावनात्मक तत्वो का अध्ययन करना।

मतदाता जागरूकता हेतु कुछ महत्ववपूर्ण सुझाव :–

25 जनवरी 2011 से पूरे देष में मतदाता दिवसमनाया जाता है। प्रत्यके वर्ष 25 जनवरी को यह दिवस पूरे भारत में मनाया जाता है। जिसके तहत निर्वाचन आयोग नए मतदाताओं का पंजीयन करती है तथा विभिन्न उपायों के माध्यम से मतदाताओं में जागरूकता फैलाने का प्रयास करती है। मतदाताओं में मतदान के प्रति जागरूकता लाने हेतु ना केवल शहरो, नगरो ने प्रयास किया जाना चाहिए अपितु ग्राम पंचायत के प्रत्येक ग्राम स्तर तक व्यापक प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए। स्कुल , कॉलेजो में चौराहो, गली, मुहल्ले में नुक्कड नाटक के माध्यम से मतदान की आवष्यकता का प्रचार प्रसार किया जा सकता है इसके अलावा विभिन्न भाषणो कविताओं प्रतियोगिताओं के माध्यम से जागरूकता लाई जा सकती है। इसके साथ ही आजतक लोग सोषल मीडिया में भी बहुत समय बीताते है, अतः सोषल मीडिया , इलेक्टानिक मीडिया, ंपिंट मीडिया का सहारा भी मतदान के प्रति जागरूकता बढाने हेतु किया जा सकता है। इसके अलावा आम जनता को मतदान के प्रति षिक्षित किया जाना अनिवार्य है ताकि ने योग्य व्यक्ति को अपना मतदान कर सके।

शोध की अध्ययन पद्तियॉ

प्रस्तावित शोध हेतु सामाग्री एवं सूचनाओ का संग्रहण दो प्रकार से किया जाएगा–

1. प्राथमिक स्त्रोत 2. द्वितीयक स्त्रोत

1. प्राथमिक स्त्रोत के अन्तर्गत प्रष्नावली तैयार करना, क्षेत्र में साक्षात्कार के माध्यम से लोगो के प्रत्यक्ष संपर्क किया जाएगा जिसमें जनप्रतिनिध्यिों तथा ग्राम सभा के सदस्यो साक्षात्कार शामिल है। सेंम्पलिंग किया जाना प्रस्तावित है, प्रष्नावली, अवलोकन एवं सर्वेक्षण तथा विष्लेषण करना व इसके पश्चात् निष्कर्ष निकालना ।
2. द्वितीयक स्त्रोत के अन्तर्गत विषय से सबंधित प्रकाषित पत्र–पत्रिकाऍ, लेख पुस्तके, शोध प्रबंध समाचार पत्र, इंटरनेट के माध्यम से जानकारी एकत्र कर अध्ययन करना है।

वस्तुतः मतदान के प्रति समझ लोकतंत्र के प्रति आस्था और राजनैतिक जागरूकता जैसे कुछ तत्व है जसे आपस में जुडकर मतदान व्यवहार का निर्माण जो किसी भी प्रकार के आर्थिक प्रलोभनो अथवा भावनात्मक उदृविग्नो से प्रभावित ना हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. संजय कुमार, प्रवीण राय – भारत में मतदान व्यवहार का मापन –SAGEभाषा 8 सितंबर 2018
2. प्रो. प्रकाष माणि त्रिपाठी '' भारत में जनसहभागिता एवं मतदान व्यवहार के प्रभावित करने वाले कारक '' भारतीय राजनीति शोध पत्रिका ''
3. डॉ. सच्चिदानंद मिश्र '' भारतीय निर्वाचन एवं संस्कृति दषा एवं दिषा विजय प्रकाषन मंदिर, वाराणसी 1999
4. सलिता पटेल '' छ.ग. भिलाई विधानसभा चुनाव 2018 के मतदान व्यवहार का अध्ययन रिसर्च जनरल शोध पत्रिका 2013
5. निरंजन महावर लोकरंग '' छ.ग. राधकृष्णा प्रकाषन 2014''
6. विनोद वर्मा – छ.ग. का इतिहास मंत्रीय पवलिकेषन 2012
7. नवभारत प्रकाषन सितंबर 2018
8. Times of India जनवरी 2019
9. www.nbtindia.gov.in

Invitation and Guidelines for Contributors

Ad Valorem (Journal of Law), ISSN: 2348-5485 is a double blind peer reviewed Quarterly Journal. Its objective is to create a platform, where ideas, concepts and applications related to Legal Interest can be shared. Its focus is on pure and applied research on emerging issues in Law.

The articles are invited from Academicians, Practicing, Managers and Research Scholars.

Guidelines for Contributors

1. Manuscript should be submitted preferably through email or in duplicate and should not ordinary exceed 3000 words. These must be typed on one side of the page only, with double spacing and a margin of 1 inches on both sides.
2. Articles which are published should not be reproduced or reprinted in any from either in full or in part without the prior permission of the editor.
3. Wherever copyrighted material is used, the author(s) should be accurate in reproduction and obtain permission from the copyright holders if necessary.
4. Papers submitted or presented in a seminar must be clearly indicated at the bottom of the first page.

For Manuscript in English/ Hindi:-

5. Times New Roman Font10, Title 10 point Capital, Author Name 10 point, Text 10 point, Folio 1, reference are allowed and footnote shall be used.
6. Kruti Dev 012 font, Title 14 point black, Authors Name 12 point , text 12 point folio 1 point, , reference are allowed and footnote shall be used.
7. Notes and references are to be presented at Last page. Foot note should be each page.
8. The Article should be contain with Abstract of two hundred words and also include few keywords.
9. The format of references should be as follows:
   Book- C.N. Singh, *National Green Tribunal Act 2010: An Analysis*, 1st Ed. Vanketesh Prakashan Lanka, Varanasi (2013).
   Edited Work- V.N. Shukla, Constitution of India 135 (M.P.Singh ed., 2008)
   Article in Journal- C.N. Singh, *Right to Recall: Issues and Challenges*, International Research and Review Journal, vol.2, no, 4, Oct. - Dec. (2013)
   Online Article- Dr. Saurabh Sikka, "*Biomedical Waste in Indian Context*", Available at <http://www.environmental-expert.com/Files/0/articles/2078/2078.pdf
   Newspaper Articles- Kapil Sinha, *Contemporary India*, Time of India, January 25, 2012.
10. Present each figure and table on a separate sheet of paper. All figures and tables must be consecutively numbered using Arabic numerals with appropriate titles.
11. Book review must contain the name of the author and the book reviewed, place of publication and publisher, date of publication, number of pages and price.
12. The final Article/Research Paper of the submission should be submitted in Electronic form. Electronic copies of the submission should be mailed to advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com.
13. All manuscript should be addressed to :

The Editor in Chief
Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: *advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com*
Website: www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

To

The Editor in Chief
Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com***
Website: ***advalorem-journal-of-law.page.tl/home.htm***

Sir,

Subject: Assignment of Copyright

I/We,_____, author(s) of the article entitled _____
do hereby authorize you to publish the above said Article/Case Study/Book Review in ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We further state that:

1) The Article/Case Study/Book Review is my/our original contribution. It does not infringe on the rights of others and does not contain any libelous or unlawful statements.
2) Wherever required I/We have taken permission and acknowledged the source(s).
3) The work has been submitted only to this journal ***Ad Valorem (Journal of Law)*** and that it has not been previously published or submitted elsewhere for publication.

I/We hereby authorize, you to edit, alter, modify and make changes in the Article/Case Study/Book Review in the process of preparing the manuscript to make it suitable for publication.

I/We hereby assign the copyrights relating to the said Article/Case Study/Book Review to the ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We have not assigned any kind of rights of the above said Article/Case Study/Book Review to any other person/publications.

I/We agree to indemnify ***Ad Valorem (Journal of Law)***, against any claim or action alleging facts which, if true, constitute a breach of the foregoing warranties.

First author	**Second author**	**Third author**
Name:Chandra Nath Singh	Name:	Name
Signature	Signature:	Signature:

Statement about Ownership and Other Particulars

AD VALOREM *(Journal of Law)*

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

Title of Publication	:	AD VALOREM (Journal of Law)
Place of Publication	:	Varanasi
Periodicity of Publication	:	Quarterly
ISSN Number	:	2348-5485
Nationality	:	Indian
Copy Right/ Published	:	Since 2014
Editor in Chief	:	Chandra Nath Singh
Address	:	Law School, Banaras Hindu University, Varanasi, India
Office Address	:	N8/180, MR-4, Newada, Rajendra Vihar Colony, Sunderpur, Varanasi, Utter Pradesh, Pin-221005, India
Ownership	:	Chandra Nath Singh
Mobile Number	:	+919305292048, +919450248260
Email Address	:	advalorem86@gmail.com chandralaw@gmail.com
Website	:	www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

UGC JOURNAL DETAILS

Name of the Journal :	AD VALOREM (Journal of Law)
ISSN Number :	23485485
Source:	UGC
UGC Index/Journal Number	41336
Subject:	Law
Publisher:	Future Fact Society, Varanasi (UP)
Country of Publication:	India
Broad Subject Category:	Social Science
UGC Website/ Link	http://www.ugc.ac.in/journallist/subjectwisejurnallist.
Journal Website	www.advaloremjournaloflaw.Com

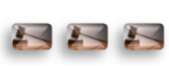

जनवरी-फरवरी - २०१९ ISSN : 2321-4945

द्विभाषी

राष्ट्रसेवक

अंतर्राष्ट्रीय द्विभाशी शोध पत्रिका

प्रकाशन

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहटी, रूपनगर, असम-७८१०३२

ISSN :-2321-4945

यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत (Journal No. – 41254)

राष्ट्रसेवक

अंतर्राष्ट्रीय द्विभाषिक शोध पत्रिका

संपादक
डॉ0 क्षीरदा कुमार शइकीया
श्रीमन्त शंकर अकेडमी
गुवाहटी, असम

Volume 15 No.-1 (Jan.-Feb.2019)

प्रकाशन
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहटी, रूपनगर, असम–781032

राष्ट्रसेवक

अंतर्राष्ट्रीय द्विभाषिक शोध पत्रिका

पता :
आर 30 ब्लॉक, रूपनगर
गुवाहटी, असम–781032

Copyrite@Publisher 2018

All rights reserved.
Although every care has been taken to avoid errors or omissions, this publication is being sold on the condition and understanding that information given in thisjournal is merely for reference and must not be taken as havingauthority of or binding in any way on the authors, editors, publishers and sellers who do not owe any responsibility for any damage or loss to any person, a purchaser of this publication or not, for the result ofany action taken on the basis of thiswork. All disputes are subject to Guwahati jurisdiction only.

© Publisher

ISSN : 2321-4945

मुद्रक :
एस.के. प्रिन्टर्स, आर.जी.बी. रोड, गुवाहटी, असम

विषय–सूचि

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	भारत–पाकिस्तान सम्बन्ध और कश्मीर में आतंकवाद *अरूण चौबे*	1-5
2.	"भारतीय राजनीति में जातियों की महत्ता एवं भूमिका का यथार्थ विश्लेषण" *डॉ. बबलु दास*	6-12
3.	वाजपेयी की विदेशनीति और भारत–चीन सम्बन्ध *रोहित कुमार*	13-20
4.	डॉ0 अम्बेडकर और डॉ0 लोहिया के राजनैतिक चिन्तन का विष्लेषणात्मक अध्ययन *भारती मुण्डा*	21-28
5.	सामरिक एवं राजनैतिक मुद्दों का समाजशस्त्रीय विश्लेषण एवं अध्ययन *डॉ. एल.पी. दिनकर*	29-37
6.	एम0 एन0 राय के राजनीतिक चिन्तन पर मार्क्सवाद का प्रभाव *डॉ0 मो0 महबुब आलम शाह*	38-45
7.	वंचित महिलाओं को *रोजगार* क्षमता में सुधार *प्रदीप कुमार राम*	46-53
8.	पं.दीनदयाल उपाध्याय के एकात्ममानवता वादीविचारो के प्रभाव का एक विश्लेषण (छ.ग के बस्तर जिले में नक्सली समस्या के उन्मूलन के संदर्भ में) *डॉ विजय लक्ष्मी*	54-59
9.	भारतीय लोकतंत्र में ग्रामीण महिला सहभागिता *डॉ0 शैलेश कुमार राम*	60-65
10.	बिहार के नालन्दा जिला का सामान्य फसल प्रारूप एवं कृषि प्रदेशः एक विश्लेषण (1991 से 2011 के सन्दर्भ में) *जूही कुमारी*	66-70
11.	जनसंख्या वृद्धि एवं वितरण प्रारूप *डॉ. प्रमोद कुमार महतो*	71-80
12.	व्यवसायपरक ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र *प्रमोद कुमार सिंह*	81-87
13.	गंगा और मछुआरा समुदाय *प्रियंका*	88-90
14.	प्राचीन भारत में धार्मिक व्यवस्था एवं सामाजिक, राजनीतिक स्थिति *डॉ. संगीता कुमारी*	91-96

पं.दीनदयाल उपाध्याय के एकात्ममानवता वादी विचारो के प्रभाव का एक विश्लेषण

(छ.ग के बस्तर जिले में नक्सली समस्या के उन्मूलन के संदर्भ में)

डॉ विजय लक्ष्मी*

सरांश :

प्रस्तुत अध्ययन पं.दीन दयाल उपाध्याय के एकात्ममानवता वादी विचारो के प्रभाव का एक राजनैतिक विष्लेषण (छ.ग के बस्तर जिले में नक्सली समस्या के उन्मूलन के संदर्भ में) प्रस्तावित है। वस्तुतः छ.ग.एक सुन्दर तथा रमणीय प्रदेष है यहॉ की वसुधा को प्रकृति ने मानो अपने हाथो से सींचा है धरती की इनती सुन्दर छत्र यहॉ देखते ही बनती है। 1 नवम्बर 2000 को म.प्र. से विभक्त होकर छ.ग अपने अस्तित्व में आई भरपूर प्राकृतिक संसाधन से रची बसी छ.ग. की मिट्टी यहॉ के निवासियों का जीवन एक माता की भांति सींचती और संवारती है वही नक्सलवाद एक ऐसी समस्या है जिसको समाधान का कोई एक ठोस रास्ता नही मिल पा रहा है ।

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी ने विचार धाराओं, और उनकी परिभाषाओं तथा समाज में इन आधार पर संघर्ष पैदा करने वाले विभाजनकारी चितंन का ना केवल खंडन किया बल्कि उनकी एक ही समिष्ट का चितंन करने वाले विचार ''एकात्म मानवतावाद'' का प्रतिपादन किया।

प्रस्तावना – एकात्ममानववाद के प्रणेता के रूप में पं. दीनदयाल उपाध्याय वर्तमान राजनीति के उन महापुरूषो में शामिल है उन्होने, आर्चाय चाणक्य, बृहस्पति तथा शुक्र की भांति आधुनिक राजनीतिक को

* देवांगन सहा.प्रा.राजनीति विज्ञान, देवी प्रसाद चौबे ,शासकीय विद्यालय, साजा,जिला–बेमेतरा (छ.ग.)

मूल विचार प्रदान करते हुए सुचि तथा शुद्धता के विस्तृत धरातल पर खड़ा करने की प्रेरणा देते है। व्यक्ति और समाज, स्वदेष और स्वधर्म,अर्थ और राजनीति, व्यक्ति तथा मूल्यों जैसे गूंढ़ विषयो पर पं. दीनदयाल उपाध्याय के अभूतपूर्व विचार केवल भारत ही नही अपितु समूचे विश्व राजनीति का मार्गदर्षन कर रहे है । पंडित जी का जन्म 25 सिंतम्बर सन् 1916 को मथुरा जिले के एक छोटे से गॉव नगला चंद्रभान में हुआ इनके पिता का नाम भगवती प्रसाद उपाध्याय था तथा माता रामप्यारी धार्मिक प्रवृति की थी, मात्र तीन वर्ष की अल्पायु में दीनदयाल पिता के प्रेम से वंचित हो गए, इसके पश्चात उनकी माता भी मात्र 07 वर्ष के दीनदयाल और उनके अनुज षिवदयाल को छोड़कर स्वर्ग सिधार गई इस कारण उनका बचपन ननिहाल मे बीता। उपाध्याय जी ने पिलानी, आगरा तथा प्रयाग से शिक्षा प्राप्त की। बी.एस.सी, बी.टी करने के पश्चात उन्होने नौकरी नही की बल्कि छात्र जीवन से ही राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ का कार्य जिसका श्री गणेष 1937 में हुआ,के सक्रिय कार्यकर्ता हो गए। कालेज छोड़ने के पश्चात वे राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ के प्रचारक बन गए तथा एकनिष्ठ भाव के दल के संगठन का कार्य करते रहे। सन् 1951 मे अखिल भारतीय जनसंघ का निर्माण होने पर उपाध्याय जी कानपुर अधिवेषन में उसके मंत्री नियुक्त किए गये तथा तीन वर्ष उपरांत सन् 1953 मे वे इसके महामंत्री निर्वाचित हुए वे लगभग 15 वर्ष तक इस पद पर बने रहे तथा दल के प्रति अमूल्य सेवा प्रदान की, दुर्भाग्य से जनसंघ के अध्यक्ष डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मृत्यु हो गई और भारत को राजनीति रूप से बदल देने की जिम्मेदारी पं. दीनदयाल जी के कन्धो पर आ गई। उन्होने इस कार्य को इतनी विषिष्टता पूर्वक किया कि 1967 के आम चुनाओ के परिणाम सामने आने लगे तो पूरा देष आष्चर्यचिकित हो गया तब उन्होने कहा की यह स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए 1947 मे ही हुए क्रांति के पश्चात दूसरी क्रांति है। कालीकट अधिवेषन में पं. दीनदयाल जी जनसंघ के अध्यक्ष निर्वाचित हो गए। वे एक महान नेता थे, वे "स्वदेषी" के बारे मे शोर तो नही मचाते थे परंतु वे कभी विदेषी वस्तु नही खरीदते थे। 11 फर. 1968 की रात रेलयात्रा के दौरान रहस्यमय परिस्थितियो मे उनकी हत्या कर दी गई, और संपूर्ण देष ने एक ऐसे दैवीयगुण सम्पन्न व्यक्ति को खो दिया जिसने महर्षि दधीचि की भांति देष की सेवा में अपनी हड्डियॉ तक लगा दी। वर्तमान समय में देष का प्रत्येक राज्य विभिन्न प्रकार के राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक

समस्याओं से जूझ रहा है ऐसे ही कई समस्याएं म.प्र से विभाजित नवगणित राज्य छ.ग की भी है यहाँ की 36 प्रतिषत जनसंख्या आदिवासियों की है इस कारण इसे आदिवासी राज्य भी कहा जाता है। राज्य के मूल निवासियों अर्थात भोले भाले आदिवासी जनो की विभिन्न समस्याएं आज भी ज्यों की त्यो बनी हुई है, अषिक्षा, बेरोजगारी, राजनैतिक प्रतिनिधित्व की कमी तथा आर्थिक असमानता जैसे कुछ प्रष्न है जो छ.ग के आदिवासियों के मध्य अभी तक बनी हुई है विभिन्न प्रयासों के पश्चात भी इन सभी समस्याओं से निजात पाने में हम से कही न कही चूक अवश्य हो रही है ऐसे में पं. दीनदयाल उपाध्याय द्वारा वर्णित एकात्म मानवतावादी दृष्टीकोण एक ऐसा महत्वपूर्ण सिधाँत प्रतीत होता है जो ना केवल सामाजिक स्तर पर वरन राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्था पर भी लागू करने योग्य है एकात्म मानवतावाद के अंतर्गत पं. दीन दयाल उपाध्याय जी ने न केवल भारत की राजनीति व आर्थिक परिर्वतन की चर्चा नही की अपितु संपूर्ण विष्व व्यस्था में व्यापक आधार पर परिवर्तन को अपना केन्द्र बनाया है।

सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि –

मनुष्य का भावनात्मक विकास बौद्धिक परिपवक्ता, मानवीय दृष्टीकोण, सुख संमृद्धि, प्रगति मौलिकता, आधात्मिकता इत्यादि विषेषताओं का समुचित पल्लवन समाज के अंतर्गत ही होता है। कोई भी व्यक्ति समाज से अलग रहकर अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम नही होता, उसे एक दूसरे से सहयोग करते हुए ही अपनी अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करना एक नैसर्गिक प्रक्रिया सी प्रतीत होती है। प्रत्येक समाज की आर्थिक संस्था समाज की मेरूदण्ड होती है। जो समाज आर्थिक रूप से जितना सुदृढ़ होगा वह उतना ही प्रगति होगा। जिस प्रकार समाज के विकास मे आर्थिक संस्थाओ का महत्वपूर्ण योगदान होता है उसी प्रकार सांस्कृतिक तत्व भी महत्वपूर्ण है संस्कृति ही व्यक्ति को संपूर्ण व्यक्तित्व प्रदान करता है जिसके आधार पर वह अपनी विभिन्न आवष्यकताओ की पूर्ति करता है टाइलर ने संस्कृत को परिभाषित करते हुए कहा है कि संस्कृत वह जटिल समग्रता है जिसमे परम्परा, जनरीति, लोकाचार, ज्ञान, कला, साहित्य, कानून आदि बातों का समावेष होता है जहाँ छ.ग की संस्कृति तथा विविधता अपनी अलग ही पहचान रखती है, हम देखते है कि सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि व्यक्तिगत विकास एवं मनोवृत्तियो का

निर्धारण व्यापक रूप से करते है व्यक्ति जिस सामाजिक आर्थिक स्तर से संबंधित रखता है उसे उसी प्रकार जीवन का अवसर प्राप्त होता है सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों में व्यक्ति प्रषिक्षण प्राप्त करता है वही उसकी शैक्षणिक उपलब्धि, मूल्य, आंकाक्षाओ के स्तर को प्रभावित करता है । छ. ग. की संस्कृति समुचे विष्व में एक अलग पहचान रखती है आदिवासी संस्कृति होने के कारण भोली प्रवृत्ति, सहेजता तथा सरलता यहॉ की मूल पहचान है।

पं.दीन दयाल उपाध्याय की एकात्म मानवतावादी विचार–

"हमारी राष्ट्रीयता का आधार भारत माता है, केवल भारत माता ही नही। माता शब्द हटा दीजिए तो भारत केवल जमीन का टुकडा मात्र बनकर रह जाएगा। "

पं. दीन दयाल उपाध्याय एकात्म मानववाद के इस वैचारिक दर्षन का प्रतिपादन पं. दीन दयाल उपाध्याय ने मुंबई में 22 से 25 अप्रैल 1965 में चार अध्यायो में दिए भाषण में किया। यह प्रस्ताव "59 पृष्ठो की पुस्तिका में प्रकाषित हुआ है जिस पर विजयवाडा प्रतिनिधि सभा ने अपनी मुहर लगाई" एकात्म मानवतावाद के नाम से वर्णित इसके 15 पृष्ठो में जनसंघ के कार्यक्रमों के पीछे दार्षनिक तार्किकता तथा औचित्य का प्रतिपादन है। 18 पृष्ठ आर्थिक नीतियो की रूपरेखा पर समर्पित है। जिसमे दीन दयाल जी कहते है "आर्थिक योजनाओं तथा आर्थिक प्रगति की माप समाज के ऊपर की सीढ़ी पर पहुँचे व्यक्ति से नही, बल्कि सबसे नीचे के स्तर पर विद्यमान व्यक्ति से होगा।"

भारतीय संस्कृति के साथ एकात्मकता पर जोर देते हुए एकात्म मानववाद के घोषणा पत्र में व्यक्ति और समाज के बीच संबंधो की व्याख्या करते हुए कहा गया कि पश्चिमी देशो की कई विचाधाराएं इस पूर्वधारणा पर टिकी हुई है कि व्यक्ति और समाज में संघर्ष संन्निहित है। फिर ये विचार धाराएँ किसी एक या दूसरे विचार के साथ खड़ी हो जाती है परंतु तथ्य यह है कि दोनो संस्थाओ के बीच कोई अंतर्निहित संधर्ष नही है। दृष्य सत्ता यानि व्यक्ति भी अदृष्य समाज का प्रतिनिधि है। इसी के द्वारा समाज अपना प्रगटीकरण करता है इस वैयक्तिकता को गढ़ने या इसके विध्वंस से समाज की प्रगति में अवरोध होगा।

वास्तव में एकात्म मानववाद एक विस्तृत अवधारणा है जो समाज तथा व्यक्ति के संबंधो की व्याख्या करता है इसके साथ ही साथ आर्थिक, सांस्कृतिक तथा व्यक्तिगत जीवन को एक निषिचित अर्थ प्रदान करता है पं.दीन दयाल उपाध्याय ने जी एकात्म मानव वाद को मूलतः सभी क्षेत्रों में उपयोगी बताया है। आर्थिक कार्यक्रमों को आवश्यक लक्ष्य बताते हुए पं. दीन दयाल उपाध्याय जी ने "भारतीय अर्थ नीति विकास की एक दिषा" में कहा– राष्ट्रीय सुरक्षा, पूर्ण रोजगार, न्यूनतम उपभोग की आश्वस्ति तथा विकेन्द्रीकरण हमारे आर्थिक कार्यक्रम के आधारभूत आवश्यक लक्ष्य हो सकते है।

बस्तर में आदिवासीयों की समस्या, नक्सलवाद तथा एकात्म मानववाद–

छ.ग एक आदिवासी बाहुल्य राज्य है। मूल निवासी होने के बाद भी आज तक आदिवासियों की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई जिसके अंतर्गत षिक्षा तथा रोजगार की कमी से आदिवासी जन लगातार जूझ रहे है आर्थिक विषमता को दूर करने का कोई ठोस माप दंड अभी तक लागू नही किया गया है। ऐसे मे जहॉ षिक्षित सभ्य तथा आर्थिक रूप से सम्पन्न एक अन्य वर्ग का विकास हो रहा है। वही दूसरी ओर साधन विहिन अशिक्षित तथा आर्थिक रूप से पिछड़ें लोगो के बीच की खाई लगातार बढ़ रही है अमीर और अमीर हो रहे है और पिछड़ें आदिवासी जन पिछड़ें पन से मुक्त नही हो पा रहें है। आर्थिक समानता के बिना राजनैतिक व सामाजिक समानता एक कोरी कल्पना मात्र है, पं. दीन दयाल उपाध्याय जी ने अप्रैल 1965 में "राष्ट्र जीवन के अनुकूल अर्थ" रचना पर अपना अभिभाषण दिया था जिसमें उन्होने कहा कि देष की आर्थिक व्यवस्था का उद्देश्य कुछ इस प्रकार होना चाहिए–

(1) प्रत्येक व्यक्ति को न्यूनतम जीवन स्तर की आश्वस्ति तथा राष्ट्र की सुरक्षा सामर्थ्य की व्यवस्था।

(2) इस स्तर के उपरांत उत्तरोत्तर समृद्धि जिससे व्यक्ति और राष्ट्र को व साधन उपलब्ध हो सके जिससे वे अपने चित के आधार पर विष्व की प्रगति में योगदान कर सकें।

(3) उपर्युक्त लक्ष्यों की सिद्धि के लिए प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति को रोजगार के अवसर हो तथा प्रकृति के साधनो का मितव्ययिता के साथ उपयोग करें।

(4) राष्ट्र के उत्पादको का विचार कर अनुकूल प्रौद्योगिकी का विकास करना।

(5) यह व्यवस्था मानव की अवहेलना ना कर उसके विकास में सहायक हो तथा समाज के सांस्कृतिक एवं अन्य जीवन मूल्यो की रक्षा करे। यह लक्ष्मण रेखा है जिसका अतिक्रमण किसी भी परिस्थिति मे ना करें।

(6) विभिन्न उद्योगो में राज्य व्यक्ति तथा अन्य संस्थाओं के स्वामित्व का निर्णय व्यावहारिक आधार पर हो।

उपर्युक्त उद्देष्यो को प्राप्त करने के लिए विकेन्द्रीकरण के आधार पर अर्ध रचना का सुझाव पं.दीन दयाल उपाध्याय जी ने दिया ताकि पंक्ति मे खड़ें सबसे हीनतम व्यक्ति का भी आर्थिक सामाजिक कल्याण हो सकें। जो लगातार पिछडेपन का षिकार हो रहे आदिवासी जन है उनका संर्वागिण विकास हो सकें। इसके साथ ही साथ जहॉ पिछड़ापन अषिक्षा व बेरोजगारी है वही नक्सलवाद एक ऐसी समस्या है जो आदीवासीयों की विकास की कमर तोड़ रही है इस कारण अध्ययन क्षेत्र में आम जनो को इन समस्याओं के निराकरण में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ–सूची :–

01. दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण बाड़मय पंद्रह खंडो में प्रभात प्रकाषन 2016
02. एकात्म मानवाद के प्रणेता दीन दयाल उपाध्याय, प्रभात प्रकाषन 2016
03. एम.आई.राजस्वी पं. दीन दयाल उपाध्याय, मनोज पब्लिकेषन 2013
04. संजय द्विवेदी भारतीयता का संचारक पं. दीनदयाल उपाध्याय बिजडम पब्लिकेषन 2015
05. वी.एन.देवधर pt.deendayal upadhyay ideology perception part 7 A profile सुरूचि प्रकाषन 2014
06. integral humanism pt.deendayal upadhayay हिन्दी साहित्य सदन 2014
07- The two plans pt.deendayal upadhyay प्रभात प्रकाषन 2015

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

(JIFE Impact Factor: 3.934, Approved by UGC Journal No. 41336)

Patron:
Hon'ble Justice K.D. Shahi
Retired Judge, Allahabad High Court, Allahabad

Professor B.C. Nirmal
Ex. Vice Chancellor of National University of Study & Research in Law, Ranchi
Former Head & Dean, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi

Editor in Chief:
Dr. Chandra Nath Singh
Assistant Professor, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
LL.B. (BHU), LL.M. (RMLNLU), Ph.D. (BHU), UGC-NET/JRF/SRF

Mode of Citation:
(Ad Valorem), Volume 6, Issue II, 2019, <Page No.>

VOLUME: 6 ISSUE: II PART-III APRIL –JUNE 2019

Published by:
Future Fact Society, Lanka, BHU, Varanasi (U.P.) India

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

ISSN: 2348-5485

@ Approved By UGC

Correspondence Address:

Editor in Chief:
Dr. Chandra Nath Singh
Ad Valorem *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com,***
chandralaw@gmail.com
Website: ***advaloremjournaloflaw.com***

Copyright /Published since 2014 @ Chandra Nath Singh ©2019

All rights reserved.

*No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, or stored in any retrieval system of any nature without prior permission. Application for permission for other use of copyright material including permission to reproduce extracts in other published works shall be made to publishers. Full acknowledgement of author, publishers and source must be given. The views expressed in the journal "**Ad Valorem"(Journal of Law)** are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. Although every care has been taken to avoid errors or omissions, this publication is being sold on the condition and understanding that information given in this journal is merely for reference and must not be taken as having authority of or binding in any way on the authors, editors, publishers and sellers who do not owe any responsibility for any damage or loss to any person, a purchaser of this publication or not, for the result of any action taken on the basis of this work.*
All disputes are subject to Varanasi jurisdiction only.

Managing Editor:
Brijendra Nath Singh

Printed and Binding by:
Baba Binding, Lanka, BHU, Varanasi-221005, Utter Pradesh, India.

EDITORIAL BOARD:

Prof. R.P. Rai, Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Sharma, Ex. Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. C.P. Upadhyay, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. G.S. Tiwari, Ex. Dean, School of Law, H.S. Gour University, Sagar, M.P
Prof. S.K. Gupta, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Sibaram Tripathi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Priti Saxena, Head, Legal Study of Human Rights, BBAU, Lucknow
Prof. S. K. Bhatnagar, Ex. Dean, Legal Study, BBAU, Lucknow
Prof. Tabrez Ahmad, Director, Legal Studies, U.P. E.S, Dehradun, Uttarakhand, India
Prof. Akhilesh Ranaut, Professor, UILS, Chandigarh University, Chandigarh
Prof. L.M. Singh, Faculty of Law, Allahabad University
Prof. B.Kumar, Director, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Prof. Jay Prakash Yadav, Dean, Jagran School of Law, Dehradun
Prof. Chai-Jui Cheng, Secretary-General of Academy of International Law.
Prof. David Tushaus, Missouri Wistern Criminal Justice, U. S.
Prof. Chia- Yin Hung, Dean, School of Law, Soochow University, Taipei
Prof. V.L. Mony, Ex. Dean, School of Law, VIBS, New Delhi
Prof. T.N. Prasad, Director, Law School, BBD University, Lucknow
Prof. Moin Athar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. Binu N., Government Law College, Thiruvananthapuram, Kerala
Dr. A.P. Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. G.P. Sahoo, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. R.K. Patel, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. N.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Pathak, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Raju Majhi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Saroj, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Adesh Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. M.K. Malviya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.P. Singh, Assistant Professor of Law, IIM Lucknow, Lucknow
Dr. K.S. Brijwal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Anil Kumar Maurya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Pradip Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Prabhat Saha, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. B. K. Das, Senior faculty, L. R. Law College, Sambalpur Odisha, India
Dr. Rajneesh Yadav, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. S. Kandasamy, Head, Law and Governance, Central University of Rajasthan
Dr. Abhishek Tiwari, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Rajasthan, Jaipur
Dr. Yogendra Singh, School of Law IFTM University, Moradabad, Uttar Pradesh

PANEL OF REFEREES:

Dr. B. K. Das, L.R.Law College, Sambalpur Odisha
Dr. Aparna Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow.
Dr. Rajeev Kumar Singh, Law School, Uttaranchal University, Dehradun
Dr. Anjali Agrawal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Sudhir Kumar, Assistant Professor, Faculty of Law, HNB Garhwal University, Utterakhand
Dr. S. D. Sharma, HOD, School of Law, NIMS University, Jaipur, Rajasthan
Dr. Surendra Singh, Officer, Charted Accountant of India, New Delhi
Dr. Amit Mehrotra, National Judicial Academy, Bhopal, M.P.
Dr. Shaiwal Satyarthi, Chankya National Law University, Patna
Dr. Sudhir Kumar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. Digvijay Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Deo Narayan Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Akilesh Kumar Pandey, Assistant Professor, West Bengal
Dr. Amandeep Singh, Assistant Professor, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. Pramod Kumar, Sant Kripal Singh Institutte of Law, Banda, UP
Dr. Prashant Srivastava, SRM University, Lucknow
DR. Vivek Kumar, Assistant Professor, Law College Dehradun
M/s. Bandna Shekhar, Assistant Professor, Manav Bharti University, Solan
M/s. Yasha Sharma, Assistant Professor, School of Law, UPES, Dehradun
Mr. Krishna Murari Yadav, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Delhi, Delhi
M/s. Shashya Mishra, Assistant Professor, Amity University, Lucknow
M/s. Sweta Chaturvedi, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Alok Kumar Yadav Faculty of Law, HNB Garhwal University
Mr. Anurag Agrawal, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Abhishek Rai, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Vishnu Dutt Sharma, District and Session Judge, Rajasthan
Mr. Indra Kumar Singh, Assistant Professor, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Mr. R. Bharat Kumar, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam
Ms. Soma Bhattacharyya, Assistant Professor, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam.
Mr. Abhiranjan Dixit, Assistant Professor, Law College Dehradun
Mr. Avishek Raj, Assistant Professor, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Mr. Vinay Kumar Pathak , Assistant Professor, Shri Rama Krishna College of Law, Satna, M.P.

EDITORIAL BOARD OF LEGAL RESEARCH SCHOLARS:

Mr. Amitabh Srivastava, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Anil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ajay Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Akash Ram, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ashutosh Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Amrendra Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Arvind Nath Tripathi, National Law University, Vishakhapattanam
Mr. Amit Kumar Maurya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Abhishek Kumar Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Babita Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
Mr. Eshfagholrahman Sabouri, Deprt. Of Mass Commu., BHU, Varanasi
Mr. Indresh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Kuldeep Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Lav Lesh Kumar, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Mojtaba Sadeghi Moghadam, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mani Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mukesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Munish Swaroop, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Pradeep Kumar Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Pratima Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Praveen Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Roksana Hassanshahi Varashti, Faculty of Law, BHU, Varanasi
Mr. R.V. Dhumal, Center for Law and Governance, JNU, New Delhi
Mr. Rohit Kumar, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Randhir Saroj, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ranjeet Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ramesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Raghvendra Kumar Chaudhary, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Shiv Kumar Sintu, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Sandeep Kumar, Institute of Management Studies, B.H.U., Varanasi
M/s. Shiva Pandey, Research Scholar, Faculty of law, B.H.U, Varanasi
Mr. Sunil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Smita Goswami, Amity Law School, Noida
Ms. Swati, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Suchi Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Upendra Sah, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vipin Bihari Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinod Kumar Chaursia, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinayak Kumar Chaursiya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vijay Bhan, Faculty of Law, Banaras Hindu University

From the Chief Editor

It is our pleasure to present the Volume 6, Issue II, Part-III, April-June, 2019 of ***Ad Valorem (Journal of Law) ISSN: 2348-5485.*** *The experience has been splendid and full of challenges. Our team faced all challenges with never-ending energy and attitude. It depicts boundless enthusiasm, emotions, imagination and of course talent of the young minds. We applaud this creative endeavor with fine contribution from academicians and Research Scholars for the success of the journal.*

Ad Valorem (Journal of Law) *is a blind two fold peer reviewed quarterly Journal. Accordingly, it brings to the readers only select articles of high standard and relevance. In a country governed by the rule of law, it is important that awareness about the research is created among those who are supposed to be concerned with these researches. Academicians can play a very important role in the development of the higher research, and there is need to encourage young minds to participate in development of research based on the needs of the changing society and technical advances. This Journal provides an excellent platform to all the academicians and Research Scholars to contribute to the development of sound Research for the country.*

We would like to express our gratitude to the Editorial Advisory Board and the Panel of Referees for their constant guidance and support. Appreciation is due to our valued contributors for their scholarly contributions to the Journal. We would also like to thank our Editorial members, whose valuable suggestions and continuous support to make this edition a success. We are also thankful to those who facilitated quality printing of this Journal.

We wish to encourage more contributions from academicians as well as Research Scholars to ensure a continued success of the journal.

We hope that this issue of ***Ad Valorem (Journal of Law)*** *will prove to be of interest to all the readers. We have tried to put together all the articles coherently. Suggestions from our valued readers for adding further value to our Journal are however, solicited.*

Thank you.

Editor in Chief
AD VALOREM *(Journal of Law)*

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM *(Journal of Law)*
An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal
Volume 6, Issue II, Part-III, April - June, 2019

CONTENTS

	EMERGING TRENDS OF HINDU MARRIAGE AND THEIR IMPACT **Hina Gupta & Dr. Yogendra Singh**	1-7
	TRAFFICKING OF SMALL ARMS AND LIGHT ARM WEAPONS AND ASSOCIATED PROBLEMS **Anirudh Singh**	8-10
	LEGALITY OF BENAMI TRANSACTION OF PROPERTY IN INDIA **Arif Ali**	11-15
	COPYRIGHT PROTECTION OF PERFORMERS IN INDIA **Deepika Dwivedi & Dr.Vivek Kumar**	16-19
	COLLECTIVE ROLE TOWARDS CHILD WITH SPECIAL REFERENCE TO C-SECTION DELIVERY : EMERGING LEGAL.. **Sudha Tripathi**	20-26
	A STUDY ON PSYCHOLOGICAL STRESS OF WORKING WOMENINPRAYAGRAJ CITY **Preeti Tripathi** & **Dr. Gyanesh Kumar Trivedi**	27-30
	RAPE VICTIMS IN THE INDIAN CRIMINAL JUSTICE SYSTEM: AN ANALYSIS **Neha Gupta**	31-34
	PRISONERS RIGHT IN INDIA **Chow Narotam Munglang**	35-39
	MARITAL RAPE **Kartik Sharma**	40-43
	CASE STUDY ON PRO BONO LEGAL AID ROGRAMME OF GUJARAT NATIONAL LAW UNIVERSITY, GANDHINAGAR **Dr. Kalpeshkumar L Gupta**	44-50
	GRANTING OF PATENT LAW UNDER PATENT LAW IN INDIA: A CRITICAL STUDY **Vaibhav Chaudhary**	51-56
	RIGHT TO EDUCATION: A JUDICIAL APPROACH **Prof. (Dr.) Acharya Rishi Ranjan**	57-60
	TRENDS OF DIGITALIZATION TOWARDS STRENGTHENING DEMOCRATIC PROCESS **Dr. Zafar Iqbal Zaidi**	61-64
	CADAVERIC ANATOMY OF '*NABHI MARMA'* **Tirth Raj & H H Awasthi**	65-68
	JUVENILE THE ASSEST OR THE LIABILITY OF THE NATION **Abhimanyu Sharma**	69-71
	मानव अधिकार और महिला अधिकार – एक अध्ययन **डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन**	72-78
	"ग्रामीण क्षेत्र में सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र में चलायी जा रही प्रमुख योजनाओं के प्रति ग्रामीणों के दृष्टिकोण का अध्ययन" (प्रयागराज जनपद के बहादुरपुर विकास खण्ड के विशिष्ट संदर्भ में) **पुष्पांजलि पाल & डॉ. ज्ञानेश कुमार त्रिवेदी**	79-83

मानव अधिकार और महिला अधिकार – एक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन*

सारांश :–

मानव अधिकार व्यक्ति के वे स्थूल अधिकार है जो उसके जीवन के विकास के लिए अति आवश्यक है। मानव इसके लिए निरंतर प्रयत्नशील रहा है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तर पर इसकी मांग होती रही, किंतु प्रथम विश्व युद्व के पश्चात् व्यापक नरसंहार से मानवता को गहरा आघात पहुँचा और वैश्विक स्तर पर इस बात की मांग उठी कि मानवता की रक्षा के लिए एक ऐसी संस्था की आवश्यकता है जो मानव मूल्यों को स्थापित करते हुए मानव की गरिमा को अक्षुण्य रख सकें। मानव अधिकार की सार्वभौमिक घोषणा के द्वारा मरती हुई मानवता को एक आधार मिला, किंतु जहां महिलाओं के अधिकारों का प्रश्न है वहां हम देखते हैं कि भारतीय संविधान में महिलाओं को समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई माना है तथा मौलिक अधिकारों, सामाजिक आर्थिक समानता, नागरिकता व व्यस्क मताधिकार के आधार पर पुरुषों के समकक्ष अधिकार प्रदान किए हैं फिर भी मानव अधिकार, प्राप्ति की दौड़ में सबसे पिछले पायदान पर है। महिलाओं को अपनी इच्छानुसार रहने नहीं दिया जाता, अनेक सामाजिक वर्जनाओं में वह फंसी हुई है। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक व्याख्या के फलस्वरुप निश्चित रुप से महिलाओं को भी अधिकार प्राप्त हुए हैं, किंतु अभी भी महिलाओं के जीवन स्तर को सुधारने हेतु अनेकों प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

की वर्ड :– मानव अधिकार, महिला अधिकार, संविधान, संयुक्त राष्ट्र, मानवता, सार्वभौमिक घोषणा, मौलिक अधिकार, सामाजिक आर्थिक समानता, महिला सशक्तिकरण, घोषणा पत्र

प्रस्तावना:–

मानव सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है वह चराचर के प्रत्येक जीवों में सबसे उच्चतम है, वह विकास की अगणित सिढ़ियाँ चढ सकता है, किंतु यदि उसे सही अवसर एवं अधिकार प्राप्त ना हो तो अपना उचित विकास नही कर सकता। वास्तव में मानव अधिकार किसी व्यक्ति को प्राप्त वे न्यूनतम अधिकार है जो व्यक्ति को आवश्यक रूप से प्राप्त होने चाहिए क्योंकि मानव की गरिमा के लिए आवश्यक है कि उसे अधिकार के रूप मे कुछ स्वतंत्रताएँ प्रदान की जानी चाहिए ताकि वह अपना शारीरिक, मानसिक तथा बौध्दिक व आत्मिक विकास कर सके, वास्तव में मानव अधिकारों की संकल्पना अति प्राचीन है, प्राकृतिक अधिकारों के रूप में अनेक विचारकों ने इसके पक्ष मे अपना मत रखा तथापि वहीं से ही मानव अधिकारों की अवधारणा का जन्म हुआ है। मानव अधिकारों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक व विशाल है विश्व में निर्मित विभिन्न विधियाँ, संस्कार, परंपराएँ एवं संविधान मानव अधिकारों को संरक्षित करने के लिए ही बनाए गए हैं। प्राचीन काल में वही राजा सर्वोत्तम शासक होता था जो प्रजा के हित तथा उनके अधिकारों का संरक्षण

* सहा.प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) पं. देवी प्रसाद चौबे शास. महाविद्यालय साजा जिला– बेमेतरा (छ.ग.)
मेल:–vijaylaxmi.vld@gmail.com

करे। आधुनिक लोकतांत्रिक, राज्यों में व्यक्ति समाज की अन्यतम इकाई है। व्यक्तियों से ही समाज का निर्माण होता है तथा सामाजिक नियमों का सचालन होता है तथा समाज के विस्तृत कल्याण हेतु समस्त व्यवस्थाओं का निर्माण किया गया। आधुनिक समाज में सामाजिक न्याय, समानता तथा व्यक्ति की गरिमा को स्थापित करने वाला संविधान है, जिसमें मानव अधिकारों को स्थापित करने की व्यवस्था की गई है। भारत के संविधान में कहा गया कि राज्य किसी भी नागरिक के विरूध्द धर्म, मूल, वंश, जाति, तथा लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद नही करेगा। द्वितीय विश्व युध्द की भयावहता के बाद वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने यह महसूस किया कि मानव के अधिकारों का संरक्षण सबसे अधिक महतत्वपूर्ण स्थान रखता है जिस दिशा मे ठोस कदम उठाते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर 1948 में मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को अंगीकार किया इसका अर्थ है इसका अनुसरण '' International Bill of Rights '' द्वारा होगा और जो पक्षकारों पर वंघ रूप से लागू होगा। वर्तमान समय में मानव अधिकारों के साथ साथ महिलाओं के अधिकारों का भी प्रश्न उठता है, ये संभव है कि महिलाओं के अधिकारों को और अधिक व्यापक व विस्तृत बनाए जाना आवश्यक है, क्योंकि मानव अधिकारों को तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त हो चुकी है किंतु महिला अधिकारों को कोई विशेष स्थान नही मिल पाया है, महिला वर्ग विभिन्न प्रयासों के माध्यम से अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही है किंतु उनकी संख्या नगण्य है जो समाज में खुद को स्थापित कर पाते है।

अध्ययन के उद्देश्यः–

1. मानव अधिकार का अध्ययन करना
2. मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा का अध्ययन करना
3. महिला सशक्तिकरण का अध्ययन करना
4. महिला सशक्तिकरण एंव मानव अधिकार में संबंधों का अध्ययन करना
5. महिला सशक्तिकरण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

मानव अधिकार :– किसी भी विकसित समाज की आधार शिला वहाँ पर निवास करने वाले नागरिकों को प्राप्त अधिकारों से होती है। जिस देश में प्रत्येक व्यक्ति को पर्याप्त अधिकार प्राप्त होता है तो वह देश सभ्य, सुसंस्कृत तथा विकसित माना जाएगा। मानव अधिकार किसी व्यक्ति को प्राप्त वे न्यूनतम अधिकार है जो मनुष्य के जीवन, उसके अस्तित्व और व्यक्तित्व विकास के लिए अनिवार्य है। मानव अधिकारों की अवधारणा अत्यंत प्राचीन है, भारतीय समाज में वैदीक काल से ही सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया व वसुदैव कुटुम्बकम के विचारो में मानव मात्र के कल्याण की भावना छुपी हुई है। आधुनिक युग में मानव अधिकारों की घोषणा का मूल आधार ब्रिटेन के सन् 1215 के मैग्नाकार्टा से मानी जाती है, मानव अधिकारों की घोषणा के पीछे अठारवीं शताब्दी की अमेरिकी स्वतत्रंता की घोषणा को मानी जा सकती है, जिसमें यह घोषणा की गई की सभी मनुष्य जन्म से समान हैं, वहीं संयुक्त राष्ट्र संघ की चार्टर में मानव अधिकार घोषणा पत्र की प्रस्तावना में कहा ''मानव के मौलिक अधिकारों मानव के व्यक्तित्व के गौरव तथा महत्व में तथा पुरूष एवं स्त्रियों के समान अधिकारों में'' विश्वास प्रकट किया गया है। इसके उद्देश्य का वर्णन करते हुए अनुच्छेद 1 में कहा गया कि ''मानव अधिकारों के प्रति सम्मान को बढावा देना जाति, लिंग, भाषा या धर्म के बिना भेदभाव के मूल अधिकारों को बढ़ावा देना तथा प्रोत्साहित करना।'' वैश्विक स्तर पर

मानव अधिकारो को संपूर्णित तथा पोषित करने के पीछे प्रथम व द्वितीय विश्व युद्व की भयावहता भी थी जिसके कारण पूरी मानवता कराह उठी और यह आवश्यकता महसूस की गई कि मानव मात्र के हित तथा मानव की गरिमा व मानवता की रक्षा हेतु विश्व के सभी राष्ट्र एकजुट होकर प्रयासरत हो एवं इस दिशा में उचित कदम उठाए जाए। मानव अधिकारों को प्रदान किए बिना कोई भी व्यक्ति अपना सामान्य विकास नही कर पाएगा। नागरिक जीवन के दो प्रमुख तत्व है एक अधिकार और दूसरा कर्तव्य। पूर्वी सभ्यताओं में राज्य और व्यक्ति के कर्तव्यों पर विस्तृत चर्चा की गई वही पश्चिमी सभ्यताओं में राज्य व व्यक्ति के अधिकारों को प्रमुखता से लिया गया। द्वितीय विश्व युध्द के बाद 1945 में सयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा पत्र के निर्माण हेतु जब सेनफ्रांसिसको में सम्मेलन हुआ तो सोवियत संघ के प्रतिनिधि मंडल की पहल पर घोषणा पत्र तैयार करने वालों ने मानवीय स्वतंत्रता तथा मूलभूत अधिकारों के सम्मान से संबधित प्रावधानों की आवश्यकताओं को स्वीकार किया।

महिला सशक्तिकरण :– महिला सशक्तिकरण एक व्यापक शब्द है जो सामाजिक, आर्थिक विकास, आधुनिकरण, शैक्षिणक विकास से संबधित है जो व्यवस्थित व निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। सामान्य अर्थ में महिला सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं को शक्ति सम्पन्न बनाना, उन्हे सोचने समझने तथा स्वयं के शारीरिक, मानसिक विकास करने योग्य बनाना, सामाजिक प्रतिष्ठा स्थापित करना व नारी की गरिमा व स्वंयं सिद्धा के भाव को जगाना है, ताकि वे अपने जीवन का सहज विकास कर सके, चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो अथवा राजनैतिक या आर्थिक सभी क्षेत्रों में निर्णय लेने की क्षमता का विकास ही महिला सशक्तिकरण है। महिला सशक्तिकरण का प्रारंभ 8 मार्च 1857 में अमेरिका के न्यूयार्क शहर के लोअर ईस्ट में हुआ। महिलाओं को समाज की मुख्य धारा से जोड़ना तथा उनके साथ सामंजस्य, समन्वय, सद्भाव और अधिकार प्रदान करना इसका मुख्य लक्ष्य है। एक स्वस्थ व स्वच्छ समाज का निर्माण स्त्री और पुरूष के आपसी सहयोग व सम्मान से होता है। गाड़ी के दो पहिये के समान जब दोनों पहिए मजबूत हों तभी समाज रूपी गाड़ी बेहतर कार्य कर सकती है किंतु सदियों से महिलाएँ सबल ना होकर अबला बन गई है तथा उन्हें पुनः अधिकार, सुरक्षा व सम्मान देकर सशक्त बनाना समाज की एक नैतिक जिम्मेदारी है। सशक्तिकरण के आर्थिक आयाम के अर्न्तगत *उनके* आर्थिक फैसलों, आय, सम्पत्ति और आर्थिक वस्तुओं की उपलब्धता से है जहॉ पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता हो, सामाजिक आधार पर स्त्री विरोधी पुरातन मान्यताओं का प्रतिकार कर उन्हें सम्मान दिलाना तथा समाज के महत्वपूर्ण और आवश्यक अंग के रुप में प्रतिष्ठित करना है।

महिला सशक्तिकरण व मानव अधिकार :– मानव अधिकार की सार्वभौमिक घोषणा यह स्पष्ट करती है कि समाज में स्त्री पुरूष एक समान है । वहीं भारतीय संविधान भी स्त्री पुरूष में किसी प्रकार का भेद नही करता तथा विभेद के बिना ही महिलाओं को समस्त अधिकारों की प्राप्ति का अधिकार है। न्यायालय के समक्ष स्त्री पुरूष एक समान है तथा महिलाओं की सुरक्षा संबंधी विभिन्न प्रावधान समय समय पर संविधान में लाए गए हैं एवं विभिन्न अधिनियम बनाए गए हैं। महिलाओं के पक्ष में हिन्दू विवाह अधिनियम, विधवा पुर्नविवाह, देहज प्रतिषेध अधिनियम, मातृत्व लाभ, समान वेतन का अधिकार, परिवार न्यायालय अधिनियम आदि अनेक प्रकार के कानून महिलाओं के अधिकारों की रक्षक है तथा उनकी शक्ति में वृध्दि करता है। 1946 में सर्वप्रथम ''महिलाओं की प्रस्थिति पर आयोग की स्थापना की गई। 1971 मे मेडिकल टर्मिनिशन ऑफ प्रेग्नेंसी मानवीयता और चिकित्सा के आधार पर पंजीकृत चिकित्सालय से गर्भपात का

अधिकार। समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, दहेज अधिनियम 1961 दहेज लेने व देने पर दण्ड का विधान। अपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के तहत बलात्कार पीडिता जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष अपना बयान दर्ज करा सकती है। दिसंबर 1986 को स्त्री अशिष्ट रूपण अधिनियम बनाया गया जिसकी धारा–3 के अनुसार कोई भी व्यक्ति ऐसे विज्ञापन को प्रदर्शित नहीं कर सकता जिसमें महिला का अश्लील रूपण हो रहा है, व अपराधिक कानून अधिनियम के तहत धारा 354 के अन्तर्गत कोई भी व्यक्ति महिला की निजी तस्वीरें महिला के बिना अनुमति नहीं खींची जा सकती। हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम 1556 की धारा 18 महिलाओं के लिए भरण पोषण प्रदान करती है। भारतीय संविधान में विभिन्न धाराओं व अधिनियमों के माध्यम से महिला सुरक्षा व सशक्तिकरण करने का यथोचित प्रयास किया गया है। आर्थिक और सामाजिक परिषद द्वारा 1946 में स्त्री प्रास्थिति आयोग की स्थापना की गई। वर्तमान में इस आयोग में 45 सदस्य है यह आयोग आर्थिक और सामाजिक परिषद को स्त्रियों के अधिकारों के क्षेत्र में आने वाली समस्याओं के संर्दभ में परिषद को सूचना देती है। आयोग के प्रमुख कार्य सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा शैक्षिक क्षेत्रों में स्त्रियों के अधिकारों की उन्नति के विषय में आर्थिक और सामाजिक परिषद को रिपोर्ट प्रस्तुत करना है।

भारतीय संविधान में मानव अधिकारों के माध्यम से महिला अधिकारों में वृध्दि हुई है, एवं महिलाओं की स्थिति में खासा सुधार भी आया है। वर्तमान समय में निश्चित रूप से महिलाओं की स्थिति मजबूत हुई है, किंतु अभी की महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता का अभाव पाया जाता है, तथा पुरूष समाज पर उनकी सामाजिक, आर्थिक, मानसिक, राजनैतिक, निर्भरता है इसके लिए आवश्यक है कि महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक कराया जाए तभी उनका सर्वांगीण विकास होगा।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा :–

संयुक्त राष्ट्रसंघ के चार्टर में मानव अधिकारों के आदर्शों को स्वीकार करने के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र के ''मानव अधिकार आयोग'' को मानव अधिकारों के मूलभूत सिध्दांतो का मसविदा तैयार करने का कार्य सौंपा गया। 10 दिंसम्बर 1948 को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया। घोषणा पत्र में प्रस्तावना सहित 30 अनुच्छेद है। इस घोषणापत्र में न केवल नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों का बल्कि सामाजिक–आर्थिक अधिकारों का भी प्रतिपादन किया गया।

30 अनुच्छेदों वाला यह घोषणा पत्र इस प्रकार हैः–

अनुच्छेद 1. सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र है और मर्यादा में समान है। उन्हें एक–दूसरे के साथ भ्रातृभावयुक्त व्यवहार रखना चाहिए।

अनुच्छेद 2. जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा सामाजिक उत्पति, जन्म अथवा किसी दूसरे प्रकार के भेदभाव नही किया जाएगा।

अनुच्छेद 3. प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वाधीनता और सुरक्षा का अधिकार है।

अनुच्छेद 4. दासता और दास व्यवहार सभी क्षेत्रो में सर्वथा निर्षिध्द होगा।

अनुच्छेद 5. किसी व्यक्ति को क्रूर या अमानुषिक दण्ड नहीं दिया जाएगा।

अनुच्छेद 6. प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार होगा कि वह सर्वत्र कानून के अधीन व्यक्ति माना जाए।

अनुच्छेद 7. कानून के सामने सभी समान हैं और किसी भेदभाव के बिना कानून की सुरक्षा के अधिकारी हैं।

अनुच्छेद 8. प्रत्येक व्यक्ति को संविधान या कानून द्वारा प्राप्त मौलिक अधिकारों को भंग करने वाले कार्यों के विपरीत राष्ट्रीय न्यायालयों के समक्ष संरक्षण पाने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 9. किसी व्यक्ति की अविहीत गिरफ्तारी, कैद अथवा निष्कासन न हो सकेगा।

अनुच्छेद 10. प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायालय द्वारा अपने अधिकारों और कर्तव्यों के तथा अपने विरूध्द आरोपित किसी अपराध के निर्णय के लिए उचित और खुले आम तरीके से सुने जाने का पूर्णतः समान अधिकार है।

अनुच्छेद 11. (अ)प्रत्येक व्यक्ति जिस पर दण्डनीय अपराध का आरोप है, तब तक निर्दोष समझा जाएगा जब तक अपराधी सिध्द नहीं किया जाता । अपराध के बाद बने हुए कानून के अलावा किसी व्यक्ति को दण्डित नहीं किया जा सकता।

अनुच्छेद 12. कौटुम्बिक, गार्हस्थिक और पत्र व्यवहार की गोपनीयता में मनमाना दखल नहीं दिया जाएगा।

अनुच्छेद 13. अपने राज्य की सीमा के भीतर आवागमन और निवास की स्वतंत्रता का अधिकार होगा। प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी देश सम्मिलित है, छोडने का अधिकार है और अपने देश मे लौट जाने का अधिकार है।

अनुच्छेद 14. प्रतारणा से बचने के लिए किसी भी देश में आश्रय लेने का अधिकार है।

अनुच्छेद 15. व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार है। राष्ट्रीयता से मनमाने ढंग से वंचित नहीं किया जा सकेगा।

अनुच्छेद 16. वयस्क अवस्था वाले पुरूष और स्त्री को जाति, राष्ट्रीयता अथवा धर्म की सीमा के बिना विवाह करने व वैवाहिक सम्बंध विच्छेद के समान अधिकार प्राप्त है।

अनुच्छेद 17. प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अथवा दूसरों के साथ सम्पति रखने का अधिकार है।

अनुच्छेद 18. प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अनुभूति तथा धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है।

अनुच्छेद 19. प्रत्येक व्यक्ति को मत और विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता प्राप्त है।

अनुच्छेद 20. प्रत्येक व्यक्ति को शान्तिपूर्ण ढंग से एकत्रित होने और सभा करने की स्वंतत्रता है।

अनुच्छेद 21. प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के प्रशासन में स्वतंत्रतापूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा भाग लेने का अधिकार है।

अनुच्छेद 22. प्रत्येक व्यक्ति समाज का सदस्य होने के नाते, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार रखता है।

अनुच्छेद 23. काम करने, जीविका के लिए पेशा चुनने, काम की उचित एंव अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त करने और बेकारी से सुरक्षित रहने का अधिकार है। समान काम के लिए समान वेतन पाने का अधिकार है।

अनुच्छेद 24. प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और अवकाश का अधिकार है। सवेतन छुट्टियों का अधिकार है।

अनुच्छेद 25. 1. प्रत्येक व्यक्ति को भोजन, वस्त्र, निवास, स्थान, चिकित्सा की सुविधा तथा आवश्यक समाज सेवाओं की उपलब्धि और बेकारी, बीमारी, शारीरिक असमर्थता, वैधव्य, वृध्दावस्था या काबू के बाहर परिस्थितियों के कारण जीविका के साथ–साथ, का हास सम्मिलित है। 2. प्रत्येक

माता तथा शिशु के मातृत्व और शिशु की विशेष देखभाल और सहायता प्राप्त करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 26. प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है। माता–पिता को अपनी सन्तान के लिए शिक्षा के प्रकार चुनने का अधिकार है।

अनुच्छेद 27. प्रत्येक व्यक्ति को समाज के सांस्कृतिक जीवन में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेने व कलाओं का आनन्द लेने और वैधानिक विकास से लाभान्वित होने का अधिकार है।

अनुच्छेद 28. प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक और अर्न्तराष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकारी है।

अनुच्छेद 29. समाज के प्रति कुछ ऐसे कर्तव्य हैं, जिनसे उसके व्यक्तित्व का स्वंतत्र एवं पूर्ण विकास सम्भव है। अपने अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं का उपभोग करने में प्रत्येक व्यक्ति को उन सीमाओं के भीतर रहना होगा।

अनुच्छेद 30. घोषणा पत्र में दिए गए किसी भी आदेश के ऐसे अर्थ न लगाए जाएं जिससे किसी राज्य को समूह अथवा व्यक्ति की किसी भी ऐसे काम में लगाने या करने का अधिकार मिले जिसका इस घोषणा पत्र में वर्णित अधिकारों और स्वंतत्रताओं में से किसी को नष्ट करने का उद्देश्य हो।

सुझावः–

वास्तव में मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के कारण कराहती हुई मानवता को कुछ राहत अवश्य मिली है तथा मानव जीवन मूल्यों की पुर्नस्थापना हुई है।

1. महिलाओं को सर्वप्रथम शिक्षित करना होगा ताकि वे मानव व महिला अधिकारों की प्राप्त कर सके।
2. महिलाओं को आर्थिक रूप से निर्भर बनाना होगा।
3. सामाजिक जागरूकता के अन्तर्गत महिलाओं में स्वंय के प्रति सम्मान की भावना का विकास करना होगा।
4. पुरूष प्रधान समस्याओं का निपटारा करना होगा एवं महिलाओं के प्रति पुरूषों की सोच को बदलना होगा।
5. राजनैतिक रूप से सशक्त निर्णय लेने हेतु पर्याप्त प्रशिक्षण की आवश्यकता है।
6. महिलाओं के प्रति जागरूकता हेतु सोशल मीडिया का उपयोग किया जाए, नाटक, संगोष्ठी का आयोजन किया जाए।
7. मानव अधिकारों एव महिला अधिकारों के विषयवस्तु को शैक्षणिक पाठ्यक्रम में जोड़ा जाए।

निष्कर्ष :– किसी भी राष्ट्र का सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब देश की आधी आबादी अर्थात् महिलाएं शिक्षित, जागरूक तथा अपने अधिकारों के प्रति सजग हो। मानव अधिकार के माध्यम से महिलाओं को जो अधिकार प्राप्त हुए हैं, इससे उनकी स्थिति में अवश्य ही सुधार हुआ है। मानव अधिकारों की विश्व प्यापी घोषणा से मानव तथा मानवता के प्रति व्यापक दृष्टिकोण का प्रसार हुआ तथा मानव मात्र की गरिमा स्थापित हुई वहीं महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण में भी समाज में बदलाव आधा मानव अधिकार के अन्तर्गत महिला अधिकारों को प्रतिष्ठा मिली है, तथा महिला सशक्तिकरण का विकास और विस्तार हुआ है,

महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आया है तथा विश्व में महिला अधिकार व महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण में भी व्यापकता आई है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

- *सुंदरम डॉ. जे. श्याम,* अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं लोक प्रशासन, राम प्रसाद एन्ड सन्स पृ 131
- फडिया *डॉ. बी. एल., अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, साहित्य भवन पब्लिकेशन ,* पृ *175, 176*
- *मोदी एम. पी., ख़त्री हरीश कुमार, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, कैलाश पुस्तक सदन,* पृ *153*
- *अंसारी एम. ए. महिला एवं मानवाधिकार, 2000 ज्योति प्रकाशन, जयपुर*
- *सिंह राजबाला, मानवाधिकार एवं महिलाएँ, 2006 अविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर*
- *मेल्लल्ली प्रवीण कुमार, भारत का संविधान वृत्तिक आचारनीति और मानव अधिकार सेज भाषा पब्लिकेशन 2017*
- *अग्रवाल डॉ.एच.ओ., मानव अधिकार इडी. 6,सेन्टल लॉ पब्लिकेशन 2016*

Invitation and Guidelines for Contributors

Ad Valorem (Journal of Law), ISSN: 2348-5485 is a double blind peer reviewed Quarterly Journal. Its objective is to create a platform, where ideas, concepts and applications related to Legal Interest can be shared. Its focus is on pure and applied research on emerging issues in Law.

The articles are invited from Academicians, Practicing, Managers and Research Scholars.

Guidelines for Contributors

1. Manuscript should be submitted preferably through email or in duplicate and should not ordinary exceed 3000 words. These must be typed on one side of the page only, with double spacing and a margin of 1 inches on both sides.
2. Articles which are published should not be reproduced or reprinted in any from either in full or in part without the prior permission of the editor.
3. Wherever copyrighted material is used, the author(s) should be accurate in reproduction and obtain permission from the copyright holders if necessary.
4. Papers submitted or presented in a seminar must be clearly indicated at the bottom of the first page.

For Manuscript in English/ Hindi:-

5. Times New Roman Font10, Title 10 point Capital, Author Name 10 point, Text 10 point, Folio 1, reference are allowed and footnote shall be used.
6. Kruti Dev 012 font, Title 14 point black, Authors Name 12 point , text 12 point folio 1 point, , reference are allowed and footnote shall be used.
7. Notes and references are to be presented at Last page. Foot note should be each page.
8. The Article should be contain with Abstract of two hundred words and also include few keywords.
9. The format of references should be as follows:
   Book- C.N. Singh, *National Green Tribunal Act 2010: An Analysis*, 1st Ed. Vanketesh Prakashan Lanka, Varanasi (2013).
   Edited Work- V.N. Shukla, Constitution of India 135 (M.P.Singh ed., 2008)
   Article in Journal- C.N. Singh, *Right to Recall: Issues and Challenges*, International Research and Review Journal, vol.2, no, 4, Oct. - Dec. (2013)
   Online Article- Dr. Saurabh Sikka, "*Biomedical Waste in Indian Context*", Available at <http://www.environmental-expert.com/Files/0/articles/2078/2078.pdf
   Newspaper Articles- Kapil Sinha, *Contemporary India*, Time of India, January 25, 2012.
10. Present each figure and table on a separate sheet of paper. All figures and tables must be consecutively numbered using Arabic numerals with appropriate titles.
11. Book review must contain the name of the author and the book reviewed, place of publication and publisher, date of publication, number of pages and price.
12. The final Article/Research Paper of the submission should be submitted in Electronic form. Electronic copies of the submission should be mailed to advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com.
13. All manuscript should be addressed to :

The Editor in Chief
Dr. Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: *advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com*
Website: www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

To

The Editor in Chief
Dr. Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com***
Website: ***advalorem-journal-of-law.page.tl/home.htm***

Sir,

Subject: Assignment of Copyright

I/We,_____, author(s) of the article entitled _____
do hereby authorize you to publish the above said Article/Case Study/Book Review in ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We further state that:

1) The Article/Case Study/Book Review is my/our original contribution. It does not infringe on the rights of others and does not contain any libelous or unlawful statements.
2) Wherever required I/We have taken permission and acknowledged the source(s).
3) The work has been submitted only to this journal ***Ad Valorem (Journal of Law)*** and that it has not been previously published or submitted elsewhere for publication.

I/We hereby authorize, you to edit, alter, modify and make changes in the Article/Case Study/Book Review in the process of preparing the manuscript to make it suitable for publication.

I/We hereby assign the copyrights relating to the said Article/Case Study/Book Review to the ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We have not assigned any kind of rights of the above said Article/Case Study/Book Review to any other person/publications.

I/We agree to indemnify ***Ad Valorem (Journal of Law)***, against any claim or action alleging facts which, if true, constitute a breach of the foregoing warranties.

First author	**Second author**	**Third author**
Name:Chandra Nath Singh	Name:	Name
Signature	Signature:	Signature:

Statement about Ownership and Other Particulars

AD VALOREM *(Journal of Law)*

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

Title of Publication	:	AD VALOREM (Journal of Law)
Place of Publication	:	Varanasi
Periodicity of Publication	:	Quarterly
ISSN Number	:	2348-5485
Nationality	:	Indian
Copy Right/ Published	:	Since 2014
Editor in Chief	:	Dr. Chandra Nath Singh
Address	:	Law School, Banaras Hindu University, Varanasi, India
Office Address	:	N8/180, MR-4, Newada, Rajendra Vihar Colony, Sunderpur, Varanasi, Utter Pradesh, Pin-221005, India
Ownership	:	Chandra Nath Singh
Mobile Number	:	+919305292048, +919450248260
Email Address	:	advalorem86@gmail.com chandralaw@gmail.com
Website	:	www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

UGC JOURNAL DETAILS

Name of the Journal :	AD VALOREM (Journal of Law)
ISSN Number :	23485485
Source:	UGC
UGC Index/Journal Number	41336
Subject:	Law
Publisher:	Future Fact Society, Varanasi (UP)
Country of Publication:	India
Broad Subject Category:	Social Science
UGC Website/ Link	http://www.ugc.ac.in/journallist/subjectwisejurnallist.
Journal Website	www.advaloremjournaloflaw.Com
Impact Factor:	3.934

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

(JIFE Impact Factor: 3.934, Approved by UGC Journal No. 41336)

Patron:
Hon'ble Justice K.D. Shahi
Retired Judge, Allahabad High Court, Allahabad

Professor B.C. Nirmal
Ex. Vice Chancellor of National University of Study & Research in Law, Ranchi
Former Head & Dean, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi

Editor in Chief:
Dr. Chandra Nath Singh
Assistant Professor, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
LL.B. (BHU), LL.M. (RMLNLU), Ph.D. (BHU), UGC-NET/JRF/SRF

Mode of Citation:
(Ad Valorem), Volume 6, Issue I, 2019, <Page No.>

VOLUME: 6 ISSUE: I PART-IV JANUARY –MARCH 2019

Published by:
Future Fact Society, Lanka, BHU, Varanasi (U.P.) India

AD VALOREM

Journal of Law

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

ISSN: 2348-5485

@ Approved By UGC

Correspondence Address:

Editor in Chief:
Dr. Chandra Nath Singh
Ad Valorem *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com,***
chandralaw@gmail.com
Website: ***advaloremjournaloflaw.com***

Copyright /Published since 2014 @ Chandra Nath Singh ©2019

All rights reserved.

*No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, or stored in any retrieval system of any nature without prior permission. Application for permission for other use of copyright material including permission to reproduce extracts in other published works shall be made to publishers. Full acknowledgement of author, publishers and source must be given. The views expressed in the journal "**Ad Valorem"(Journal of Law)** are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. Although every care has been taken to avoid errors or omissions, this publication is being sold on the condition and understanding that information given in this journal is merely for reference and must not be taken as having authority of or binding in any way on the authors, editors, publishers and sellers who do not owe any responsibility for any damage or loss to any person, a purchaser of this publication or not, for the result of any action taken on the basis of this work.*
All disputes are subject to Varanasi jurisdiction only.

Managing Editor:
Brijendra Nath Singh

Printed and Binding by:
Baba Binding, Lanka, BHU, Varanasi-221005, Utter Pradesh, India.

EDITORIAL BOARD:

Prof. R.P. Rai, Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Sharma, Ex. Head & Dean, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. C.P. Upadhyay, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. G.S. Tiwari, Ex. Dean, School of Law, H.S. Gour University, Sagar, M.P
Prof. S.K. Gupta, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. D.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Sibaram Tripathi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Prof. Priti Saxena, Head, Legal Study of Human Rights, BBAU, Lucknow
Prof. S. K. Bhatnagar, Ex. Dean, Legal Study, BBAU, Lucknow
Prof. Tabrez Ahmad, Director, Legal Studies, U.P. E.S, Dehradun, Uttarakhand, India
Prof. Akhilesh Ranaut, Professor, UILS, Chandigarh University, Chandigarh
Prof. L.M. Singh, Faculty of Law, Allahabad University
Prof. B.Kumar, Director, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Prof. Jay Prakash Yadav, Dean, Jagran School of Law, Dehradun
Prof. Chai-Jui Cheng, Secretary-General of Academy of International Law.
Prof. David Tushaus, Missouri Wistern Criminal Justice, U. S.
Prof. Chia- Yin Hung, Dean, School of Law, Soochow University, Taipei
Prof. V.L. Mony, Ex. Dean, School of Law, VIBS, New Delhi
Prof. T.N. Prasad, Director, Law School, BBD University, Lucknow
Prof. Moin Athar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. Binu N., Government Law College, Thiruvananthapuram, Kerala
Dr. A.P. Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. G.P. Sahoo, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. R.K. Patel, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. N.K. Mishra, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Pathak, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Raju Majhi, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.K. Saroj, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Adesh Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. M.K. Malviya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. V.P. Singh, Assistant Professor of Law, IIM Lucknow, Lucknow
Dr. K.S. Brijwal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Anil Kumar Maurya, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Pradip Kumar, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Prabhat Saha, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. B. K. Das, Senior faculty, L. R. Law College, Sambalpur Odisha, India
Dr. Rajneesh Yadav, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. S. Kandasamy, Head, Law and Governance, Central University of Rajasthan
Dr. Abhishek Tiwari, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Rajasthan, Jaipur
Dr. Yogendra Singh, School of Law IFTM University, Moradabad, Uttar Pradesh

PANEL OF REFEREES:

Dr. B. K. Das, L.R.Law College, Sambalpur Odisha
Dr. Aparna Singh, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow.
Dr. Rajeev Kumar Singh, Law School, Uttaranchal University, Dehradun
Dr. Anjali Agrawal, Law School, Banaras Hindu University, Varanasi
Dr. Sudhir Kumar, Assistant Professor, Faculty of Law, HNB Garhwal University, Utterakhand
Dr. S. D. Sharma, HOD, School of Law, NIMS University, Jaipur, Rajasthan
Dr. Surendra Singh, Officer, Charted Accountant of India, New Delhi
Dr. Amit Mehrotra, National Judicial Academy, Bhopal, M.P.
Dr. Shaiwal Satyarthi, Chankya National Law University, Patna
Dr. Sudhir Kumar, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Dr. Digvijay Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Deo Narayan Singh, Assistant Professor, Central University Gaya, Bihar
Dr. Akilesh Kumar Pandey, Assistant Professor, West Bengal
Dr. Amandeep Singh, Assistant Professor, RML National Law University, (RML NLU), Lucknow
Dr. Pramod Kumar, Sant Kripal Singh Institutte of Law, Banda, UP
Dr. Prashant Srivastava, SRM University, Lucknow
DR. Vivek Kumar, Assistant Professor, Law College Dehradun
M/s. Bandna Shekhar, Assistant Professor, Manav Bharti University, Solan
M/s. Yasha Sharma, Assistant Professor, School of Law, UPES, Dehradun
Mr. Krishna Murari Yadav, Assistant Professor, Faculty of Law, University of Delhi, Delhi
M/s. Shashya Mishra, Assistant Professor, Amity University, Lucknow
M/s. Sweta Chaturvedi, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Alok Kumar Yadav Faculty of Law, HNB Garhwal University
Mr. Anurag Agrawal, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Abhishek Rai, Assistant Professor, Law School, BHU, Varanasi
Mr. Vishnu Dutt Sharma, District and Session Judge, Rajasthan
Mr. Indra Kumar Singh, Assistant Professor, Institute of Legal Studies, SRMU, Lucknow
Mr. R. Bharat Kumar, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam
Ms. Soma Bhattacharyya, Assistant Professor, National Law University (DSNLU), Visakhapatnam.
Mr. Abhiranjan Dixit, Assistant Professor, Law College Dehradun
Mr. Avishek Raj, Assistant Professor, Faculty of Law, ICFAI University, Dehradun
Mr. Vinay Kumar Pathak , Assistant Professor, Shri Rama Krishna College of Law, Satna, M.P.

EDITORIAL BOARD OF LEGAL RESEARCH SCHOLARS:

Mr. Amitabh Srivastava, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Anil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ajay Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Akash Ram, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ashutosh Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Amrendra Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Arvind Nath Tripathi, National Law University, Vishakhapattanam
Mr. Amit Kumar Maurya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Abhishek Kumar Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Babita Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi
Mr. Eshfagholrahman Sabouri, Deprt. Of Mass Commu., BHU, Varanasi
Mr. Indresh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Kuldeep Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Lav Lesh Kumar, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Mojtaba Sadeghi Moghadam, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mani Pratap Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Mukesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Munish Swaroop, School for Legal Studies, BBAU Lucknow
Mr. Pradeep Kumar Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Pratima Giri, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Praveen Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
M/s. Roksana Hassanshahi Varashti, Faculty of Law, BHU, Varanasi
Mr. R.V. Dhumal, Center for Law and Governance, JNU, New Delhi
Mr. Rohit Kumar, NLSIU, Bangalore, Karnataka
Mr. Randhir Saroj, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ranjeet Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Ramesh Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Raghvendra Kumar Chaudhary, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Shiv Kumar Sintu, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Sandeep Kumar, Institute of Management Studies, B.H.U., Varanasi
M/s. Shiva Pandey, Research Scholar, Faculty of law, B.H.U, Varanasi
Mr. Sunil Kumar, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Smita Goswami, Amity Law School, Noida
Ms. Swati, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Ms. Suchi Singh, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Upendra Sah, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vipin Bihari Yadav, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinod Kumar Chaursia, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vinayak Kumar Chaursiya, Faculty of Law, Banaras Hindu University
Mr. Vijay Bhan, Faculty of Law, Banaras Hindu University

From the Chief Editor

It is our pleasure to present the Volume 6, Issue I, Part-IV, January-March, 2019 of ***Ad Valorem (Journal of Law) ISSN: 2348-5485.*** *The experience has been splendid and full of challenges. Our team faced all challenges with never-ending energy and attitude. It depicts boundless enthusiasm, emotions, imagination and of course talent of the young minds. We applaud this creative endeavor with fine contribution from academicians and Research Scholars for the success of the journal.*

Ad Valorem (Journal of Law) *is a blind two fold peer reviewed quarterly Journal. Accordingly, it brings to the readers only select articles of high standard and relevance. In a country governed by the rule of law, it is important that awareness about the research is created among those who are supposed to be concerned with these researches. Academicians can play a very important role in the development of the higher research, and there is need to encourage young minds to participate in development of research based on the needs of the changing society and technical advances. This Journal provides an excellent platform to all the academicians and Research Scholars to contribute to the development of sound Research for the country.*

We would like to express our gratitude to the Editorial Advisory Board and the Panel of Referees for their constant guidance and support. Appreciation is due to our valued contributors for their scholarly contributions to the Journal. We would also like to thank our Editorial members, whose valuable suggestions and continuous support to make this edition a success. We are also thankful to those who facilitated quality printing of this Journal.

We wish to encourage more contributions from academicians as well as Research Scholars to ensure a continued success of the journal.

We hope that this issue of ***Ad Valorem (Journal of Law)*** *will prove to be of interest to all the readers. We have tried to put together all the articles coherently. Suggestions from our valued readers for adding further value to our Journal are however, solicited.*

Thank you.

Editor in Chief

AD VALOREM *(Journal of Law)*

ISSN: 2348-5485

AD VALOREM *(Journal of Law)*
An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal
Volume 6, Issue I, Part-IV, January-March, 2019

CONTENTS

	RIGHT TO EDUCATION AND PROTECTION OF INTERESTS OF .. **Dr. Anshuman Mishra**	1-4
	EQUALITY BEFORE LAW IN INDIA: A CRITICAL ANALYSIS **Vipin Kumar Singh**	5-6
	RIGHT TO PRIVACY AND DATA PROTECTION REGIME IN INDIA: **Pinky Verma**	7-11
	IMPACT OF CLIMATE CHANGE IN AGRICULTURE: NEED OF **Rahul Prakash**	12-15
	INDIAN JUDICIAL APPROACHOVER ENVIRONMENTAL LAW **Gaurav Kumar**	16-21
	CITIZENSHIP (AMENDMENT) BILL, 2016: ISSUES AND IMPACTS **Dr. R. K. Verma**	22-27
	RIGHT TO LEGAL AID: CONSTITUTION OF INDIA **Dr. Vijay Kumar Saroj & Akash ram**	28-32
	PREAMBLE: ITS SIGNIFICANCE AND THE JUDICIAL ATTITUDE **Gajendra Singh Yadav**	33-38
	RELATIONSHIP BETWEEN INTELLECTUAL PROPERTY RIGHTS **Neha Shukla**	39- 44
	IN SEARCH OF EFFECTIVE MECHANISM TO PENALISE **Dr. Rajneesh Kumar Yadav**	45-48
	INDIA'S LAW ON PREVENTION OF SEXUAL HARASSMENT **Pramod Kumar Chaurasiya**	49-53
	PLIGHT OF WOMEN IN INDIA NOVELS **Vijay Kumar Banshiwal**	54-57
	TRIPLE TALAQ (TALAQ-E-BIDDAT): A REVIEW **Shalini Sharma**	58-63
	JUDICIAL REACTION TO THE ATTITUDE OF UNIFORM CIVIL **Satyavan Kumar Naik**	64-68
	समाजिक आर्थिक न्याय के सशक्त माध्यम के रूप में राज्य के नीति निर्देशक सिध्दांतो का विश्लेश्णात्मक अध्ययन डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन	69-74
	भारतीय महिलाओं की स्थिति : सहायक विधिक अधिकार राखी कुमारी	75-77
	मानव अधिकार और लोक स्वास्थ्य डॉ0 विजय कुमार सरोज & अजय कुमार प्रजापति	78-85
	"ग्रामीण भारत में स्वच्छता सम्बन्धी समस्याएँ तथा समाज कार्य हस्तक्षेप द्वारा निराकरण रणनीति" ... डॉ. ज्ञानेश कुमार त्रिवेदी & पुष्पांजलि पाल	83-85
	पर्यावरण प्रदुषण : संवैधानिक उपाय विवेक कुमार	86-88

समाजिक आर्थिक न्याय के सशक्त माध्यम के रूप में राज्य के नीति निर्देशक सिध्दांतो का विश्लेष्णात्मक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन*

सारांशः–

भारत की स्वतंत्रता पश्चात् संविधान निर्माताओं ने भारतीयो के जीवन को श्रेष्ठ बनाने एवं सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना हेतु भाग 03 व भाग 04 की स्थापना की ताकि संख्यों से गुलमी और निर्वासितों सा जीवन जीने वाले भारतीय को सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त हो सके मौलिक अधिकार के रूप में भाग 03 का उपबंध भारत के प्रत्येक नागरिको के दिया गया वही भाग 04 को नीति निदेशक तत्व के रूप में स्वीकार किया गया नीति निर्देशक तत्व विधायिका एवं कार्यपालिका को दिए जाने वाले वे नैतिक आदेश है जो उन्हे राज्य की नीतियों एवं कानून को बनाते समय लागू करने होगें। हालांकि नीति निर्देशक तत्व वाद योग्य नही है अर्थात् न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नही है किंतु इनका अपना महत्व है। सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना का उद्देश्य नीति निर्देशक तत्वों के माध्यम से पूर्ण हो सकता है यह न्यूनाधिक रूप से देखने में आता है। कि अक्सर नीति निर्देशक तत्वों एवं मौलिक अधिकारों में टकराव की स्थिति बनी रहती है, किन्तु सामाजिक न्याय के लिए यह आवश्यक है कि उन उपबंधो के विशेष तौर पर लागू किया जाए जिससे पिछड़े एवं निम्म लबकों को वास्तविक न्याय प्राप्त हो सकें।

अनुच्छेद 36 से 51 तक नीति निर्देशक तत्वों को शामिल किया गया है, जिसका वर्गीकरण करने पर उसे स्पष्टतः तीन भागो में विभाजित किया जा सकता है। जिसके अन्तर्गत सामाजिक तथा आर्थिक न्याय के परिभाषित किया गया है, इसके साथ ही साथ ही साथ सामाजिक सुरक्षा एवं अंतिम रूप से सामुदायिक कल्याण से जुड़े हुए उपबंध हम पाते है। नीति निर्देशक तत्वों से संबंधित विभिन्न न्यायलीन प्रकरणों से इसकी स्थिति को और बेहतर समझ सकते है।

की–वर्डः– *संविधान, सामाजिक, आर्थिक, न्याय, नीति निर्देशक तत्व, मौलिक अधिकार, भारतीय, विधायिका, न्यायालय।*

प्रस्तावनाः–

किसी भी देश का संविधान ना केवल उस राष्ट्र की शासन व्यवस्था को परिभाषित करता है वरन इस देश के नागारिको के राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक जीवन को भी प्रत्याभूत करता है शासन सत्ता पर न्यूनाधिक रोक लगाता है। जो केवल ''विधि अर्थात् कानून के शासन को मान्य करता है ना कि किसी व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह के शासन को। स्ट्रांग कहते है कि संविधान शासको की स्वेच्छाचारी शाक्ति को सीमित करता है और शासितो के अधिकारों का संरक्षण भी। इस प्रकार हम पाते है कि संविधान नागरिको

* ***सहा.प्राध्यापक राजनीति विज्ञान शासकीय महाविद्यालय साजा, जिला–बेमेतरा (छ.ग.)***

ई–मेल :–vijaylaxmi.vld@gmail.com

के अधिकारों के रक्षक के रूप मे एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। और अपने विशालतम रूप मे शासको की शाक्ति के सीमित करता है। भारतीय संविधान विश्व के महानतम और विशालतम सविधानो मे से एक है जिसमें पर्याप्त कठोरता है तो लचीलापन भी है और सबसे महत्वपूर्ण यह है कि विश्व की विभिन्न संविधानों के अन्तर्गत आने वाली विशेषताओं को इसमे शामिल किया गया है और इसमे मूल आधार ही इस तथ्य पर आधारित है आमजनों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीति न्याय प्राप्त हो तथा नागारिकों के हितो की रक्षा हो इस हेतु जवाहर लाल नेहरू नें संविधान सभा मे कहा था '' इस सविधान सभा का काम नए संविधान द्वारा भारत को स्वंतत्र करना है जिससे भूखो को खाना और नंगो को कपड़ा दे सके और प्रत्येक भारतीय को उसकी क्षमातानुसार विकास करने का पूर्ण अवसर प्रदान कर सके।''

सविधान के प्रमुख ध्येय के रूप में समानता स्वतंत्रता तथा आर्थिक सामाजिक राजनीति न्याय को स्थान दिया गया जिसके अन्तर्गत राजनीतिक स्वतत्रता को आधार बनाकर मुख्यतः आर्थिक व सामाजिक न्याय को स्थापित करने का प्रयास किया है। जिसका अर्थ है भारतीय नागारिकों को पूर्णतः एवं वास्तविक स्तंत्रता प्रदान करना जिसके तहत नागारिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करने के साथ ही साथ राज्यो के नीति निर्देशक सिध्दांत भी प्रस्तावित किए गए। जो एक प्रकार से राज्यो को दिए गए वे आदेश है जिससे वे अपने नागारिको के बेहतर जीवन हेतु उनके सामाजिक , आर्थिक उत्थान के लिए प्रयास कर सके जो व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका तीनो के लिए एक नैतिक मापदण्ड की भांति होगा। राज्य के नीति निर्देशक सिध्दांत संविधान द्वारा निर्मित वे सिध्दांत होंगे जो सामाजिक– आर्थिक न्याय की अवधारणा को पूर्ण कर सके तथा नागारिको के प्रति संविधान की वास्तविक अवधारणा का प्रत्यक्षीकरण हो पाए।

राज्य की आर्थिक न्याय की अवधारणाः–

स्वंतत्रता के उपरांत देश की स्थिति ऐसी थी मानो किसी घर के बाहर से तो सुदर रंगो से सजा दिया गया हो कितु उसके भीतर अनेका–नेक सुधार करने आवश्यक है। जिस प्रकार भारतीय संविधान और उसकी रचनात्मकता बन गई थी और राजनीतिक स्वतत्रता भी प्राप्त हो गई थी, किन्तु राजनीतिक स्वंतत्रता आर्थिक स्वतंत्रता के बिना एक कोरी अवधारणा के अलावा और कुछ नही है, वही, जहॉ पर संविधान मे सामाजिक–आर्थिक न्याय को स्थापित करने का प्रयास किया जाए यह तो सत्य था किन्तु इस बात का क्रियान्वयन किस प्रकार किया जाए यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा था। राष्ट्रीय आदोलन के प्रमुख नेताओं के समक्ष चुनौती थी कि भारत में पिछडेपन और द्ररिद्रता को किस प्रकार दूर किया जाए, ऐसा ना हो कि संविधान में प्रदत्त अधिकारो के माध्यम से केवल कुछ ही व्यक्ति उसका उपभोग करे और बहुसख्यक वर्ग कों इसका कोई लाभ ही प्राप्त ना हो पाए, इस उद्देश्य से भारतीय संविधान में नीति निर्देशक सिध्दांतो को लिया जाना आवश्यक समझा गया ताकि वास्तविक रूप मे सामाजिक आर्थिक अधिकारो एव न्याय की अवधारणा को पूर्ण किया जा सके।

आयरिश संविधान ने नीति निर्देशक सिध्दातो को स्पेन से ग्रहण किया डॉ. आइवर जैनिक्स के अनुसार '' राज्य के नीति निर्देशक सिध्दांतो जिनका जन्म स्पेन मे हुआ तथा जिनका अनुसरण आयरलैडं ने किया, मुख्यतः रोमन कैथोलिक है क्योकि रोमन कैथलिको को उनके चर्च ने न केवल एक धर्म प्रदान किया अपितु एक दर्शन भी। किन्तु इन सिध्दांतो का आभास क्रांतिकारी फ्रांस की मानव और नागारिको के अधिकारो की घोषणा '' तथा अमेरिकी उपनिवेशो की स्वतत्रता की घोषणा '' से मिलता है। वास्तव में भारत में नीति निर्देशक सिध्दांतो का मूल स्त्रोत भारत सरकार अधिनियम 1935 के निहित अनुदेश पत्र है । जहॉ ये निर्देशक सिंध्दात कार्यपालिका एव विधानमण्डल हेतु है। निश्चित तौर पर यह कह सकते है, भारतीय संविधान ने आरयलैंड से नीति निर्देशक सिध्दांत लिए और वहां की भांति भारत मे भी नीति निर्देशक सिंध्दात न्यायालया द्वारा प्रवर्तनीय नही है। इनका कार्यान्वयन विधान मंडलो पर ही छोड़ दिया गया है।

किन्तु हमारे संविधान निर्माताओं ने यह स्पष्ट रूप से कहा कि ''ये'' देश के मूलभूत तत्व है जिस पर प्रत्येक राज्य कानून बनाकर उचित व्यवस्था करे सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के. सुब्बा राव ने कहा'' संविधान के चौथे भाग में राज्य के नीति निर्देशक तत्वो का वर्णन है। यह ऐसे सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना चाहता है, जिसमें न्याय–सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओ का आधार होगा। यह एक ऐसे कृषक समाज की स्थापना का निर्देश देता है, जिसमें धन का केन्द्रीकरण नही रहेगा, जहॉ प्रचूरता रहेगी, जहॉ शिक्षा पाने काम करने जीवन निर्वाह करने का सभी को समान अवसर प्राप्त होगा और जहॉ पर सामाजिक न्याय प्राप्त होगा।''

वास्तव मे नीति निर्देशक सिध्दांत भले ही न्यायालय द्वारा न्यायविश्ट नही है, किन्तु इनके पीछे जनमत की अपार शाक्ति है। ये देश के शासन में मूलभूत है तथा संविधान मे इसे राज्यों के कर्तव्य के रूप में परिभाषित किया गया है। अनुच्छेद 36 के अन्तर्गत कहा गया कि ''प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय उपलब्ध कराने हेतु राज्य लोक कल्याण की अभिवृध्दि हेतु सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करेगा।''

सामाजिक आर्थिक न्यायः– *राज्य के नीति निर्देशक सिंध्दातो का वर्णन संविधान के भाग 04 के अनुच्छेद 36 से 51 मे उल्लेखित किया गया है। जो कि स्पष्ट है – न्यायालय के समक्ष वाद योग्य नही है यह केवल राज्यो को संविधान द्वारा प्रदत्त ऐसे नैतिक नियम है जिन्हे लोक कल्याण की अभिवृध्दि हेतु राज्यो को लागू करने हेतु आदेशित किया जाता है। जहॉ अनुच्छेद 37 के अन्तर्गत कहा गया कि विधि निर्माण में इन तत्वों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। अनुच्छेद 355, 365 का वही प्रयोग नीति निर्देशन तत्वो को लागू करने हेतु किया जाएगा। अनुच्छेद 38 के अनुसार राज्य लोक कल्याण की अभिवृध्दि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा जिससे नागारिको को सामाजिक , आर्थिक व राजनीतिक अधिकार व न्याय मिलेगा।*

अनुच्छेद 39 (क) समान न्याय, निशुल्क विधिक सहायता, समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था करता है। अनुच्छेद 39 (ख) सार्वजनिक धन का स्वामित्व व नियत्रण इस प्रकार करना ताकि सार्वजनिक हित का सर्वोत्तम साधन हो सके वही अनुच्छेद 39 (ग) धन के समान वितरण की व्यवस्था करता है।

जहॉ अनुच्छेद 40 ग्राम पंचायतो के संगठन को निरूपित करता है वही अनुच्छेद 41 कुछ दशाओ में काम शिक्षा तथा लोक सहायता पाने का अधिकार का प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 42 में काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओ को पाने व प्रसूती सहायता का प्रबंध किया गया है। प्रत्येक सामाजिक संरचना मे आर्थिक आधार पर टकराव की स्थिति बनी रहती है निम्न तबके के लोगो की दशा सुधारने हेतु धनी व निर्धन वर्गो के बीच अधिकारो के लेकर विवाद की स्थिति बनी रहती है, खासतौर पर संविधान के भाग 03 के अन्तर्गत मौलिक अधिकारो से भाग 04 के नीति निर्देशक सिध्दातो मे टकराव बना ही रहता है, जिसमे सामाजिक न्याय व कानूनी वैधता का प्रश्न बना रहता है, जिस प्रकार सामाजिक न्याय नीति निर्देशक सिध्दांतो के स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है जिसमे अनुसूचित, जातियो, जनजातियों व पिछडे वर्गो के आर्थिक हितो के साधने के लिए आवश्यक है, जो कि अनुच्छेद 46 मे कहा गया है। '' राज्य जनता के कमजोर वर्गो के विशेषतया अनुसूचित जातियों तथा अनूसूति जनजातियों के शिक्षा तथा सामाजिक अन्याय एंव सब प्रकार के शोषणो से उनका संरक्षण करेगा'' संविधान के लागू होने के बाद 1951 के ही मद्रास राज्य बनाम श्रीमती चम्पकय द्रोराई राजन (1951 एस सी. आर. 525) मेंमामला न्यायालय के समझ आया। जिसमे सामाजिक न्याय के प्रश्न के रखा गया । राज्य के मेडिकल व इंजनियरिंग कॉलेजो मे प्रवेश पर सरकार ने एक आदेश पारित किया जिसमें कक्षा की सीटो को निम्न आधार भरना था, जिसमें प्रत्येक 14

सीट पर 6 जगह गैर ब्राम्हमण, 2 ब्राम्हमण, 2 हरिजन, 1 एग्लो इंडियन , 1 मुसलमान को आधार बनाया गया, जिस पर जमींदार ने चुनौती देते हुए मुकदमा किया और कहा कि यह स्पष्ट रूप से अनुच्छेद 29(2) के तहत नागरिको को दिए जाने वाले मौलिक अधिकारो का उल्लंघन करता है। अनुच्छेद 29(4) के अनुसार – '' राज्य द्वारा घोषित अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर वंचित नही रखा जाएगा। वास्तव में इस प्रकार के दावे होने स्वामाविक है कितुं जहॉ सामाजिक न्याय का प्रश्न आता है। वही मौलिक अधिकारो के उल्लघंन किसी स्थिति में नही होने चाहिए। चूकि यह मामला मौलिक अधिकारो व नीति निर्देशक सिंध्दातो के स्पष्ट टकराव का है जबकि नीति निर्देशक तत्व न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नही है, इस कारण मौलिक अधिकारो की कटौती करने वाले इस आदेश को रद्द कर दिया गया। इस तरह हम पाते है कि शुरू से ही मौलिक अधिकारो एव नीति निर्देशक सिध्दातो में पूर्ण सामजस्य की स्थिति निर्मित होना मुश्किल है। और नीति निर्देशक सिध्दांतो के मौलिक अधिकारो के अधीन ही रहना होना। सत्र 1967 मे गोलकनाथ व्यक्ति काफी सम्पति छोड़कर जुलाई 1953 के मर गया जिसे अतिरिक्त आयुक्त ने करीब 418 एकड़ भूमि पंजाब सिक्युरिटी ऑफ लैन्ड टेन्योर्स ऐक्ड की धारा 10 के प्रावधानो के अन्तर्गत ''अतिरिक्त भूमि'' घोषित कर दी गई जिसके विरूध्द याचिका कर्ताओ (गोलकनाथ के पुत्र, पुत्री आदि थे जिन्होने अनुच्छेद 19(1) (एच.) तथा 14 के विरूध्द होने के कारण उसको चुनौती दी इसमें अलावा संविधान के प्रथम संशोधन 1951, तृतीय 1955 व सत्रहवे 1965 को भी चुनौती दी तथा इसे भौतिक अधिकारो के अन्तर्गत माना। जिसके विरूध्द राज्य ने तर्क दिया की यह सत्रहवे संशोधन द्वारा संरक्षित है व कानूनी रूप में है।

न्यायालय के समक्ष इस बात की चुनौती थी क्या संसद मौलिक अधिकारों मे संशोधन कर सकती है तथा क्या अनुच्छेद 368 संसद को यह अधिकार प्रदान करता है? सर्वोच्च न्यायालय ने इस पर फैसला सुनाते हुए से कहा कि 27 फरवरी 1967 से संसद को संविधान के भाग 03 मे संशोधन करने का कोई अधिकार नही है व सत्रंहवा संशोधन 1964 में अवैध घोषित कर दिया गया। इससे स्पष्ट होता है कि मौलिक अधिकारो के समक्ष नीति निर्देशक सिध्दांतो के प्रवर्तनीय होने का प्रश्न ही नही उठता तथा जो स्थान मौलिक अधिकारो प्राप्त वह नीति निर्देशक सिध्दांतो को प्राप्त नही हो सकता। न्यायमूर्ति हिदायतुल्ला ने कहा –''संपूर्ण सविधान का संशोधन किया जा सकता है। केवल दो दर्जन अनुच्छेद, धारा 368 की पहुॅच से परे है। ऐसा इसलिए क्योकि संविधान ने उन्हे मौलिक बना दिया है।''

इसी प्रकार बैको के राष्ट्रीकरण का मामला 1970 व प्रिवी पर्सि के मामलो को भी उच्चतम न्यायालय ने नीति निर्देशक सिध्दांतो के स्थान पर संविधान के भाग 03 को अधिक महत्वपूर्ण माना वही आधुनिक लोक कल्याणकारी राज्य की भूमिका के अस्तित्व हेतु न्यायालय ने माना ''जहॉ न्यायालय के सामने चुनाव के दो विकल्प है तो उसे भाग 04 के निहित सामाजिक दर्शन को प्राथमिकता देनी चाहिए। नीति निर्देशक सिंध्दातो के अन्तर्गत निहित आदर्शो व आदेशो के पालना हेतु 1967 मे संसद ने 42 वां सविधान संशोधन को मजूरी दी जिसके अविनियम के अन्तर्गत संसद को यह अधिकार दिया गया कि वह किसी भी नीति निर्देशक तत्वो को लागू करने हेतु मौलिक अधिकारो की धारा 14 वें 19 वें मे दिए गए उपबंधो को ''शिथिल'' कर कानून बना सकती है। जो कि अनुच्छेद 31 (सी) में संशोधन कर लागा गया था। हालाकि 1980 में न्यायालय के फैसले ने इसे परिवर्तित कर दिया और उसे संविधान के बुनियादी ढाचे के विरूध्द बताया।

मौलिक अधिकार व सामाजिक आर्थिक न्याय मे विभाजनः–

मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक सिंध्दात दोनो ही संविधान के मूलभूत आधार है, वास्तव में संविधान की आत्मा है। जिसके कारण ही भारतीय संविधान अपने महान अस्तित्व को प्राप्त करता है। जिसके अन्तर्गत भारतीय संविधान सामाजिक एंव आर्थिक न्याय की प्राप्ति लोक– तांत्रिक तरीके से विधि के

शासन द्वारा प्राप्त करने का लक्ष्य रखा। इस हेतु सरदार पटेल ने संविधान सभा को एक पत्र लिखा ''मौलिक अधिकार उपसमिति ने सिफारिश की है कि मौलिक अधिकारो की सूची दो भागो मे तैयार की जाए। पहले भाग में वे अधिकार हो जिन्हे उचित कानूनी प्रक्रिया द्वारा लागू किया जा सके तथा दूसरे मे सामाजिक नीति के निर्देशक सिंध्दात हो, भले ही न्याय मान्य न हो फिर भी देश के शासन में उन्हे आधार भूत माना जाए।''

संविधान के भाग 03 मे मौलिक अधिकारो एवं भाग 04 मे नीति निर्देशक सिंध्दातो का वर्णन किया गया है। अनुच्छेद 13 (2) मे उल्लेखित किया गया है ''राज्य ऐसी कोई विधि नही बनाएगा जो इस भारत द्वारा प्रदत्त अधिकारो को छीनती है या न्यून करती है और इस खण्ड के उल्लघंन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लघंन की मात्रा तक शून्य होगी।''

अर्थात् न्यायालय को मौलिक अधिकारो का रक्षक बनाया गया है। वही नीति निर्देशक सिध्दांतो न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नही है यह एक सबसे बड़ा कारण है कि सदैव मौलिक अधिकारो को नीति निर्देशक सिध्दांतो से ऊपर समझा गया। और उसकी महत्ता को कम आंका गया है। वास्तव मे जिस समय भारत आजाद हुआ इस समय भारत की आर्थिक स्थिति बेहद कमजोर थी तात्कलिक संविधान विदो ने मौलिक अधिकारो को तो न्यायालय में वाद योग्य माना किन्तु नीति निर्देशक सिंध्दातो को राज्य शासन की इच्छा के अनुरूप छोड़ दिया कि वे इसे लागू करे अथवा ना करें किन्तु जहॉ तक सविधान के अंतरिम उद्देश्य का प्रश्न है जिसके अन्तर्गत सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना की बात थी वह राज्यो द्वारा नीति निर्देशक सिध्दांतो को लागू करने से ही संभव हो सकता है। इस कारण मौलिक अधिकारो की श्रेष्ठता को स्वीकार्य करते हुए उपेन्द्र नाथ बक्शी लिखते है ''यह धारणा कि मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक सिध्दांतो में संविधानिक स्तर की समानता है अनर्थक है। वस्तुतः नीति निर्देशक सिध्दातो के प्रावधान मौलिक अधिकारो के प्रावधानो के अधीनस्थ है।''

निष्कर्षः–

वास्तव मे मूल अधिकार और नीति निर्देशक तत्व संविधान के मूलाधार है जहॉ मूल अधिकारो का प्रयोजन एक समतावादी समाज तथा शासन का निर्माण करना है वही नीति निर्देशक सिंध्दात ऐसे मूलभूत प्रत्यय है जिसके आधार पर सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना किया जाना संभव है।

हमारे देश मे लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना तभी पूर्णतः संभव है जब नीति निर्देशक सिंध्दातो को आवश्यक मानकर प्रत्येक राज्य कार्य करे तथा सार्वजनिक हित के उद्देश्य को ध्यान में रखकर लोक कल्याण की भावना से उन्हे संविधान के अनुरूप लागू करे। चाहे वह बालको की सुरक्षा से संबंधित उपबंध हो अथवा बेरोजगारी और बुढ़ापे की दशा में काम पाने ने अधिकार की हो अथवा समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था करने का उपबंध हो अथवा सार्वजनिक सम्पति की सुरक्षा से संबंधित उपबंध अथवा अर्न्तराष्ट्रीय शांति और सहयोग को बढाने वाले उपबधं ही क्यों ना हो सभी एक महानतम राज्य के उद्देश्यको पूरा करने वाले है , पर्यावरण रक्षण जैसे उपबधं भावी पीढि को पर्यावरण बचाने का दिया जाने वाला वरदान है।

इस प्रकार हम पाते है कि राज्य के नीति निर्देशक तत्व वास्तव में उचित सामाजिक व आर्थिक न्याय की स्थापना के स्थान के रूप में संविधान का भाग है जो भारत जैसे विशालतम राज्य के लोककल्याण की महानतम भावना को पूर्ण करने की दिशा में मील का पत्थर सदैव ही रहने वाला है।

संदर्भ ग्रथ सूचीः–

1. वी.आर. कृष्णाअय्यर,सम हॉफ हिडेन आस्पेक्ट आफॅ इंडियन सोसल जस्टिस पृ. 17
2. वल्लभ्र भाई पटेल का भाषण 27 फरवरी 1947 बी. शिवराव द्वारा संपादित जैम Framing of Indian Constitute: Selected document खंड 11, पृ.66
3. एम. वी., पायली भारतीय सविधान पृ. 137
4. एम. पी. जैन कास्टीट्शनल लॉ आफ इण्डिया पृ. 508–7
5. सरदार पटेल का पत्र दि. 25 अप्रैल 1947 सी. ए. डी. बाल्यूम तृतीय 1947 पृ. 437
6. डी.डी. वसु भारत का संविधान एक परिचय पृ. 2006
7. यतेन्द्र मिश्र नारायण भारतीय संविधान में सामाजिक तथा आर्थिक न्याय की अवधारणा अप्रैल 2008
8- उपेन्द बक्शी : Directive People and sociology & Indian Law ll J. I.L.I, 245 page 263 (1969)
9- Vhiyr K.C. Mrdern Constitution Page 137

Invitation and Guidelines for Contributors

Ad Valorem (Journal of Law), ISSN: 2348-5485 is a double blind peer reviewed Quarterly Journal. Its objective is to create a platform, where ideas, concepts and applications related to Legal Interest can be shared. Its focus is on pure and applied research on emerging issues in Law.

The articles are invited from Academicians, Practicing, Managers and Research Scholars.

Guidelines for Contributors

1. Manuscript should be submitted preferably through email or in duplicate and should not ordinary exceed 3000 words. These must be typed on one side of the page only, with double spacing and a margin of 1 inches on both sides.
2. Articles which are published should not be reproduced or reprinted in any from either in full or in part without the prior permission of the editor.
3. Wherever copyrighted material is used, the author(s) should be accurate in reproduction and obtain permission from the copyright holders if necessary.
4. Papers submitted or presented in a seminar must be clearly indicated at the bottom of the first page.

For Manuscript in English/ Hindi:-

5. Times New Roman Font10, Title 10 point Capital, Author Name 10 point, Text 10 point, Folio 1, reference are allowed and footnote shall be used.
6. Kruti Dev 012 font, Title 14 point black, Authors Name 12 point , text 12 point folio 1 point, , reference are allowed and footnote shall be used.
7. Notes and references are to be presented at Last page. Foot note should be each page.
8. The Article should be contain with Abstract of two hundred words and also include few keywords.
9. The format of references should be as follows:
   Book- C.N. Singh, *National Green Tribunal Act 2010: An Analysis*, 1st Ed. Vanketesh Prakashan Lanka, Varanasi (2013).
   Edited Work- V.N. Shukla, Constitution of India 135 (M.P.Singh ed., 2008)
   Article in Journal- C.N. Singh, *Right to Recall: Issues and Challenges*, International Research and Review Journal, vol.2, no, 4, Oct. - Dec. (2013)
   Online Article- Dr. Saurabh Sikka, "*Biomedical Waste in Indian Context*", Available at <http://www.environmental-expert.com/Files/0/articles/2078/2078.pdf
   Newspaper Articles- Kapil Sinha, *Contemporary India*, Time of India, January 25, 2012.
10. Present each figure and table on a separate sheet of paper. All figures and tables must be consecutively numbered using Arabic numerals with appropriate titles.
11. Book review must contain the name of the author and the book reviewed, place of publication and publisher, date of publication, number of pages and price.
12. The final Article/Research Paper of the submission should be submitted in Electronic form. Electronic copies of the submission should be mailed to advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com.
13. All manuscript should be addressed to :

The Editor in Chief
Dr. Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: *advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com*
Website: www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

To

The Editor in Chief
Dr. Chandra Nath Singh
AD VALOREM *(Journal of Law)*
Faculty of Law, Banaras Hindu University
Varanasi-221005, Uttar Pradesh, India
Phone: +919305292048, +919450248260
E-mail: ***advalorem86@gmail.com, chandralaw@gmail.com***
Website: ***advalorem-journal-of-law.page.tl/home.htm***

Sir,

Subject: Assignment of Copyright

I/We,_____, author(s) of the article entitled _____
do hereby authorize you to publish the above said Article/Case Study/Book Review in ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We further state that:

1) The Article/Case Study/Book Review is my/our original contribution. It does not infringe on the rights of others and does not contain any libelous or unlawful statements.
2) Wherever required I/We have taken permission and acknowledged the source(s).
3) The work has been submitted only to this journal ***Ad Valorem (Journal of Law)*** and that it has not been previously published or submitted elsewhere for publication.

I/We hereby authorize, you to edit, alter, modify and make changes in the Article/Case Study/Book Review in the process of preparing the manuscript to make it suitable for publication.

I/We hereby assign the copyrights relating to the said Article/Case Study/Book Review to the ***Ad Valorem (Journal of Law).***

I/We have not assigned any kind of rights of the above said Article/Case Study/Book Review to any other person/publications.

I/We agree to indemnify ***Ad Valorem (Journal of Law)***, against any claim or action alleging facts which, if true, constitute a breach of the foregoing warranties.

First author	**Second author**	**Third author**
Name:Chandra Nath Singh	Name:	Name
Signature	Signature:	Signature:

Statement about Ownership and Other Particulars

AD VALOREM *(Journal of Law)*

An International Peer Reviewed Research Refereed Quarterly Journal

Title of Publication	:	AD VALOREM (Journal of Law)
Place of Publication	:	Varanasi
Periodicity of Publication	:	Quarterly
ISSN Number	:	2348-5485
Nationality	:	Indian
Copy Right/ Published	:	Since 2014
Editor in Chief	:	Dr. Chandra Nath Singh
Address	:	Law School, Banaras Hindu University, Varanasi, India
Office Address	:	N8/180, MR-4, Newada, Rajendra Vihar Colony, Sunderpur, Varanasi, Utter Pradesh, Pin-221005, India
Ownership	:	Chandra Nath Singh
Mobile Number	:	+919305292048, +919450248260
Email Address	:	advalorem86@gmail.com chandralaw@gmail.com
Website	:	www.advaloremjournaloflaw.Com

ISSN: 2348-5485

UGC JOURNAL DETAILS

Name of the Journal :	AD VALOREM (Journal of Law)
ISSN Number :	23485485
Source:	UGC
UGC Index/Journal Number	41336
Subject:	Law
Publisher:	Future Fact Society, Varanasi (UP)
Country of Publication:	India
Broad Subject Category:	Social Science
UGC Website/ Link	http://www.ugc.ac.in/journallist/subjectwisejurnallist.
Journal Website	www.advaloremjournaloflaw.Com
Impact Factor:	3.934

CONTENTS

S. No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	मीडिया एवं आधुनिक जनसंचार माध्यमों का महिलाओं पर प्रभाव (जबलपुर जिला पर आधारित महिलाओं में परिवार नियोजन के विशेष संदर्भ में)	भूपेन्द्र कुमार	1-5
2	भारतीय संगीतज्ञों के संदर्भ में उनके मूल्यों का एक विश्लेषण	डॉ. अनुराधा सिंह	6-7
3	कर्मभूमि उपन्यास में स्वतंत्रता आंदोलन की पृष्ठभूमि	कुलदीप जाट	8-10
4	जनजातीय समाज–मिथकों का शिकार	डॉ. पवन कुमार साहू	11-14
5	भारतीय दर्शन और समाज–व्यवस्था	जितेन्द्र गिरि	15-17
6	भारत में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों पर कोविड–19 लॉकडाउन का प्रभाव	महेश कुमार तिवारी	18-22
7	किशोरों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का प्रभाव	जोगेन्द्री पठारिया डॉ. अर्चना चतुर्वेदी	23-26
8	खरगोन जिले में ''नर्मदा नदी के सरक्षण हेतु जन आंदोलन''	डॉ. रवीन्द्र सोहोनी भारतसिंह भंवर	27-28
9	भारत में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण	डॉ. सत्येन्द्र कुमार	29-30
10	चक्रपाणि विजय महाकाव्य में चित्रित सामाजिक मान्यतायें	विजय कुमार यादव डॉ. संगीता अग्रवाल	31-33
11	छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति और परम्परा	डॉ. हेमन्त सिंह कंवर	34-37
12	श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित समाज का अध्ययन	डॉ. विजय शंकर मिश्र	38-41
13	बारेला जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में हुए परिवर्तनों का अध्ययन	मनीषा सावले प्रार्थना निगम	42-49
14	भारत छोड़ो आंदोलन एवं महिलाओं की भूमिका उत्तर प्रदेश राज्य के विशेष संदर्भ में	डॉ. संजीव कुमार राजपूत	50-52
15	विकासमित्र का मुसहर जाति के जनजीवन पर प्रभाव : मधेपुरा जिला के संदर्भ में	प्रभाकर सिंह डॉ. रजोल कुमार सक्सेना	53-57
16	प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र– छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. क्रान्ति कुमार सिंह	58-60
17	प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति का अध्ययन	डॉ. कविता रायकवार शिव कुमार सेजकर	61-65
18	रसवदादि अलंकार	डॉ. आनन्द कुमार दीक्षित	66-69
19	रहीम के दोहे आज के परिप्रेक्ष्य में	डॉ. कनक रागिनी	70-72
20	उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरवय शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का अध्ययन	रूचि चौहान डॉ. शशिप्रभा त्रिपाठी	73-76
21	सतत् विकास एवं पर्यावरणीय पर्यटन	Dr. Mohd Sadiq Ali Khan	77-80
22	औपनिवेशिक भारत में प्रेस की भूमिका	डॉ. श्रवण कुमार ठाकुर	81-82
23	पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिड्रोम (पी.सी.ओ.एस) के नियंत्रण में योग	बिन्दु सिंह पंवार	83-86
24	मनुस्मृति तथा याज्ञवलक्य स्मृति में वर्णित स्त्री सम्पत्ति का विवेचन	सोनी कुमारी	87-90
25	औद्योगिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव	समरजीत कुमार सिन्हा	91-96
26	असंगठित क्षेत्र में कार्यकारी महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में बदलाव का अध्ययन	डॉ. प्रतीक कुमार	97-101
27	भारतीय न्याय व्यवस्था में महिलाओं के अधिकार	स्वीटी वर्मा डॉ. पुष्पा मिश्रा	102-104

28	जैन दर्शन में स्मृति प्रमाण का समीक्षात्मक अध्ययन	कुँवर नीरज सिंह	105-107
29	वैदिक काल में शिक्षा व्यवस्था –एक अध्ययन	डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन	108-110

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020

2020

मीडिया एवं आधुनिक जनसंचार माध्यमों का महिलाओं पर प्रभाव (जबलपुर जिला पर आधारित महिलाओं में परिवार नियोजन के विशेष संदर्भ में)

भूपेन्द्र कुमार
शोधार्थी (पी.एच.डी.) स्कूल ऑफ जर्नलिस्म एंड मास कम्युनिकेशन, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

सारांश :– वर्तमान परिवेश में आधुनिकीकरण की दौड़ में अनेक आदर्श पश्चिमी देशों से लिये गये हैं। पर उनका स्वरूप अधिकांश भारतीय है। भारत के शिक्षित वर्ग को पश्चिमी शिक्षा मिली थी, फिर भी उन्होंने आश्चर्यजनक ढंग से परंपरागत धार्मिक रीति रिवाज एवं सांस्कृतिक विचारों का संरक्षण किया, भारत के वर्तमान एवं भविष्य के विकास के परम्परागत एवं आधुनिकवाद दोनों के ही मूल्यों एवं विश्वासों का संवेलियन करने का प्रयास किया गया।

मुख्य शब्द :– संचार, वैयक्तिक, स्वेच्छिक, औझिल, तर्कसंगत।

प्रस्तावना :– संचार मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं, वैयक्तिक, सामूहिक, जनसंचार। जनसंचार का क्षेत्र व्यापक होता है, जिसके कारण इसमें जिम्मेदारी अनिवार्य है। एक राजनीतिक नेता के भाषण देने से लेकर समाचार पत्र में छपी न्यूज, गांव में नाट्य का आयोजन, रेडियो में प्रसारित साक्षात्कार, फिल्म या टीवी के पर्दे पर दृश्य या प्रस्तुतियां, रोड व चौराहे पर लगा विज्ञापन पट्टिका आदि सब जनसंचार के अंतर्गत आते हैं। अतः हम कह सकते हैं, जिसमें पाठक श्रोता दर्शकों की संख्या विशाल हो। यह अन्य माध्यम किताबें, स्वांग, कटपुतली, पोस्टर, नोटंकी, कम्पूटर सभाएं आदि भी हो सकते हैं। इस तरह कई अर्थों में ऐसा संचार संवेदनशील भी होता है। समय–समय पर वैज्ञानिक तकनीकों का विकास होता जा रहा है, जिसके कारण इस क्षेत्र में उत्तरोत्तर वृद्धि, नवीनता, सूक्ष्मता और विभिन्नता समावेशी होकर दिखाई दे रही है।

प्रसिद्ध विद्वान डेनियल लर्नर के अनुसार परंपरागत समाजों में साक्षारता और सूचना संप्रेषण के सारांशों के पारस्पर संबंधों को दर्शाते हुए कहा है कि संप्रेषण के साधनों द्वारा साक्षारता का विकास होता है और साक्षारता के विकास के कारण संचार के साधनों का और अधिक उपयोग होता है। अतः संचार के साधनों का विस्तार और उसमें सहभागिता, नगरीयकरण, औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण स्थान है। जनसंचार माध्यम महिलाओं के पारसपरिक और संकुचित रूप को ही दिखाते आए हैं। जैसे पुत्री को पुत्र से हीन मानना, महिलाओं के द्वारा स्त्री के रूप में पुत्र की कामना करना, पुत्री को उनके जन्म से ही उनके विवाह की चिंता करना, सौंदर्या और मातृत्व के गौरव मान से महिलाओं को अलंकृत करना, उनका कार्यक्षेत्र घर के चार दीवारी तक सीमित करना, उनकी गतिविधि की निगरानी रखना आदि परंपरागत व विरोधी अवधारणा है। ऐसा भी नहीं है कि जनसंचार माध्यमों के द्वारा हर ओर से महिलाओं की उपेक्षा ही की गई है। इसी बीच तमाम ऐसे सकारात्मक और सार्थक पहल सामने आई हैं, जो महिलाओं से जुड़ी समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य में देखते हैं।

डब्ल्यु एल पाई ने जनसंचार मानव समाज का जाल है, क्योंकि मानव द्वारा की गई सामाजिक क्रिया किसी न किसी प्रकार संचार की प्रक्रिया से संबंधित है। जिसके अंतर्गत कामकाजी महिलाओं की समस्या, सफल महिलाओं से संवाद, महिला विषयों पर खुली परिचर्चा आदि कार्यक्रम सामने आये हैं किंतु कोई ठोस या नीतिगत योजना इस दिशा में नहीं आ पाई है।

पूल के अनुसार सूचना संचार व्यवस्था हमारे सामाजिक पर्यावरण का एक आवश्यक एवं सर्वव्यापी अंग है।

अध्ययन के उद्देश्य :– प्रस्तुत अध्ययन सामाजिक घटनाओं का ही वैज्ञानिक अध्ययन है और कोई भी अध्ययन वैज्ञानिक नहीं हो सकता जब तक उसमें वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग न किया जाये, लेकिन किसी वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग जब तक संभव नहीं है, जब तक कि अध्ययन विषय से संबंधित उद्देश्यों का निर्धारण न कर लिया जाये, इस प्रकार अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. उत्तरदाताओं पर संचार माध्यमों द्वारा स्वास्थ्य ज्ञान और परिवार कल्याण का अध्ययन
2. उत्तरदाताओं में आधुनिकीकरण के प्रभाव से प्रजनन दर कम होने का अध्ययन
3. उत्तरदाताओं में परिवार नियोजन जागरूकता का अध्ययन
4. नवदंपत्ति द्वारा परिवार नियोजन साधनों को अपनाने का विश्लेषण

अध्ययन विधि :– प्रस्तुत शोध निदानात्मक शोध है इसके अंतर्गत मीडिया एवं आधुनिक जनसंचार माध्यमों का महिलाओं पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है। संक्षिप्त अनुसूचि के माध्यम से साक्षात्कार विधि द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया है। इसमें अवलोकन और वैक्तिक इतिवृत्ति गतिविधि का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र तथा निदर्शन का चयन :– अध्ययन क्षेत्र में मध्यप्रदेश राज्य के जबलपुर जिले का चयन किया गया है। अपने परिवेश के प्रति जिज्ञासा प्राप्त करना मानवीय प्रवृति है। भारत सरकार (कैग की रिपोर्ट–2017) के अनुसार मध्यप्रदेश में मातृ मृत्युदर अधिक है और जिले की सर्वाधिक है। जबलपुर जिले के अंतर्गत नगर निगम में 79 वार्ड हैं, जिनमें 3 वार्ड– रेगवा वार्ड (वार्ड 77), खैरी वार्ड (78), रिछाई वार्ड (79) ग्रामीण क्षेत्र में आते हैं। जिले में 58.46 प्रतिशत शहरी क्षेत्र में तथा 41.54 जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। जबलपुर जिले में 10 तहसील, 7 राजस्व, 542 ग्राम पंचायत, एक नगर निगम, 2 नगर पालिका, 1 कैंटोमेंट और 6 नगर परिषद् हैं। राजनीतिक रूप से जबलपुर महानगर को 4 विधानसभा में विभक्त किया है। शोध अध्ययन ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र पर आधारित है। उत्तरदाताओं का चयन असंभावित निदर्शन में किया गया। जिसमें उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श विधि का प्रयोग किया गया है।

जबलपुर जनसंख्या जनगणना 2011

शहर और प्रकार की जनसंख्या

तालिका संख्या–1

1	जबलपुर (नगर निगम + आउट ग्रोथ) (पूर्ण)	1081677
2	जबलपुर (नगर निगम + आउट ग्रोथ) (भाग)	1069292
3	जबलपुर (नगर निगम) (भाग)	1055525
4	जबलपुर (नगर निगम + आउट ग्रोथ) (भाग)	12385

सर्वेक्षण के लिये जिले में स्थित चयनित 79 वार्डों में 76 वार्ड शहरी क्षेत्र और 3 वार्ड ग्रामीण (पनागर तहसील) से लिये। इन चयनित वार्डों में से कुल 400 उत्तरदाताओं का चयन उद्देशानुसार न्यादर्श पद्धति का इस्तेमाल किया गया। ताकि प्रस्तुत शोध में जबलपुर जिले का संतुलित और समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त किया। प्रत्येक वार्ड के लिये 200 उत्तरदाताओं में से आधे उत्तरदाता महिला तथा आधे उत्तरदाता पुरुष लिये गए।

सामाजिक समस्या व चेतना :– सरकार तथा हर नागरिक की पहली प्राथमिकता यह है कि बढ़ती हुई जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाना और साथ में संसाधनों के अभाव तथा बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण महंगाई, बेरोजगारी तथा आर्थिक समस्याओं ने व्यक्तियों को जटिलताओं ने जकड़ रखा है। शिक्षा की समस्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, साथ ही महंगी फीस व किताब–कापियों का व्यय तथा बड़े परिवार का पालन करना, उन्हें आवश्ययक पोषाहार उपलब्ध कराना आज के संघर्षमय जीवन को और भी बोझिल बना देते हैं।

इन सब सामाजिक समस्याओं ने महिलाओं की चेतना को अवश्य प्रभावित किया है–

तालिका संख्या–2

सामाजिक समस्या व चेतना का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
महंगाई, बेरोजगारी, आर्थिक समस्या	122	61.00
शिक्षा की समस्या	24	12.00
पति द्वारा वैयक्तिक दबाव	40	20.00
आधुनिकीकरण व जनमाध्यमों का प्रभाव	10	5.00
अन्य	04	2.00
योग	**200**	**100.00**

तालिका संख्या–2 के सम्पूर्ण विवेचन से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 61.00 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया है कि महंगाई, बेरोजगारी तथा आर्थिक समस्याओं ने इनकी चेतना को जागृत किया वे इसी कारण परिवार बढ़ाना नहीं चाहती जबकि 20.00 प्रतिशत महिलाएं अपने पति द्वारा दिये गये निर्देश से परिवार को सीमित रखना चाहती है तथा 12.00 प्रतिश महिलाएं शिक्षा की समस्या से प्रभावित हैं और 5.00 प्रतिशत महिलाएं आधुनिकीकरण व जन माध्यमों से प्रभावित हैं व 2.00 प्रतिशत महिलाओं ने अन्य कारणों को परिवार नियोजन संबंधी चेतना से खुद को प्रभावित मानती है।

स्वास्थ्य ज्ञान व परिवार कल्याण :– आधुनिकता से लेकर पारम्परिकता तक संचार के अनेक माध्यम आज उपलब्ध है, लेकिन समाज के आचरण, दृष्टिकोण और विचारों में जितना परिवर्तन आज टी.वी. फिल्म, पत्र पत्रिकाओं के जरिये आया, उतना शायद अन्य माध्यमों से नहीं। यही वजह है कि आये दिन अपनी गतिविधियों एवं प्रस्तुतियों में अक्सर महिलाओं व उनसे जुड़े अन्य मुद्दे इनके आलोचनाओं के केन्द्र में रहते हैं। समाज की आधी आबादी अर्थात महिलाओं का इससे अप्रभावित रहना सम्भव नहीं है।

तालिका संख्या–3

स्वास्थ्य ज्ञान व परिवार कल्याण को प्रभावित करने का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
रेडियो, टी.वी.	60	30.00
पारिवारिक पत्रिका	36	18.00
डाक्टरों से सलाह	72	36.00
पति का निर्देश	32	16.00
योग	**200**	**100.00**

तालिका संख्या–3 के सम्पूर्ण विवरण से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 36.00 प्रतिशत महिलाएं डॉक्टरों की राय से अपने स्वास्थ्य की देखभाल करती हैं तथा परिवार कल्याण के उपाय को सुरक्षित मानती हैं तथा परिवार कल्याण के उपाय को सुरक्षित मानती है जबकि 30.00 प्रतिशत महिलाएं परिवार नियोजन एवं स्वास्थ्य संबंधी जानकारी टी.वी. व रेडियो के कार्यक्रमों से प्राप्त करती हैं तथा 18.00 प्रतिशत महिलाएं पारिवारिक पत्रिका के माध्यम से प्रभावित हैं और 16. 00 प्रतिशत महिलाएं पति के निर्देश पर चलना चाहती हैं और उन्हीं के माध्यम से अपनी स्वास्थ्य व परिवार नियोजन संबंधी क्रियाओं को सम्पादित करती हैं।

महिला स्वास्थ्य व मातृ–शिशु टीकाकरण :– भारत सरकार तथा स्वैच्छिक संगठनों का प्रयास तथा महिला स्वास्थ्य व मातृ शिशु कल्याण केंद्र देश के लिए कोई नई बात नहीं है। स्वैच्छिक प्रयासों के आधार मानव सेवा के नैतिक उद्देश्य से प्रेरित रहा है। दीन–दुखियों की सहायता हो या माता–शिशु के प्रसवोपरान्त चिकित्सीय देखभाल सभी कुछ स्वैच्छिक प्रयास के आधार पर होता आया है। जिसमें सेवा भाव निहित होता है। बच्चों की देखभाल, टीकाकरण, उचित परिस्थिति में प्रसव तथा अन्य रोगोपचार हेतु ये संस्थाएं प्रतिबद्ध हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी पहुंच जरूरतमंदों तक अवश्य पहुंच जाती है। या स्वयंसेवी संगठन जरूरतमंदों की आवश्यकताएं पूरी करने की कोशिश करते हैं।

तालिका संख्या–4

महिला स्वास्थ्य व मातृ–शिशु कल्याण संस्थाओं द्वारा टीकाकरण का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
हां	190	95.00
नहीं	10	5.00
योग	**200**	**100.00**

तालिका संख्या–4 के सम्पूर्ण विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 95.00 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया कि महिला संगठनों व स्वैच्छिक स्वास्थ्य तथा मातृ–शिशु कल्याण संस्थाओं द्वारा किये गये टीकाकरण व देखभाल से संतुष्ट है, जबकि 5.00 प्रतिशत महिलाएं स्वैच्छिक संगठन व महिला कल्याण मातृ–शिशु संस्थाओं को क्रिया विधि से प्रभावित नही है।

आधुनिक शिक्षित महिलाएं एवं परिवार नियोजन जागरूकता :– शिक्षा मनुष्य के विचार व दृष्टिकोण में तर्कयुक्त परिवर्तन लाता है। जो महिलाएं शिक्षित हैं, वे अपने भविष्य, स्वास्थ्य व परिवार तथा परिवार कल्याण की बातें स्वयं सोच–समझकर निर्णय लेती हैं। उनमें निर्णय करने की क्षमता का विकास सहजता से हो जाता है। शिक्षित व आधुनिक महिलाएं नौकरी व व्यवसाय को महत्व देकर परिवार की आर्थिक स्थिति में सहयोग देती हैं। इस तरह वे अपने परिवार को सीमित रखने हेतु भी पूर्ण जागरूक रहती हैं।

तालिका संख्या–5
आधुनिक व शिक्षित महिलाओं का परिवार नियोजन महिलाओं का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
हां	140	70.00
नहीं	24	12.00
उदासीन	**36**	**18.00**

तालिका संख्या–5 के विवेचन से ज्ञात होता है कि अधिकांश 70 प्रतिशत आधुनिक व साक्षर महिलाएं परिवार नियोजन व प्रजननता के प्रति अधिक जागरूक है। जबकि 18 प्रतिशत महिलाएं अभी भी ग्रामीण परिवेश के कारण उदासीन हैं, तथा 12 प्रतिशत महिलाएं परिवार नियोजन व प्रजननता को अपने परिवार अर्थात पति व अपनी सास के आदेशों का पालन करती हैं।

नव दंपती में परिवार नियोजन :– आधुनिक समय की सर्वाधिक प्रचलित धारणा मॉडलाइजेशन है। परंपरा से हटकर तर्क युक्त किया गया कार्य आधुनिकता की श्रेणी में रखा जाता है। बदलते समय के कारण परंपराओं की जगह आधुनिकता का रूप ले लिया है। इसी कारण अब परिवार नियोजन को अनुचित नहीं माना जाता। साथ में आधुनिक विचारों ने इस विचार को सही नहीं माना कि पुत्र–पुत्री से श्रेष्ठ है। पुत्र–पुत्री से कोई भेदभाव आधुनिक विचार से नहीं है, लेकिन वर्तमान समय में देखा गया है कि अब केवल एक संतान की देखभाल ही (पुत्र या पुत्री) नवदंपती अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, अतः परिवार नियोजन का महत्व आधुनिक व शिक्षित महिलाएं ज्यादा समझती हैं।

तालिका क्रमांक– 6
नव दंपती में परिवार नियोजन अपनाने व आधुनिकता का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
हां	146	73.00
नहीं	54	27.00
योग	**200**	**100.00**

तालिका संख्या –6 के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 73 प्रतिशत महिलाएं यह स्वीकार करती हैं कि नव दंपतियों द्वारा परिवार नियोजन अभिकरण अपनाना आधुनिकीकरण से सकारात्मक रूप से संबंधित है। जबकि 27 प्रतिशत महिलाएं इससे सहमत नही हैं।

आधुनिकीकरण का प्रभाव एवं परिवार नियोजन :– आधुनिक समाज परिवर्तन के पर्याय होते हैं और इस इच्छा के भी कई कारण हैं जैसे आज आधुनिकता के कारण भौतिक उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है। नई तकनीकी अनुसंधानों से व्यक्ति संबद्ध होता जा रहा है। जिसके कारण परिवर्तन की प्रक्रिया लगातार गतिशील होती जा रही है। यही कारण है कि समाज के लोगों में यह धारणा पल्लवित हो गई है। परंपराओं से हटकर आधुनिकता की ओर बढ़ रहे हैं। यह प्रभाव जनसंचार माध्यमों ने और सरल बना दिया है। इसी कारण आधुनिकीकरण का प्रभाव सामाजिक परंपराओं में पड़ना स्वाभाविक है।

तालिका क्रमांक–7
आधुनिकीकरण का प्रभाव एवं परिवार नियोजन

विवरण	संख्या	प्रतिशत
हां	144	72.00
नहीं	36	18.00
उदासीन	20	10.00
योग	200	100.00

तालिका अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि सर्वाधिक 72 प्रतिशत महिलाएं स्वीकार करती हैं कि आधुनिकीकरण जनमाध्यमों का प्रभाव महिलाओं के प्रजनन दर पर परिवार नियोजन के प्रयोग से कम हुआ है। तथा 18 प्रतिशत महिलाएं इस तथ्य को स्वीकार नहीं करतीं और 10 प्रतिशत महिलाएं इस बारे में कुछ नहीं कहना चाहतीं।

निष्कर्ष :– आधुनिकता का प्रभाव संचार, शिक्षा तथा जनसंख्या नियंत्रण में समाज के हर घटक पर देखा जा सकता है। जिसके फलस्वरूप आधुनिकीकरण के इस युग में नव दंपतियों द्वारा जनसंख्या नियंत्रण हेतु परिवार नियोजन को अपना लिया। साथ ही छोटा परिवार आधुनिकता के विषय में अनुकूल माना जाता है। साथ ही आधुनिकीकरण के कारण विवाह में बिलम्बिता को प्राथमिकता दी गई है। जिसके फलस्वरूप जनसंख्या नियंत्रण व बच्चों की संख्या अब लोग स्वयं सीमित कर रहे हैं। उच्च शिक्षित मुस्लिम परिवार की महिलाएं भी अब आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर हो रही हैं। तथा जनसंख्या नियंत्रण में सहयोग कर रही हैं। ऐसा अध्ययन के दौरान ज्ञात हुआ।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. Lerner Daniel : The Passing Away of Traditonal Society, Free Press, 1958
2. Pye L.W. (1972) : Communications and Pollitical Development, Radha Krishna Prakashn, New Delhi.
3. Pool IDS (1968) : the Role of Communication in the process of medemization and Technological change in Best F. Hostility and W.E. Moore Led.) Industrializations and Society (Monlon) (UNESCO).
4. Srivas, M.N. (1972) : Social Change in Modern India (India Edition) Orient Lorgmen, New Delhi.
5. Gore, M.S.: Educations and Modenizations in India, Rawat Publications, Jaipur 1982.
6. Eiserstad t, S.N.: Modernizations: Protest and Change, Prentice Hall of India, New Delhi, 1969.
7. A. K. Singh (1984) : Health Modernity Concept and Correlates Cocial Changes, Council for Social Devrlopment New Delhi, Vol.14 No. 13, PP. 3-16.
8. Reddy. M.N. Krishna Fertility and Family Planning Behaviour in Indian Society, Kanishka Publisher's Distributors, New Delhi, 02, 1996.
9. District Statics Paper-2016, Finance and Statical officer, Mirzapur, Pg-83.

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारतीय संगीतज्ञों के संदर्भ में उनके मूल्यों का एक विश्लेषण

डॉ. अनुराधा सिंह
आर. के. केड़िया बालिका उच्च विद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार

मूल्य (Values) वैसे विश्वासों से संलग्न रहता है, जो हमें यह बतलाता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। मूल्य किसी एक समाज की संस्कृति को प्रतिबिंबित करता है तथा संस्कृति के अधिकांश लोग एक जैसे मूल्य धारण किए रहते हैं। मूल्यों का संबंध व्यक्ति की आवश्यक्ताओं एवं उद्देश्य की संतुष्टि से होता है। जहाँ किसी वस्तु के प्रति धनात्मक मूल्य (वांछनीय), व्यक्ति को उस वस्तु की प्राप्ति के लिए प्रेरित कर सकता है, वहीं नकारात्मक अथवा अवांछनीय मूल्य उसे उद्देश्य प्राप्ति में बाधक सिद्ध हो सकता है। व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न कई सारे मूल्य रख सकते हैं। ये मूल्य कई प्रकार के होते हैं, जैसे – धार्मिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, नैतिक मूल्य, सौन्दर्य बोधक मूल्य आदि।

ऐसे कई अध्ययन हुए हैं, जिनमें संगीतज्ञों की मूल्य – प्रणालियों पर चर्चा की गई है। इन अध्ययनों से जो परिणाम प्राप्त हुए हैं, उनसे यह बात उजागर होती है कि मूल्यों के आधार पर संगीतज्ञ आम लोगों से काफी भिन्न होते हैं। यहाँ तक विभिन्न विधाओं के संगीतज्ञों तथा सफल एवं असफल संगीतज्ञों के मूल्यों में भी भिन्नता पाई जाती है। रायचौधरी (1977) के अध्ययन के अनुसार संगीतज्ञों में सौन्दर्य बोधक मूल्य काफी उच्च स्तर के होते हैं। प्रज्ञानंद (1979) ने अपने अध्ययन में कहा है कि संगीत वास्तव में एक संगीतज्ञ की आन्तरिक गहराई का सौंदर्य मूलक चित्रण है। उनके लिए उनका संगीत अपनी आकांक्षाओं और कल्पनाओं को बाहरी दुनिया के सामने प्रदर्शित करने का एक उपयुक्त माध्यम है। भारतीय संगीत में प्रयुक्त सौंदर्यपूर्ण स्वरों और रागों से यह प्रमाणित होता है कि संगीतज्ञो में सौन्दर्य बोधक मूल्य उच्च स्तर के होते हैं। बेन्टले (1937) के प्रारम्भिक अध्ययन में यह पाया गया है कि जो उत्कृष्ट गायक अथवा गायिकाएँ होती है, वे सामान्यतया ईमानदार, विवेकी, सदाचारी एवं अत्यंत मृदु स्वभाव के होते हैं। कुछ ऐसे ही विचार मैकगी एवं लुइस (1942) ने भी प्रस्तुत किए हैं।

सौन्दर्यबोधक मूल्य एवं नैतिक मूल्य के साथ–साथ संगीतज्ञों में धार्मिक मूल्य भी उच्च श्रेणी के पाए जाते हैं। कुमारस्वामी (1948) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि संगीतज्ञ सामान्यतः ईश्वर में पूर्ण आस्था रखते हैं तथा अपनी सफलता के लिए ईश्वर को ही प्रेरणा का श्रोत मानते हैं। राचौधरी (1963) ने भी इस बात की पुष्टि की है कि संगीतज्ञ ईश्वरीय शक्ति पर पूर्ण रूप से विश्वास करते हैं। उनके अनुसार यह सम्पूर्ण सृष्टि ईश्वर द्वारा ही संचालित है। अतः इससे यह स्पष्ट है कि संगीतज्ञों में धार्मिक मूल्य उच्च स्तर के होते हैं। ऐसे अध्ययन नदारद हैं, जिनमें संगीतज्ञों के आर्थिक मूल्य पर प्रकाश डाला गया हो। परन्तु अन्य व्यवसाय के समान ही संगीतज्ञों के जीवन में भी भौतिक सुख का काफी महत्व है, इस बात से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि संगीतज्ञों के आर्थिक मूल्य भी उच्च स्तर के होते होंगे। परन्तु भारतीय संगीत की परम्परा और दर्शन के अनुसार यदि संगीतज्ञ किसी आर्थिक लाभ की लालसा से प्रस्तुती देता है तो उसकी योग्यता में कमी आ जाती है। प्रचानी समय के गायक सामान्यतः संत प्रवृति के हुआ करते थे। जैसे–स्वामी हरिदास, सूरदास, मीराबाई इत्यादि। ये किसी आर्थिक लाभ के लिए नहीं, अपितु परमात्मा के लिए अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए गाते थे। परन्तु भारतीय समाज में हुए परस्पर बदलावो के फलस्वरूप भारतीय संगीतज्ञों के आर्थिक मूल्यों में भी परविर्तन आया है। आधुनिक समय के गायक सिर्फ आत्म संतुष्टि या ईश्वर की आराधना हेतु नहीं गाते, बल्कि अर्थ प्राप्ति के लिए भी गाते हैं। इस तथ्य का समर्थन सिन्हा (1989) ने अपने उस अध्ययन में भी किया है, जो उन्होंने बनारस के संगीतज्ञों पर किया है।

इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययनों एवं व्याख्याओं से यह बात स्पष्ट है कि भारतीय संगीतज्ञों में नैतिक, धार्मिक, सौन्दर्य बोधक एवं आर्थिक मूल्य उचित मात्रा में पाए जाते हैं। परन्तु कुछ अध्ययनों के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि भिन्न–भिन्न विधाओं के संगीतज्ञों में इन मूल्यों की मात्रा में अंतर पाया जाता है। प्रख्यात समाजशास्त्री Whitening and Child के अनुसार अलग–अलग संस्कृतियाँ लोगों में अलग–अलग गुणों एवं मूल्यों के विकास को प्रोत्साहित करती है। लक्ष्मीनारायण गर्ग ने 'निबंध संगीत' में कहा है कि शास्त्रीय संगीत की संस्कृति जितनी प्राचीन है उतनी ही भिन्न है। इसमें सदैव गुरू–शिष्य परम्परा को महत्व दिया गया है। कुमारस्वामी एवं

रायचौधरी ने भी अपने अध्ययन में पाया है कि शास्त्रीय गायकों में नैतिक मूल्य धार्मिक मूल्य तथा सौंदर्य बोधक मूल्य उच्च श्रेणी में पाए जाते हैं। वही सुगम संगीत तथा चित्रपट संगीत जनसाधारण का संगीत है जबकि लोक संगीत ग्रामीण परिवेश एवं प्राचीन लोक परंपराओं से जुड़ा हुआ संगीत है। अतः ऐसा अनुमान है कि इन विधाओं से जुड़े कलाकारों में पाए जाने वाले मूल्य अवश्य भिन्न होंगे।

इसी विषय पर डा. अनुराधा सिंह (2013) द्वारा किए गए "विभिन्न विधाओं के गायक एवं उनकी विशेषताएँ : एक विश्लेषण" विषयक शोध के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि भारतीय संगीत की विभिन्न विधाओं की गायिकाओं में आर्थिक मूल्य छोड़कर अन्य सभी मूल्यों की उच्च मात्रा पाई जाती है। लोक गायिकाएँ अन्य गायिकाओं की तुलना में अधिक धार्मिक और सामाजिक होती है। लोक संगीत के अलावे शास्त्रीय एवं सुगम संगीत की गायिकाएँ भी धार्मिक मूल्य पर उच्च अंक प्राप्त करती हैं, जिससे स्पष्ट है कि गायिकाएँ स्वभावतः धार्मिक होती है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि शास्त्रीय एवं सुगम संगीत की गायिकाओं के सामाजिक मूल्य एक समान हैं। वे समाज के सम्पर्क में होते हुए भी अपने आप में सीमित रहती हैं। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय लोक तथा सुगम संगीत की गायिकाओं में नैतिक तथा सौंदर्यबोधक मूल्य भी एक समान तथा उच्च मात्रा में पाए गए। जिसके अनुसार संगीतज्ञ सामान्यतया ईमानदार, सभ्य तथा परोपकारी होते हैं और सौंदर्य के साथ उनका अटूट संबंध है।

इस प्रकार ऐसे अध्ययनों का अभाव है, जिसमें भारतीय संगीतज्ञों के मूल्यों की चर्चा की गई हो, परन्तु जितने भी अध्ययन है, उनसे यह स्पष्ट है कि ये संगीतज्ञों की एक प्रमुख विशेषता है, जिसका प्रभाव उनके संगीत पर विशेष रूप से पड़ता है, अतः इसका विश्लेषण आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची :–

1. शोध प्रबंध – 'भारतीय संगीत की विभिन्न विधाओं के गायक एवं उनकी विशेषताएँ : एक विश्लेषण', डॉ. अनुराधा सिंह (2013) ति.मा.भा.वि. भागलपुर
2. निबंध संगीत – लक्ष्मीनारायण गर्ग (संकलनकर्त्ता) संगीत कार्यालय हाथरस
3- Raychaudhari, M. (1963) – Personality of the Indian musicians, Rorschachana Joponica, 6, 194-214
4- Prajnanand, S. (1979) – Music, It's form, Function and Value- Delhi : Munshiram Manoharlal Publishers.
5- Mohsin, S.M. (1968) – The Psychology of moral Values, Journal of General and Applied Psychology, 1, 1-8.
6- Parmesh, C.R. (1970) – Value Orientation of Creative Persons, Psychological Studies, 15, 108-112.

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

कर्मभूमि उपन्यास में स्वतंत्रता आंदोलन की पृष्ठभूमि

कुलदीप जाट
शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

साम्राज्यवादी अंग्रेजों ने अपनी राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए भारतीयों को अपार संकट में डाल कर जनता को अशिक्षित एवं पिछड़ा हुआ सिद्ध करके, उन्हें आत्महीनता के गहन अंधकार में डाल दिया। भारतीय जनता देशी राजतंत्र के साथ–साथ यूरोपीय शासन के अत्याचारों को भी झेल रही थी। व्यापार के बहाने भारत में प्रवेश करके यूरोपीयों ने अपनी आर्थिक महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए अल्प समय में ही हमारे यहाँ अपना सम्पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर लिया।

अवसरवादी ब्रिटिश शासक भारतीय जनता एवं मजदूर किसानों का लगातार शोषण कर रहे थे। इस गहन शोषणकारी नीति के विषय में शम्भुनाथ ने अपने लेख में लिखा है– ''पहले जमीन की मिल्कियत कृषक वर्ग के हाथों में थी। राजा जमीन का मालिक नहीं था। वह सिर्फ पैदावार का एक हिस्सा कर के रूप में लेता था। मुगल बादशाह यही कर मुद्राओं में लेते थे; लेकिन जमीन पर कृषकों का अधिकार और स्वायत्तशासी व्यवस्था कायम थी। ब्रिटिश शासकों ने अपने सामन्ती और पूंजीवादी स्वार्थों के अनुरूप भारतीय जनता पर अपना उपनिवेशवादी इजारा कायम किया। इसने जमींदारी और रैयतदारी प्रथा विकसित की; जिसका उद्देश्य करों की लूट से अपना सरकारी खर्च चलाना था। बहुतों को भ्रम है कि अंग्रेज भारत में सिर्फ पूंजीवाद लेकर आए। वस्तुस्थिति यह है कि उन्होंने भारतीय भूमि व्यवस्था में यूरोपीय सामन्तवादी पद्धति लागू की और कृषकों का दोहरा शोषण किया।''[1] ब्रिटिशों ने देश में अंधाधुंध लूटमार की, जिससे भारतीय जनता में इनके प्रति घृणा, असंतोष और विद्रोह उत्पन्न हुआ।

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द ने अपने समय में ब्रिटिश उपनिवेशवादी शोषणकारी नीतियों और जनता पर होने वाले अत्याचारों को देखा। प्रेमचन्द जी बीसवीं सदी के युगदृष्टा साहित्यकार थे। सन् 1918 से 1936 तक के समय में उन्होंने अपने कथा–साहित्य में स्वतंत्रता आन्दोलन के काल को अपनी कलम से जीवन्त किया। प्रेमचन्दजी के उपन्यासों में अनेक जगहों पर स्वतंत्रता आंदोलन का वर्णन मिलता है, जैसे गबन, रंगभूमि, कर्मभूमि आदि उपन्यासों में उन्होंने उपनिवेशवादी विद्रोह पर विशेषतः प्रकाश डाला है, किन्तु कर्मभूमि उपन्यास को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि कहा जा सकता है। इस उपन्यास के अधिकांश पात्र चाहे वे स्त्री हो या पुरूष वे सभी आन्दोलन का नैतृत्व करते हैं। इसमें सुखदा आम जनता पर होने वाले विद्रोह के विषय में कहती है – ''नगर की जनता अब इस दशा में न थी कि उस पर कितना ही अन्याय हो और वह चुपचाप सहती जाय। उसे अपने स्वप्न का ज्ञान हो चुका था, उन्हें यह मालुम हो गया था कि उन्हें भी आराम से रहने का उतना ही अधिकार है, जितना धनिकों को। एक बार संगठित आग्रह की सफलता देख चुके थे। अधिकारियों की यह निरंकुशता, यह स्वार्थपरता उन्हें असह हो गयी। और यह कोई सिद्धान्त की राजनैतिक लड़ाई न थी, जिसका प्रत्यक्ष स्वरूप जनता की समझ से मुश्किल से आता है। इस आन्दोलन का तत्काल फल उनके सामने था।''[2] जनता अंग्रेजों की विस्तारवादी नीतियों को भली प्रकार से समझ गई थी, अब उसमें विद्रोह के स्वर मुखरित होने लगे थे। प्रेमचन्द के अपनी कलम के माध्यम से जनता के संकटों को मूर्त रूप दिया था।

इस उपन्यास में अंग्रेज सिपाहियों की बर्बरता को इस प्रकार व्यक्त किया गया है जब सलीम को और उसके साथियों को सिपाहियों ने बर्बरता से पीटा था – ''अंधेरा हो गया था। आतंक ने सारे गाँव को पिशाच की भांति छाप लिया था। लोग शोक और आतंक के भाव से दबे, मरने वालों की लाशें उठा रहे थे। किसी के मुंह से रोने की आवाज न निकलती थी। जख्म ताजा था, इसलिए टीस न थी। रोना पराजय का लक्षण है। इन प्राणियों को विजय का गर्व था। रोकर अपनी दीनता प्रकट न करना चाहते थे। बच्चे भी जैसे रोना भूल गए थे।''[3] निर्बलों पर किए जाने वाले अत्याचार इतने बढ़ गए थे कि जनता की जान की कीमत पानी से ज्यादा न थी। इस पर ग्रामीण जनता की स्थिति तो और भी दयनीय हो गई थी। अंग्रेजों के अत्याचारों की भयावहता इतनी अधिक थी कि चारों ओर आतंक खून–खराबा और उस पर अत्यधिक निर्धनता ने ग्रामीणों के जीवन को नारीकिय बना डाला था।

प्रेमचन्द जी इस अभियान को लेखन के माध्यम से बढ़ाना चाहते थे, लेकिन जनता और अंग्रेजों

के मध्य अवमानना का यह खेल आगे चलकर इतना विषम बना दिया कि यह स्थायी विभाजन के रूप में परिणित हो गया। स्वतंत्रता संग्राम के संघर्ष में पहले उच्च वर्ग अपना योगदान दे रहा था, किन्तु अंग्रेजों की शोषणकारी नीतियों से सबसे ज्यादा त्रस्त निम्नवर्ग हो रहा था, इनमें छोटे कारीगर, मजदूर और दूसरों की जमीन पर कास्तकारी करने वाले दिहाड़ी मजदूर किसान आदि शामिल थे, ब्रिटिशों के आगमन के पूर्व भारत में वर्ग विभाजित समाज था, सबके अपने–अपने अलग कार्य–क्षेत्र थे, जिसमें शांतिपूर्वक कार्यों और मेहनत से समाज का निम्नवर्ग भी अपने जीवन का निर्वहन कर रहा था। अंग्रेजों की क्रूर भावना से इस निम्न वर्ग के हृदय में बदले की भावना का बीजारोपण हुआ। क्रूरता से अत्याधिक पीड़ित इन मजदूरों ने अपना हल–बैल आदि छोड़कर हथियार उठा लिए। इस तरह के भेदभावपूर्ण व्यवहार से दुःखी यह एक तरह से बहिष्कृत होकर दोहरी जनव्यवस्था का शिकार होते गए। इस तरह का अविश्वास 'कर्मभूमि' में सलीम के शब्दों से व्यक्त होता है – ''सलीम ने हारकर कहा – तो आखिर तुम चाहते क्या हो? लगान हम दे नहीं सकते। वह लोग (अंग्रेज) कहते हैं हम लेकर छोड़ेंगे। तो क्या करें? अपना सब कुछ कुर्क हो जाने दें? अगर हम कुछ कहते हैं, तो हमारे ऊपर गोलियां चलती हैं। नहीं बोलते तो तबाह हो जाते हैं। फिर दूसरा कौन–सा रास्ता है? हम जितना ही दबते जाते हैं, उतना वह लोग शेर होते हैं। मरने वाला बेशक दिलों में रहम पैदा कर सकता है; लेकिन मारनेवाला खौफ पैदा कर सकता है, जो रहम से कहीं ज्यादा असर डालने वाली चीज है।''[4] इस उपन्यास में प्रेमचन्दजी ने भारतीय जन–मानस के घोर विषम समय का वर्णन किया है, जब प्राकृतिक आपदा से त्रस्त किसान भूखों मर रहा था और अंग्रेज सख्ती से अपना लगान वसूल रहे थे। अंग्रेजों की इस दोहरी नीति के चलते भू–स्वामी किसान अपनी ही जमीन पर मुफ्त में मजदूरी करने के लिए विवश थे।

यही भारतीय इतिहास की बड़ी त्रासदी कही जा सकती है, जब किसान, मजदूर आदि निम्नवर्ग एक प्रकार से अछूतों की श्रेणी में आ गया था और यह क्रम लगातार चलता ही गया। प्रेमचन्दजी के उपन्यास ये सभी प्रसंग दर्शाते है, जहाँ देश एवं समाज की वास्तविक सत्ता धर्मभीरू अंग्रेजों के हाथों में थी, इनकी षडयंत्रकारी गतिविधियों का विरोध जनता साहसपूर्वक कर रही थी।

ब्रिटिश दासता के समय भारतीय जनता अंग्रेजों के अत्याचारों, प्राकृतिक आपदाओं और जगह–जगह होने वाले विरोधों को सह रही थी। इसी उपन्यास में नैना किसानों पर होने वाले अत्याचार के विषय में कहती है – ''गाँव के किसानों की जमीन कौड़ियों के दाम छीन ली गयी, और आज वही जमीन अशर्फियों के दाम बिक रही है; इसलिए कि बड़े आदमियों के बंगले बने। हम अपने नगर विधाताओं से पूछते हैं, क्या अमीरों की ही जान होती है? गरीबों की जान नहीं होती? गरीबों का रक्त जहाँ गिरता है, वहाँ हरेक बूंद की जगह एक–एक आदमी उत्पन्न हो जाता है। अगर इस वक्त नगर–विधाताओं ने गरीबों की आवाज सुन ली; तो उन्हें सेंत का यश मिलेगा, क्योंकि गरीब बहुत दिनों तक गरीब नहीं रहेंगे और वह जमाना दूर नहीं, जब गरीबों के हाथ में शक्ति होगी।''[5] इस प्रसंग में उपन्यासकार ने गरीबों के हृदय में उत्पन्न विद्रोह के स्वर को महसूस किया है। जनता अपने आर्थिक हितों के साथ–साथ अपनी स्वतंत्रता को पाने के लिए लालायित हो रही थी। जब पूँजीपतियों का लोभ इस प्रकार बढ़ गया था, उन्होंने जनता के हित को त्याग कर उसे शोषण का आधार बना दिया था। हिंसा और रक्तपात स्वतंत्रता संग्राम का आधार बन गया था, इसमें ब्रिटिशों के निहित स्वार्थों को उजागर किया था। जब जनता हाथों में शस्त्र थामें अंग्रेजों से प्रतिरोध लेने को बलवती हो उठी थी। स्वतंत्रता के रण में जब हर वर्ग, हर जाति ने एकता से अपने प्राणों की आहूति दी थी। लेकिन ब्रिटिशों ने अपने स्वार्थों को पूर्ण करने के लिए भारतीय जनता को एक–दूसरे का शत्रु बना दिया था।

हिन्दू–मुस्लिम के मन में शत्रुता का बीजारोपण करके अंग्रेज अपने कुटिल इरादों में सफल हो गए थे और देश में साम्प्रदायिकता के अंधकार में देश की शांतिप्रिय जनता को डाल दिया था। इस कथन की पुष्टि प्रेमचंद पर लिखे गए लेख के माध्यम से होती है – ''हमारी समझ में नहीं आता कि वह कौन–सी संस्कृति है जिसकी रक्षा के लिए साम्प्रदायिकता इतनी जोर बांध रही है। वास्तव में संस्कृति की पुकार एक ढोंग है, निरा पाखंड है और इसके जन्मदाता भी वही लोग है जो साम्प्रदायिकता की शीतल छाया में बैठे विहार करते है। यह सीधे–सादे आदमियों को साम्प्रदायिकता की ओर घसीट लाने का केवल एक मन्त्र है, और कुछ नहीं। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति के रक्षक वही महानुभाव और वही समुदाय है, जिनको अपने ऊपर अपने देशवासियों के ऊपर और सत्य के ऊपर कोई भरोसा नहीं, इसलिए अन्ततः एक ऐसी शक्ति की जरूरत समझते हैं, जो उसके झगड़ों में सरपंच का काम करती रहे।''[6] अंग्रेजों ने धर्म को संकीर्ण रूप देकर

भारत की जनता को पथ–भ्रष्ट किया, जिससे वे अपना निरंकुश शासन कायम कर सके। कर्मभूमि उपन्यास में परतंत्रता एवं साम्प्रदायिकता जैसी भयंकर समस्या को विश्लेषित किया गया है।

समकालीन परिस्थितियों की जटिलताओं को उपन्यासकार ने दंगों से होने वाली बुनियादी समस्याओं को पहचान कर, उनका यथावत चित्रांकन किया है। अपने राजनीतिक स्वार्थों के लिए ब्रिटिश शासकों ने सम्पूर्ण देश में दंगे–फसाद को फैलाया। कर्मभूमि में इस कथन की पुष्टि होती है, जब देशभक्ति में पुरूष ही नहीं महिलाएँ भी बढ़–चढ़कर अपनी भागीदारी देकर, स्वतंत्रता के समर में अपना सर्वस्व बलिदान दे रही थी, जब अमरकांत की पत्नी नैना ने एक सभा को सम्बोधित करते हुए अपने प्राणों की आहूति दी थी – ''रेणुका ने इस भाव का तिरस्कार करके कहा – नहीं भैया, गोली क्या चलती, किसी से लड़ाई थी? जिस वक्त वह मैदान में जूलूस के साथ म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर की ओर चली, तो एक लाख आदमी से कम न थे। उसी वक्त मनीराम ने आकर उस पर गोली चला दी। वहीं गिर पड़ी। कुछ मुँह से कहने न पाई। रात–दिन भैया ही में उसके प्राण लगे रहते थे। वह तो स्वर्ग गई; हाँ हम लोगों को रोने के लिए छोड़ गई।''[7] भारत की स्वतंत्रता को पाने के लिए देश के हर वर्ग, जाति स्त्री–पुरूष, वृद्ध, साधु, देश–भक्तों आदि ने अपना सहयोग दिया। अपने जीवन का बलिदान कर दिया।

निष्कर्ष :– निष्कर्षतः हम यही कह सकते हैं कि कर्मभूमि उपन्यास स्वतंत्रता–संग्राम की घटनाओं से भरा हुआ है। प्रेमचन्दजी ने परतंत्र भारतीय समाज की आन्तरिक दूर्दशा और आर्थिक संकट को प्रकट किया है। वे एक ऐसे कथाकार हैं, जिन्होंने अपनी सूक्ष्म–दृष्टि से अपने समकालीन समाज का अवलोकन कर, उसके यथार्थ को लिखा है। अतः यह सिद्ध होता है कि कर्मभूमि उपन्यास स्वतंत्रता समर का उद्देश्यपूर्ण साहित्य है, जो भारतीय स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि को विश्लेषितकरता है।

संदर्भ :–

1. समकालीन जीवन सन्दर्भ और प्रेमचन्द, लेख शम्भुनाथ प्रथम सं. 1980, पृ.सं. 77
2. कर्मभूमि, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली आवृति सं. 1997, पृ.सं. 218
3. वही, पृ.सं. 310
4. वही, पृ.सं. 314
5. वही, पृ.सं. 324
6. प्रेमचन्द, साम्प्रदायिकता और संस्कृति, उत्तरकथा, सम्पादन–सव्यसाची, संयुक्तांक 10–11, जनवरी–अप्रेल, 1982, पृ.सं. 21
7. कर्मभूमि, प्रेमचन्द, पृ.सं. 332

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

जनजातीय समाज–मिथकों का शिकार

डॉ. पवन कुमार साहू
मैदानगढ़ी, नई दिल्ली

भूमिका–मिथकों की पकड़ बहुत गहरी होती है। मिथक सदियों तक अपना आधार बनाते रहते हैं, बहुत ही चुपके–चुपके और अक्सर किसी खौफ़नाक परिणाम के लिए ख़ुद को तैयार करते हैं। जिस तरह मिथकों के निर्माण में सदियाँ लगती हैं उसी तरह इन मिथकों के प्रभाव से बाहर आने के लिए सभ्यताओं को बहुत कुछ करना पड़ता है, बहुत कुछ खोना पड़ता है। कई बार इन मिथकों के चेहरे बहुत खुबसूरत होते हैं लेकिन इनकी बदसूरती अप्रतिम होती है। मिथक ही है कि ब्राह्म्ण ईश्वर का सबसे प्रिय पूत्र होता है और मिथक ही है कि क्षत्रीय हमेशा योद्धा होता है, मिथक ही है कि व्यवसाय करने वाला केवल वैश्य समाज से ही होगा। यह तो हुए मिथकों के वे चेहरे जिनको देखकर गर्व का भाव जागता है और कभी कभी संतोष प्राप्त हेता है परन्तु कुछ मिथकों की कुरुपता आधुनिक मानव को हैरत में डाल देती है। जैसे कि शूद्र केवल सेवा करने के लिए जन्म लेता है और उसका शोषण पाप नहीं है।

मिथकों के ये सभी रुप भारत के उस समाज के हैं जो सभ्यता के केन्द्र में हैं या रहे हैं। लेकिन इसी भारत भूमि पर एक समाज ऐसा भी है जो भारत की मध्यकालीन और आधुनिक सभ्यता के केन्द्र में नहीं है। भारत का जनजातीय समाज इस धरती का सबसे प्राचीन समाज होने के बावजूद प्रगति के किसी भी नजरिये से सबसे पिछे खड़ा दिखने वाला समाज है। इस समाज की वर्तमान स्थिति को मिथकों ने कैसे प्रभावित किया है और कितना प्रभावित किया है, यह हम संक्षिप्त में ही सही परन्तु सम्रगता में देखने का प्रयास करेंगे।

मिथकों के सबसे विकृत प्रभाव को देखना हो भारत के जनजातीय समाज को देखिये। कोई ऐसा प्रभाव भी नहीं जिसे समाप्त कर दिया गया हो या जिसके प्रभाव को सीमित कर दिया गया हो अपितु एक ऐसे प्रभाव को जो अपने अतीत में शायद कुछ कम क्रूर रहा हो परन्तु इस वर्तमान में उसकी क्रूरता अप्रतिम हो गई है।

विषय वस्तु–भारत देश का यह सबसे तथ्यहीन दावा है कि वह एक आधुनिक देश है और उसके लिए नागरिक समानता या मानवीय उत्थान सबसे प्राथमिकता वाली बातें हैं। कहना न होगा कि आधुनिक विश्व के दावे में मानवाधिकारों की भूमिका सबसे बड़ी है। दुनियाँ के किसी भी कोने में मानवाधिकार की अवहेलना हो जाने पर पूरा विश्व चौकन्ना हो जाता है और सवालों की बारिश कर देता है, उस व्यवस्था या उस संस्था को कटघरे में खींचने लगता है। प्रजातांत्रिक मूल्यों वाले हमारे देश के लिए यह बात और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। क्योंकि प्रजातांत्र वाले देशों में प्रजा ही राज्य का स्वामी होता और सभी सरकारों की जवाबदेही प्रजा के प्रति ही होती है। लेकिन इन मूल्यों की किसी भी कसौटी पर भारतीय आदिवासी और सत्ता के रिश्ते को सहज नहीं कहा जा सकता। हालांकि यह समय का तकाजा था कि भारत का आधुनिक समाज अपने नजरिये में व्यापक बदलाव लाता और आदिवासी समाज के सम्बन्ध में प्रचलित मिथकों को तोड़ता और नये सिरे से रिश्तों को प्ररिभाशित करता। यह भी मुमकिन था कि इस देश का समाज अपने पूर्वजों के उन गुनाहों को बेबाकी से स्वीकार करता जो उनसे अनजाने में हो गये हो सकते हैं या शायद समय की सीमा इसकी इजाजत न देता हो। परन्तु ऐसा नहीं हुआ।

विषय को स्पस्ट करने के लिए आवश्यक है कि द्राविण प्रदेश के उस प्रारम्भिक संघर्ष को सामने रखा जाये जिसका वर्तमान में कोई मूल्य नहीं होना चाहिए। परन्तु जिसका प्रभाव आज तक भी समाप्त नहीं हुआ है।

हरिराम मीणा लिखते हैं–''जो इस धरती के मूलनिवासी थे, उन्होंने लम्बे अर्से तक जमीन और प्रकृति से जुड़ी अपनी व्यवस्था कायम की। संस्कृति, धर्म, समाज और भौतिक जीवन की एक मूल्यवान परम्परा विकसित की। बाहर से आक्रांता आये और युगों तक चले लम्बे आक्रमण, विरोध, संघर्ष और जय–पराजय की प्रक्रिया में मूलनिवासियों को सुविधाजनक परिस्थितियों से महरुम कर दिया। जो पकड़ लिये गये उन्हें दास–दलित बनाकर सेवा के लिए कोल्हु के बैल की तरह जोता गया और उनके ललाट पर अछूत की स्थाई मोहर लगा दी गई। जो खदेड़ दिये गये उन्हें दूर–दराज दुर्गम पहाड़–जंगलों में शरण के लिए बाध्य कर समाज से ही बहिस्कृत कर

दिया गया। इन सबके चलते अब तक उस मानवता को वर्चस्वकारी व्यवस्था के बुलडोजर के द्वारा रौंदा जाता रहा, फिर भी वह जनसमुदाय जिन्दा है, चूँकि उसमें गजब की प्राणशक्ति है। यह अलग बात है कि अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए उन्हें लगातार संघर्ष करते रहना पड़ा। अतीत के सुरासुर संग्रामों या आर्य–अनार्य संघर्षों से वर्तमान दौर के विकास के नाम पर विस्थापन तक आदिवासियों को अपने अस्तित्व के लिए लड़ते रहना है।''

प्राचीन इतिहास के उस प्रथम आक्रमण को अनदेखा नहीं किया जा सकता। वर्तमान या मध्यकाल के ही हिन्दुस्तान में आदिवासियों की दशा और दिशा को तय करने में उसी प्रथम आक्रमण की भूमिका सबसे महत्व वाली है। वह दौर उनके अस्तित्व के संकट वाला दौर था। लेकिन जल्दी ही उन्हें ज्ञात हुआ कि अब आदिवासियों को पहचान के संकट से भी जूझना होगा।

सनातनी संस्कृति की देन–सनातनी संस्कृति भारत के आदिवासी जातियों को त्रेता और द्वापर खंडों में असुर, दैत्य, दानव, राक्षस, प्रेत और ना जाने क्या–क्या कहकर संबोधित करती है और इन्हें मनुष्य होने से ही नकार देती है। यह विचारणीय प्रश्न है कि जंगल में रहने वाली जिन जातियों ने आर्य राजाओं का संघर्ष में हर तरह से साथ दिया उनकी ही उपस्थिति जंगलों में स्वीकार की जाती है और शेष सभी समाजों को ऐसे मिथकों में बाँध दिया गया कि उसके प्रभाव ने उनके अस्तित्व को ही नकार दिया गया या सवाल बना दिया।

इन जातियों पर सभी तरह की क्रूरता और अमानवीयता का आरोपण किया गया। इन्हें असभ्य कहा गया, बर्बर कहा गया और माँस–मदिरा का सेवन करके उत्पात मचाने वाला कहा गया । परन्तु क्या यही सत्य है ? देखिये इस स्थापना को–

थामसन तथा गौरेट्स ने अपनी पुस्तक "राइज एंड फुलफिलमेंट ऑफ ब्रिटिश रूल इन इंडिया" में इसके कारणों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि "भारत में 1855 के संथाल विद्रोह, जो कि उस समय एक शक्ति के रूप में उदय हुआ, ने ऐसे विरोध को जन्म दिया जो कि दो वर्षों के भीतर ही समाप्त हो गया। आदिवासी संथाल, जो कि प्रकृति की गोद में रहने वाले सीधे–सादे लोग हैं, हिन्दू घुसपैठ से परेशान हो गये थे। इनकी भूमि छिन गई तथा ये अधिक चालाक व धूर्त ऋणदाताओं के चंगुल में फंस गये। ये लोग ऐसे स्थानीय अधिकारियों के अधीन व उनके उत्तरदायित्य के अन्तर्गत थे जो इनकी कोई सहायता नहीं करते थे। फिर किसी चेतावनी के बिना बंगाल के बाहरी क्षेत्रों में तथा सौ मील तक कलकत्ता के आसपास यूरोपीय तथा भारतीयों के सिरों को तोड़ा गया, जहर बुझे तीरों को प्रयोग तथा घरों व बंगलों को जलाने जैसे कार्यों की भरमार हो गयी। यह सब नरसंहार तथा मृत्युदण्ड के रूप में धीरे–धीरे समाप्त हो गया।"

इतिहास का गहन अध्ययन करने से यह साबित हो जाता है कि जिसे आर्यजन असभ्य कह रहे हैं, दरअसल उनकी सभ्यता आर्य–सभ्यता से कहीं आगे तक विकसित थी। हड़प्पा सभ्यता के अवशेषों को देखकर ही कहा सकता है कि भारत के इन प्राचीन जातियों की संस्कृति बहुत विकसित थी, और बाद के कालों में जिस समृद्धि और सम्पन्नता पर आर्यावर्त इतरा रहा था वह दरअसल इन्हीं आदिपूत्रों की देन थी या उन्हीं से बलात् हरण किया हुआ था।

''ऋग्वेद में अनार्यों के लिए कटु भाषा का प्रयोग मिलता है, क्योंकि आर्यों को अनार्यों से कटु प्रतिरोध का सामना करना पड़ा था। आदिवासियों ने एक–एक इंच भूमि के लिए कटु सघंर्ष किया था। ये आदिवासी वेदों को नहीं मानते थे, परन्तु सभ्यता इनकी पर्याप्त उन्नत थी। इनके पास अपने किले भी थे! इन्हें दास, दस्यु आदि नामों से पुकारा जाता था। वेदों में हर स्थान पर इनकी पराजय का ही वर्णन है। अनार्यों पर आर्यों के द्वारा किये गये अत्याचार भी उनमें शामिल हैं।''

हमारे जंगलों में रहने वाली जातियाँ बहुत ही शांतिप्रिय लोग हैं। इसका प्रमाण एक युग है कि जीवन के लिए सुविधाजनक परिस्थितियों को छोड़कर इन्होंने एक दुरुह जीवन को स्वीकार किया। छिटपुट घटनाओं को छोड़ दिया जाये तो इसके कोई प्रमाण नहीं मिलते कि आदिवासी जातियों ने प्रतिरोध स्वरुप उपद्रव को निरंतर जारी रखा। विकसित सभ्यता, शहर, ऊपजाऊ धरती, अपने पशुधन, अपने उन लोगों को जिन्हें बन्दी बनाकर दलित बना दिया गया, छोड़कर जंगलों में पलायन करने वाले इस आदिवासियों ने नये सिरे से जीवन को जोड़ना शुरु किया और अन्ततः जोड़ भी लिया परन्तु फिर कभी पलट कर उन क्षेत्रों की ओर नहीं आये जिनसे उन्हें पिछे धकेल दिया गया था। किसी भी सुर–असुर संग्राम को देख लें, हम पाते

हैं कि असुरों को उनके जंगल जीवन में बाहरी हस्तक्षेप का सामना करना पड़ा है। रावण चाहे जो भी था परन्तु उसने अयोध्या में आकर कोई उपद्रव तो नहीं ही किया था। ताड़का जंगल में ही मारी गई, सुर्पणखा की नाक भी जंगल में ही कटी।

ऊपरलिखित ऋगवेद के वर्णन को सामने रखकर समझा जा सकता है कि अनार्यों को आर्यों के द्वारा किये गये हमलों को झेलना पड़ा जिसका सामना अनार्यों ने डटकर किया। और बाद में इन्हीं अनार्यों के निए वेदों में दास और दस्यु आदि नामों का उल्लेख किया गया।

इन घटनाओं की प्राचीनता को देखकर इसपर ऐतराज की कोई खास वजह नहीं मिलती। वह समय ही ऐसा था। तब जय–पराजय को कहने और सुनने का यही तरीका था। यह अतिशयोक्ति हो सकती है परन्तु काल के अनुसार कोई चौंकाने वाली बात नहीं है यह। अगर इसे समय के साथ परिस्कृत कर लिया जाता या इसके प्रभाव क्षेत्र को ठीक तरीके से समझ कर उसे पुनः समायोजित कर लिया जाता। परन्तु हुआ ठीक इसके विपरित। आदिवासी सम्बन्धी इन मिथकों को और भी स्थायित्व प्रदान किया गया। इससे बड़ा इसका क्या प्रमाण हो सकता है कि बाद के कालों में आदिवासी समाजों के जीवन–स्तर में कोई सुधार हमें नहीं दिखता।

अंग्रेज आ जाते हैं और भारत आधुनिक दस्तावेज के रुप में दर्ज होने लगता है। पुराण काल फिर से दुहराया जाने लगता है। अंग्रेजों को ईमारती लकड़ी चाहिए। लकड़ी वाले जंगलों पर आदिवासी समाजों की हुकमत है। हुकूमत भी नहीं बल्कि एक रिश्ता है। प्राकृतिक जीवन के अपने सौन्दर्य का रिश्ता और आव" यकता अनुसार जंगलों से जीवन यापन की वस्तुओं को प्राप्त करने का रिश्ता। आदिवासी संचय में विस्वास नहीं करता। मिल–बाँट कर खाना और अपने अभाव में भी उत्सव वाला जीवन जीते चले जाना। परन्तु अंग्रेज जंगलों को लूटना चाहते थे। इस लूट को तेज करने के लिए जंगलों में आधुनिक व्यवस्था करना वाहते थे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जंगल अधिनियम 1765 बनाया गया और जंगलों में ठेकेदार बैठा दिये गये। आदिवासियों के लिए बनोपज की प्राप्ति प्रतिबंधित कर दिया गया। जंगल आदिवासियों के लिए मात्र निवास स्थान ही नहीं था बल्कि जंगल से ही आदिवासी को भोजन मिलता था। अब सीधा हमला आदिवासी के पेट पर था। जंगल आदिवासियों के जीवन की धूरी थे। अंग्रेजों ने जंगलों को आरक्षित क्षेत्र घोषित कर दिया और आदिवासियों के आवाजाही को सीमित कर दिया। अब आदिवासियों के शिकार, भोजन, परम्पराएँ सबकुछ छीन लिये गये। इसके कारण आदिवासियों को जंगलों से पलायन का विकल्प भी अपनाना पड़ा। ऐसी स्थिति में विद्रोह लाजिमी था और यह हुआ भी।

अयोध्या नाथ सिंह ने अपनी पुस्तक ''भारत का मुक्ति संग्राम'' में भारत के दो सौ साल के औपनिवेशकालीन इतिहास का अध्ययन करके बताया है कि जब ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत की व्यवस्था को अपने नियंत्रण में लेना शुरु किया था तभी से आदिवासियों ने ब्रिटिश कम्पनी से संघर्ष करना शुरु कर दिया था। इन दो सदियों में छोटे–बड़े 125 विद्रोह और संघर्ष हुए।''

आदिवासियों का संघर्ष किसी को पराजित करने या कुछ छीनने के लिए नहीं था। आदिवासी विद्रोहों के दो स्पस्ट कारण थे। पहला कि जंगल और प्राकृतिक संसाधनों पर आदिवासियों के अधिकारों को सीमित किया जा रहा था दूसरी महत्वपूर्ण बात यह थी कि आदिवासी समाज की अपनी एक अलग प्रकार की शासन व्यवस्था थी, इसमें अंग्रेजों के द्वारा हस्तक्षेप किया जा रहा था। आदिवासियों का विद्रोह तो 1768 ईस्वी से प्रारम्भ हो गया था जिसे चुआड़ विद्रोह या जंगल महल विद्रोह कहते हैं।

अंग्रेजों के लिए ये आदिवासी विद्रोह बड़ी चिन्ता का कारण बनने लगे क्योंकि इन विद्रेहों में स्थानीय दूसरे सभी समाजों का सहयोग भी आदिवासियों को प्राप्त हो रहा था। अतः यह आवश्यक हो गया था कि आदिवासी समाज को हिन्दुस्तान के दूसरे सभी समाजों से अलग–थलग कर दिया जाये।

इस प्रकार गिरिजनों के जीवन में मिथकों का एक और सुनियोजित हमला प्रारम्भ हुआ। 1871 में अंग्रेजी हुकूमत ने आपराधिक जनजाति अधिनियम बनाया। इसके तहत आदिवासी आबादी की कुछ जातियों को हमेशा के लिए अपराधी मान लिया गया। 1947 में जब देश आजाद हुआ, उस समय लगभग 128 जनजातियाँ, जिनकी आबादी भारत की कुल आबादी का एक प्रतिशत थी, पर अपराधी का लेबल चस्पा था। 1952 में इन्हीं आपराधिक जनजातियों का विमुक्त जाति का नाम दिया गया। हालाँकि आजादी के बाद के भारत में इस अधिनियम में कई बदलाव

किये गये परन्तु इसके मूल भाव में कोई परिवर्तन हीं आया। कहने की आवश्यकता नहीं कि अपराध के मूल कारणों को कभी भी देखने का प्रयास नहीं किया गया और न ही उनके निवारण का कोई प्रयास किया गया। बल्कि इसे जन्म आधारित मान लिया गया।

निर्णय–पौराणिक काल से लेकर अंग्रेजी हुकूमत तक आते–आते हो सकता है कि हम इस बात को बहुत महत्व न दें, लेकिन आजाद भारत अपने इस उत्तरदियित्व से खुद को मुक्त नहीं कर सकता कि आखिर क्यों देश की इतनी बड़ा आबादी अतीत में प्रचलित अफवाहों का शिकार रहे। दुनियाँ के सभी हिस्सों में हम मानवीय समानता को लेकर जागरुकता पाते हैं और यह भी स्वीकार करता हूँ मैं कि संवेदना के स्तर पर भारत दुनियाँ के ऐसे किसी भी प्रयास के साथ अपनी आवाज़ बुलंद करता है। लेकिन तब अपने ही देश के भीतर आकर हम आखिरकार किस जड़ता के शिकार हो जाते हैं कि सबसे ज्वलंत समस्याओं की सबसे कठोर जमीन को स्पर्ष करने से भी परहेज करने लगते हैं। राज्य का जनजातियों के प्रति दृष्टिकोण आज भी 19 वीं शताब्दी वाले भारत से प्रभावित है। आज की आवश्यकता है कि इन समुदायों के बीच गम्भीरता से काम हो ताकि इन्हें इनकी समस्याओं के लिए तैयार किया जा सके जिससे कि अपनी समस्याओं से इन्हें बाहर आने में मदद मिले।

आजाद भारत के तिहत्तर सालों में मानवीय समानता के नाम पर हमने जो कमाया है वह बिल्कुल भी पर्याप्त नहीं है, बावजूद इसके हमारे नारों में कभी कोई कमी नहीं आई है। अगर में कहूँ कि बढ़ते हुए समय के साथ भारत ने आदिवासी जीवन को और भी दुरुह बना दिया है तो यह गलत नहीं होगा। औद्योगिक विकास के राजपथों के रुख को देख लिजिए आप। आपको केवल और केवल यही नजर आयेगा कि इन राजपथों का गुजरना जिन बस्तियों और जिन्दगियों के सीने पर से हो रहा है वो जंगल ही है। हम कह सकते हैं कि आज फिर से सभ्यता की खाल पहनकर हम रोंद रहे हैं जंगलों को और जंगल के लोगों को।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. प्रोग्या घटक, 1 मार्च 2015, फारवर्ड प्रेस के 2015 अंक में प्रकाशित
2. ब्लाग–मिथक, इतिहास और आदिवासी–हरिराम मीणा–परिषद साक्ष्य, धरती का ताप, जनवरी–मार्च 2006
3. राइज एण्ड फुलफिलमेंट ऑफ ब्रिटिश रुल इन इंडिया–थामसन तथा गौरेट्स
4. खर्टे, अजय 2018,''आदिवासी कौन हैं!!'' डॉ. अजय खर्टे।
5. जनजातीय कार्य मंत्रालय 2018, ''होम। जनजातीय कार्यालय भारत सरकार,''https://tribal.nic.in/hindi/indexh.aspx.
6. कंगाली, माती रावण 2011, गोंडवाना का सांस्कृतिक इतिहास, तिरुमाय चन्द्रलेखा कंगाली, जयलता रोड नागपूर–4400022।
7. हाशिये से बाहर, सम्पादक रजत रानी 'मीनू', श्री साहित्यिक संस्थान 2001
8. आदिवासी समाज और शिक्षा, रामशरण जोशी, अनुवादक–अरुण प्रकाश, ग्रन्थ शिल्पी प्रकाशन,1997
9. चिन कुमार जैन का ब्लाग, उपनिवेशवाद के आदिविद्रोही आदिवासी और भारत का संविधान, न्युज 18, 2 अप्रैल 2020।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारतीय दर्शन और समाज–व्यवस्था

जितेन्द्र गिरि
शोधार्थी, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

भारत के वर्तमान सामाजिक जीवन की तथा उसके गुण–दोषों की विवेचना बहुत व्यक्तियों द्वारा हुई है तथा होती रहती है, परन्तु भारतीय समाज–व्यवस्था का वैज्ञानिक रीति से अध्ययन इतने कम विद्वानों ने किया है कि आश्चर्य होता है।[1] इस कारण आगे दिये विचारों का समर्थन अधिकांशतः शास्त्रों के ही उद्धरणों के आधार पर है तथा केवल प्रास्ताविक विवेचना में ही जहाँ आवश्यक और सम्भव प्रतीत हुआ है वहीं कुछ विद्वानों के उद्धरण दिये गये हैं।

भारतीय समाज–रचना दर्शन पर आधारित है। इसीलिये धर्म के जितने भी ग्रन्थ हैं, सबमें इहलौकिक व्यवस्था के साथ–साथ पारलौकिक उन्नति का, ब्रह्म का तथा ब्रह्म–जीव एकता का वर्णन है। वेदों में अथर्ववेद को तो ब्रह्मवेद कहा ही गया है परन्तु अध्यात्म का वर्णन अन्य वेदों में भी उपलब्ध है।[2] वेदों के अतिरिक्त प्रत्येक पुराण में भी सभी धर्मों के वर्णन के साथ मोक्षधर्म का भी पूरा वर्णन किया गया है। स्मृतियों में मनुस्मृति का प्रारम्भ सृष्टि उत्पत्ति से होता है और मध्य में सम्पूर्ण धर्मों का वर्णन करते हुए सबके अन्त में मोक्षधर्म का विवेचन किया गया है। हारीतस्मृति के भी विवरण की यही योजना है। याज्ञवल्क्यस्मृति में सभी वर्णों और आश्रमों के धर्मों का वर्णन करने के पश्चात् अन्त में अध्यात्म–तत्त्व का वर्णन किया है। ऐसा ही दक्षस्मृति में भी है। इस तथ्य को डॉ. राधाकमल मुकर्जी ने स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि "जीवन की भारतीय योजना में सभी व्यक्तियों और उत्तरदायित्वों का निर्धारण अन्ततः दर्शन से ही होता है, जिसमें आत्मा–प्रकृति और परमात्मा के सम्बन्धों का विवेचन है।"[3] राधाकृष्ण ने लिखा है "हिन्दुओं के व्यवहारनियमों में कामनाओं के क्षेत्र को अनन्तत्व की सम्भावना के साथ जोड़ दिया है। उसने इहलौकिक और पारलौकिक तत्त्वों को साथ–साथ जोड़ दिया है।"[4] श्रीरंगस्वामी आयंगर का कहना है "एक अमानवीय स्रोत से समाज–व्यवस्था का सनातन आधार प्राप्त होने के कारण समाज–व्यवस्था दार्शनिक के क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाती है और दर्शनशास्त्र सामाजिक विचारक के क्षेत्र के अन्तर्गत। दर्शनशास्त्र के लेखक स्मृतियों को अधिकृत मान कर उनके उद्धरण देते हैं जबकि धर्मशास्त्र के लेखक मानव–सम्बन्धों और कर्तव्यों के आध्यात्मिक आधार का उल्लेख करते हैं। एक परमात्मवादी पद्धति में नैतिकता और दर्शन को पृथक किया जा सकता है।"[5]

भारतीय समाज–व्यवस्था दर्शन पर आधारित है, इसका अर्थ यह नहीं कि वह केवल एक आदर्श की ही वस्तु रही है तथा उसका व्यावहारिक उपयोग नही रहा। धर्मशास्त्रों ने अपनी प्रत्येक व्यवस्था के व्यवहार पर पूरा जोर दिया है और उसे पालन करने की आवश्यकता बतायी है।[6] धर्मशास्त्रों ने श्रेष्ठ आदर्श स्थिति का वर्णन किया है, फिर भी व्यवहार की दृष्टि से जो उस आदर्श तक नहीं पहुँच सकते उनके लिये व्यवस्था की गयी है। इसी कारण चार वर्ण बनाये गये हैं, क्योंकि प्रत्येक वर्ण ब्राह्मण निर्धारित श्रेष्ठ जीवन का पालन नहीं कर सकता। ब्राह्मणों के लिये भी परिग्रह की अर्थात् दान लेने की निन्दा की गयी है फिर भी ब्राह्मणों की जीविका चलती रहे, इसके लिये उनकी वृत्ति के तीन साधनों में दान भी एक साधन है।[7] इस प्रकार आदर्श का ध्यान रखते हुए भी व्यावहारिकता को नश्ट नहीं किया गया है। धर्मशास्त्रों में यह व्यवस्था रखी गयी है कि प्रत्येक अपनी सर्वण भार्या से ही विवाह करे[8] और प्रतिलोम विवाह की तो बहुत निन्दा की गयी है[9] परन्तु फिर भी प्रतिलोम सम्बन्धों से उत्पन्न जातियों का वर्णन किया गया है और उन्हें समाज में (चाहे छोटा ही क्यों न हो) स्थान दिया गया है।[10] राधाकृष्ण ने भारतीय दर्शन पर विचार करते हुए लिखते हैं– "पश्चिम में दर्शन एक ऐसी वस्तु है जो कि दार्शनिकों के मस्तिष्क तक ही सीमित है। उसकी व्यावहारिक जीवन में कोई उपयोगिता नहीं है। भारत में दर्शन को व्यवहार में लाया गया है।" दर्शन और व्यवाहर का इतना श्रेष्ठ समन्वय है कि एक ओर जहाँ आदर्शवाद अपने चरम रूप में दिखाई देता है, दूसरी ओर व्यावहारिकता भी उतनी ही उत्कट है। जब व्यक्ति के सामने निर्गुण ब्रह्म से एकता प्राप्त करने का लक्ष्य रखा जाता है, उस निर्गुण ब्रह्म से जो कि इन्द्रियों को अग्राह्य है और दृष्ट अनुभव से परे है, अथवा उस सम्पूर्ण विश्व के अन्दर के सभी जड़ और चेतन तत्त्वों

की मूलभूत एकता को सामने रख कर उसके आधार पर जीवन में व्यवहार करने की बात की जाती है तो यह एक ऐसा आदर्शवाद है जो केवल कल्पना की ही बात प्रतीत होती है। जब कि संन्यासी का और ब्राह्मण का ऐसा त्यागमय आदर्श सामने रखा जाता है जिसकी समता आज मिलना बहुत–ही दुर्लभ है, तब वह एक कोरा आदर्शवाद (Utopia) ही समझा जा सकता है। जब प्रत्येक गृहस्थ के दैनिक जीवन के लिये बहुत कड़ा अनुशासन निर्धारित किया गया है और उसके सम्पूर्ण दिन की बड़ी कड़ी दिनचर्या बताई गयी है तब यह विचार उठता है कि इस पर कभी व्यवहार भी किया जा सकता है अथवा नहीं ? परन्तु दूसरी ओर व्यावहारिकता भी इतनी अधिक है कि मनु का यह कथन कि "न मांस खाने में दोश है, न मदिरा पीने में, न मैथुन में, क्योंकि यह प्राणियों की (स्वाभाविक) प्रवृत्ति है," साधारण नैतिकता में विश्वास रखने वाले व्यक्ति को अखर जाता है। राजधर्म में जब शत्रु के साथ व्यवहार करने के, अथवा राजपुत्रों को वश में रखने के, अथवा विभिन्न साधनों से धन प्राप्त करने के नियम बताये गये हैं, तब उन नियमों की अनैतिकता देख कर यह स्वाभाविक है कि साधारण व्यक्ति उन नियमों के प्रति हृदय में तुच्छ भावों को धारण करे। जब वेश्याओं के विषय में स्मृतिकारों ने नियम दिये है[11] तब उन स्मृतिकारों की समाज–व्यवस्था के प्रति निरादर का भाव उत्पन्न हो जाना बहुत–ही स्वाभाविक है। यह सत्य है कि भारत ने ऐसी समाज–व्यवस्था बनायी जिसके द्वारा धीरे–धीरे एक आदर्श स्थिति तक पहुँचने का प्रयत्न किया, परन्तु यह भी सत्य है कि व्यावहारिक जीवन की सभी कमियाँ और आवश्यकताएँ भी स्वीकार की गयीं और व्यावहारिक जीवन में परिपूर्णता निर्माण करते हुए मनुष्य के दार्शनिक लक्ष्य को भी व्यावहारिक स्वरूप देने का प्रत्यन किया गया।[12]

जहाँ तक भारतीय दर्शन का प्रश्न है, भारत में छः दर्शन विख्यात हैं। परन्तु वह दःदर्शन भी परस्पर–विरोधी नहीं हैं। भारत का 'दर्शन' शब्द 'दृश्' धातु से बना है जिसका अर्थ है 'देखना' अतः दर्शन वह पद्धति है जिससे 'सत्य' का अथवा 'ब्रह्म' का साक्षात्कार किया जाये। इस दृष्टि से वह अंग्रेजी के Philosophy शब्द का पर्यायवाची नहीं हो सकता। मैक्समूलर जैमिनी की पूर्वमीमांसा को पश्चिमी दृष्टि से Philosophy नाम देने में हिचकता है क्योंकि उसमें वेद के कर्मकाण्ड–सम्बन्धी मन्त्रों का एकीकरण करने का प्रयत्न है फिर भी भारतीय दृष्टि से वह दर्शन ही है, क्योंकि उसमें कर्मकाण्ड के मार्ग से मनुष्य को ब्रह्म तक पहुँचने का मार्ग दिखाया गया है। मैक्समूलर ने यह स्वीकार किया है कि हमारी Philosophy की धारणा भारतीय दर्शन की धारणा से भिन्न है। इस भेद के कारण जहाँ पश्चिम में दर्शन की विभिन्न पद्धतियाँ परस्पर–विरोधी हो सकती हैं, कम–से–कम सब स्वतन्त्र विचारधाराएँ रखती हैं, वहाँ भारत में ऐसा नहीं है। भारत में सभी एक सत्य को देखने के विभिन्न प्रकार–मात्र हैं जिनमें मूलतः कोई भेद स्वीकार नहीं किया जाता है।[13] विभिन्न दर्शनों के विषयों का विवेचन करने पर यह बात और भी स्पष्ट हो जायेगी। न्यायसूत्रों में तर्क के द्वारा ब्रह्म की प्राप्ति (मोक्ष–प्राप्ति) का साधन बताया गया है। इन सूत्रों का प्रारम्भ यहीं से किया गया है कि निःश्रेयस् की प्राप्ति प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन आदि सोलह तत्त्वों के ज्ञान से होती है। इसमें आत्मा का अस्तित्व सिद्ध करते हुए तथा आत्मा अनित्य है यह बताते हुए कर्मफल की प्राप्ति का कारण ईश्वर को बता कर ब्रह्म का अस्तित्व सिद्ध किया गया है। वैशेषिक में आधिभौतिक तत्त्वों का विवेचन है और इस सबके मूल में ब्रह्म है तथा इनकी विवेचना से मोक्ष ही मनुष्य के जीवन का लक्ष्य होना चाहिए यह दिग्दर्शित किया है। वैशेषिक सूत्रों में कणाद का कहना है[14] "द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, नामक पदार्थों के साधर्म्य और वैधर्म्य का तत्त्वज्ञान धर्म–विशेष (वैशेषिक) से उत्पन्न होने के कारण निःश्रेयसकारी है" और उसमें प्रारम्भ में धर्म को अभ्युदय तथा निःश्रेयसकारी बता कर इस सब धर्म के प्रमाण के रूप में वेद बताये गये हैं क्योंकि वे परमात्मा (ब्रह्म) के शब्द हैं। इतना ही नहीं इन सूत्रों में आत्मा की स्वीकृति है तथा यह कह कर कि इन्द्रियों के अनुभव सर्वगम्य न होने के कारण इन्द्रियों तथा उनकी अनुभूत वस्तुओं से परे भी कुछ है, ब्रह्म को स्वीकार किया गया है। न्याय में बुद्धि के द्वारा तथा वैशेषिक में प्रत्यक्ष संसार के विवेचन से–अर्थात् दोनों पद्धतियों में भौतिक साधनों से–इस संसार से मुक्ति की विवेचना की गयी है।

धर्म वह साधन है जो मनुष्य द्वारा अर्थ और काम के उपभोग को मर्यादित करता हुआ उसे मोक्ष की ओर ले जाता है। इसीलिये धर्म की विशेषिक सूत्र में व्याख्या की गयी है "जिसके द्वारा अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो वह धर्म है।"[15] इससे श्रेष्ठ और पूर्ण धर्म की व्याख्या हो ही नहीं सकती। वायुपुराण में भी धर्म की व्याख्या करते हुए कहा है "स्मृतियों ने कुशल करने वाले कर्म को धर्म तथा अकुशल करने वाले कर्म को अधर्म बताया है। धर्म का

धारणा और धृति अर्थ होने के कारण जो धारण करता है जिससे व्यवस्था बनी रहती है उसे धर्म कहा जाता है। जिससे धारणा नहीं होती और जिससे महत्व (सुयश अथवा सम्मान) प्राप्त नहीं होता उसे अर्धम कहते हैं। इस प्रसंग में आचार्य लोग उसे धर्म कहते हैं जिसके आचरण से ईष्ट की प्राप्ति हो।"[16] इस व्याख्या में भी इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की कुशलता अथवा दोनों प्रकार की सिद्धि की ओर संकेत किया गया है। क्योंकि धर्म शब्द 'धारणा' का अर्थ व्यक्त करने वाली 'ध' धातु से बना है इसलिये धर्म का यह भी भाव है कि उससे समाज की धारणा होती है। अर्थात् धर्म के आधार पर व्यक्ति तो अर्थ और काम का मर्यादित उपभोग करते हुए मोक्ष की ओर बढ़ता है परन्तु क्योंकि धर्म के द्वारा अर्थ और काम के उपभोग की मर्यादाएँ निश्चित रहती हैं इसलिये उसके द्वारा समाज के अन्दर व्यवस्था भी स्थापित होती है और अर्थ और काम के अनियंत्रित उपभोग से समाज में अधिकाधिक प्राप्ति की लालसा के कारण उत्पन्न पारस्परिक प्रतियोगिता और संघर्ष रुक कर समाज के सुखी और समन्वयात्मक जीवन की व्यवस्था का साधन है। धर्मशास्त्रों में जिस धर्म का अर्थात् जिस समाज–व्यवस्था का वर्णन किया गया है वह ऐसा ही धर्म है जो अर्थ और काम के नियन्त्रित उपभोग की अनुमति देते हुए मनुष्य की वश्त्ति मोक्ष की ओर मोड़ देता है और समाज–जीवन में व्यवस्था उत्पन्न करता है।

सन्दर्भ सूची :–

1. रंगस्वामी आंगर–हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ एकॉर्डिंग टु धर्मशास्त्राज, पृ.–254
2. मैकडोनल–हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर, पृ.–189
3. इण्डियन स्कीम ऑफ लाइफ, पृ.–83
4. रंगस्वामी आंगर–हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ एकॉर्डिंग टु धर्मशास्त्राज, पृ.–79
5. रंगस्वामी आंगर–हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ एकॉर्डिंग टु धर्मशास्त्राज, पृ.–25
6. मनुस्मृति, 1 ।108
7. मनुस्मृति, 1 ।17
8. आप. 2 ।6 ।13 ।1
9. मनु. 10 ।41, गौतम 4 ।20
10. याज्ञ. 1 ।91–96
11. कौटिल्य–अर्थशास्त्र अधिकरण 13, 1 ।5,1 ।7,5 ।2 शान्तिपर्व 140 अध्याय
12. मनुस्मृति 2 ।209
13. सिक्स सिस्टम्स ऑफ फिलॉसोफी, पृ.–197
14. न्यायसूत्र 1 ।1 ।1, 3 ।1 ।19
15. महाभारत 1 ।2
16. महाभारत 59 ।27–28

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारत में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों पर कोविड–19 लॉकडाउन का प्रभाव

महेश कुमार तिवारी
प्रवक्ता, एम.सी.एच.ई., इलाहाबाद

परिचय :– चीन के वुहान शहर से निकला कोरोना वायरस (कोविड–19) ने पूरे विश्व में भय का माहौल पैदा कर दिया है। यह भय सर्वव्यापी है। यह हमारे देश व दुनिया के लिए एक असाधारण समय है न भूतो न भविष्यति। इस बीमारी के लिए एक पुष्ट इलाज के अभाव ने लोगों की चिंताओं को अत्यधिक बढ़ा दिया है। यह चिंता जायज भी है तथा तब तक नहीं जाने वाली है जब तक कि एक विश्वसनीय व सर्वसुलभ टीके का निर्माण नहीं हो जाता है। अतः इस तरह की चिंता की भावना ने समाज के कामकाज में जबरदस्त उथल–पुथल पैदा किया है जिससे वैश्विक अर्थव्यवस्था बुरी तरह से प्रभावित हुई है। ऐसे समय में भारतीय अर्थव्यवस्था इससे अछूती कैसे रह सकती है। अद्यतन आंकड़ों के अनुसार भारत में वित्तीय वर्ष 2019–20 में जी0डी0पी0 में वृद्धि दर 2 प्रतिशत से भी कम हो सकती है, ऐसा अनुमान है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) व सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (CMIE) ने भी अपनी रिपोर्टो में इस तरह की चेतावनी जारी की थी। कोविड–19 के कारण वैश्विक लॉकडाउन ने बेरोजगारी को अत्यधिक बढ़ा दिया है। इस तरह कोविड–19 संकट गम्भीर 'स्वास्थ्य संकट' से कहीं बढ़कर है तथा जिस तरह से इसने अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित किया है 'इसे संकट के भीतर संकट' के रूप में देखा जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) ने अपनी रिपोर्ट में इस संकट को द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न सबसे बड़ा संकट है। आई.एल.ओ. के अनुसार वैश्विक रूप से 25 निलियन से अधिक लोगों का रोजगार इस संकट के कारण प्रभावित हुआ है। संगठन का यह अनुमान है कि पूरे विश्व में कुल श्रम कार्य बल से 5 में 4 लोग इस लॉकडाउन से प्रभावित हुए हैं। अमेरिका, ब्रिटेन, कनाड़ा, यूरोप के अधिकांश देश तथा एशियाई देशों में से अधिकांश में बेरोजगारी में बेतहाशा वृद्धि हुई है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की प्रमुख क्रिस्टालिना जार्जिवा के अनुसार वर्तमान में विश्व '1930 की महान मन्दी' के बाद का सबसे बड़े आर्थिक संकट के दौर से गुजर रहा है।

लॉकडाउन के दौरान रोजगार व बेरोजगारी की स्थिति :– भारत में कोविड'19 महामारी से निपटने के लिए लगाए गये लॉक डाउन ने बड़े पैमाने पर बेरोजगारी की समस्या को बढ़ा दिया है। सेन्टर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी के आकड़ों के अनुसार, अप्रैल के पहले हफ्ते में बेरोजगारी दर 23 फीसदी पहुँच गयी थी। करीब 12 करोड़ नौकरियाँ जाने की बात कही गयी थी। अन्य अध्ययनों से भी यह बात पुष्ट होती है कि अनलॉक की प्रक्रिया शुरू होने तक भारत में कुल 14 करोड़ लोगों की नौकरी जा चुकी थी। भारत में बेरोजगारी की समस्या पहले से ही चल रही थी। एन.एस.एस.ओ. के अनुसार वर्ष 2017–18 में बेरोजगारी दर 6 प्रतिशत से अधिक थी। यदि वित्तीय वर्ष 2014 व बाद के वर्षो में देखा जाय तो मोटे तौर पर संवृद्धि दर तथा बेरोजगार लगभग बराबर रही है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट के अनुसार भारत में असंगठित क्षेत्र के 40 करोड़ से ज्यादा श्रमिक कोविड–19 महामारी से उत्पन्न आर्थिक संकट, फलस्वरूप बेरोजगारी के कारण अत्यधिक गरीबी की ओर धकेल दिये जायेंगे। भारत में लगभग 90 प्रतिशत श्रमिक असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत हैं। अतः बेरोजगारी की मार भी सबसे अधिक इन्हीं पर पड़ी है। हालांकि (यदि सरकारी या राजकीय सेवा में कार्यरत लोगों को छोड़ दिया जाय तो) कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं रहा है। मार्च 2020 में जहाँ बेरोजगारी की दर 8.7 प्रतिशत थी अब बढ़कर 23.8 प्रतिशत तक पहुँच गयी है जो अभी तक की अधिकतम दर है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कार्यरत श्रम को अनेकों प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे उत्पादक क्षेत्र के आधार पर, शिक्षा के आधार पर, उद्योगों के वर्गीकरण के आधार पर, संगठित तथा असंगठित श्रम के आधार पर आदि। यहाँ हम मुख्य रूप से संगठित एवं असंगठित क्षेत्र में बाँट कर इनका अध्ययन करेगें। चूंकि कोविड–19 से सबसे अधिक असंगठित क्षेत्र का श्रमिक है जो अपेक्षाकृत कम शिक्षित भी है (या अकुशल श्रमिक भी कह सकते हैं), प्रभावित हुआ है। अतः असंगठित क्षेत्र ही अध्ययन के केन्द्र बिन्दु में है। निम्नलिखित सारणी में भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों द्वारा कितना रोजगार उपलब्ध कराया जाता है उसका एक तुलनात्मक अध्ययन प्रतिशत के रूप में 2018–19 के आंकड़ों के आधार पर किया गया है :–

सारणी

Table Sectoral breakdown of employment by employment category
(in % 2018-19)

Sectors	Share of employment in total employment	Regular Formal	Regular Informal	Self Employed	Casual Workers	Total
Agriculture	42.43	0.08	1.12	74.13	24.67	100
Mining & Quarrying	0.42	28.56	23.66	9.25	38.52	100
Manufacturing	12.03	16.49	27.17	42.95	13.38	100
Electricity, Gas & Water Supply	0.56	45.27	31.51	19.44	3.78	100
Construction	12.14	1.60	3.88	10.83	83.68	100
Trade, Hotel & Restaurants	12.63	4.69	23.02	67.72	4.57	100
Transport, Storage & Communication	5.95	20.37	29.76	38.39	11.47	100
Finance, Business, Real Estate	3.37	41.53	26.55	30.08	1.85	100
Public Administration, Health, education	10.48	36.98	38.82	20.15	4.04	100
Total	100	9.66	14.13	52.04	24.16	100

Source: Kapoor (2020) based on PLFS 2018-19 unit data

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों पर कोविड–19 का प्रभाव :– उपर्युक्त सारणी में भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार की स्थिति को दर्शाया गया है। उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि सबसे अधिक रोजगार प्रदान करने में जिन क्षेत्रों का अधिक योगदान है उनमें कार्यरत अधिकतर श्रमिक असंगठित श्रमिक है। असंगठित श्रमिकों में वे सभी सम्मिलित किये जाते हैं जो असंगठित उद्यमों में कार्य करते हैं। इनमें ऐसे श्रमिक भी शामिल किये जाते हैं जो औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करते हैं परन्तु नियोजकों द्वारा रोजगार अथवा सामाजिक सुरक्षा से वंचित रखे जाते हैं। असंगठित क्षेत्र की मुख्यरोजगार जनन क्रियाएं हैं –

1– कृषि एवं सम्बन्धित क्रियाएं 2– व्यापार, रेस्त्रा एवं होटल जिसमें पर्यटन भी शामिल हैं, 3– शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसे कुछ क्षेत्र 4– गैर–फार्म क्षेत्र में मुख्यतः कार्य करने वाले लघु एवं मध्यम उद्यम और 5– परिवहन तथा निर्माण। । कोविड–19 महामारी से सबसे अधिक उपर्युक्त क्षेत्र का श्रमिक प्रभावित हुआ है तथा उसे अपने रोजगार को खोना पड़ा है। लॉकडाउन के दौरान श्रमिकों का एक राज्य से दूसरे राज्यों में अपने स्वगृहों को पलायन ने बेरोजगारी के आंकड़ों को और अधिक बढ़ा दिया। कार्य के लिए मौसमी माइग्रेशन भी ग्रामीण भारत की वास्तविकता है। यदि भारत में देखे तो माइग्रेशन के कई गलियारे हैं जैसे – उत्तर प्रदेश व बिहार से श्रमिक कार्य की तलाश में पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र और गुजरात में जाते हैं। इसी तरह उड़ीसा, पं0 बंगाल और पूर्वोत्तर के राज्यों से कनार्टक व आन्ध्रप्रदेश को, राजस्थान से गुजरात, मध्य प्रदेश से गुजरात और महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु से केरल को बहुत से श्रमिक काम की तलाश में जाते हैं। ये प्रवासी श्रमिक मुख्य रूप से निर्माण क्षेत्र में (40 मिलियिन), घरेलू कार्यो में (20 मिलियन), टेक्स्टाइल्स में (11 मिलियन), ब्रिक किन वर्क (10 मिलियन), यातायात, खनन, तथा कृषि क्षेत्र में

कार्य करते हैं। इन क्षेत्रों में कार्य करने वाले 90 फीसदी से ज्यादा श्रमिक लॉकडाउन के दौरान अपने अपने गृह राज्यों को पलायन कर गये। जिससे बेरोजगारी में वद्धि हुई तथा पूर्व व्यवस्था में उत्पादन कार्य पूरी तरह से ठप हो गया। जॉन सहास ने लॉकडाउन के दौरान 3196 प्रवासी श्रमिकों पर एक अध्ययन किया। इस सर्वे द्वारा कोरोना वायरस लॉक डाउन से प्रवासी श्रमिकों पर प्रभाव को निम्नलिखित ग्राफ द्वारा स्पष्ट किया गया है –

The impact of corona virus lockdown on India's migrant population

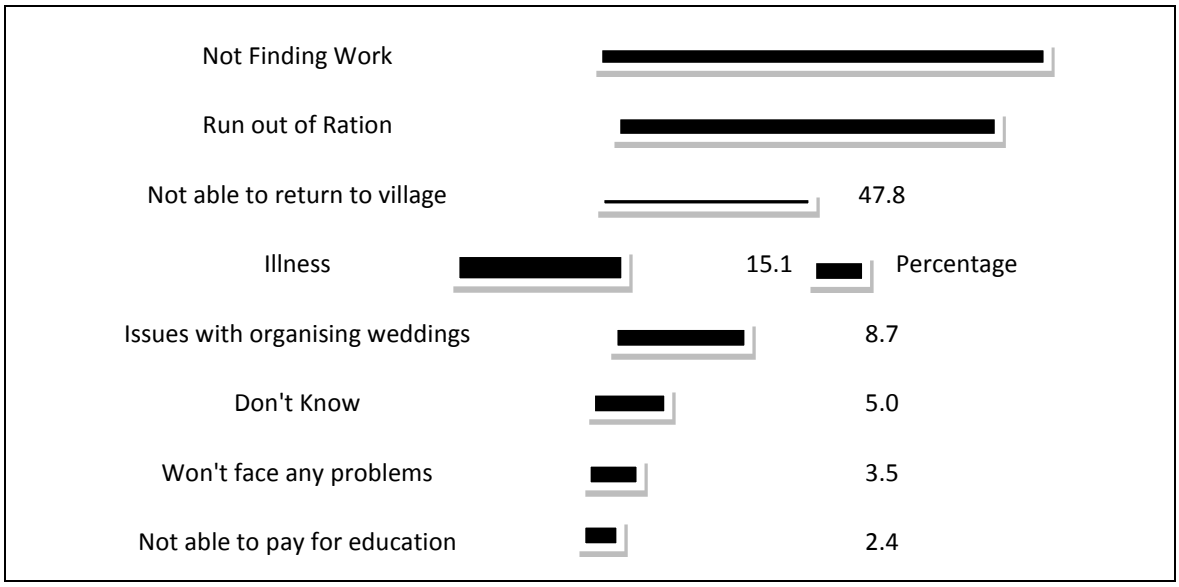

Impact of COVID-19 on Migrant Population
Source : Jan Saahas Survey (2020)

सर्वे के अनुसार 80 फीसदी प्रवासी मजदूरों को यह भय था कि लॉकडाउन खत्म होने से पूर्व ही उनके पास खाने के सभी सामान खत्म हो जायेगें। सर्वे से यह भी स्पष्ट हुआ कि 55 फीसदी प्रवासी श्रमिक 200 से 400 रूपये की दैनिक मजदूरी पर कार्य कर रहे थे, 39 प्रतिशत श्रमिक 400 से 600 रूपये तथा मात्र 4 प्रतिशत श्रमिक 600 रूपये से अधिक की दैनिक मजदूरी पर कार्यरत थे। श्रमिकों का कार्य के दौरान शोषण होता है अधिकत्तर श्रमिक कर्ज में दबे हैं तथा उनका रहन–सहन का स्तर निम्न है, चिकित्सा, स्वास्थ सुविधाएं तथा अन्य सामाजिक लाभों से भी वे वंचित हैं। जबकि सर्वे यह भी बताता है कि 99.32 प्रतिशत श्रमिकों के पास आधार कार्ड हैं, 86.7 प्रतिशत श्रमिकों के बैंक खाते/जनधन खाते हैं, 61.7 प्रतिशत के पास राशन कार्ड हैं तथा 23.7 के पास गरीबी रेखा के नीचे के कार्ड हैं। लेकिन लॉकडाउन के दौरान सरकारी सहायता का भरपूर लाभ इन्हें नहीं प्राप्त हो सका है। हालांकि सरकार ने इस सम्बन्ध में इनकी सहायता करने का भरसक प्रयास किया तथा आरम्भ में ही 1.70 लाख करोड की वित्तीय पैकेज की घोषणा कर दी। प्रत्येक व्यक्ति को उचित राशन की दुकानों से मुफ्त राशन उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी जो अभी भी जारी है। 40 करोड़ जनधन खातों में रू0 500/– प्रतिमहीने के हिसाब से तीन महीने तक डाला गया। सरकार ने अपनी स्वास्थ सुविधाओं में अभूतपूर्व विस्तार करते हुए वर्तमान में प्रतिदिन 14 से 15 लाख कोविड के टेस्ट करवा रही है तथा स्वास्थ के आधारभूत ढाँचे में आमूलचूल परिवर्तन लाया है। वेंटिलेटर, बिस्तर, ऑक्सीजन की उपलब्धता जैसे सामानों में अभूतपूर्व वृद्धि की गयी साथ ही साथ डाक्टरों, नर्सो व अन्य चिकित्सा कर्मियों के प्रति सरकार ने तथा लोगों ने सराहनीय संवेदनशीलता दिखाई है, फिर भी इस कोविड–19 महामारी में सब कुछ अपर्याप्त सा लग रहा है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में गिरावट विगत कई वर्षो से दिखाई पड़ रही थी। जिसे अधिकांश अर्थशास्त्री मंदी की ओर जाते हुए कह रहे हैं। यह गिरावट केवल भारत की आर्थिक नीतियों का ही परिणाम है ऐसा कहना उचित नहीं होगा क्योंकि इसी दौरान वैश्विक आर्थिक माहौल भी मंदी की ओर बढ़ रहा है । हाँ इस गिरावट के कारणों में हम भारत सरकार के द्वारा लागू किये गये कुछ आर्थिक सुधारों सम्बन्धी फैसलों को जल्दबाजी में व पर्याप्त पूर्व तैयारी को किये बिना लागू

किया जाना कह सकते हैं। इसी समय वैश्विक महामारी कोविड–19 ने इसे पटरी से उतार दिया। इस गिरावट से भारतीय अर्थव्यवस्था का असंगठित क्षेत्र सबसे अधिक प्रभावित हुआ।

कोविड–19 संकट से पूर्व ही विमुद्रीकरण व जी0एस0टी0 को लागू करने के गलत कार्यान्वयन के कारण असंगठित क्षेत्र झटके खा रहा था। यद्यपि विमुद्रीकरण व जी0एस0टी0 को लाना सरकार का एक प्रशंसनीय कदम था लेकिन इसके कारण संगठित क्षेत्र पर तो धनात्मक प्रभाव पड़ा परन्तु असंगठित क्षेत्र में इसकी प्रभाविता ऋणात्मक ही रही है। असंगठित क्षेत्र से जुड़ी करोड़ों छोटी व्यापारिक क्रियायें जो कि नकद लेन देन पर निर्भर थी या तो बन्द हो गयी या अत्यधिक घाटे में चली गयी। ऐसा प्रतीत होता है कि 2012 से 2018 के बीच लगभग 6.18 मिलियन लोगों ने जो अपनी नौकरी खोई वह विमुद्रीकरण व जी0एस0टी0 सम्बन्धी विवादित क्रिया कलापों का परिणाम थी। अतः कोविड–19 से पूर्व ही भारत का असंगठित क्षेत्र आर्थिक मंदी के झटके से प्रभावित था।

यह एक कड़वी सच्चाई है तथा यह समझने में कोई कठिनाई नहीं है कि व्यवसायिक ढाँचे और गरीब भारत के लोगों को अव्यवस्थित राष्ट्रव्यापी बन्दी ने भूख, भुखमरी और मरने के लिए छोड़ दिया। पिरियाडिक लेबर फोर्स सर्वे के अद्यतन आकड़े (2017–18) के अनुसार 57.1 ग्रामीण परिवार अपनी कुल आय का अधिकतम हिस्सा स्वरोजगार से तथा 25.1 परिवार आकस्मिक मजदूरी से कमा रहे थे। ये ग्रामीण परिवार अधिकतर सीमान्त खेती के कार्यो तथा छोटे छोटे कारीगरी के कार्यो में संलग्न थे। इसी तरह शहरी क्षेत्र के लोग छोटी मोटी रेहड़ी–पटरी की दुकानों, बहुत ही छोटे पैमाने के व्यवसायों आदि में संलग्न थे। कोविड–19 के कारण आर्थिक क्रियाओं के बन्द हो जाने के कारण इन करोड़ों लोगों की आँखे कष्ट में ही जागती तथा सोती थी। इस आर्थिक सुनामी के चपेट में आने से ये अत्यन्त नाजुक स्थिति का सामना करते रहे हैं। व्यवसायिक अनिश्चतता इनकी नाजुक दशा को जैसे चिढ़ा रही है। भारत में 90 प्रतिशत श्रमिक असंगठित क्षेत्र से जुड़े हैं जिनके लिए सामाजिक सुरक्षा का कोई उपबन्ध नहीं है यदि संख्यात्मक रूप में देखें तो इनकी संख्या लगभग 412 मिलियन हैं। इनकी दशा के उत्तरदायी कारणों को यदि कोविड–19 के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो यह एक प्रकार के 'घृणित व्यवहार' के कारण उत्पन्न हुआ कहा जा सकता है जिसे सरकार ने गैर आवश्यक वस्तुओं की दुकानों को लॉकडाउन के दौरान पूरी तरह से बन्द करके और गम्भीर बना दिया। 'घृणित व्यवहार' से यहाँ तात्पर्य कोविड–19 से बचाव के उपायों में शामिल एक महत्वपूर्ण कदम 'सामाजिक दूरी' (दो गज की दूरी) तथा घर से बाहर न निकलने की अपील जैसी गैर सामाजिक क्रिया से है जिसने आर्थिक गतिविधियों को एकदम ठप कर दिया। इस तरह की क्रियाओं ने अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया। इस अर्थव्यवस्था के मांग पक्ष व पूर्ति पक्ष अर्थात उपभोग व उत्पादन दोनों को समान रूप से प्रभावित किया, परिणामस्वरूप असंगठित क्षेत्र का श्रमिक जिसे पेड लीव नहीं मिलती उसका रोजगार छिना, मजदूरी में कमी आयी तथा कार्य के घंटे कम किये गये जिससे उसकी आय बुरी तरह प्रभावित हुई।

यद्यपि कोविड–19 लॉकडाउन ने वैश्विक व्यवस्था को ऋणात्मक रूप में प्रभावित किया लेकिन यदि हम लोगों के स्वास्थ को अलग रखें तो इसने सबसे अधिक अर्थव्यवस्थाओं को ही प्रभावित किया है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था भी इससे बुरी तरह प्रभावित हुई तथा अप्रैल से जून की तिमाही में भारत की जी0डी0पी0 की वृद्धि दर – 23.9 (ऋणात्मक) रही जो कि अब तक की ऐतिहासिक गिरावट है। अनेक मान्यता प्राप्त विश्वसनीय वैश्विक आर्थिक संस्थाओं ने भारत की जी0डी0पी0 में वृद्धि 2020–21 के दौरान 2 प्रतिशत से भी नीचे रहने का अनुमान लगाया है। भारतीय अर्थव्यवस्था के अधिकांश श्रमिक असंगठित क्षेत्र से सम्बन्धित है अतः अपेक्षाकृत सबसे अधिक व्यक्तिगत रूप से प्रभावित भी वही हैं।

कोरोना की महामारी में देश में भयंकर स्वास्थ समस्या को असंगठित मजदूरों के पलायन ने संकट ग्रस्त भी किया एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश को मजदूरों के पलायन ने संक्रामण को बढ़ाया। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि कोरोना संक्रमण और असंगठित क्षेत्र में कारोबार आदि पर सम्यक रूप से विचार किये बिना 23 मार्च 2020 से लॉकडाउन की घोषणा बिना सम्यक तैयारी से कर दी गई यद्यपि शासन स्तर पर मजदूरों को सुविधाओं के लिए आश्वस्त किया जाता रहा पर कोरोना से भयग्रस्त मजदूर के समक्ष विकल्पहीनता की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। कुछ राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार में पर्याप्त तालमेल के अभाव से ही अव्यवस्था को नियंत्रित नहीं किया जा सका। इस प्रकार की आपदाओं को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र सरकार को कुछ तात्कालिक और दूरगामी कदम उठाने की आवश्यकता है। उ0प्र0 और बिहार जैसे प्रदेशों को विशेष राज्य का दर्जा देकर यहाँ औद्योगिक इकाईयाँ

स्थापित की जायें जिसमें श्रमिकों का माइग्रेशन प्रतिबन्धित हो कृषि आधारित उद्योग लघु स्तर में स्थापित हों जिससे मजदूरों को अपने निवास से नजदीक ही रोजगार मुहैया हो सकें। एक आवश्यक कदम यह भी है कि असंगठित क्षेत्र के मजदूरों का रजिस्ट्रेशन किया जाये तथा उनके एक राज्य से दूसरे राज्य के विसरण का विवरण रखा जाये।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

- घोष अजीत 2019 – Employment in India, Oxford India Short Introduction. New Delhi, Oxford University Press.
- कपूर, राधिका 2020 – Covid - 19 and the State of India's Labour Market ICRIER Policy Series 18 June 2020
- लाहोटी, राहुल, अमित, रोसा, अब्राहम, सुरभि केसर और पारितोष नाभ 2020 – Hunger Grows as India's Lockdown Killr Job - Results of a Survey from 12 state : The India Forum, 5 June 2020
- सेन गुप्ता ए व अन्य (2009) – Skill Formation and Employment Assurance in unorganised Sector, National Commission for Enterprises in the unorganized Sector, New Delhi.
- बेमन, जन – "At work in the informal economy of india : A Perspective from the bottom up (OIP)" OUP Cataloquo (2016)
- आई0एल0ओ0 (ILO)", DOS "Statistical update on employment in the informal economy" Inbens, GW (2014)
- अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) 2020 'ILO Monitor : Covid - 19 and the world of work'. Second edition Briefing note 7 April 2020.
- थोराट, सुखदेव व पॉल अटवाल "The legacy of Social exclusion : A correspondence study of job discrimination in India". Economic and Political Weekly (2007): 4141-4145
- कन्नन, के0पी0 और जी0 रविन्द्रन "From Job less to Job - loss growth : Gainers and losers in India's employment performance during 2012-2018" Economic and Political weekly 54, No. 44 (2019) : 38 - 44
- बालामुरूगन, एस0 और बी0के0 हेमलता "Imacts on Demonetization : Organised and unorganised sector". IOSR Journal of Humanities and Social Sciences, e-ISSN (2017 : 2279 - 0837
- अग्रवाल, आभा "Demonlization and cashless economy" ACADEMICIA An International Multidisciplinary Research Journal 8, No. 6 (2018) : 73 - 80
- सेन्टर फॉर मोनिटरिंग इण्डियन इकोनॉमी रिपोर्ट (CMIE) – 2020
- जन साहस सर्वे रिपोर्ट 2020
- आर्थिक सर्वेक्षण 2019–20
- योजना, कुरूक्षेत्र तथा विभिन्न समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं के सामयिक अंकों के लेख आदि।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

किशोरों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का प्रभाव

जोगेन्द्री पठारिया
शोधार्थी, व्यावहारिक मनोविज्ञान, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर
डॉ. अर्चना चतुर्वेदी
प्राध्यापक, शासकीय मानकुंवर बाई, कला एवं वाणिज्य स्वशासी, महाविद्यालय, जबलपुर

सारांश :– आत्म–सम्मान हर व्यक्ति के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण होता है। इसमें व्यक्ति स्वयं का प्रत्यक्षीकरण एवं अन्य व्यक्ति उसका प्रत्यक्षीकरण किस रूप में कर रहे होंगे, का भाव निहित होता है। इसके विकास में व्यक्ति के वातावरण के साथ अंतःक्रिया की सुगमता का प्रभाव होता है। परिवार एवं अन्य व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया इसके विकास में सहायक होती है।

किशोरों में आत्म–सम्मान उनका स्वयं पर यह विश्वास की वह समर्थ, पूर्ण रूप से सक्षम, अर्थपूर्ण, सफल एवं प्रशंसनीय है। आत्म–सम्मान इस अवधारणा को इंगित करता है, कि उसका स्वयं के संबंध में मूल्यांकन जिसमें वह जो भी अनुभव करता है, वो उसके आत्म–सम्मान से जुड़ा होता है। वास्तव में आत्म–सम्मान का अर्थ किशोरों के मस्तिष्क की उस अवस्था से होता है। जब वह अपनी क्षमताओं, प्रभावों और सम्बन्धों का सही और वस्तुनिष्ठ आकलन करते है।

आत्म–सम्मान का उच्च होना जहाँ किशोरों को आत्म–विश्वासी, दृढ़ निश्चयी, उत्तरदायी, आशावादी बनाता है। जब उनका ये आत्म–सम्मान निम्न होता है, तो उनमें अपने उत्तरदायित्वों से दूर भागने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती हैं। यह देखा गया है, कि जो किशोर एवं किशोरियां अपने शरीर छवि आकृति के आकार से संतुष्ट नहीं रहते हैं, उनमें आत्म–सम्मान निम्न स्तर का पाया जाता है। जो कि किशोरों में शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति के विकास में सहायक होता है।

प्रस्तुत शोध कार्य में किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति में आत्म–सम्मान के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य–''किशोरों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान के प्रभाव का अध्ययन करना''। प्रस्तुत शोध कार्य में न्यादर्श के लिए 250 छात्र एवं 250 छात्राओं को प्राथमिक न्यादर्श के लिए चयन किया गया है, एवं इन पर आत्म–सम्मान के प्रभाव मापनी का प्रशासन, एवं फलांकन कर उच्च एवं निम्न प्रभाव के छात्र–छात्राओं को छांटकर उन पर शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति परीक्षण का प्रशासन व फलांकन किया गया है। निष्कर्ष स्वरूप यह पाया गया कि किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।

मूल शब्द :– आत्म–सम्मान, शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति (बॉडी–डिस्मॉर्फिक डिसऑर्डर)

प्रस्तावना :– व्यक्ति सदा से ही अपने मूल्यों और योग्यताओं में निर्णय, आकलन व मूल्यांकन करते रहते हैं, अर्थात् व्यक्ति में अपने स्व या आत्म को सम्मान एवं स्नेह देने की आवश्यकता सदा ही रहती है। आत्म–सम्मान की यह आवश्यकता जिसमें व्यक्ति अपने आप को सम्मान देना चाहता है। यह अर्जित प्रकृति की होती है, और इसकी उत्पत्ति विभिन्न प्रकार के कार्यों के संतोषजनक आत्म–अनुभूतियों से होती है। जब व्यक्ति को उसके परिवार, समूह या समाज के महत्वपूर्ण लोगों से मान–सम्मान या प्रशंसा मिलती है, तो उसमें सकारात्मक आत्म–सम्मान की भावना या प्रेरणा भी मजबूत होती जाती है। सुखी व सफल जीवन का सर्व सम्मत तत्व आत्म–सम्मान है। इसके अभाव में सफलता तो प्राप्त की जा सकती है, उपलब्धियां भी अर्जित की जा सकती हैं, लेकिन हमारा आत्म मन भी उतना ही सुखी, संतुष्ट और संतृप्त हो ये संभव नहीं। आत्म–सम्मान न होने पर जीवन में गंभीर अपूर्णता व रिक्तता आ जाती है, और ये रिक्तता एक गहरी कमी का अनुभव देती है। जो कि एक अनजानी रिक्तता, पीड़ा, असुरक्षा और अशांति से व्यथित कर देती है। व्यक्ति के आत्म–सम्मान की भावना उसके लिंग, आयु या उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के अनुसार होती है। अतः भिन्न–भिन्न व्यक्तियों में आत्म–सम्मान की भावना भी भिन्न–भिन्न होती है।

किशोरावस्था में आत्म–सम्मान की भावना का एक प्रमुख स्थान होता है, और आत्म–सम्मान की इस भावना का विकास उनमें स्वतः ही हो जाता है। जब

किशोर अपनी क्षमताओं पर विश्वास करना शुरू कर देता है, तथा उन्हें सहर्ष रूप से स्वीकार भी करता है, तो उसका आत्मसम्मान उच्च हो जाता है। वहीं जब किशोर स्वयं को कमजोर व पंसद नहीं करते तो उनका आत्म–सम्मान निम्न स्तर का होता है, और उनका व्यवहार असंतुलित एवं अवसाद, चिंता जैसी समस्याओं से परिपूर्ण रहता है। यह देखा गया कि जो किशोर एवं किशोरियाँ अपने शरीर छवि आकृति के आकार से संतुष्ट नहीं रहते है, तो उनमें आत्म–सम्मान निम्न स्तर का पाया जाता है।

सबेती; फहिमे तथा गोर्जीयन; जारा (Sabeti; Fahimeh & Gorjian Zahra) (2014) ने अबादान ईरान में ''स्थूल काय किशोरों के शारीरिक छवि संतुष्टि तथा आत्म–सम्मान के मध्य संबंधों का अध्ययन किया''। परिणाम में बताया कि शरीर छवि का अच्छा न दिखना एवं निम्न आत्म–सम्मान के लिए मोटापा एक प्रमुख कारण हो सकता है। फ्रेडरिक भौ.ए. एल. (Frederick; Shay; A.L.) (2014) ने छात्र–छात्राओं के आत्म–सम्मान और शरीर आकृति विसंगति के मध्य सहयोजन का अध्ययन किया। परिणामों के आधार पर इन्होंने बताया कि शरीर आकृति विसंगति और आत्म–सम्मान के मध्य उच्च धनात्मक सह–संबंध था। बंसल; श्रुति (Bansal; Shruti) (2017) ने पाया कि किशोरवय लड़कियों में शरीर छवि के प्रति असंतुष्टि की तीव्रता के कारण आत्म–सम्मान का स्तर भी कम हो जाता है। ये अध्ययन सुनिश्चित करते हैं, कि आत्म–सम्मान के स्तर कम होने से शरीर छवि के प्रति असंतुष्टि की भावना के विकास में वृद्धि होती है।

उपरोक्त संक्षिप्त विश्लेषणात्मक व्याख्या से यह स्पश्ट हो जाता है, कि किशोरावस्था के समय किशोरों के सकारात्मक एवं नकारात्मक आत्म–सम्मान का भाव उनके शरीर आकृति के प्रत्यक्षीकरण पर पड़ता है। निम्न आत्म–सम्मान या नकारात्मक आत्म–सम्मान होने पर किशोर अपने शरीर आकृति को लेकर भी असमंजस की स्थिति में रहते हैं, साथ ही उनका आस–पास के वातावरण के प्रति भी प्रत्यक्षीकरण सही नहीं होता, जो उनके निम्न आत्म–सम्मान को दर्शाता है। वहीं दूसरी तरफ यदि उनका आत्म–सम्मान उच्च रहता है, तो वे अपने आप में आत्म विश्वासी रहते है, और भविष्य के प्रति उन्मुख होते है। निम्न आत्म–सम्मान जहाँ उनमें आहार विकृति एवं शरीर आकृति–विकृति को जन्म देने में सहायक होता है। अतः इस दिशा में शोध कार्य किये जाने की आवश्यकता है, जिससे कि" शोरवय बालक–बालिकाओं के समूह को उनके शरीर आकार व आत्म–सम्मान के प्रति जागरूक किया जा सके, जिससे वे अपने शैक्षिक एवं पारिवारिक उत्तरदायित्वों पर ध्यान दे सके।

उद्देश्य :– किशोरों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति (Body Dysmorphic Disorder) पर आत्म–सम्मान के प्रभाव का अध्ययन।

चर– स्वतंत्र चर :– आत्म–सम्मान।
परतंत्र चर :– शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति (बॉडी–डिस्मॉर्फिक डिसऑर्डर)
नियंत्रित चर :– आयु 13 से 16 वर्ष के किशोर।

परिकल्पना :– किशोरों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यादर्श :– प्रस्तुत शोध कार्य में न्यादर्श निम्नानुसार लिया गया है–

तालिका क्रमांक–1
प्राथमिक न्यादर्श

समूह	संख्या
छात्र	250
छात्रा	250
कुल संख्या	**500**

इन छात्र–छात्राओं पर आत्म–सम्मान मापनी का प्रशासन एवं फलांकन कर उच्च एवं निम्न आत्म–सम्मान के छात्र–छात्राओं को अंतिम न्यादर्श में चयनित किया गया।

आत्म–सम्मान के प्रभाव के आधार पर अंतिम न्यादर्श निम्नानुसार है–

तालिका क्रमांक–2
आत्म–सम्मान संबंधी अंतिम न्यादर्श

आत्म–सम्मान का स्तर	छात्र	छात्रा	कुल संख्या
उच्च	44	40	84
निम्न	42	40	82

परीक्षण– प्रस्तुत शोध कार्य में निम्नांकित परीक्षणों का उपयोग किया गया है–
(1) आत्म–सम्मान मापनी– डॉ. मीनाक्षी बिस्वाल (2002)
(2) शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति परीक्षण (BDD) स्वनिर्मित एवं मानकीकृत

विधि :– प्रस्तुत शोध कार्य हेतु अनुसंधान की योजना

बनाई गई थी, जिसमें समष्टि से एक प्रतिनिधिकारी न्यादर्श का चयन कर मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग करके आंकड़े प्राप्त किये गये व उन पर सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग कर परिणाम प्राप्त किये गये। सर्वप्रथम विद्यार्थियों से आत्म–सम्मान मापनी को भरवाया गया एवं उच्च एवं निम्न प्राप्तांक के छात्र एवं छात्राओं को छांटा गया। आत्म–सम्मान के उच्च एवं निम्न समूहों के छात्र एवं छात्राओं की सूचियां अलग–अलग बनाई गई एवं इन पर शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति परीक्षण का विधिवत प्रशासन किया गया। इनके फलांकन के उपरांत आत्म–सम्मान के उच्च व निम्न स्तर के अध्ययन हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रांतिक अनुपात की गणना की गई।

विश्लेषण एवं व्याख्या :– प्रस्तुत शोध अध्ययन के प्रदत्त विश्लेषण के उपरांत निम्नानुसार परिणाम प्राप्त हुए–

तालिका क्रमांक–03
किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान के प्रभाव सम्बन्धी तुलनात्मक परिणाम

समूह	आत्म–सम्मान का स्तर	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
किशोर	उच्च	44	48.52	14.71	0.34	>0.05
	निम्न	42	49.64	15.58		
किशोरियाँ	उच्च	40	47.63	19.79	0.07	>0.05
	निम्न	40	47.88	11.71		
किशोर + किशोरियाँ	उच्च	84	48.10	17.21	0.28	>0.05
	निम्न	82	48.78	13.77		

स्वतंत्रता के अंश – 84,78,164
0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.99, 1.98
0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.64, 2.61

उपरोक्त तालिका में प्रदर्षित परिणामों से स्पष्ट होता है, कि किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है। प्राप्त क्रांतिक अनुपातों के मान क्रमशः 0. 34, 0.07 एवं 0.28 हैं, जो 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है। इससे स्पष्ट होता है, कि किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का प्रभाव नहीं पड़ा है। किशोरों का आत्म–सम्मान उनके मस्तिष्क की वह अवस्था है, जब वे अपनी क्षमताओं एवं अपनी शरीर आकृति का सम्मान करते है, व उनसे संतुष्ट रहते है। प्रतिनिधिकारी न्यादर्श समूहों में आत्म–सम्मान का स्तर उच्च है, जिससे उनकी शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का प्रभाव नहीं पड़ा है। क्योंकि आत्म–सम्मान व्यक्ति के शरीर आकृति आकार के प्रति उसके दृष्टिकोण व जैसा वो अनुभव करता है, उन सबका परिणाम है। किशोरों में आत्म–सम्मान की भावना का सबसे प्रमुख स्थान होता है, और आत्म–सम्मान की इस भावना का विकास उनमें स्वतः ही हो जाता है। किशोरावस्था में इस आत्म–सम्मान के भाव की स्वतः ही वृद्धि हो जाती है, वे अपने आपको समाज में वैसे ही देखना चाहते है, जैसे उनके परिवारजनों या जो उनके आदर्श हैं। जिस कारण उनमें आत्म–निर्भर बनने, प्रत्येक कार्य करने को तैयार रहने और अपने आदर्शों की नकल करने, वे सब भाव आ जाते है। किशोरों का आत्म–सम्मान उनका अपनी क्षमताओं के प्रति अवलोकन है, यदि किशोरों का आत्म–सम्मान उच्च है, तो उन्हें अपनी क्षमताओं पर अधिक विश्वास होगा और ये सकारात्मक स्व–प्रत्यक्षीकरण के फलस्वरूप होता है।

जब किशोर अपनी क्षमताओं पर विश्वास करना शुरू कर देता है तथा उन्हें सहर्ष रूप से स्वीकार भी करता है तो उसका आत्म–सम्मान उच्च हो जाता है। प्रस्तुत शोध के प्रतिनिधिकारी न्यादर्श समूहों में आत्म–सम्मान के स्वस्थ स्तर को इंगित कर रहा है।

इस संदर्भ में राथा कृष्णन; बालन तथा च्युएन; लो यी (Ratha Krishan Balan and Chuen Loh Yi 2011) ने अपने शोध में पुरूष विश्वविद्यालय मलेशिया के छात्रों के शरीर छवि प्रत्यक्षीकरण का अध्ययन किया। अध्ययनकर्त्ताओं ने छात्रों के आत्म–मूल्यांकन के द्वारा उनके शरीर असंतुष्टिकरण, पुरूषत्व प्रेरकों तथा आत्म–सम्मान, साथ ही साथ

उनके मध्य सम्बन्धों का भी अध्ययन किया। परिणाम स्वरूप बताया कि शरीर असंतुष्टि का उच्च आत्म–सम्मान के साथ धनात्मक सह–संबंध पाया जो यह दर्शाते है, कि वे एक स्वस्थ शारीरिक छवि का प्रदर्शन करते पाये गये। जो प्रस्तुत शोध परिणाम के समतुल्य है।

न्यिमेका; अबामारा सी. तथा सोलोमन, अगु ए., (Nnaemeka Abamara C. Solomon Agu A. 2014) ने छात्राओं के शरीर छवि और आत्म–सम्मान के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन किया परिणाम के आधार पर इन्होंने बताया कि शरीर आकृति, आत्म–सम्मान को सार्थक रूप से प्रभावित करती है।

बंसल; श्रुति (Bansal Shruti 2017) ने पाया कि किशोरवय लड़कियों में शारीरिक छवि, संतुष्टि तथा आत्म–सम्मान के मध्य संबंधों में शरीर छवि के प्रति असंतुष्टि की तीव्रता के कारण आत्म–सम्मान का स्तर भी कम हो जाता है। ये परिणाम प्रस्तुत शोध परिणाम से भिन्न है।

प्रस्तुत शोध निष्कर्ष यह प्रदर्शित कर रहे हैं, कि किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह पर शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का सार्थक प्रभाव नहीं पाया गया है। अतः पूर्व में ली गई परिकल्पना स्वीकृत होती है। शोधकर्त्ता के न्यादर्श में सम्मिलित किशोर एवं किशोरियों से उनके शरीर छवि आकृति व आत्म–सम्मान के विषय में चर्चा के दौरान यह अनुभव किया कि न्यादर्श समूहों में आत्म–सम्मान स्वस्थ स्तर का है, जिसे बनाए रखने के लिए उन्हें व्यक्तिगत एवं सामाजिक मार्गदर्शन की कुछ और आवश्यकता है। जिससे वे अपने इस आत्म–सम्मान के स्वस्थ स्तर को बनाए रखे एवं अपने शैक्षिक एवं व्यावसायिक कैरियर पर ध्यान दे सके।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है, कि आत्म–सम्मान हर व्यक्ति के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण होता है। इसमें व्यक्ति का स्वयं पर प्रत्यक्षीकरण एवं अन्य व्यक्ति उसका प्रत्यक्षीकरण किस रूप में कर रहे होंगे का भाव निहित होता है, इसके विकास में व्यक्ति के वातावरण के साथ अंतःक्रिया की सुगमता का प्रभाव होता है। परिवार एवं अन्य व्यक्तियों के साथ अंतःक्रिया इसके विकास से सहायक होती है।

निष्कर्ष :– किशोर, किशोरियाँ तथा किशोर एवं किशोरियों के सम्मिलित समूह के शरीर दुष्क्रिया आकृति–विकृति पर आत्म–सम्मान का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।

संदर्भ :–

- Abamara Nnaemeka, C. & Agu Solomon, A. (2014), Relationship between Body Image and self-Esteem among female Undergraduate Students of Behavioural Sciences, IOSR Journal of Humanities and Social Science, Volume 19, Issue 1, Ver.XII (feb 2014), PP01-05 e-ISSN : 2279-0837, P-ISSN : 2279-0845.
- Bansal, Shruti (2017), Relationship between Body Image satisfaction and self-Esteem in adolescent girls; Phonix-International Journal for Psychology and Social Science, Volume 1, Issue 2 : Page No. 1-84
- Frederick, Shay, A.L., (2014), Running head: Body image Disturbance and self-Esteem, The connections between body image Disturbance and self-Esteem in College Men and Women Mckendree University Shy-Frederick. pdf
- कपिल, एच. के. (2012)–अनुसंधान विधियाँ (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा–282004, पंद्रहवां संस्करण, पृ.सं.60
- Ratha Krishnan, B. & Chuen Loh Yi, (2011), Body image perception among Multi-ethnic male university students, Journal Kemanusiaan, Bil. 18, ISSN : 1675-1930
- सिंह, अरूण कुमार (2002) उच्चतर नैदानिक मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसी दास, द्वितीय संशोधित संस्करण, पृ.सं. 120
- सिंह, अरूण कुमार (2010) मनोविज्ञान, समाज शास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोती लाल बनारसी दास, नवम् संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण, पृ.सं. 37,38,39

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

खरगोन जिले में ''नर्मदा नदी के सरक्षण हेतु जन आंदोलन''

डॉ. रवीन्द्र सोहोनी, शोध निर्देशक
प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, राजीव गाँधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर, जिला मंदसौर (म.प्र.)
भारतसिंह भंवर
शोधार्थी

नर्मदा बचाओं आंदोलन भारत के पर्यावरण आंदोलनों की परिपक्वता का उदाहरण है। इसने पहली बार पर्यावरण विकास के संघर्ष को राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय बनाया जिसमें न केवल विस्थापित परिवार बल्कि वैज्ञानिकों गैर सरकारी संगठनों और आम जनता की भी भागीदारी रही है। नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध परियोजना का उद्घाटन 1961 में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने किया था। जिसमें गुजरात, मध्यप्रदेश तथा राजस्थान के मध्य जल वितरण नीति पर सहमति नही बन पाई। और 1969 में भारत सरकार ने नर्मदा जल विवाद न्यायधिकरण सर्वसम्मति पर पहुँचा तथा नर्मदा पर दो विशाल बांध–गुजरात में सरदार सरोवर बांध तथा मध्यप्रदेश में नर्मदा सागर बांध, 28 मध्यम बांध तथा 3000 जल परियोजना निर्माण को शामिल था। 1985 में इस परियोजना के लिए विश्व बैंक ने 450 करोड़ डालर का लोन देने की घोषणा की है।

सरकार के अनुसार इस परियोजना से मध्यप्रदेश, गुजरात, तथा राजस्थान के सूखा ग्रस्त क्षेत्रों 2.27 करोड़ हेक्टेयर भूमि को सिंचाई के लिए जल मिलेगा, बिजली का निर्माण होगा पीने के लिए जल मिलेगा तथा क्षेत्र में बाढ़ को रोका जा सकेगा। एक और इस परियोजना को समृद्ध तथा विकास का सूचक माना जा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप सिंचाई पेयजल की आपूर्ति, बाढ़ पर नियंत्रण रोजगार के नये अवसर बिजली तथा सूखे से बचाव आदि लाभों को प्राप्त करने की बात की जा रही थी इससे तीन राज्यों के 37000 हेक्टेयर भूमि और 13000 हेक्टेयर वन भूमि जलमग्न हो जाएगी है। जिसमें 248 गॉव के एक लाख लोग विस्थापित होंगे तथा 58 प्रतिशत लोग आदिवासी क्षेत्र हैं।

भारतीय संघ में राज्य घरानों का शामिल करके 28 मई 1948 को मध्य भारतीय नाम से राज्य का गठन किया गया। इस मध्य भारत राज्य का एक मुख्य जिला निमाड़ (पश्चिम) था जिसका मुख्यालय खरगोन था। औपचारिक रूप से 16 जून, 1998 में पश्चिम निमाड़ का विभाजन खरगोन और बड़वानी जिले में हुआ। इस प्रकार वर्तमान खरगोन या पश्चिम निमाड़ जिला मई 1998 अस्तित्व मे आया।

खरगोन को प्राचीन इतिहास में महिष्मति के नाम से जाना जाता है लेंकिन इसका वर्तमान नाम जिले के पुराने नाम प्रान्त निमाड़ से लिया गया है। पूर्व दिशा में गंजल नदी से शुरू होकर पश्चिम में हिनाफल तक फैली 225 मील लम्बी और लगभग 40 मील चौड़ी नर्मदा घाटी को प्रशासनिक रूप से प्रान्त निमाड़ के रूप मे जाना जाता था। कई किन्वदन्तियां इस बात की तरफ भी इशारा करती है कि शायद ''नीम के पेड़ों की अधिकता'' ने इस इलाके को निमाड़ के रूप में प्रसिद्धि दी। एक दूसरी व्यवस्था के अनुसार नर्मदा नदी के उद्गम से समुद्र तक पहुंचने की दूरी के ठीक बीच में या आधी दूरी में निमाड़ स्थित है। इस आधे को निमाड़ी भाषा में ''नीम''बोला जाता है और इसी वजह से इस जिले का नाम निमाड़ पड़ा।

वैसे खरगोन सभ्यता के शुरूआत में ही विकसित क्षेत्र के रूप में जाना जाता है और तत्कालीन होलकर रियासत के जमाने में खरगोन में संतुलित विकास के बहुत ऐसे प्रयास किए गए जिससे जिले की सामाजिक और आर्थिक दशा में सकारात्मक बदलाव आया। खरगोन शायद मध्यप्रदेश के उन गिन–चुने जिलों में शामिल है जहां विकास के लिए व्यवस्थित प्रयास आजादी से पहले भी किए गए। कपास के साथ–साथ खरगोन नर्मदा, नर्मदा के घाटों और महेश्वर के वस्त्र शिल्प के लिए भी प्रख्यात रहा है। आज भी खरगोन कसरावद, मण्डलेश्वर और महेश्वर के लिए उतना ही जाना जाता है जितना की 100 साल पहले जाना जाता था। ऐतिहासिक खुदाइयों से निकले प्रमाणों के आधार पर तैयार दस्तावेज यह बताते है कि खरगोन में प्राचीन काल से ही अत्यंत विकसित सभ्यता रही है।

इस क्षेत्र में अच्छी खेती, उद्योग और परम्परागत शिल्प के अवशेष यह साबित करते है कि यह क्षेत्र विकसित सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र रहा

और इस क्षेत्र में अनेक महान शासक तथा सभ्यताएं फली फूली और विकसित हुई बल्कि इन समस्याओं ने विकास और स्वशासन के अभिनव कदम भी स्थापित किए।

इसे दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि आज का खरगोन प्रदेश के पिछड़े जिलों में गिना जाता है। और वर्ष 2005 में शुरू किए गए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना सहित पिछड़ा क्षेत्र अनुदान कोश सहित जिलों के लिए शुरू किया गया है। जिले में विकास की वर्तमान दशा को समझते समय यह जानना और समझना जरूरी है कि आज खरगोन किन वजहों से पिछड़ा है। जिले में विकास की स्थिति को समझने से पहले हम विकास तथा मानव विकास की अवधारणा तथा उसके विभिन्न आयामों को समझने का प्रयास करेंगे।

खरगोन जिले के उत्तरी जिले के उत्तरी दिशा में नर्मदा जी का घाटी एवं दक्षिण में ताप्ती नदी की घाटी है जिसकी विभाजन रेखा सतपुड़ा पर्वत श्रेणी है जो जिले के पूर्व से पश्चिम की और फैला हुआ है। जिले के उत्तरी भाग में वन क्षेत्र अधिक है एवं भूमि के कटाव के कारण कही–कही जमीन का आकार बीहड़ की तरह है। जिले के दक्षिणी भाग में उपजाऊ जमीन है, जिसमें अंबना और सुक्ता नदियों का बहाव है। जिले के कोई वन क्षेत्र अथवा जंगल नहीं है लेकिन जमीन उबड़–खाबड़ है जहाँ खजूर, महूआ एवं आम के बगीचे है। ताप्ती घाटी के दक्षिण की और सतपुड़ा पर्वत माला है जो निमाड़ को बराबर के मैदान से पृथक करता है।

''भारत में जन आंदोलन'' (नर्मदा बचाओं आंदोलन के विशेष संदर्भ में) किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत समग्र रूप से मध्यप्रदेश के खरगोन, जिले का चयन किया गया हैं जिसमें संपूर्ण नर्मदा आंदोलन को सम्मिलित करेंगे जहॉ आंदोलन किया गया हैं, और उन क्षेत्रों को अपने अध्ययन में शामिल करेंगें जहॉ बांध बनाया गया हैं। बांध बनने से विस्थापित हुए परिवारों को अपने अध्ययन में दैव निदर्शन विधि द्वारा चयन किया जायेगा।

सुश्री पाटकर ने सरदार सरोवर बांध के बड़वानी और खरगोन जिले में डूब प्रभावितों से करोड़ों की ठगी और उनके नाम पर लगभग 1700 फर्जी रजिस्ट्रियों का मामला उजागर किया। इस मामले में भी जस्टिस झा आयोग पूरे मामले की जांच कर रहा है। सुश्री पाटकर ने इस मामले में उजागर किया कि डूब प्रभावितों और उनके पुनर्वास के लिए गठित नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण ने ही करोड़ों रूपए की अनियमितता की। इधर महेश्वर बांध परियोजना पिछले 30 वर्शों से पूर्ण नहीं हो पाईं पुनर्वास में एक या दो गांवों को छोड़कर पूर्ण हो सके। नर्मदा बचाओ आंदोलन के हस्तक्षेप के अलावा बांध निर्माण ऐजेंसी के कई बार बदलने से भी परियोजना को करोड़ो रूपए की आर्थिक जरूरत् की वजह से पुनर्वास कार्य नहीं हो सका। अपने पुराने डूब प्रभावित क्षेत्रों में रह रहे ग्रामवासियों के लिए नर्मदा बचाओ आंदोलन सक्रिय है।

सन्दर्भ सूची :–

1. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका जिला खरगोन
2. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ : ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'', विवेक प्रकाशन, दिल्ली,
3. नर्मदा समग्र : अनिल दवे
4. नदी का सौदर्य : अमृतलाल वैगड़
5. बूंदों की मनुहार : क्रांति चतुर्वेदी
6. जंगल रहे ताकि नर्मदा बहे : पंकज श्रीवास्तव
7. नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण
8. जिला कृषि एवं विकास विभाग
9. पटैरया शिवअनुराग, ''मध्यप्रदेश'' नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, वसंत कुंज, नई दिल्ली
10. मध्यप्रदेश संदर्भ 2014, आयुक्त मध्यप्रदेश जनसंपर्क कार्यालय, बाणगंगा भोपाल
11. निरगुणे वसंस, निमाड़ी संस्कृति और साहित्य, आदिवासी ललित कला अकादमी, श्यामला हिल्स, भोपाल
12. संगवई संजय, दि रिवर एण्ड लाइफ, क्योरवेल पब्लिशर्स, एम.पी. नगर, भोपाल

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारत में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण

डॉ. सत्येन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर (इतिहास–विभाग) बेनी सिंह कॉलेज हाट्टा, चेनारी रोहतास (बिहार)

किसी भी परिवार, समाज अथवा राष्ट्र का उन्नयन वहाँ की नारियाँ की स्थिति पर निर्भर करता है। यदि नारियों की स्थिति अच्छी एवं सम्मानजनक है, तो उस परिवार, समाज अथवा राष्ट्र की उन्नति निःसंदेह होगा और प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा। नेपोलियन बोनापार्ट का यह कथन की "मुझे एक योग्य नारी दो मैं, तुम्हें योग्य राष्ट्र दूँगा" इस संदर्भ में सर्वथा सभी चीन्ह् प्रतीत होती है।

ऐतिहासिक विश्लेषण :– भारत में प्राचीनकाल में महिलाओं की स्थिति अच्छी थी। महिलाओं को समाज में सर्वोपरि स्थान प्रप्त था। उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, साथ ही महिलाओं को सुख, समृद्वि, भाांति, वैभव एंव ज्ञान का प्रतीक माना जाता था। इसी तरह, वैदिक काल में भी महिलाओं की स्थिति अच्छी थी। महिलाओं को आजादी प्राप्त थी एंव घर से बाहर इच्छानुसार विचरण करती थी। विवाह, पुनर्विवाह इत्यादि क, प्रचलन था। महिलाओं के बिना धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं माना जाता था। साथ ही वैदिक काल में बाल–विवाह एंव पर्दा–प्रथा का प्रचलन नहीं था।

वैदिक काल के बाद उतर वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति में ह्रास होने लगा। उत्तर वैदिक काल में महिलाओं के लिये वेदों का अध्ययन वर्जित कर दिया गया और विधवा पुनर्विवाह निषिद्ध कर दिया गया। साथ ही वाल–विवाह का प्रचलन भारतीय समाज में प्रारंभ हुआ। कुल मिलकर यहीं से महिलाओं की स्थिति खराब होने लगी।

धर्मशास्त्र काल में महिलाओं की स्थिति और खराब होने लगी क्योंकि वैदिक नियमों का परित्याग कर दिया गया और महिलाओं को सम्पति के अधिकार से वंचित कर दिया गया। मुगलकालीन जो मध्यकाल से संबंधित था, भारतीय संस्कृति एवं महिलाओं की स्थिति की रक्षा हेतु ब्राम्हणों द्वारा कठोर नियम बनाये गये, जिसमें बाल–विवाह, सती–प्रथा,पर्दा–प्रथा इत्यादि मुख्य था। एक पत्नी के रहते दूसरी पत्नी को रखना सामाजिक प्रतिष्ठा समझी जाती थी। मुख्यरूप से इसी कारण महिलाओं की स्थिति में तेजी से ह्रास होना कारण हो गया।

अंगेजी शासनकाल में भी महिलाओं की स्थिति में कोई विशष सुधार नहीं हुआ। धर्मशास्त्र काल की एवं पूर्व समय की महिला आधारित कुप्रथाएँ प्रचलित थी। कुछ भारतीयों द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु प्रयास किये गये। इस परिपेक्ष्य में राजा राममोहन राय द्वारा ब्रह्म समाज की स्थापना की गई जो सती–प्रथा के विरूद्ध था। महर्शि दयानन्द सरस्वती द्वारा आर्य समाज की स्थापना की गई जो वैदिक काल की आदर्शो की पुर्नस्थापना का प्रयास था। इसी तरह, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा पुनर्विवाह का प्रचलन, बहुपत्नी विवाह का विरोध एवं महिला–शिक्षा पर बल दिया। भारतीय महापुरूषों के इस प्रयास के परिणामतः अंग्रेजी सरकार ने महिलाओं की स्थिति में सुधार एवं उत्थान हेतु कुछ कानून बनायें जिसमें सती प्रथा निषेध अधिनियम, 1829 हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856, बाल–विवाह निरोधक अधिनियम, 1929 एवं महिलाओं के भरण–पोशण से संबंधित 1946 का अधिनियम इत्यादि मुख्य है।

स्वतंत्रता पश्चात् महिलाओं की स्थिति :– स्वतंत्रता प्राप्ति के पचात् भारत में सरकार द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए विशेष प्रयास किया गया। भारतीय संविधान में संवैधानिक प्रावधान बनाकर महिलाओं को विशेष अधिकार दिया गया, जिसका उपयोग करके आपना व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विकास में योगदान दे सके।

भारतीय संविधान में वर्णित अनुच्छेद 14 के द्वारा महिलाओं एवं पुरूषों को राजनीतिक आर्थिक एंव सामाजिक क्षेत्र में समान अधिकार प्रदान किया गया है। इसी तरह, अनुच्छेद 15 महिलाओं को जहाँ समानता का अधिकार प्रदान करता हैं, वहीं अनुच्छेद 16 रोजगार का समान अवसर प्रदान करता है। संविधान का अनुच्छेद 39 सुरक्षा एवं समान काम के लिए समान वेतन की वकालत करता है।

महिलाओं की विभिन्न संवैधानिक अधिकारों की रक्षा हेतु उनसे संबंधित कानून भी बनाये गये हैं। जिससे महिलाओं को संरक्षण प्राप्त हो सके और वे सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर सके। इस संदर्भ में हिन्दू विवाह अधिनियम (1976 संशोधित), देह व्यापार

निवारण अधिनियम, 1956 (1986 में संशोधित) अश्लील चित्र निवारण एक्ट, 1986, सती प्रथा निवारण अधिनियम, 1986, प्रसव–भ्रूण से संबंधित अधिनियम, 2005 हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम, 2005 (संशोधित) और घरेलू हिंसा से संरक्षण आधारित अधिनियम, 2005 इत्यादि मुख्य है।

वर्त्तमान संदर्भ में महिलाओं की स्थिति :– वर्त्तमान संदर्भ में महिलाओं की स्थिति में और सुधार करने के लिए एवं कल्याण के लिए सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएँ संचालित है। सरकारी नौकरीयों में आरक्षण, भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में भी महिलाओं के विकास हेतु महिला शिक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक एवं पारिवारिक सुरक्षा इत्यादि को प्रमुखता से स्थान दिया गया है। अनेक सरकारी कार्यक्रमों जैसे, ड्वाकरा, ट्राइसेम, इंदिरा महिला योजना, महिला समृद्धि योजना, महिला स्वयं सिद्ध योजना, जननी सुरक्षा योजना, कस्तुरवा गाँधी बालिका शिक्षा योजना, जीवन भारती महिला सुरक्षा योजना, महिला शक्ति पुरस्कार योजना, वंदे मातरम् योजना इत्यादि संचालित करके महिलाओं की स्थिति सुधारने का प्रयास किया गया है।

मूल्यांकन :– भारत में महिलाओं की स्थिति एवं विकास से संबंधित अनेक प्रावधानों के संचालीत होने एवं उसकी वर्णात्मक व्याख्या के आधार पर स्पष्ट है कि हमारी सरकार, समाज एवं प्रशासनिक तंत्र महिलाओं की सुरक्षा एवं समृद्धि हेतु काफी सजग है। फिर भी आज के वैश्विक युग में महिलाऐं भी स्वयं को एवं अपने समुदाय को जरूरत से अधिक सशक्त बनाने का प्रयास किया है। जिससे महिला अधिकार का समूचित उपयोग नहीं हो रहा है। किसी समुदाय में महिला अधिकारों का उपयोग के साथ–साथ दुरूपयोग होने लगता है। जिसके प्रभाव से अन्य समुदाय के महिलाओं के अधिकार का हनन होता है और उसकी स्थिति अच्छी नहीं हो पाती।

आज शहरी महिलाओं की अपेक्षा ग्रामीण महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं है। इसका मुख्य कारण है, महिलाओं में शिक्षा का अभाव। ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा के कमी के पीछे शिक्षा के प्रति अरूचि, प्रेरणा की कमी, पारिवारिक एवं आर्थिक कारण होती है। एक तरफ जहाँ शिक्षा के कमी के कारण महिलाओं में जागरूकता की कमी होती है और उसकी स्थिति नहीं सुधर पा रही है। वहीं दूसरी तरफ घरेलू हिंसा भी महिलाओं की कमजोर स्थिति को दर्शाता है।

इस तरह स्पष्ट है कि महिलाओं की स्थिति सुधारने एवं सम्मान जनक जीने में परिवार से लेकर राष्ट्रीय और संवैधानीक स्तर पर, पंचवर्षीय योजनओं में एवं अन्य योजनाओं में महिलाओं के शिक्षा में सुनिश्चित किया जाय और प्रत्येक स्तर पर उनकी भूमिका सुनिश्चित किया जाये तभी परिवार एवं समाज में महिलाओं की स्थिति सुधरेगी और सम्मान जनक स्थान प्राप्त होगा।

संदर्भ सूची :–

1. झा, डी0 एन0– प्राचीन भारत की रूप रेखा, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
2. मित्तल, ए0के0 – मध्यकालीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
3. बसु, डी0डी0 – भारतीय संविधान
4. संपादन मंडल – प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक भारत का इतिहास, एन0सी0ई0 आर0टी0, नई दिल्ली।
5. वर्मा, बिहारी, एस0 एवं पाण्डेय ए0 एन0– ग्रामीण विकास अविष्कार पब्लिकेशन, जयपुर।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में चित्रित सामाजिक मान्यतायें

विजय कुमार यादव
शोधछात्र, आर्य कन्या पी.जी. कालेज, हापुड़
डॉ. संगीता अग्रवाल
शोध निर्देशिक, विभागाध्यक्षा, संस्कृत आर्य कन्या पी.जी. कालेज, हापुड

सारांश :– साहित्य समाज का दपर्ण होता है प्रत्येक कवि की कृति पर तत्कालीन वातावरण, समाज एवं परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। यही प्रभाव भट्ट लक्ष्मीधर कृत चक्रपाणि विजय महाकाल्य पर दृष्टिगत होता है। कवि जिस समाज में रहता है वह संश्लिष्ट एवं निर्मल लोकशास्त्र का ज्ञाता होता है। आश्रम व्यवस्था, वर्ष व्यवस्था, आर्शीवाद, अतिथि सत्कार, सदाचार, विवाह, समाज में स्त्री सम्मान आदि का अध्ययन किया गया है। इसलिए किसी काव्य का सामाजिक अध्ययन करते समय उसमें वर्णित तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियॉ एवं परंपरागत मान्यताओं का निरूपण आवश्यक है।

शब्दकुंजी :– महाकाव्य, आश्रम व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था सदाचार, विवाह आदि।

प्रस्तावना :– साहित्य समाज का विशिष्ट सांस्कृतिक तत्व है जो हमें सांस्कृतिक जड़ता से बचाता है। श्रेष्ठ साहित्य के अभाव में सांस्कृतिक जड़ता बढ़ती है जिससे समाज और सभ्यतायें पतोन्मुख होती है इसलिए साहित्य की यह विशेषता है कि वह संस्कृति को गति एवं लय देकर उसे जीवांतता प्रदान करता है। जिससे समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया जा सके। इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य किसी राष्ट्र के सामाजिक जीवन का व्यापक तत्व है।

विषय वस्तु :– प्राचीनकाल से ही वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था आदि सामाजिक मान्यतायें भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू समाज के संगठन का एक प्रमुख आधार रही है इस व्यवस्था के अर्न्तगत समाज को चार वर्गो में विभक्त किया गया। प्रारंभ में इस व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी रूचि, योग्यता और मनः स्थिति के अनुसार किसी भी वर्ण को स्वीकार कर सकता था, लेकिन वर्ण व्यवस्था का यह लचीलापन कुछ ही समय बाद वैदिक काल में समाप्त हो गया।

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में सामाजिक मान्यताएँ :–

आश्रम व्यवस्था :– भारतीय समाज में आश्रम धर्म का विधान वैज्ञानिक और सर्वश्रेष्ठ है। आश्रम शब्द का अर्थ है – जिसमें श्रम ही श्रम है, जिसमें आलस्य को स्थान नहीं, वैदिक शब्दावली में तपस्या है। वस्तुतः जीवन एक श्रम साध्य है यात्रा है जिसमें हर क्षण कर्म में रत रहते हुए सौ वर्ष तक जीने की अभिलाषा सार्थक कही जा सकती है– कुर्वन्तेवहे कर्माणि विजीविशेच्छतं समाः, इसलिए मनुष्य की सामान्य आयु सौ वर्ष स्वीकार करते हुए चार आश्रमों में विभक्त किया गया है – ब्रम्हचर्य, गृहस्य, वानप्रास्थ तथा संयास।

महाभारत के अनुसार आश्रम व्यवस्था रूपी चार पदों की सीढ़ी जो ब्रम्हलोक ले जाती है–

चतुष्पदी ही निः श्रेणी ब्रह्मश्येषा प्रतिष्ठिता,
एतामारूह निःश्रेणी ब्रम्हलोके महीयते।
ब्रम्हचारी गृहस्थश्च वानप्रायोंऽयं भिक्षुक,
पयोक्त चारिणः सर्वेगच्छन्ति परमं गतिम्।।

वर्ण व्यवस्था :– ऋग्वेद में वर्ण व्यवस्था का सर्वप्रथम उल्लेख प्राप्त होता है। समाज में विविध कार्यो के संचालन के लिए वर्ण व्यवस्था का विधान था। यजुर्वेद में चारों वर्णों ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र के कर्तव्यों का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है –

ब्रह्मणे ब्राहमणं क्षत्राय राजन्यं मरूद्भ्यों वैश्यं
तपसे शूद्रम्।

गीता में भगवान श्री कृष्ण ने ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के कर्मो का अलग–अलग निर्देश किया है –

चतुर्वर्णं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्।।[5]

महाकवि भट्ट लक्ष्मीधर के समय में वर्ण व्यवस्था अत्यन्त सुदृढ़ थी। ब्राहम्ण का समाज में सर्वोपरि स्थान था क्योंकि उन्हें पक्षिक कार्यो का पुरोहित स्वीकार किया गया –

दीक्षावतः सोमपरिग्रहार्थम्।[6]

आर्शीवाद :– भारतीय मान्यता के अनुसार श्रेष्ठ गुरूजनों एवं अपने से बड़े श्रेष्ठ पुरूषों का अभिवादन करने पर आर्शीवाद मिलता है। प्रत्येक जीव के आन्तरिक हृदय में एक ब्रम्ह का निवास मिलता है और अन्तः करण से निःश्रीत प्रत्येक शब्द का अपना महत्व

है। इसलिए आर्शीवाद की प्राप्ति जीवन का महत्वपूर्ण क्षण है। चक्रपाणि विजय महाकाल में उषा वर प्राप्ति हेतु गौरी का पूजन करती है तब पार्वती जी हृदय से आलिंगन करके आर्शीवाद देती है–

प्रणम्य देवीमय तत्प्रसादलब्धोचितस्यानगता नतक्षूः।
पृष्ठेन बाहुद्वयपीडिताग्डी भेजे भुजास्पर्षनपूर्वमस्याः।।[7]

समरांगण में जाते समय पुत्र का मस्तक चूम कर मॉ आर्शीवाद देती है–

औत्पत्तिकजयों डप्यन्तरूद्यत्कलमलाकुलम्।
भूत्कृत्य ध्यातकल्याणमुमया मूहिर्न चुम्बितः।।[8]

अतिथि सत्कार :– भारतीय संस्कृति एवं परंपरा में अतिथि को देवता के समान माना गया है–**''अतिथि देवो भवः''।**

अतिथि सत्कार हमारी परंपरा है जिससे हमें श्रेष्ठ जनों से अक्षुण्य तप, आर्शीवाद के रूप में प्राप्त होता है। कठोपनिषद में अतिथि सत्कार का वर्णन बड़े ही मनोरम ढंग से वर्णित है।

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में जिस समय नारद मुनि द्वारिका पुरी पहुँचते है उसी समय श्रीकृष्ण उनका स्वागत करते है –

अभ्युत्यिते तु गोविन्देमुनेरजनि साहवसः।
चलं हि चलिते तस्मिन् स योगी जगदीवते।।

वसन्त आगमन के समयउसके स्वागत में कोयल का कूजन अत्यन्त मनोहरी वर्णन दृष्टव्य है –

छययैव सहकरपाढवे शंसति प्रसवनीयभड्कुरम्।
एति पाति पुनरेती चाकुल कोकिल स्पृहयमाणमानसः।।[11]

सदाचार :– शास्त्रों में उल्लिखित सन्नियमों के मार्ग पर जीवन संचालित करना सदाचार कहलाता है। सदाचार से पारिवारिक संगठन, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा उन्नति की नयी गतियॉ स्वयं समक्ष उपस्थित हो जाती है। सदाचारी महापुरूष जीवन की अनन्त उचाई को छूता हैं।

यदादिशति देवर्षिः कृत्यमद्य तदेव नः
छतेपि कटि कीदृग बलाबलविचीरणा।।[12]

समाज के सभी वर्णों के लोग आचार संहिता के अनुरूप कार्य करते थे। इसका उलंघन केवल समर भूमि में ही होता था –

आचार इसे हन्यन्ते मखेसु पशुवों यथा।
रणेशु रिपवोडप्येव रूददिभरिव सज्जनैः।।[13]

विवाह :– भारतीय आचार्यो के अनुसार सन्तान के बिना परलोक में सद्गति नहीं मिलती इसलिए स्त्री–पुरूष को दाम्पत्य जीवन आवश्यक है। आचार्य मनु ने आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख किया है–

1. ब्रहम विवाह
2. दैव विवाह
3. आर्य विवाह
4. प्राजापत्य विवाह
5. आसुर विवाह
6. गान्धर्व विवाह
7. राक्षस विवाह
8. पैशाच विवाह

विष्णु पुराण में भी कहा गया है –

ब्राहमों दैवस्तयैवार्श, प्राजापत्यस्तयासुरः।
गान्धर्व राक्षसौ चान्यों पैशाचाष्टमों मतः।।[16]

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में वर्णित विवाह दैव और गान्धर्व विवाह के कोटि में आते है। उषा और अनिरूद्ध का विवाह गान्धर्व है। विवाह में अनेक रीतियों को अपनाया जाता था जिनमें हाथ मिलाने की प्रक्रिया, भांवर पड़ना, मंगल समय में पाणिग्रहण[17] का होना आदि प्रमुख है –

चित्रभूशण मणिप्रभागणैश्चर्चिताः सदन भिन्तयस्तया।
तद्विवाह लिखित विरेजिरे दर्शयन्त्य इव मातृमण्डलम्।।[18]

समाज में स्त्री का सम्मान :– किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति का परिचय उस देश की स्त्रियों की दशा पर निर्भर करता है। परंपरागत देशों की अपेक्षा भारत में स्त्रियों की दशा सदैव समुन्नत एवं पूजनीय रही है और उन्हें गृह लक्ष्मी के समान माना गया है –

''स्त्रियः श्रियश्च गेहेशु च विशेशोऽस्ति करचन्''।

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में तत्कालीन समाज में स्त्रियों की महनयिता का सुंदर वर्णन मिलता है –

अशेषयोशाजनपूर्वगुर्वोमुमां कुमारि प्रथमं नमेति।
विहस्य यद् भाषितमीश्वरेण तदास तस्या पतिलाभूरूलम्।।

संस्कार :– संस्कार शब्द निष्पत्ति एवं उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से घम् प्रत्यय करने से होती है। इसका व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ हुआ – परिष्कार, मनोभाव या शोधन। भारत वर्ष में संस्कार केवल हिन्दू धर्म के ही नहीं अपितु अन्य धर्म एवं सम्प्रदायों के महत्वपूर्ण अंग रहे है। विगत अनेक शताब्दियों से संस्कार धार्मिक तथा सामाजिक एकता के प्रभावकारी माध्यम रहे है।

हिन्दू संस्कारों का सविस्तार प्रतिपादन कतिपय ब्राहमण ग्रंथों तथा गृहय सूत्रों में हुआ है। गृहयसूत्र में 12 आरवलायन तथा मानव गृहय सूत्र में 13, पारस्कर गृहय सूत्र एवं मनुस्मृति में 14 संस्कारों का तथा

चक्रपाणि विजय महाकाल में श्रीकृष्ण का यह कथन सदाचार का सुंदर

वैखमस में 18 एवं गौतम धर्म सूत्र में 40 संस्कारों का वर्णन मिलता है। परवर्ती समृतियों में 16 संस्कारों का वर्णन इस प्रकार है –

1. गर्भाधान संस्कार
2. पुंसवन संस्कार
3. समिन्तोन्नयन संस्कार
4. जातकर्म संस्कार
5. नामकरण संस्कार
6. निष्क्रमण संस्कार
7. अन्नप्राशन संस्कार
8. चूड़ाकर्म संस्कार
9. कर्णवेधन संस्कार
10. उपनयन संस्कार
11. वेदारम्भ संस्कार
12. समावर्तन संस्कार
13. विवाह संस्कार
14. वानप्रस्थ संस्कार
15. सन्यास संस्कार
16. अन्त्येष्ठि संस्कार

संस्कारों का सर्वाधिक प्रयोजन तो मानवीय विकास की सम्पूर्ति में ही है। श्रेष्ठ संस्कारों के सदाचरण से मानव श्रेष्ठ बनता है। मनुस्मृति के अनुसार जप, तप, यज्ञ, महायज्ञ आदि के वैदिक विधि विधान पूर्वक करने से मानव का शरीर श्रेष्ठ बनता है–

स्वाध्यायेन व्रतैर्होस्त्रैविधेनेज्यया खुटैः।
महायज्ञैश्च यसैश्च ब्रहनीयं क्रिपटे तनुः।।[21]

चक्रपाणि विजय महाकाव्य में महाकवि ने संस्कारों का महत्व प्रतिपादन किया हैनायक अनिरूद्ध वाल्यावस्था में ही सम्पूर्ण विधाओं का विधिवत अध्ययन कर लेता है –

शैषवेऽपि हि पितामहविद्यावल्लि पल्लवमवाप्यत तेन।
एक एव यदनेकतमाना मानसानि युगवत् प्रविवेश।।[22]

वेशभूषा :– प्राचीन काल से वर्तमान काल की ओर बढ़ते हुए मानव ने अपने व्यक्तित्व को अधिकाधिक आकषर्ण बनाने के लिए अनेको वस्त्राभूषणों एवं श्रंगार प्रसाधनों का निर्माण किया और कर रहा है। अच्छे वेशभूषा के द्वारा मानव की सामाजिक सम्पन्नता का बोध होता है। भारत वर्ष में ऋतुओं के अनुकुल वस्त्र पहनने का विधान है।

चक्रपाणि विजय महाकाव्य के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि लोग उस समय अपनी परंपरा के अनुसार वस्त्र धारण करते थे। उस समय लाल वस्त्र को मांगलिक माना जाता था। स्त्रियॉ अपने स्तन को कॉनुकी से आच्छादित करती थी। ओढ़ने के लिए श्रृंगारित शाल का प्रयोग करती थी –

आगत्य दोः पञ्जरचूर्णितेभ्यश
चाणूरकंसादिमहासुरेभ्यः।
पार्श्वस्थितेनेव यशोभरेण शालेन श्रृंगारित दिग्विभागाम्।। [23]

उस समय अधोवस्त्र और अन्तरीय धारण करने की प्रथा थी –

मसे विशाखाविषदप्रदोशे या हादशी रात्रिरूदार चंद्रा।
स्वप्नायमाना मदनायमान द्रष्टाखि तस्यां पतिमात्मतुल्यम्।।[24]

निष्कर्ष :– महाकवि भट्ट लक्ष्मीधर कृत चक्रपाणि विजय महयकाव्य में वर्णित सामाजिक मान्यतायें समाज के आंतरिक परिवेश को वर्णित है। इसमें मनुष्य की प्रत्येक अवस्था के साथ–साथ उसके सामाजिक प्रतिष्ठा तथा उन्नति का अवमूल्ययन किया गया है।

सन्दर्भ सूची :–

1. यजुर्वेद 40/2
2. मनु स्मृति 6/87
3. महाभारत शा. पर्व अ. 242/15/16
4. यजुर्वेद 30/5
5. गीता 4/13
6. चक्रपाणि वि. महा. 2/13
7. चक्रपाणि वि. महा. 4/23
8. चक्रपाणि वि. महा. 16/4
9. कठोपनिषद
10. चक्रपाणि 13/9
11. चक्रपाणि वि. महा. 5/2
12. चक्रपाणि 13/57
13. चक्रपाणि 18/29
14. मनुस्मृति 8/54
15. मनुस्मृति 3/23
16. विष्णुपुराण 3/10/24
17. चक्रपाणि 9/29
18. चक्रपाणि – 5/59
19. मनुस्मृति – 9/2
20. मनुस्मृति – 3/28
21. चक्रपाणि – 3/46
22. चक्रपाधि – 4/22
23. चक्रपाणि – 8/54
24. चक्रपाणि – 5/49

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति और परम्परा

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शासकीय मुकुट धर पाण्डेय कॉलेज, कटघोरा, कोरबा (छ.ग.)

सारांश :– भारतीय संस्कृति की विशेषता है विभिन्न संस्कृतियों का अद्‌भुत समागम। यहां धर्म संस्कृति का प्राण माना जाता है, सांस्कृतियॉ एक दूसरे से प्रभावित करती आई है। छत्तीसगढ़ जनजाति संख्या आधिक्य राज्य है। राज्य की कुल जनसंख्या का लगभग 32% जनसंख्या जनजातियों और 42 प्रकार की जनजातियॉ निवास करती है। सबसे बड़ी जनजाति गोड़ है। गॉव में रहने वाले आदिवासी लोग कुटी, माटी का कच्चा घर, बांस, झोपड़ी में रहते है। अब कुछ लोग पक्का मकान बनाकर रहने लगे है। छत्तीसगढ़ी जनजाति का लोक गीत सरल सहज और सुंदर संगीतमय रहता है। इनके लोक गीत में जीवन के तथ्य और अंचल की वे भावपूर्ण संस्कृति का समाहित रहती है। आदिवासी लोग लंगोटी, धोती, पागा, अंगरखा, लुंग्गी, लुगरा और पोलखा तथा स्त्रियॉ फुँदरा–फुँदरी और फीता से बेनी गाथते और पहनते है। इनका आभूशण पुरूश एक हाथ में चूड़ा, कान में बाली और गले में कंठी ताबीज धारण करते है और स्त्रियॉ नाक और बॉह में गोदना गोदवाते है। भोजन पकाने का दो मुहा चूल्हा, माटी का चूल्हा बनाते है। हॉडी, पराई, कुँडेरा, कनौजी, कसेली, तवा, गोरसी, चिमनी आदि। छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहते है, दुनिया भर में धान का सबसे ज्यादा किस्म यहां पाया जाता है। यहां दो प्रकार का रोटी बनाते हैं सूखा खुपरी, अंगाकर दूसरा तेल से चिला, बरा, सोहारी, ठेठरी, खुमरी पपची, लाडू प्रमुख है। यहां पूरे बारह महीना त्योहार और उत्साह मनाते है। हरेली, नागपंचमी, कमरछठ, तीजा, गणेश पूजा, पोला, राखी, नवरात्रि, नवाखई, देवारी, देवउठनी, छेरछेरा, माघीपुन्नी, होली, रामनवमी, चैतनवरात्रि इत्यादि प्रमुख है, जनजातियों का प्रमुख त्यौहार खो–खो कबड्डी, गोंटा, बांटी, गिल्ली–डंडा आदि तथा मुर्गा लड़ाने का प्रचलन है।

शब्दकुंजी :– जातीय, संस्कृति, परम्परा, भौगोलिक दृष्टि, संवेदनशीलता इत्यादि।

प्रस्तावना :– भौगोलिक दृष्टि से दक्षिण कौशल अपनी विकासशील संस्कृति एवं सभ्यता के विशेषताओं के साथ एक पूर्ण छत्तीसगढ़ इकाई के रूप में हैं। भारत को हम गॉवों का राष्ट्र भी कह सकते है। इस देश की लगभग सत्तर फीसदी आबादी छः लाख से भी ज्यादा गॉवों मे निवास करती है। सभी गांव संरचना एवं व्यवहार मे एकरूपता भी नहीं है। परम्परा, संरचना, शैली और धार्मिक रीति–रिवाज की वृद्धि से ग्रामीण परिवार एवं इनमे निवास करने वालों मे भी काफी वैविध्य है। हर एक परम्परा लंबे विकास के दौर में स्थापित हुई है। सामाजिक प्रतिमानो कानूनो और प्रतिस्थापनाओं मे अधिकारों और कर्तव्यों मे इन्हीं का प्रतिबिम्ब झलकता है। भारतीय ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था में प्रायः संयुक्त परिवार, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा धार्मिक व्यवस्थाओं की मूल इकाई है।

भारतीय समाज की संरचना के प्रमुख तत्व जाति एवं जनजाति है। भारत के दूर–दराज क्षेत्रों में बसी अनेक जनजातीयॉ इसका आधार है। देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग जनजातियों का है। ये जनजातियॉ वर्षो से शोषित व उत्पीड़ित रही है। गरीबी अज्ञानता व अभावों से ग्रस्त जनजातीयों को सदियों कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। उद्योगों में जिन आदिवासियों ग्रामीणों की भूमि ली जा रही है उन्हें केवल मुआवजा देने से काम नहीं चलेगा, बल्कि भू–स्वामियों को योग्यतानुसार नौकरी, उद्योगों में हिस्सेदारी देनी होगी। हिस्सेदारी पर भू–स्वामी भी उद्योगों का मालिक होगा और जीवन पर्यन्त उसके जीवकोपार्जन का मार्ग प्रशस्त होगा। भारतीय संविधान में जनजातीयों को उनकी समाजिक आर्थिक उन्नति के लिए उन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए कुछ विशेष सुविधाएँ प्रदान करने के प्रावधान रखे गये है। इसके लिए एक अनुसुची तैयार की गई है। जिसमें उन सभी जनजातीयों को सम्मिलित किया गया है जिन्हें विशेष सुविधाएँ प्रदान की जाती है। संविधान में इन्हें अुसूचित जनजातीयों के नाम इंगित किया गया है। अतः किसी संस्कृति विशेष का मूलभूत रूप स्थान नहीं होता, परन्तु जनजातीय संस्कृतियॉ भौगोलिक पर्यावरण के कारण अपनी पहचान बनाए रह सकी है। यह भी विशेष रूप में उल्लेखनीय है कि मानव विज्ञान के प्रमुख सिद्धांत भी जनजातीय संस्कृति के अध्ययन पर आधारित है। अक्टूबर, 1999 के पूर्व आदिवासियों के विकास के लिए देश में केन्द्र सरकार के अधीन "आदिवासी कल्याण मंत्रालय (Ministry of Tribal Welfare Department) कार्यरत था जो संघ/राज्यों के लिए आर्थिक–सामाजिक कल्याण के लिए नीतियों,

बजटीय प्रावधान, आरक्षण, संवैधानिक ढाँचे में दिशा निर्देश जारी करेगा।

जनजातियों भारतीय समाज व संस्कृति को निराली छवि प्रदान करती है। भारत में 532 जनजातियॉ निवास करती है तथा सन् 2001 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या कुल जनसंख्या का लगभग 8.2 प्रतिशत है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या 10,42,81,034 है। जो भारत की जनसंख्या का लगभग 8.6 प्रतिशत है। जनजातियों को वन्यजाति, आदिवासी, आदिम जाति गिरिजन आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है। भारतीय संविधान में इन लोगों को अनुसूचित जनजातियॉ कहा गया है। वास्तव में जनजाति व्यक्तियों का एक समूह है, जो निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास या विचरण करता है आदि पूर्वज से अपना उद्गम मानता है, जिसकी एक सामान्य संस्कृति है जो आज भी आधुनिक सभ्यता के प्रभावों से वंचित है, और स्वतंत्रता की मुख्यधारा से अलग है। चूंकि जनजातीय समूहों में आदिम जनजातीय समूह अत्यंत संवेदनशील है इसलिए उनके आर्थिक–सामाजिक विकास के लिए केन्द्रीय क्षेत्र से प्रायोजित तथा राज्य योजना से पर्याप्त धनराशि आबंटित करने की व्यवस्था की जा रही है। सरकार यह महसूस करती है कि पर्याप्त धनराशि उन तक नहीं पहुंच पा रही है। जिससे ये लोग अपनी संस्कृति और परम्परा को बनाये रखने में बहुत कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है।

छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियां :– छत्तीसगढ़ जनजाति बहुल राज्य है। राज्य की कुल जनसंख्या का लगभग 32% जनसंख्या जनजातियों की है। राज्य में कुल 42 प्रकार की जनजातियॉ निवास करती है। सबसे बड़ी जनजाति गोड़ है। सबसे अधिक जनजाति दंतेवाड़ा 79% एवं सबसे कम जनजाति जांजगीर चांपा (12%) जिले में निवास करते है। राज्य के 5 जिलों दंतेवाड़ा, बस्तर, जशपुर, कांकेर, सरगुजा में 50% से अधिक जनजाति निवास करती है।

जनजातियों को अनुसूचित नाम साइमन ने 1927 में दिया संविधान के अनुच्छेद 341 एवं 342 में इन विशिष्ट जनजातियों को नामित किया गया है। संविधान में 212 जनजातियों को अनुसूचित जनजाति घोषित किया है। छत्तीसगढ़ में 42 अनुसूचित जनजातियॉ निवास करती है। छत्तीसगढ़ में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 66, 16, 596 लाख है। जो राज्य की संख्या का 31.76% है। सबसे कम जनसंख्या वाला जिला जांजगीर चांपा 12%, रायपुर 12%, दुर्ग 12%, बिलासपुर 19%, छत्तीसगढ़ के जनजाति कुल जिले प्रतिशत में दंतेवाड़ा 79%, बस्तर 66%, जशपुर 65% है।

प्रमुख जनजातियॉ :– गौंड़ – बस्तर, सरगुजा, दुर्ग, रायगढ़, मुड़िया – बस्तर के कोण्डागॉव एवं नारायणपुर माड़िया – बस्तर, दंतेवाड़ा, कांकेर, भुजिया – रायपुर हलबा – कांकेर बस्तर दंतेवाड़ा, राजनांदगॉव। उरॉव – सरगुजा, कोरिया, रायगढ़, जशपुर। कोरकू – सरगुजाख् कोरिया, रायगढ़, कोरबा, कोरवा – जशपुर, रायगढ़, कमार – रायपुर, धमतरी (नवागढ़, सिहावा) बैगा – कवर्धा, बिलासपुर सरगुजा, बिझवार – रायपुर, बिलासपुर, रायगढ़, बिरहोर – जशपुर, रायगढ़, सरगुजा कंवर – रायगढ़, बिलासपुर, रायपुर, राजनांदगॉव, कोरबा, सरगुजा, पाण्डों – सरगुजा जिले में निवासरत है।

जनजातीय संस्कृति एवं परम्पराएं :– गॉव में रहने वाले आदिवासी लोग कुटी, माटी का कच्चा घर, बांस, झोपड़ी में रहते है। अब कुछ लोग पक्का मकान बनाकर रहने लगे है।

पहिनावा :– यहां के निवासी लंगोटी, धोती, पागा, अंगरखा, लुंग्गी, लुगरा और पोलखा पहनते है। स्त्रियॉ फुॅदरा–फुॅदरी और फीता से बेनी गाथते है। समय के प्रभाव से अब कमीज, फुलपेंट, कोट, कुरता पैजामा और जैकेट, पहनने लगे है।

गहना :– पुरूष एक हाथ में चुड़ा, कान में बारी और गले में कंठी ताबीज धारण करते है। स्त्रियॉ नाक और बॉह में गोदना गोदवाते है। कोई अपने हाथ में अपने नाम का गोदना गोदवाते है। विवाहित स्त्रियॉ मॉग में सिंदूर, कुहकु, बंदन लगाते है। माथे में टिकली, कुॅवारी और विवाहित मुड़ में बड़े–बड़े खोपा, और ककई काकोवा खोचे रहते है। प्रमुख गहने चुटकी, बिछिया, मुंदरी, पइरी, पइजन, करधन, हाथ में एठी, पट्टा, ककनी, बांह मा बहॅूटा गले में सूंता, रूप्ये का माला, बाली, खिनवा, नथनी, फूलों और गले में ताबीज भी पहनते है।

विवाह :– स्वयंवर, लमसेना विवाह बहुविवाह, अपहरण विवाह में वधुमुल्य चुकाना होता है बाल विवाह सतीप्रथा दूध लौटाया विवाह प्रथा होती है। जिसमें ममेरे, फुफेरे भाई बहनों का नाम होता है। बैगा जनजाति धार्मिक संस्करों को मानती है। प्रमुख देवता दूल्हादेव, भवनीमाता, खैरामाता, बाघेश्वरी देवी, कंवर

जाति का ठाकुर देव, मरखी माता, बाररानी आदि है। पूजन कार्य पुरूषों द्वारा किया जाता है बलि प्रथा वर्तमान में भी प्रचलित है, जिसमें सुअर, मुर्गा, बकरा, की बलि दी जाती है।

भोजन पकाने का उपकरण :– भोजन पकाने का दो मुहा चूल्हा, माटी का चूल्हा बनाते है। हॉडी, पराई, कुँडेरा, कनौजी, कसेली, तवा, गोरसी, चिमनी आदि। खाने–पीने के लिए केला पत्ता, पतरी–दोना, थारी, लोटा, कटोरी, गिलास, फूल कॉस का थाली लोटा का उपयोग करते है। चॉवल को पकाकर भात बनाते है। और जो भी भात शेष बचता है, उसको पानी में डुबोकर सुबह बासी नमक, चटनी के साथ खाकर अपने कृषि या जंगल के काम लकड़ी इकट्ठा करना, मधुरस, गोंद निकालना, कंद–मूल फल या पशु पक्षी का शिकार करने जाते है।

प्रमुख अनाज :–छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा कहते है, दुनिया भर में धान का सबसे ज्यादा किस्म यहां पाया जाता है। कोदो–कुटकी, कुचली, मढ़िया, कोसरा, उड़द, मूंग, राहर, मूंगफली, आदि की खेती की जाती है। घर में अनाज रचाने के लिए कोठी,गोना, ढोलकी रखते है।

प्रमुख व्यंजन :– यहां दो प्रकार का रोटी बनाते हैं सूखा खुपरी, अंगाकर दूसरा तेल से चिला, बरा, सोहारी, ठेठरी, खुमरी पपची, लाडू प्रमुख है।

लोक देवी–देवता :– प्रत्येक गॉव में देवी–देवता माना जाता है। त्योहार में गाजे–बाजे के साथ पूजा करते है। और मन्नत मांगते है। शीतलामाता, चंडीदेवी, ठाकुर देव बूढ़देव कंवर जाति में बार पूजा बड़े धूम–धाम से मनाया जाता है।

प्रमुख त्यौहार :– यहां पूरे बारह महीना त्यौहार और उत्साह मनाते है। हरेली, नागपंचमी, कमरछठ, तीजा, गणेश पूजा, पोला, राखी, नवरात्रि, नवाखई, देवारी, देवउठनी, छेरछेरा, माघीपुन्नी, होली, रामनवमी, चैतनवरात्रि इत्यादि प्रमुख है, अब राष्ट्रीय पर्व भी बड़े धूम धाम से मानाये जाते है।

गीत और लोक गात की परम्परा :– आदिवासियों का जीवन प्राकृतिक जीवन से आबद्ध रहता है वे आडम्बर से दूर रहते है। इनका लोक गीत सरल सहज और सुंदर संगीतमय रहता है। इनके लोक गीत में जीवन के तथ्य और अंचल की वे भावपूर्ण संस्कृति का समाहित रहती है। सुवा, ददरिया, पंडवानी, मड़ई, गीत, करमा, डंडा, फाग, भोजली, चुलमाटी, बिहाव गीत, टिकावन गीत, भड़ांनी गीत, गौरागीत, जसगीत प्रमुख है। वाद्ययंत्रों में ढोलक, मंजीरा, झांझर, हरमुनिया, तबला खंझेरी, मांदर, चिकारा, बांसुरी, ढोल, को सुनकर सब मोहित हो जाते हैं।

पारंपरिक खेल एवं मनोरंजन के साधन :– जनजातियों का प्रमुख त्यौहार खो–खो कबड्डी, गोंटा, बांटी, गिल्ली–डंडा, लुकौला, आधी–चपाटी, रस्साकसी, फुगड़ी, बइला गाड़ी दौड़ और गेड़ी दौड़, गुलेल और तीर–धनुष। अब क्रिकेट, फुटबाल, व्हलीबाल, बैडमिंटन आदि खेल खेलने लगे है। मनोरंजन के साधनों में नाच–गम्मत, डगचगहा के कमाल, बेंदरा भालू के कमाल, जादूवाला, का खेल देखकर मनोरंजन करते है। जंगली क्षेत्र में रहने वाले आदिवासी गॉव में मुर्गा लड़ाने का प्रचलन है।

उपसंहार :– वर्तमान में आदिवासियों को जल, जंगल और जमीन से बेदखल किया जा रहा है। अतः सरकार को कानून में दिये गये प्रावधानों के अनुसार राज्य सरकारों को विशेष अदालतें, गठित करनी चाहिए। छत्तीसगढ़ खनिज संपदा से भरपूर है। आदिवासियों का जीवन प्राकृतिक जीवन से आबद्ध रहता है वे आडम्बर से दूर रहते है। उद्योगों में जिन आदिवासियों ग्रामीणों की भूमि ली जा रही है उन्हें केवल मुआवजा देने से काम नहीं चलेगा, बल्कि भू–स्वामियों को योग्यतानुसार नौकरी, उद्योगों में हिस्सेदारी देनी होगी। हिस्सेदारी पर भू–स्वामी भी उद्योगों का मालिक होगा और जीवन पर्यन्त उसके जीवकोपार्जन का मार्ग प्रशस्त होगा। साथ ही जनजाति समुदाय के साथ न्याय तथा जनजाती संस्कृति एवं माननीय मूल्यो का संवर्धन होगा। छत्तीसगढ़ की बहुरंगी जीवन शैली, विलयन रीति रिवाज और परम्पराऐं हर किसी को आमंत्रित करती रही है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. छत्तीसगढ़ की संस्कृति एवं लोक आयाम के विभिन्न स्वरूप – श्री मदन लाल गुप्ता
2. छत्तीसगढ़ की अस्मिता – संपादक – डॉ. मन्नू लाल यदु
3. लेक साहित्य और संस्कृति – डॉ. दिनेश्वर प्रसाद
4. छत्तीसगढ़ का इतिहास – प्रो. रमेंद्र नाथमित्र
5. छत्तीसगढ़ लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति – डॉ अनुसुइया अग्रवाल
6. छत्तीसगढ़ साहित्य दशा और दिशा – श्री नंद किशोर तिवारी

7. छत्तीसगढ़ संस्कृति एवं परिवेश – गीता तिवारी – आभा तिवारी
8. डॉ. कुमार, पोलीटिकल इकोनामिक आफ पावरटी–ए–माइक्रो लेवल स्टडी, 2007।
9. डॉ. सक्सेना एस.सी. श्रम समस्याऐं एवं सामाजिक सरुक्षा, रस्तोगी प्रकाशन, मेरठ, बारहवा संस्करण पृष्ठ 341।
10. डॉ. सिंह एवं डॉ. विरेन्द्र, ग्रामीण जनजातीय समाज 1994।
11. सिन्हा बी.सी., आर्थिक संवृध्दि और विकास, रायपुर पेपर बैक्स नोपड़ा, पृष्ठ 05।
12. डॉ. बघेल डी.एस. एवं डॉ. बघेल श्रीमती किरण, अनुसंधान पद्धतिशास्त्र, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, पृष्ठ 14।
13. शास्त्री राजा राम, समाज कार्य, उ.प्र. हिन्दी संरचना, लखनऊ, पृष्ठ 298।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

श्रीमद्भागवत पुराण में वर्णित समाज का अध्ययन

डॉ. विजय शंकर मिश्र
प्राचार्य, पंकज माहेश्वरी स्मृति महाविद्यालय, जायस, अमेठी (उ.प्र.)

सारांश :– श्रीमद्भागवत् एक महाकाव्या है जिसमें भगवान श्री कृष्ण के अवतारों का विस्तृत उल्लेख है। प्राचीन कालीन समाज में वर्ण व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है। आश्रम व्यवस्था में ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम की व्यवस्था के संकेत मिलते हैं। ऋग्वेद में ब्रम्हचर्य अवस्था का संकेत करने वाला शब्द ब्रम्हचारी मिलता है।

शब्दकुंजी :– समाज, उपनयन, वर्णव्यवस्था, संस्कार, आश्रम, सामाजिक, समीक्षण इत्यादि।

प्रस्तावना :– श्रीमद्भागवत् महाकाव्य एक ऐसा ग्रन्थ है जो श्री कृष्ण के अवतार विषयक तो प्रमुख रूप से है किन्तु इसके अतिरिक्त यह ग्रन्थ राजाओं, राजवंशों की परम्परा का विवरण देकर सामाजिक संदर्भों का भी संकेत करता है। उस काल में समाज की क्या स्थिति थी, किस प्रकार के लोग, किस रूप में अपना जीवन व्यतीत करते थे और वे किस–किस नाम से पुकारे जाते थे– इस सन्दर्भ में सामाजिक स्वरूप विवरण भी श्रीमद्भागवत् पुराण में यत्र–तत्र देखा जा सकता है और जिसका समीक्षण कर तत्कालीन समाज का स्परूप समझा जा सकता है।

विषयवस्तु –

आर्य :– यह शब्द श्रेष्ठता का द्योतक है। इससे वह व्यक्ति अथवा वर्ग सम्बोधित होता है। श्रीमद्भागवत् पुराण में एक स्थान पर आर्य शब्द का प्रयोग किया गया है। वहाँ पर यह कहा गया है कि भगवान शुक्र ने नाभाग के चरित्र कथन में आर्य शब्द का प्रयोग किया है। इन्हें अंगिरस के समूह पुत्रों का नाम भी दिया गया है।

अनार्य :– श्रीमद्भागवत् पुराण में एक स्थान पर अनार्य शब्द का प्रयोग किया गया है और कहा गया है कि कोई पाखण्डी ऋषभयदवी का अनुवर्तन करते हुए अनार्य वेद रहित परम्परा से अपनी वृद्धि से अन्यथा कल्पना कलियुग में कल्पित करेंगे।

तेशां पुरस्तादभवन्नार्यावर्ते नृपा नृप।
पंचविंशतिः पश्चाच्च नयो मध्ये परेअन्यतः।।1।।

अन्येम्यो वान्तरदिशः कश्यपाय च मध्यतः।
आर्यावर्तगुपराद्रष्ट्रे सदस्येभ्यस्ततः परम्।।2।।

दानव :– आचार्य मनु जब देवताओं और दानवों की उत्पत्ति का क्रम लिखते है तो वे निरुपण करते है कि दैत्य, दानव, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, सुपर्ण, किन्नरों के पिता अत्रि के पुत्र वर्हिषद कह गये हैं। मरीची आदि ऋषि इनके पिता है, क्योंकि पितरों से देवता और दानव की उत्पत्ति हुई और फिर बाद में देवताओं से सभी जगत क्रम से उत्पन्न हुआ। श्रीमद्भागवत् पुराण में भगवान के नृसिंह रुप के पराक्रम का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि उन्होने अपने नाखूनों से दैत्येन्द्र का उदर विदीर्ण कर दिया।

असुर :– श्रीमद्भागवत् पुराण में जब असुरों का उल्लेख आया है तो यह कहा गया है कि वे सभी उषना के मत का अनुसरण करते हैं। देवताओं का प्रतीकार करते है। ये महमत्त स्वभाव वाले हैं और आततायी होते हैं।

अन्य जातियाँ :– श्रीमद्भागवत् पुराण में अनेक जातियों का संकेत किया गया है। जैसे– भोजवंश का संकेत अधिक रुप में है। यह वह वंश है जिसमें कंस पैदा हुआ था और जिसे यदुवंश भी कहा जाता है। एक अन्य स्थान पर राजवंश का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि महाभोज राजा धर्मात्मा था और इसी के वंश में भोज उत्पन्न हुए। श्रीमद्भागवत् महा पुराण में उल्लेख है कि –

श्लाघनीयगुणः शूरैर्भवान भोजयशस्करः।
स कथं भगिनी हन्यात् स्त्रियमुदवाहपर्वणि।
उग्रसेनं च पितरं यदभोजान्धकाधिपम्।
स्वयं निगृह्य वुभुजे भूरसेनान् महाबलः।।

इस महापुराण के संदर्भ में एक स्थल पर यह भी उल्लेख है कि कंस ने भगवान कृष्ण से सम्बंधित लोगों को मारने का भी मन बनाया था। जब कंस ने अक्रूर को यह कहा कि तुम ब्रज से जाकर कृष्ण को ले आओ। मैं पहले तो उन्हें हाथी से कुचल कर मारूगाँ और यदि वे इस पर भी बच गए तो तो मल्लयुद्ध में उनका वध करूंगा। इसके बाद उनके जो सम्बंधी भोज होंगे मैं उनका भी वध करूंगा। भागवत महा पुराण में इसका वर्णन मिलता है कि–

तयोर्निहत्योस्तप्तान वसुदेवपुरोगमान्।
तद्बधून–निहनिश्यामि वृष्णिभोज दशार्हवान्।।

अंत में इस सम्पूर्ण वंश के विनष्ट हो जाने का अद्भुत विवरण भी इस पुराण में दिया गया है। इसमें कहा गया है कि प्रद्युम्न, साम्ब, अक्रूर, भोज, अनिरूद्ध, सात्यकी आदि जितने थे वे सभी गदा लेकर आपस में ही संघर्षरत् हुए और अन्ततः सभी विनाश को प्राप्त हुए।

वर्णव्यवस्था :– वर्णव्यवस्था भारतीय परम्परा की सर्वाधिक प्राचीन परम्परा है। प्राचीनकाल से ही वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था आदि सामाजिक मान्यतायें भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू समाज के संगठन का एक प्रमुख आधार रही है इस व्यवस्था के अर्न्तगत समाज को चार वर्गो में विभक्त किया गया। प्रारंभ में इस व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी रूचि, योग्यता और मनः स्थिति के अनुसार किसी भी वर्ण को स्वीकार कर सकता था, लेकिन वर्ण व्यवस्था का यह लचीलापन कुछ ही समय बाद वैदिक काल में समाप्त हो गयी।

ब्राम्हणोस्यमुखमासीद जैसा ऋग्वैदिक कथन इस परम्परा का प्राचीनतम कथन है। इसी को अनेक उपनिषदें अपने–अपने स्वरूप में संकेतित करती हैं। ब्रम्हारण्यक उपनिषद् में एक अन्य स्थान पर यह कहा गया है कि विश्व की आदि सत्ता ब्रम्ह है। इसने अपने एकाकीपन के भाव से उबरने के लिए क्षत्रिय वर्ग की सृष्टि की। इन्द्र, वरूण, सोम, रूद्र आदि देवताओं की सृष्टि में ये सभी क्षत्रिय वर्ग में आते हैं। पुनः उस ब्रम्ह ने वसु, रूद्र, आदित्य, आदि वैश्यवर्ग की सृष्टि की। इसके बाद उस ब्रम्ह ने स्वर्ग में शुद्रों की भी उत्पत्ति की। इसी स्वर्ग–विधान के अनुसार ही पृथ्वी पर वर्ण–विधान हुआ।

श्रीमद्भागवत गीता में वर्ण व्यवस्था का स्वरूप स्पष्ट करते हुए यह निरूपण हे कि भगवान ने सृष्टि के निर्माण में प्रत्येक के गुण और कर्म का विभागशः निरूपण कर चार वर्णों की सृष्टि की गई है। ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के कर्म स्वभाग से उत्पन्न गुणों द्वारा विभक्त किए गए हैं। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के कर्मो का अलग–अलग निर्देश किया है –

चतुर्वर्ण मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्।।[5]

ब्राम्हण :– ब्राम्हण, वर्णव्यवस्था में श्रेष्ठतम् वर्ण के रूप में प्रारम्भ से ही मान्य है। ऋगवेद में कहा गया है कि जो राजा ब्राम्हणों को आदर देता है। और उन्हें दान देता है। वह सदा सुखी रहता है। त्रैस्तरीय संहिता में यह कहा गया है कि ब्राम्हण ऐसे देव हैं जिन्हें हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं। भातपथ ब्राम्हण में कहा गया है कि ब्राम्हणों में चार विलक्षण गुण होते हैं– ब्राम्हण्य, पवित्रारण, यज्ञ तथा लोकपक्ति। इस रूप में जब व्यक्ति ब्राम्हणों से शिक्षा प्राप्त करता है तो वह ब्राम्हणों को चार अधिकार देता है अर्वा, दान, अजेयता तथा अवध्यता।

पुराणकाल में अवश्य ही ब्राम्हण की श्रेष्ठता प्रतिपादित है क्योंकि यह कहा गया है कि ब्राम्हण जन्म से ही गुरू होता है। वह केवल स्वयं ही संस्कारवान् नहीं होता था अपितु दूसरों को संस्कार देकर श्रेष्ठ बनाने का कार्य भी करता था।

क्षत्रिय :– क्षत्रिय भगवान के भुजाओं से उत्पन्न हुए हैं– यह वेद का संकेत है। उपनिषद् इस संदर्भ में यह कहती कि बम्ह ने अकेले होने पर विभूति युक्त कर्म करने में स्वयं को असमर्भ पाया इसलिए सामर्थ्य से युक्त क्षत्रिय की उत्पत्ति की। इस उत्पत्ति के सथ ही यह कहा गया कि क्षत्रिय से बढ़कर कोई नहीं है। इसीलिए राजपूत यज्ञ में ब्राम्हण क्षत्रिय से नीचे बैठकर क्षत्रिय की उपासना करते हैं और उसी में ब्रम्हभाव का अनुभव करते हैं।

वैश्य :– ब्रम्ह के द्वारा सृष्टि के विस्तार का जो कम कहा गया है उसी कम में यह भी प्राप्त होता है कि ब्रम्ह अपने ऐश्वर्य का सम्पादन बिना विश में नहीं कर सकता। इसीलिए उसने ही वैश्य की उत्पत्ति की। वैश्यों में वसु, रूद्र, आदित्य और विश्वदेवा की गणना की गई है, जिस पर आचार्य शंकर ने अपने शष्य में यह निरूपित किया है कि सृष्टि मं धनोपार्जन की व्यवस्था के लिए इन देवाताओं की गण्धना वैश्यों में की गई है। छन्दोग्योपनिषद में ब्राम्हण, क्षत्रिय और वैश्यों को द्विजाति मे गिन कर यह बताया गया है कि वैश्य जाति में वही जन्म लेता है जिसके आचरण श्रेष्ठ होते हैं।

शूद्र :– शूद्र वर्ण का महत्व इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि ब्रम्हा ने सभी की उत्पत्ति करने के पश्चात् यह विचार किया कि बिना विश के वह अपने ऐश्वर्य का विस्तार नहीं कर सकता। इसलिए इसे मुख्य रूप से श्रम से जोड़ा गया। शूद्र के देवता पूजा के क्रम में यह कहा गया कि यही सबका पोषण करता है इसलिए पोषण किए जाने के कारण इसकी पूजा की जानी चाहिए।

आश्रम व्यवस्था :– आश्रम शब्द की व्याख्या में कहा गया है कि श्रेय की इच्छा करने वाले व्यक्ति जहां पहुंचकर श्रम से मुक्त हो जाते हैं, उसे आश्रम कहते हैं। अथवा जहां पहुंचकर व्यक्ति सम्यक् प्रकार से श्रम कर सके। वह आश्रम है। अथवा आश्रम जीवन की वह स्थिति है जहां कर्तव्य पालन के लिए पूर्ण रूप से श्रम किया जाए। ये आश्रम है– ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास। भारतीय समाज में आश्रम धर्म का विधान वैज्ञानिक और सर्वश्रेष्ठ है। आश्रम शब्द का अर्थ है– जिसमें श्रम ही श्रम है, जिसमें आलस्य को स्थान नहीं, वैदिक शब्दावली में तपस्या है। वस्तुतः जीवन एक श्रम साध्य है यात्रा है जिसमें हर क्षण कर्म में रत रहते हुए सौ वर्ष तक जीने की अभिलाषा सार्थक कही जा सकती है– कुर्वन्तेवहे कर्माणि विजीविशेच्छतं समाः, इसलिए मनुष्य की सामान्य आयु सौ वर्ष स्वीकार करते हुए चार आश्रमों में विभक्त किया गया है – ब्रम्हचर्य, गृहस्य, वानप्रास्थ तथा संयास[2]।

महाभारत के अनुसार आश्रम व्यवस्था रूपी चार पदों की सीढ़ी जो ब्रम्हलोक ले जाती है–

चतुष्पदी ही निः श्रेणी ब्रह्मष्येषा प्रतिष्ठिता,
एतामारूह निःश्रेणी ब्रम्हलोके महीयते।
ब्रम्हचारी गृहस्थश्च वानप्रायोंऽयं भिक्षुक,
पयोक्त चारिणः सर्वेगच्छन्ति परमं गतिम्।।

प्राचीन कालीन वर्ण व्यवस्था में ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम की व्यवस्था के संकेत मिलते हैं। ऋृगवेद में ब्रम्हचर्य अवस्था का संकेत करने वाली शब्द ब्रम्हचारी मिलता है। अथर्ववेद में यह कहा गया है कि आचार्य उपनयन संस्कार के पश्चात् ब्रम्हचारी को अपना अन्तवासी बनता था। ब्रम्हचर्य के द्वारा ही देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी।

ब्रम्हचर्य आश्रम :– यज्ञोपवीत संस्कार के पश्चात् ब्रम्हचर्य प्रारम्भ होता था। उपनयन शब्द ही इस अर्थ को घोषित करता है जिसका अभिप्राय होता है वटु को आचार्य के पास ले जाना। आचार्य मनु ने ब्रम्हचारी के लिए विविध प्रकार व्रतों का कथन किया है। इन व्रतों में यह कहा गया है कि ब्रम्हचारी के लिए मधु, मांस, गन्ध, माला, स्त्रिय–सम्पर्क, प्राणियों की हिंसा, छत्र धारण काम, क्रोध, लोभ की वृत्तियां, गीतवादन, छूत, अमृतभाषण, ब्रम्हचर्य का स्खलन वणित था। इस रूप में ब्रम्हचारी विधि पूर्वक पूर्ण निष्ठा से अपने व्रत का पालन करता था और विधि–व्यवस्थित जीवन व्यतीत करता हुआ आचार्य आश्रम में विणध्ययन करता था।

गृहस्थ आश्रम :– एक स्थान पर यह कहा गया है कि गृह, गृह नहीं है अपितु गृहणी ही गृह है। इससे गृहस्थ का गृही होना घोषित है और गृह में गृहिणी का महत्व विदित है। ऋगवेद में एक स्थान पर कहा गा है कि पति और पत्नी मिलकर रहें। वहां पर इन्द्र से यह प्रार्थना की गई है कि वे स्त्री जो सौभाग्यशाली बनावें। पत्नी से सन्तानोत्पत्ति का भी महत्व संकेतित है। क्योंकि दस पुत्र प्राप्त करने की आकांक्षा है इसी क्रम में यह भी कहा है कि मनुष्य जन्म से तीन ऋणों से ग्रस्त होता है। ये ऋण हैं – देवऋण, पितृऋण, और ऋषि ऋण। इनमें से व्यक्ति पितृऋण से तथी उऋण हो सकता है ज बवह विवाह कर सन्तान की उत्पत्ति करे। पुत्र की परिभाषा भी यही है कि जो नरक से अपने पितरों का उद्धार करता है, वही पुत्र है।

वानपस्थ आश्रम :– इस आश्रम के सन्दर्भ में स्मृतिकार कहते हैं कि जो कठोर नियमों का पालन करते हुए वन में निवास करते हैं वे वानप्रस्थी है जब गृहस्थाश्रम में रहते हुए बाल पक जाये, त्वचा ढीली पड़ जाये, तब रोगों से ग्रसित होकर स्त्री को पुत्रों के संरक्षण में देकर अथवा उसे भी साथ लेकर वन का आश्रम ग्रहण करे। वहां पर जाकर नियमित रूप से वानप्रस्थी अग्नि होत्र करें, शीत, उष्णादि द्वन्दों से उपराम रहे तथा बसन्त, शरद ऋतुओं में भी यज्ञकर्म सम्पातिद करता रहे। वानप्रस्थाश्रम निवासी के लिए यह विधान है कि वह वन में जो भी फल – मूलआदि उपलब्ध होवे, उनके माध्यम से ही अपना जीवन चलावे। किसी प्रकार का पका हुआ अन्न ग्रहण न करे। ग्रीष्म ऋतु में अग्नि तपे और हेमन्त में जल में खड़े होकर तप करे। स्वाध्याय में रहे, मित्रता की भावना रखे, दान देने में प्रवृत्त हो और सभी प्राणियों के प्रति कृपाभाव वाला बने।

संन्यास आश्रम :– वैदिक संहिताओं में सन्यासाश्रम का बहुत स्पष्ट संकेत तो नहीं मिलता, किन्तु मुनि शब्द का उल्लेख अवश्य कई स्थानों पर किया गया है ऋग्वेद में कहा गया है कि पीले वस्त्र धारण करने वाले और बात लक्षण वाले होते थे। वे शरीर से तो मरणधर्मा थे किन्तु स्थिति वायु से भी ऊपर थी। उपनिषद संन्यास आश्रम के नियम योग से मुक्त अमृत पद को प्राप्त कर लेते हैं। इसी प्रकार से एक अन्य संदर्भ में यह कहा गया है कि धर्म के तीन स्कन्धों में से तप, व्रतादि का पालन कर परिब्राजक अमृतत्व को प्राप्त करता है।

उपसंहार :– भागवत् महा पुराण तत्कालीन समाज के विशय में जानने का महत्वपूर्ण महाकाव्य है। जिसमें भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था और आश्रम धर्म का विधान वैज्ञानिक और सर्वश्रेष्ठ है। पुराणकाल में अवश्य ही ब्राम्हण की श्रेष्ठता प्रतिपादित है क्योंकि यह कहा गया है कि ब्राम्हण जन्म से ही गुरू होता है। वह केवल स्वयं ही संस्कारवान् नहीं होता था अपितु दूसरों को संस्कार देकर श्रेष्ठ बनाने का कार्य भी करता था। अथर्ववेद में यह कहा गया है कि आचार्य उपनयन संस्कार के पश्चात् ब्रम्हचारी को अपना अन्तवासी बनता था। ब्रम्हचर्य के द्वारा ही देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी।

संदर्भ ग्रंथ :–

- मत्स्य पुराण, पृष्ठ 1052
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ, 444
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ, 462
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ, 28
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ, 10
- मनुस्मृति, पृष्ठ 117
- मनुस्मृति, पृष्ठ 116
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ 984
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ 320
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ 547
- ऋग्वेद 10/90/12
- यजुर्वेद 32/11
- यजुर्वेद 26/2
- श्रीमद्भगवत गीता पृष्ठ 75
- श्रीमद्भगवत गीता पृष्ठ 254
- ऋग्वेद 4/50/9
- तैतरीय संहिता 1/7/3/1
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ 593
- ईशोपनिषद, पृष्ठ 28
- छन्दोपनिषद्, पृष्ठ 529
- मनुस्मृति, 2/177–180
- भागवत महा पुराण, पृष्ठ 377
- www.shodhganga.com

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

बारेला जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में हुए परिवर्तनों का अध्ययन

मनीषा सावले
पी.एच.डी. शोधार्थी (समाजकार्य) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, (विक्रम विश्वविद्यालय), उज्जैन, म.प्र.
प्रार्थना निगम
प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, (विक्रम विश्वविद्यालय), उज्जैन, म.प्र.

प्रस्तावना :– मानव एक सामाजिक प्राणी है। और यह समाज से परे नहीं रह सकता। प्रत्येक मानव की कुछ आवश्यकताएँ होती है जिनमें कुछ अनिवार्य तो कुछ ऐच्छिक कही जा सकती है। समाज कोई अखण्ड व्यवस्था नहीं है बल्कि समाज का निर्माण तो अनेक अंगों जिनमे समूह, संस्थाएँ, समितियाँ, प्रथाएँ, परम्पराएँ व रीति–रिवाज आदि से मिलकर होता है। यह अपने सदस्यों की दिनचर्या को नियमित एवं नियंत्रित करती है। समाज चाहे आदिम हो या आधुनिक, प्रत्येक समाज की एक संरचना होती है। समाज का अपना एक संगठन होता है, जिसके कारण समाज के सदस्य एकजुट रहते है।

बारेला जनजाति मे सामाजिक संगठन के अन्तर्गत नातेदारी, विवाह, परिवार, वंश–समूह, गोत्र आदि का विशेष महत्व है। भारतीय संस्कृति विश्व मे अद्‌भुत है। इसी से हमे किसी भी समाज का सामाजिक–सांस्कृतिक परिचय प्राप्त होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता महसुस होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास प्राचीन समय से ही कई भारतीय मनीशियों द्वारा किया जाने लगा।

भारत मे प्राचीन काल से ही सामाजिक कल्याण व वैयक्तिक कल्याण कार्य किया जा रहा है। यह सुनियोजित भारतीय सामाजिक व्यवस्था के विकास को दर्शाती है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था ने कुछ सीमा तक बरेला जनजाति की सामाजिक व्यवस्था को भी प्रभावित किया है। जनजातीय समाज में किसी व्यक्ति का स्थान, कर्त्तव्य और उसके अधिकार प्रायः दूसरे सदस्यों के साथ उसके जन्मजात संबंधों पर निर्भर होते है। वर्तमान समय में बारेला जनजाति की सामाजिक स्थिति जिसमे परिवार, नातेदारी, विवाह, स्त्रियों की स्थिति आदि के परम्परागत स्वरुप में परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं।

शोध के उद्‌देश्य :– बारेला जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर में हुए परिवर्तनों का अध्ययन करना।

शोध की उपकल्पना :– बारेला जनजाति के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों पर शिक्षा एवं नई तकनीकी का सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

शोध कार्य में प्रयुक्त प्रविधि :–

अध्ययन का क्षेत्र :– मध्यप्रदेश के जिला खरगोन में बारेला जनजाति में सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन का अध्ययन हेतु शोध अध्ययन के लिए चयनित किया गया।

अध्ययन का समग्र :– प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के खरगोन जिले में निवासरत समस्त बारेला जनजाति के परिवारों को प्रस्तुत अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया।

अध्ययन की इकाई :– प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के खरगोन जिले में निवासरत बारेला जनजाति परिवार के मुखिया का चयन उद्‌देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया जिसको प्रस्तुत अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया।

निदर्शन विधि :– प्रस्तावित शोध अध्ययन में खरगोन जिले के भगवानपुरा विकासखण्ड के पाँच गांवों में ढाबला, रसगांगली, भुलवानिया, काबरी और गड़ी का चयन उद्‌देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया। चयनित गांव में प्रत्येक गांव से 60–60 परिवारों का चयन उद्‌देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया। इस प्रकार कुल न्यादर्श का आकार 300 परिवारों को अध्ययन के लिए चयनित किया गया।

तथ्यों का संकलन :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक आंकड़ों का संग्रहण किया गया तथा उनका विश्लेषण करके निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

प्राथमिक संमक :– प्राथमिक आंकड़ों का संग्रहण निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जाकर उत्तरदताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर साक्षात्कार कर, क्षेत्र का निरीक्षण एवं अवलोकन तथा समुह चर्चा के माध्यम से किया गया। साक्षात्कार

अनुसूची में अध्ययन के उददे" यों के अनुरुप प्रश्नों का समावेश किया गया।

द्वितीयक संमक :– द्वितीयक तथ्यों का संकलन जनजातियों से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन, शोध पत्र–पत्रिकाएँ, शासकीय प्रतिवेदन, जनगणना प्रतिवेदन, जिला सांख्यिकीय विभाग, पंचायत कार्यालय, कृषि विभाग, सिंचाई विभाग, जिला गजेटियर, समाचार–पत्र, इंटरनेट एवं विभिन्न पुस्तकालयों जिनमें विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, ज्योतिबाफूले पुस्तकालय, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, डॉ. अम्बेडकर नगर (महू) इंदौर, केन्द्रीय पुस्तकालय, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान संस्थान, उज्जैन पुस्तकालय में प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन के आधार पर किया गया है।

तकनीक एवं उपकरण :– संमक एकत्रित करने हेतु अवलोकन पद्धति, समूह चर्चा, अनुसूची, साक्षात्कार पद्धति, अनौपचारिक वार्तालाप, एस. पी. एस. एस., सारणीयन एवं फोटोग्राफी का उपयोग किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण :– अध्ययन क्षेत्र खरगोन जिले के भगवानपुरा विकासखण्ड के 300 बारेला जनजाति परिवारों का साक्षात्कार अनुसूची द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया। संग्रहित तथ्यों को अलग–अलग नम्बर (कोड) दिये गये, इन कोड के आधार पर कम्प्यूटर द्वारा एस. पी. एस. एस. (SPSS) पैकेज का प्रयोग करते हुऐ तथ्यों का सारणीयन एवं सांख्यिकी विश्लेषण किया गया है।

तालिका 1.1
परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के फैसले को मान्यता देने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पिता	79	26.3
2	माता	108	36.0
3	कमाने वाला सदस्य	38	12.7
4	वृद्ध सदस्य	21	7.0
5	शिक्षित सदस्य	19	6.3
6	सभी सदस्य	35	11.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में बारेला जनजाति के परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के फैसले को मान्यता देने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 36 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के लिए माता के फैसले को मान्यता दी जाती है जबकि सबसे कम 6.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के लिए शिक्षित सदस्य के फैसले को मान्यता दी जाती है। 26.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के लिए पिता के फैसले को माना जाता है वहीं 12.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महत्वपूर्ण कार्यों के लिए कमाने वाले सदस्य के फैसले को मान्यता प्रदान की जाती है। परिवार के वृद्ध सदस्यों के फैसले को मान्यता देने वाले कुल 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया वहीं 11.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में सभी सदस्यों के फैसले को मान्यता प्रदान की जाती है।

तालिका 1.2
परिवार में महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता दिए जाने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	126	42.0
2	नहीं	174	58.0
	कुल योग	**300**	**100.0**
यदि हाँ तो किन–किन मामालों में			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	समाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी करने में	36	28.57
2	व्यवसाय करने में	32	25.39
3	बैंक से सम्बन्धित निर्णय में	19	15.10
4	घरेलू खर्च से सम्बन्धित निर्णयों में	39	30.94
	कुल योग	**126**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में परिवार में महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता दिए जाने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 42 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है जबकि 58 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार के महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता नहीं दी जाती है।

कुल उत्तरदाताओं में से 126 उत्तरदाताओं के द्वारा जानकारी प्रदान की गई कि उनके परिवार के महत्वपूर्ण निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है तो उत्तराताओं से यह जानकारी प्राप्त की गई कि किन–किन मामलों में महिलाओं को प्राथमिकता दी

जाती है। प्राप्त जानकारी के आधार पर यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 28.57 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि समाजिक कार्यक्रमों में भागीदारी करने के लिए निर्णय लेने के लिए महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है जबकि 25.39 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में व्यवसाय करने के लिए निर्णय लेने के लिए महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है। 15.10 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाए गए जिन्होंने बताया कि उनके परिवार में बैंक से सम्बन्धित निर्णय लेने में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है वहीं 30.94 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में घरेलू खर्च से सम्बन्धित निर्णयों में महिलाओं को प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

तालिका 1.3
महिलाओं की स्थिति में बदलाव आने से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	171	57.0
2	नहीं	129	43.0
	कुल योग	**300**	**100.0**
यदि हाँ तो महिलाएं किन–किन कारणों से प्रभावित हुई है			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	शिक्षा के प्रभाव से	82	47.95
2	नगरीय सम्पर्क से	20	11.69
3	बहाय समाज के सम्पर्क से	18	10.52
4	संचार माध्यमों के प्रभाव से	28	16.38
5	फैशन के प्रभाव से	23	13.46
	कुल योग	**171**	**100.0**

बारेला जनजाति की महिलाओं की स्थिति में बदलाव आने का विवरण तालिका क्रमांक 1.3 में प्रस्तुत किया गया है तालिका में दिए गऐ आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कुल उत्तराताओं में से 57 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी परिवार की महिलाओं की स्थिति में बदलाव आ रहा है जबकि 43 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी परिवार की महिलाओं की स्थिति में बदलाव नहीं आ रहा है आज भी वे अपने परिवार की पुरानी परम्परा को ही समाहित किए हुए हैं।

कुल उत्तरदाताओं में से 171 उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में महिलाओं की स्थिति में बदलाव आ रहा है तो उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त की गई कि किन–किन कारणें से महिलाओं की स्थिति में बदलाव आ रहा है। कुल उत्तराताओं में से 47.95 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि शिक्षा के प्रभाव से महिलाओं की स्थिति में बदलाव आ रहा है वहीं 11.69 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि महिलाओं के नगरीय सम्पर्क में आने के कारण उनकी स्थिति में बदलाव दिखाई दे रहा है। 10.52 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बहाय समाज के सम्पर्क के कारण महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आ रहा जबकि 16.38 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान समय में संचार साधनों के प्रभाव के कारण महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन हो रहा है। 13.46 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन फैशन के प्रभाव के कारण हो रहा है।

तालिका 1.4
परिवार के स्वरूप में परिवर्तन होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	186	62.0
2	नहीं	114	38.0
	कुल योग	**300**	**100.0**
जनजातिय परिवार के स्वरूप में हुए परिवर्तनों पर पड़ने वाले प्रभावों का विवरण			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	औद्यौगिक का प्रभाव	77	41.39
2	नगरीकरण का प्रभाव	43	23.12
3	संचार के साधनों का प्रभाव	31	16.67
4	उपरोक्त सभी	35	18.82
	कुल योग	**186**	**100.0**

परिवार के स्वरूप में परिवर्तन होने के आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 62 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार के स्वरूप में परिवर्तन हो रहा है जबकि 38 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके उनके परिवार के स्वरूप में परिवर्तन नहीं हो रहा है।

जनजातिय परिवार के स्वरूप में हुए परिवर्तनों पर पड़ने वाले प्रभावों के विवरण से यह स्पश्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 41.39 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार के स्वरूप में औद्यौगिक के प्रभाव के कारण परिवर्तन हो रहा है जबकि 23.12 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बतया

कि उनके परिवार के स्वरूप में नगरीकरण के प्रभाव के कारण परिवर्तन हो रहा है। 16.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार के स्वरूप में संचार साधनों के प्रयोग के कारण परिवर्तन हो रहे हैं वहीं 18.82 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार के स्वरूप में उपरोक्त सभी कारणों से परिवर्तन हो रहे हैं

तालिका 1.5
बारेली बोली के अतिरिक्त और अन्य भाषा का प्रयोग किए जाने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	निमाड़ी	108	36.0
2	हिन्दी	134	44.7
3	दोनों	58	19.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में बारेला जनजाति के द्वारा बारेली बोली के अतिरिक्त और अन्य भाषा का प्रयोग बोलने के लिए किए जाने का विवरण दिया गया है जिसके विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 36 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में बारेली बोली के अतिरिक्त निमाड़ी बोली का प्रयोग किया जाता है जबकि 44.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके बारेला जनजाति में बारेली बोली के अतिरिक्त हिन्दी भाषा का प्रयोग किया जाता है। 19.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में बारेली बोली के अतिरिक्त दोनों भाशाओं का प्रयोग किया जाता है।

तालिका 1.6
बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा परम्परागत पोषाक पहनने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	81	27.0
2	नहीं	138	46.0
3	कभी–कभी	81	27.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा परम्परागत पोषाक पहनने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विवरण से स्पश्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 27 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा परम्परागत पोषाक पहने जाता है जबकि 46 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा परम्परागत पोषाक नहीं पहना जाता वे वर्तमान समय में आधुनिक पहनावा को अपनाने लगे हैं। 27 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा दोनों ही प्रकार की पोषाक पहनते हैं।

तालिका 1.7
बारेला जनजाति में पारम्परिक आभूषणों का प्रचलन होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	161	53.7
2	नहीं	139	46.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में बारेला जनजाति में पारम्परिक आभूषणों का प्रचलन होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तराताओं में से 53.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में आज भी पारम्परिक आभूषणों का प्रचलन पाया जाता है जबकि 46.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में आज भी पारम्परिक आभूषणों का प्रचलन नहीं पाया जाता है वे वर्तमान आधुनिक आभूणषों के प्रति अधिक आकर्षित होता जा रहे हैं।

तालिका 1.8
वर्तमान में महिलाओं द्वारा आभूषण एवं श्रंगार सामग्री के उपयोग को मान्यता देने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	आधुनिक	94	31.3
2	पारम्परिक	109	36.3
3	दोनों	97	32.4
	कुल योग	**300**	**100.0**

वर्तमान में महिलाओं द्वारा आभूषण एवं श्रंगार सामग्री के उपयोग को मान्यता देने का विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 36.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बाताया कि बारेला जनजाति की महिलाओं के द्वारा आज भी पारम्परिक आभूषण एवं श्रंगार सामग्री के उपयोग को मान्यता दी जाती है जबकि सबसे कम 31.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की महिलाओं के द्वारा आधुनिक आभूषण एवं श्रंगार सामग्री के उपयोग को मान्यता दी जाती है। 32.4 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाए गए जिन्होंने बताया कि बारेला जनजाति की महिलाओं के द्वारा दोनों ही प्रकार के आभूषण एवं श्रंगार सामग्री के उपयोग को मान्यता दी जाती है।

तालिका 1.9
वर्तमान में बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा गुदना बनवाने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	160	53.3

2	नहीं	140	46.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

वर्तमान में बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा गुदना बनवाने के विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 53.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा गुदना बनवाया जाता है और अत्यआधुनिक तरीके से बनवााया जाता है जबकि 46.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति के युवक–युवतियों द्वारा गुदना नहीं बनवाया जाता।

तालिका 1.10

बारेला जनजाति की पारम्परिक गुदना आकृतियों में परिवतन का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	202	67.3
2	नहीं	98	32.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

तालिका क्रमांक 4.32 में बारेला जनजाति की पारम्परिक गुदना आकृतियों में परिवर्तन होने का विवरण प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 67.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति की पारम्परिक गुदना आकृतियों में धीरे–धीरे परिवर्तन हो रहा है जबकि 32.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति की पारम्परिक गुदना आकृतियों में कोई परिवर्तन नहीं आया है वे आज भी पुराने तौर तरीके से गुदना की आकृतियों को अपने शरीर पर बनवाने का कार्य करते हैं।

तालिका 1.11

उत्तरदाताओं के परिवार में पारम्परिक समाजिक संस्कारों में परिवर्तन होने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	227	75.7
2	नहीं	73	24.3
	कुल योग	**300**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में उत्तरदाताओं के परिवार में पारम्परिक समाजिक संस्कारों में परिवर्तन होने का विवरण दिया गया है जिसके विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 75.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में पारम्परिक समाजिक संस्कारों में परिवर्तन हो रहा है जबकि 24.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके परिवार में पारम्परिक समाजिक संस्कारों में परिवर्तन नहीं हो रहा है।

तालिका 1.12

बारेला जनजाति की परम्पराओं एवं नियमों को बनाए रखने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	168	56.0
2	नहीं	132	44.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

तालिका क्रमांक 1.12 में दिये गये आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 56 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे बारेला जनजाति की परम्पराओं एवं नियमों को बनाए रखना चाहते हैं जबकि 44 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे बारेला जनजाति की परम्पराओं एवं नियमों को बनाए रखना नहीं चाहते हैं।

तालिका 1.13

जनजाति संस्कृति से जुड़े प्रतीक शुभ–अशुभ/शकुन–अपशकुन के प्रचलन को मानने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	181	60.3
2	नहीं	119	39.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

जनजाति संस्कृति से जुड़े प्रतीक शूभ–अशूभ/शकुन–अपशकुन के प्रचलन को मानने के विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 60.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे जनजाति संस्कृति से जुड़े प्रतीक शूभ–अशूभ/शकुन–अपशकुन के प्रचलन को मानते हैं जबकि 39.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे जनजाति संस्कृति से जुड़े प्रतीक शूभ–अशूभ/शकुन–अपशकुन के प्रचलन को नहीं मानते हैं।

तालिका 1.14

बारेला जनजाति द्वारा भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास रखने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	207	69.0
2	नहीं	93	31.0
	कुल योग	**300**	**100.0**
यदि हाँ तो विश्वास रखने का कारण			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	पारिवारिक विश्वास के कारण	104	50.25
2	प्रत्यक्ष अनुभव के कारण	31	14.97

3	कही सुनी बातों के कारण	40	19.32
4	उपर्युक्त सभी	32	15.46
	कुल योग	**207**	**100.0**

बारेला जनजाति द्वारा भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास रखने के आंकड़ों का विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 69 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास किया जाता है जबकि 31 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास नहीं किया जाता है।

भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास करने वाले कुल उत्तरदाताओं में से 50.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि पारिवारिक विश्वास के कारण वे भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास करते हैं जबकि 14.97 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि प्रत्यक्ष अनुभव के कारण वे भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास करते हैं। 19.32 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा कही सुनी बातों के कारण भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास किया जाता है वहीं 15.46 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा कि उपर्युक्त सभी कारणों के कारण भूत–प्रेत, जादू–टोना आदि में विश्वास किया जाता है।

तालिका 1.15

बारेला जनजाति द्वारा वर्तमान में अपने तीज त्यौहार व पर्व उत्सवों का मनाने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	209	69.7
2	नहीं	91	30.3
	कुल योग	**300**	**100.0**
यदि हाँ तो किस प्रकार			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	गीत नृत्य से	22	10.53
2	ढोल मान्दल से	67	32.05
3	पूजा–पाठ से	61	29.19
4	उपरोक्त सभी	59	28.23
	कुल योग	**209**	**100.0**

बारेला जनजाति द्वारा वर्तमान में अपने तीज त्यौहार व पर्व उत्सवों का मनाने के विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 69.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति द्वारा अपने तीज त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाया जाता है जबकि 30.3 प्रतिशत उत्तरदाओं ने जानकारी प्रदान दी कि वर्तमान में बारेला जनजाति द्वारा अपने तीज त्यौहार व पर्व उत्सवों को नहीं मनाया जाता है।

वर्तमान में बारेला जनजाति द्वारा अपने तीज त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाने वाले कुल उत्तरदाताओं में से 10.53 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा गीत एवं नृत्य से अपने तीज एवं त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाया जाता है जबकि 32.05 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा ढोल एवं मांदल से अपने तीज एवं त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाया जाता है। 29.19 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाए गऐ जिन्होंने बताया कि उनके द्वारा पूजा–पाठ करके अपने तीज एवं त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाया जाता है वहीं 28.23 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे उपरोक्त सभी के द्वारा अपने तीज एवं त्यौहार व पर्व उत्सवों को मनाया जाता है।

तालिका 1.16

बारेला जनजाति में प्रचलित लोकगीत, संगीत व लोकनृत्य में बदलाव आने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	202	67.3
2	नहीं	98	32.7
	कुल योग	**300**	**100.0**

बारेला जनजाति में प्रचलित लोकगीत, संगीत व लोकनृत्य में बदलाव आने का विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 67.3 प्रतिशत उत्तराताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में प्रचलित लोकगीत, संगीत व लोकनृत्य में बदलाव आ रहा है जबकि 32.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि बारेला जनजाति में प्रचलित लोकगीत, संगीत व लोकनृत्य में कोई बदलाव नहीं आ रहा है।

तालिका 1.17

वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक कलाओं के प्रचलन में कमी आने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	71	23.7
2	नहीं	139	46.3
3	परिवर्तन के साथ	90	30.0
	कुल योग	**300**	**100.0**

वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक कलाओं के प्रचलन में कमी आने के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 23.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक कलाओं के प्रचलन में कमी आ रही है जबकि 46.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक कलाओं के प्रचलन में कमी नहीं आ रही है। 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि परिवर्तन के साथ वर्तमान

में बारेला जनजाति की लोक कलाओं के प्रचलन में कमी आ रही है।

तालिका 1.18
वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	134	44.7
2	नहीं	166	55.3
	कुल योग	**300**	**100.0**
यदि हाँ तो किस प्रभाव से परिवर्तन हुआ			
क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	शिक्षा के प्रभाव से	40	29.85
2	आधुनिक यंत्रों के प्रयोग से	50	37.31
3	संचार साधनों का प्रभाव	44	32.84
	कुल योग	**134**	**100.0**

वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आने के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 44.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आ रही है जबकि 55.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कोई कमी नहीं आ रही है। कुल 134 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आ रही है। इन उत्तरदाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि वर्तमान में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी क्यो आ रही है तो कुल उत्तरदाताओं में से 29.85 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि शिक्षा के प्रभाव के कारण वर्तमान समय में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आ रही है जबकि 37.31 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि आधुनिक वाद्य यंत्रों के प्रयोग के कारण वर्तमान समय में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आ रही है वहीं 32.84 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जानकारी दी कि संचार साधनों के प्रयोग के कारण वर्तमान समय में बारेला जनजाति की लोक वाद्य यंत्रों के प्रयोग में कमी आ रही है।

निष्कर्ष :–

1. वर्तमान समय में बारेला जनजाति में सकारात्मक सामाजिक पविर्तन हो रहे हैं। जिसके कारण ये जनजाति समाज की मुख्य धारा से जुड़ने में सक्षम हो पा रही है।
2. बारेला जनजाति के द्वारा अभी तक तकनीकि के प्रयोग में निपूणता हासिल नहीं की जिसके कारण वे अपने बच्चों को तकनीकि शिक्षा दिलाने में असमर्थ हैं और तकनीकि के प्रयोग से अभी तक उनकी दूरी बनी हुई है।
3. वर्तमान समय में बारेला जनजाति के लोग धीरे धीरे तकनीकि का उपयोग करना सीख रहे हैं निश्चित ही इसका सकारात्मक प्रभाव उनके सामाजिक परिवर्तन और शिक्षा पर पड़ेगा।
4. बारेला जनजाति की सांस्कृतिक परम्पराओं जैसे आभूषणों का प्रचलन, श्रंगार सामग्री, गुदना आकृति एवं सामाजिक संस्कारों में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है।
5. उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी के अनुसार वर्तमान समय में बारेला जनजाति के लोगों के द्वारा नए–नए आभूषण, वेशभूषा एवं कृत्रिम आभूषणों का प्रयोग बढ़ा है वहीं बोली–भाषा, परम्परा एवं नियम और देवी देवताओं की पूजा करने के लिए वे आज भी बारेला जनजाति की ही मान्य सांस्कृतिक परम्पराओं का पालन करते हैं और उन्हीं के द्वारा अपने अनेकों कार्य सम्पन्न करते हैं।

सुझाव :–

1. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के बेहतर प्रयास एवं योजनाबद्ध शिक्षण प्रणाली को प्रोत्साहित कर क्रियान्वित किये जाने की आवश्यकता है, ताकि शिक्षा के स्तर को सुधारा जा सके।
2. बारेला जनजाति के लोगों के लिए शिक्षण एवं रोजगार को प्राप्त करने हेतु ऑनलाईन प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों को सरलीकृत कर तक पहुँचाना चाहिए।
3. कृषि क्षेत्र में नवीन संसाधनों का विकास कर गाँव में ही स्वरोजगार एवं दैनिक रोजगार के अवसरों को बढ़ाया जाना चाहिए।
4. टेलीविजन के माध्यम से ऐसे सृजनात्मक कार्यक्रमों का संचालन होना चाहिए जिससे उनमें जागरुकता का विकास हो ना कि बाजारवादी एवं उपभोक्तावादी मानसिकता को बढ़ावा मिले।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. **एम. जी स्वामी (2011),** ''मध्यप्रदेश सामाजिक शोध समग्र'', रिसर्च बुलेटिन, (सितम्बर) लोक विकास एवं अनुसंधान ट्रस्ट, इन्दौर।
2. **एल्विन, वेरियर (1951),** ''द ट्राइबल आर्ट आफ मिडिल इण्डिया'' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन।

3. **यादव, स्मिता (2012),** ''मध्यप्रदेश सामाजिक शोध समग्र'', (जून), लोक विकास एवं अनुसंधान ट्रस्ट, इन्दौर।
4. **यादव, राजीव एवं जे. राय (2005),** ''आदिवासी स्वस्थ्य पत्रिका'', भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद, जबलपुर।
5. **शर्मा, के. एल. (2010),** ''भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन'', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
6. **शांडिल्य, महेशचन्द्र (2010),** ''मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य, आदिवासी लोककला एवं तुलसी साहित्य अकादमी, भोपाल।
7. **बया, विकास (2015),** ''जनजातीय विकास'', क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
8. **बघेल, डी. एस. (2006),** ''भारतीय समाज'', महावीर पब्लिशर्स एण्ड डिस्टीब्युटर्स।
9. **बी. एल. नागदा (2008),** ''आदिवासी स्वास्थ्य पत्रिका'', जनवरी एवं जुलाई, (2008), क्षेत्रिय जनजाति आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र भारतीय आयुर्विज्ञान आनुसंधान परिषद, जबलपुर।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारत छोड़ो आंदोलन एवं महिलाओं की भूमिका उत्तर प्रदेश राज्य के विशेष संदर्भ में

डॉ. संजीव कुमार राजपूत
अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) वृंदा सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डबरा, ग्वालियर

प्रस्तावना :– 7 अगस्त 1942 ईस्वी को कांग्रेस का अधिवेशन मुंबई में प्रारंभ हुआ 8 अगस्त को महात्मा गांधी ने समिति के समक्ष भारत छोड़ो का अपना इतिहासिक प्रस्ताव रखा यह प्रस्ताव कुछ संशोधनों सहित स्वीकार कर लिया गया।

कांग्रेस इस बात से भली भांति परिचित थी कि अंग्रेज भारत छोड़कर आसानी से नहीं जाएंगे अतः उसने एक जन आंदोलन प्रारंभ करने का निश्चय किया आंदोलन को प्रारंभ करने से पहले गांधीजी अंग्रेजी सरकार से बातचीत करने के पक्षधर थे गांधी जी ने कांग्रेस कार्यकारिणी समिति के समक्ष 70 मिनट का अभिभाषण दिया इंद्र विधाना चस्पति के शब्दों में ''गांधीजी उस दिन ऐसे बोल रहे थे मानो उनकी अंतरात्मा से भगवान बोल रहे थे।

डॉ. पट्टाभि सीता रमैया लिखते हैं कि वास्तव में गांधीजी इस दिन अवतार और पैगंबर की प्रेरक शक्ति से प्रेरित होकर भाषण दे रहे थे गांधी जी के दिए गए भाषण से मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कांग्रेस कार्यकारिणी समिति के समक्ष जो 70 मिनट का भाषण देविय सक्ती से ओतप्रोत प्रतीत होता है।

अपने दिव्य भाषण के अंत में गांधी जी बोले यह संघर्ष मेरे जीवन काल का अंतिम संघर्ष होगा गांधी जी ने भारतवासियों को करो या मरो का मंत्र दिया।

महिलाओं का व्यापक योगदान :– भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं ने सक्रिय होकर गतिविधियों में भाग लेकर भारत को स्वाधीनता दिलाने के लिए अपने कार्यों को अंजाम देती रही महिलाओं की गतिविधियां सक्रिय रूप से जुलूसों प्रदर्शनों और धरनों तक सीमित नहीं थी विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण कैंप भी खुल गए थे। जहां महिलाओं और लड़कियों घायलों की सेवा के लिए प्राथमिक चिकित्सा, होम नर्सिंग का प्रशिक्षण देने के साथ उन्हें आत्म रक्षा के लिए लाठी, बंदूक आदि चलाने एवं गुप्त कार्यवाही का संचालन करने भूमिगत रहते हुए आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता था

उत्तर प्रदेश राज्य एवं महिलाएं :– छात्र व छात्राओं ने आंदोलन में सक्रियता दिखाते हुए 10 अगस्त 1942 को लड़कियों की एक टोली ने कार्यालय पर हमला बोल दिया उस क्षेत्रों को अपने कब्जे में ले लिया छात्रों के साथ छात्राओं की टोलियां भी हर जिले में गांव – गांव भ्रमण कर स्वतंत्रता की दीवानों के परिवारों में राहत कार्य कर रही थी और जो लोग घर में चुपचाप बैठे हुए थे ऐसे लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिए उत्साहित करती हैं।

बलिया जिले में आंदोलन अधिक उग्र था जिला प्रशासन पर बागियों ने कब्जा कर लिया सरकार ने फौज बुलाकर बलिया जिले को द्वारा अपने कब्जे में लेने के लिए लोगों पर अत्याचार करना प्रारंभ किया कांग्रेस जनों के लगभग 150 मकान लुटे और जला दिए गए महिलाओं की अस्मिता जेवर कपड़े लूटे गए बच्चों को गांव से बाहर निकाल कर घरों में आग लगा दी गई महिलाओं को बंदूक की नोक पर घर से बाहर निकाल दिया उनमें से कुछ गर्भावस्था तथा अंतिम अवस्था में तथा आसन्न प्रसवा भी थी उनके गहने जबरदस्ती से उतरवा लिए गए।

कानपुर में विद्यार्थियों ने डेढ़ महीने तक हड़ताल रखी लखनऊ में आंदोलन वनारस से धीमा रहा पर कान्यकुब्ज स्कूल के लड़कों व महिला विद्यालय की लड़कियों ने विशेष साहस दिखाया 10 – 11 अगस्त 1942 को जगह – जगह जुलूसों के साथ आंदोलन प्रारंभ किए वनारस हिंदू विश्वविद्यालय में आंदोलन तीव्र था 11 अगस्त को बलिया में भी छात्रों के जुलूस पर सरकार द्वारा लाठीचार्ज हुआ वनारस में 11 अगस्त को छात्रों के जुलूस को कुचलने के लिए गोली चलाने का आदेश भी दे दिया गया।

सिपाहियों ने गोली चलाने से इनकार किया तो उस दिन कोई घटना घटित नहीं हुई 12 अगस्त को पुनः जुलूस को निकाला जिसमें बड़ी तादाद में छात्राओं ने भाग लिया जुलूस पर पहले लाठियों से प्रहार किया गया फिर गोली चलाई कुछ छात्रों ने अगुवाई कर रही।

लड़कियों को पीछे धकेला और गोलियों को अपने सीने पर झेल लिया इससे लड़कियों में अधिक उत्साहित होकर अपनी बहादुरी का परिचय देते हुए घोड़ों की लगामें पकड़कर कुछ घुड़सवारों को नीचे गिरा दिया इसके बाद कई राउंड गोलियां चली जिसमें छात्र बा राहगीर जख्मी हुए।

बनारस जिला के अंतर्गत कई गांव की महिलाओं पर अंग्रेजी शासन के द्वारा किए गए अत्याचार की क्रूर कहानियां भी रिकॉर्ड की गई थी कहीं कहीं उन्हें बाहों से पकड़कर घसीटा गए और उनसे दंड बैठक भी दिलवाई गई तथा उन्हें भूखा प्यासा भी रखा गया अंग्रेजी हुकूमत का विरोध करने पर एक स्त्री का 1 महीने का बच्चा उसकी आंखों के सामने जिंदा जला दिया गया।

आजमगढ़ के गांव से भी स्त्रियों के साथ बलात्कार के समाचार मिले थे रामगढ़ गांव की चेत नामक अछूत की पत्नी पर 20 गौरो ने इतना जुल्म ढाया कि वह मर गई मंझा गांव में एक स्त्री को उसके घर वालों के सामने ही बलात्कार किया गया दनदारा में एक स्त्री को बिना कारण राह चलते गोली मार दी गई पर अमीला गांव में घर लूटने के लिए पुलिस आई पुलिस का सामना सुप्रसिद्ध अलगू राम शास्त्री की भाभी ने डटकर किया पुलिस वालों को इस कदर धमकाया कि वह अपना सा मुंह लेकर वापस चले गए अनेक मकान जलाए स्त्रियों के सतीत्व नष्ट किया गया

अत्याचारों के द्वारा शहीद होने महिलाओं की उपलब्ध नाम गाजीपुर की राधिका देवी जो डर कर घर से भागते हुए पुलिस की गोली से मारी गई बलिया की कुमारी जानकी जुलूस में भाग लेते हुए गोली की शिकार हुई बलिया क्षेत्र से ही जमुना माली जानवर चराते हुए पुलिस की गोली का शिकार हुई जौनपुर की श्रीमती उंगली और नेहा रानी पुलिस की गोली से घायल हो गई उसमें नेहा रानी उसी दिन मृत्यु हो गई।

आंदोलन में सक्रिय महिलाएं :– वनारस डिवीजन में 1942 के आंदोलन में अग्रणी भाग लेने वाली 16 महिलाओं के नाम मिले हैं मिर्जापुर की श्रीमती राजेश्वरी देवी और वनारस की देवकली को दो–दो वर्ष की सजाए मिली श्रीमती सज्जन देवी मेहनोत 50वीं बार जेल गई।

श्रीमती लक्ष्मी को 1 वर्ष की कड़ी सजा मिली बलिया की पार्वती देवी को 18 महीने और जिंसा देवी को 15 महीने की शेष सभी महिलाओं को कुछ दिनों से लेकर 6 महीने तक की सादा कैद कड़ी कैद की सजा मिली।

गोरखपुर के एक गांव उलिया की झिमीपा धोबन जिसके पति को गोली मारकर उसके घर में आग लगा दी जिससे नेपाल में भागकर भूमिगत हो गई वापसी आने पर पकड़ी गई 8 महीने की जेल में डाल दिया गया

झांसी डिवीजन से अग्रणी आंदोलन में भाग लेने वाली 13 नाम मिले हैं इनमें झांसी की केसरबाई और हमीरपुर की क्रांति देवी को एक–एक वर्ष की साथ जुर्माना भी भुगतना पड़ा हमीरपुर की सरस्वती देवी पुलिस लाठी से घायल होने पर भी जेल भेजी गई शेष सभी महिलाओं को 1 से 6 माह की सादा व कड़ी सजाए सुनाई गई।

जिला अलीगढ़ से अग्रणी भाग लेकर की जाने वाली 14 महिलाओं के नाम मिले जिसमें सूरज कुमारी को एक वर्ष सूरज बाई पुत्री मनोहर सिंह तथा सूरज बाई पुत्री नारायण सिंह को 10–10 महीने इसी तरह है कृष्णा दुलारी और हेमलता देवी को 10–10 महीने तक नजरबंदी की सजा मिली गंगा देवी की 3 महीने की बच्ची 1932 के आंदोलन में जेल में मर गई थी उन्होंने 1941–42 में फिर भाग लिया जेल गई शेष महिलाओं को 1 से 6 माह तक की सजाए मिली।

आंदोलन में अल्मोड़ा नैनीताल का पहाड़ी क्षेत्र भी पीछे नहीं था यहां से महिला नेतृत्व में 11 नाम मिले हैं जिनमें फबिया देवी को एक वर्ष सरस्वती देवी को 9 माह की कैद की सजा दी गई शोभावती मित्तल जंगल ठेका के विरुद्ध सत्याग्रह करके गिरफ्तार कर ली गई 1 वर्ष बाद रिहा कर दी गई विद्या देवी देश सेवक का नेतृत्व रेल पटरियों को उखड़वाने और तोड़फोड़ की कार्यवाही अत्यंत प्रभावी रही नैनीताल की यह प्रौढ़ महिला 1941 में व्यक्तिगत सत्याग्रह में गिरफ्तार होकर जेल गई थी जेल से रिहा होने पर भारत छोड़ो आंदोलन में सम्मिलित हो गई तोड़फोड़ की कार्रवाईयों में कार्यरत होने के कारण उन्हें भारतीय दंड संहिता तथा भारत रक्षा कानून की की कई धाराओं के तहत 15 वर्ष की लंबी अवधि की कड़ी कैद की सजा सुनाई गई थी।

स्थानीय जनता व नेताओं के प्रयास से उन्हें 1946 में रिहा कर दिया गया विरानी देवी सहित शेष महिलाओं को 3 से 6 मार्च तक की सजा दी गई कहीं–कहीं सजा के साथ जुर्माना भी किए गए इस क्षेत्र में विनोवाभावों की विदेशी शिष्या सरलावेन (हेलीमेन) ने भी 1942 के आंदोलन में खुलेआम भाग लिया व जेल की सजा भी भुगती।

आगरा, मथुरा, सहारनपुर, मेरठ, गाजियाबाद से 32 महिलाओं ने नेतृत्व किया इन महिलाओं ने भी काफी लंबी का कडी सजाएं सुनाई गई महत्वपूर्ण रूप से आगरा जिले की श्रीमती आनंदी देवी को 18 माह श्रीमती अक्षय कुमारी को 16 माह सरण कुमारी को 16 माह सरोज कुमारी, विजय कुमार, प्रेमवती, रूपवती ,कमला शर्मा को एक – एक वर्ष की

कड़ी कैद व नजरबंद की सजा मिली आगरा मथुरा की शेष महिलाओं को 3 से 6 माह तक सजा मिली।

सहारनपुर की लीलावती को 1 वर्ष नजरबंद करके रखा गया उससे उसके पति का ठिकाना पूछने पर नहीं बताया गया तो उसे यातनाएं दी गई उनके पति साढ़े 3 वर्ष भुमिगत रहे नजरबंदी के दौरान उन्होंने बच्चों को जन्म दिया मेरठ से कमला चौधरी, गायत्री देवी, सावित्री रस्तोगी, प्रकाश वती सूद गाजियाबाद से रघुनाथ कुमारी, अंगूरी देवी नाम उल्लेखनीय है इन सभी को जेल की सजा भुगतनी पड़ी।

उन्नाव जिले से 10 महिलाओं के नाम नेतृत्व कर्ता के रूप में मिलते हैं बदायूं से 4 शाहजहांपुर से 4 सीतापुर से 5 खीरी से 3 बिजनौर से 4 देहरादून से 2 मैनपुरी से 1 इन सभी का सादा व कड़ी सजाए तथा जुर्माना भुगतना पड़ा था।

इलाहाबाद आंदोलनकारियों का गढ़ बन चुका था जबकि लखनऊ राजधानी होते हुए भी आंदोलन धीमी गति से चला सभी बड़े नेताओं को आंदोलन के शुरू में ही गिरफ्तार कर लिया गया ऐसी परिस्थिति में छात्रों व महिलाओं ने आगे आकर आंदोलन का संचालन किया महिला नेताओं को भी 1–1 करके जेल में डालने लगे। होम पॉलीटिकल 18 सितंबर 1942 की रिपोर्ट के अनुसार इंदिरा व फिरोज गांधी को भारतीय सैनिकों द्वारा उन्हें गिरफ्तार करने से इंकार कर दिया तब ब्रिटिश सैनिकों ने उन्हें गिरफ्तार किया इस क्षेत्र से जेल जाने बाली प्रमुख महिलाओं के नाम उमा नेहरू, हाजिरा बेगम पुर्निमा वैनरजी, सावित्री श्याम स्वरूप, कुमारी बक्शी ,राजेंद्र कुमारी बाजपाई इत्यादि।

उत्तर प्रदेश के लगभग सभी जिलों क्षेत्रों ग्रामीण अंचलों से महिलाएं ने सक्रिय होकर अपने अद्भुत शौर्य साहस से प प्रतिबंधों, कड़े कारावास और पारिवारिक कष्टों का सामना किया।

यदि हम महिलाओं के योगदान की बात करें तो हम कह सकते हैं कि अंग्रेजी हुकूमत की ईंट से ईंट बजा दी और अंग्रेजी शासन का पंगु बनाते हुए देश को स्वाधीनता दिलाने में साहस भरा कार्य किया।

निष्कर्ष :– भारत छोड़ो आंदोलन से विश्व के अन्य देशों को भी भारत की वास्तविक स्थिति से परिचित हुए अमेरिका व चीन का इस आंदोलन का गहरा प्रभाव पड़ा चीन के मार्शल च्याग काई शेक ने 25 जुलाई 1942 को अमेरिका के राष्ट्रपति को पत्र लिखा।

"अंग्रेजों के लिए सबसे श्रेष्ठ नीति यह है कि भारत को पूर्ण स्वतंत्रता दे दे"

रूजवेल्ट ने भी काई शेक की बात का समर्थन किया इस आंदोलन के कुछ अन्य कारणों से युद्ध के बाद अमेरिका और इंग्लैंड में लोकमत इतना तेज हो गया कि इंग्लैंड को विवश होकर भारत छोड़ना पड़ा।

भारत छोड़ो आंदोलन ने जनता में अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न कर दी और जनता मैं ब्रिटिश शासन के विरुद्ध मुकाबला करने की भावना उत्पन्न की इस आंदोलन से ब्रिटिश सरकार को आभास हो गया कि भारत को और अधिक समय तक पैरों तले दबाकर नहीं रखा जा सकता।

यद्यपि इस आंदोलन से भारत को स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हुई लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि इस आंदोलन मैं जो बलिदान दिए थे वह जब व्यर्थ नहीं गए।

हम कह सकते हैं कि छात्र वह छात्राएं हैं कामकाजी महिलाओं ने स्वाधीनता के लिए जो इस आंदोलन में बलिदान दिए व अस्मरणीय है तथा उनका बलिदान देश के लिए 1 नीव के पत्थर के समान था।

संदर्भ सूची :–

- माइकेल ब्रेचर – नेहरू पॉलिटिकल बायोग्राफी प्र. 89
- नेहरू जे.एल – दि डिस्कवरी ऑफ इंडिया प्र. 502
- डॉ. पट्टाभि सीता रमैया हिस्ट्री ऑफ दि नेशनल कांग्रेस ऑफ इंडिया प्र. 462
- लुई फिशर – दि ग्रेट चौलेंज प्र.162
- अंबा प्रसाद – दि इंडियन रिवोल्ट ऑफ 1942 प्र. 122–123
- डॉ. ईश्वर प्रसाद – हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया
- पामर – मेजर गवर्नमेंन्टसऑफ इंडिया प्र. 298

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

विकासमित्र का मुसहर जाति के जनजीवन पर प्रभाव : मधेपुरा जिला के संदर्भ में

प्रभाकर सिंह
शोधार्थी, यू.जी.सी. नेट, (समाजशास्त्र), जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (मध्यप्रदेश)
डॉ. रजोल कुमार सक्सेना
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र, शासकीय महाविद्यालय मेहगाँव, भिण्ड (मध्यप्रदेश)

सारांश :– बिहार सरकार ने अनुसूचित जातियों में पिछड़ों का आँकलन करने के लिए 2007 में एक महादलित आयोग का गठन किया। इस आयोग का काम अनुसूचित जातियों में भी अति पिछड़ी जातियों का पता लगाना, इनके पिछड़ने का कारण तथा इनके शैक्षिक एवं सामाजिक जनजीवन में सुधार के लिए अनुशंसायें करना था। जिससे इस जाति के जीवन में सुधार आ सके। आयोग ने बिहार की 22 अनुसूचित जातियों में से सभी जातियों को महादलित की श्रेणी में रखा। इन्हीं जातियों में से एक मुसहर जाति है जिसकी जनसंख्या बिहार की कुल अनुसूचित जाति का 16.19% है। जो चमार (31.14%) एवं दुसाध (30.88%) के बाद तीसरा स्थान रखता है। महादलित के जनजीवन में सुधार के लिए आयोग ने सरकार से विभिन्न प्रकार की अनुशंसाएँ की जिनमें से एक विकास मित्र को नियुक्त करना है।

मुख्य शब्द :– महादलित, मुसहर, विकास मित्र, अनुसूचित जाति।

परिचय :– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 38 और अनुच्छेद 46 ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों को समाज की मुख्य धारा में लाने के लिए बहुत जोर दिया है। संविधान के इन्हीं निर्देशों के मद्देनजर, सरकार ने अनुसूचित जातियों के सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के लिए कई योजनाएँ शुरू की हैं। यह पाया गया कि अनुसूचित जाति के कुछ वर्ग इन योजनाओं से काफी लाभान्वित हुये हैं और खुद का विकास किया हैं, लेकिन यह भी देखा गया कि अनुसूचित जाति का एक बड़ा वर्ग सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ है। राज्य सरकार ने अनुसूचित जातियों के बीच इन सबसे वंचित वर्गों के समग्र विकास के लिए विचार–विमर्श एवं पहल की। 2007 के शुरुआत में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने दलित जातियों में भी पिछड़ी जातियों का आँकलन करने के लिए एक महादलित आयोग का गठन किया।

राज्य सरकार ने महादलित आयोग को निम्न बातों का पता लगाने का कार्य दिया :–

- अनुसूचित जातियों के भीतर की उन जातियों को पहचानें जो विकास की प्रक्रिया में पिछड़ गयी हैं।
- इन जातियों के शैक्षिक और सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना और इनके उत्थान के लिए उपाय सुझाना।
- इनके रोजगार के तरीके के साथ उनके शैक्षणिक और सामाजिक उत्थान के लिए उपाय शुरू करने के लिए कार्रवाई की सिफारिश करना।
- इन जातियों के चयन का मुख्य आधार उनकी मौजूदा सामाजिक–आर्थिक स्थिति, सरकारी नौकरी में भागीदारी, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों में भागीदारी और शैक्षिक स्थिति होगी।
- कोई अन्य विषय आयोग यदि राज्य सरकार को सौंपता हैं।

आयोग ने अपना पहला रिपोर्ट नवंबर 2007 में प्रस्तुत की, जिसमें बिहार की 22 दलित जातियों में से 18 जाति को महादलित की श्रेणी में रखा गया, इस श्रेणी में दुसाध, चमार, पासी एवं धोबी को नहीं रखा गया। ये 18 जाति बिहार की कुल अनुसूचित जातियों का मात्र 37% होता था। इसके बाद आयोग ने अपनी अगली रिपोर्ट अप्रैल 2008 में प्रस्तुत की, जिसमें इन्होंने पासी और धोबी को भी महादलित की श्रेणी मे शामिल करने की अनुशंसायें की। इसके बाद नवंबर 2009 में आयोग की तीसरी रिपोर्ट आयीं, जिसमें आयोग ने चमार को भी महादलित की श्रेणी लाने की अनुशंसा की।

इस प्रकार से देखा जाये तो बिहार के कुल अनुसूचित जाति के 69% लोग महादलित की श्रेणी में आ गये, इस श्रेणी में सिर्फ दुसाध को नहीं रखा गया था। परन्तु वर्ष 2015 में दुसाध जाति को भी इस श्रेणी में शामिल कर लिया, जिसके बाद अनुसूचित जाति के 100% लोग महादलित की श्रेणी में आ गये।

आयोग[1] ने इस जाति के जनजीवन में सुधार के लिए कई अनुशंसाएँ की जिनका विवरण निम्न हैं :–

- आवास योजना के लिए जमीन। (Land for

Housing Scheme)

- महादलित आवास योजना। (Mahadalit Awas Yojna)
- महादलित जल आपूर्ति योजना। (Mahadalit Water Supply Scheme)
- महादलित शौचालय निर्माण योजना। (Mahadalit Toilet Construction Scheme)
- महादलित बस्ती रोड सम्पर्क योजना। (Mahadalit Basti link Road scheme)
- महादलित आँगनवाड़ी। (Mahadalit Aganwadi)
- महादलित शिशु सदन। (Mahadalit Creche)
- महादलित के लिए विशेष स्कूल छात्रावास। (Special School/Hostel for Mahadalit)
- मुख्यमंत्री महादलित पोशाक योजना।
- दशरथ माँझी कौशल विकास योजना।
- मुख्यमंत्री नारी ज्योति कार्यक्रम।
- धनवंतरी मोबाईल आर्युवैदिक चिकित्सा।
- चलता फिरता (गतिशील) जन वितरण प्रणाली। (Mobile Public Distribution System)
- सफाई प्रणाली के लिए शिक्षा। (Eradication of scavenging system)
- सामुदायिक भवन सह वर्क शेड का निर्माण। (Construction of Community Hall cum Work-Shade)
- प्रशिक्षण एवं अनुसंधान के लिए जिला और प्रखंड संसाधन केन्द्र की स्थापना। (Establishment of District - Block Resource Centre for Training and Research)
- सामुदायिक रेडियो। (Community Radio)
- छात्रवृत्ति। (Scholarship)
- महादलित के लिए हैल्थ सब सेंटर की स्थापना करना।
- उपरोक्त के अलावा आयोग ने हर पंचायत से एक "विकास मित्र" नियुक्त करने की अनुशंसाएँ की जो महादलित समुदाय को मौजूदा सरकारी कार्यक्रम से जोड़ने में मदद करेगी।

विकास मित्र :– बिहार राज्य महादलित आयोग के अनुशंसा के आधार पर विकास मित्र की नियुक्ति का कार्य 2010 के प्रारंभ में **"बिहार महादलित विकास मिशन"**[2] को सौंपा गया। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक ग्राम पंचायत से एक विकास मित्र को नियुक्त किया जायेगा। जबकि शहरी क्षेत्रों में प्रत्येक 4 वार्ड पर एक विकास मित्र को नियुक्त किया जायेगा। यहाँ ध्यातव्य हो कि जिस पंचायत में 50 महादलित परिवार से कम रहते हैं, तो उस पंचायत को पड़ोस के पंचायत में जोड़कर विकास मित्र को नियुक्त किया जायेगा। प्रारंभ में इस विकास मित्र की नियुक्ति अनुबंध (Contract) के आधार पर 11 महीनों के लिए की गयी थी। परंतु समय–समय पर इनके अनुबंध को बढ़ाया गया। प्रारंभ में विकास मित्र को पारिश्रमिक के तौर पर 3,000 रू. प्रतिमाह मिलता था, परंतु आज इनकी पारिश्रमिक 12,000 रू. प्रतिमाह है, जिनमें से 2,000 रू. प्रतिमाह कर्मचारी भविष्य निधि (EPF - Employee Provident Fund) काट कर 10,000 रू. प्रतिमाह वेतन दिया जाता है।

विकास मित्र के नियुक्ति की प्रकिया[3] :– विकास मित्र के लिए अभ्यर्थी में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए।

- विकास मित्र सिर्फ महादलित परिवारों से नियुक्त किये जायेंगें, इसके अलावा अभ्यर्थी को उसी पंचायत (ग्रामीण) या उसी वार्ड (शहरी) का निवासी होना चाहिए।
- विकास मित्र महादलित जाति में से उस जाति का होगा जो कि संख्या में उस पंचायत या वार्ड में सबसे ज्यादा होगा।
- 50% विकास मित्र का पद महिलाओं के आरक्षित होगा।
- अभ्यर्थी का उम्र 18 से 50 वर्ष के बीच होनी चाहिए।
- प्रथम चरण में पुरूष और महिलाओं के लिए शैक्षणिक योग्यता दसवीं रखी गयी थी, दूसरे चरण में पुरूष के लिए दसवीं तथा महिला के लिए आठवीं रखी गयी। इसके बाद तीसरे एवं चौथे चरण में पुरूष के लिए पांचवीं तथा महिलाओं के लिए साक्षर रखा गया।

विकास मित्र की कर्तव्य एवं जिम्मेदारियाँ[4] : (Duties and Responsibilities of Vikas Mitra) :– विकास मित्र की नियुक्ति संविदा आधार पर बिहार महादलित विकास मंच द्वारा की गयी। विकास मित्र को सूचना देना, उनसे सूचना प्राप्त करना और किसी भी कार्यक्रम को लागू करना बिहार महादलित विकास मंच द्वारा खुद किया जाता है या फिर अनुसूचित जाति और जनजाति विभाग बिहार सरकार द्वारा किया जाता है। विकास मित्र के कर्तव्य एवं जिम्मेदारियाँ निम्नलिखित हैं :–

- अनुसूचित जाति और जनजाति परिवारों का सर्वेक्षण करना।
- सरकार के विभिन्न तरह के योजना जैसे बीपीएल, स्कूल, इंदिरा आवास योजना, पीने के पानी की व्यवस्था, सामाजिक सुरक्षा, पेंशन इत्यादि के बारे में लोगों को जागरूक करना तथा इसे लागू करवाना।
- सभी योग्य परिवारों को सरकारी सुविधाएँ मुहैया कराना तथा इन योजनाओं के द्वारा कई प्रकार के सामाजिक कल्याण कार्यक्रम जैसे कि सामाजिक सुरक्षा पेंशन (केन्द्रीय प्रायोजित योजना जैसे कि इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धा पेंशन योजना, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय विकलांगता पेंशन, इसके साथ राज्य की योजना जैसे कि लक्ष्मीबाई सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना, राज्य सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना और बिहार विकलांग पेंशन योजना), मृत्यु लाभ (राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना), कबीर अंत्येष्ठि अनुदान योजना जो कि अंतिम संस्कार में आनेवाली खर्चे के लिए दिया जाता है। इसके अलावा कुछ योजनायें लड़कियों के लिए है, जिसमें मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना और मुख्यमंत्री कन्या सुरक्षा योजना है।
- सरकारी योजना का लाभ पाने के लिए महादलित परिवारों को आवेदन पत्र भरवाने में मदद करना तथा भरे हुये आवेदन पत्र को किस सरकारी कार्यालय में जमा करना है उस कार्यालय के बारे में बताना।
- स्कूलों का सर्वेक्षण करना तथा यह सुनिश्चत करना कि मुख्यमंत्री पोशाक योजना के अनुरूप बच्चों को रूपया मिला है कि नहीं। लाभान्वित परिवारों को मिले हुये रूपये से पोशाक खरीदने के लिए प्रोत्साहित करना।
- यह सुनिश्चत करना कि महादलित मतदाताओं का नाम वोटर लिस्ट में है, यदि नहीं है तो उसके नाम को वोटर लिस्ट में जुड़वाने के लिए बी एल ओ (Booth Level Officer) से सम्पर्क करना, तथा उनको अपने वोट के अधिकार के बारे में बताना एवं वोट ड़ालने के लिए प्रोत्साहित करना।
- महादलित के बच्चों को स्कूलों से जोड़ना।
- सरकारी जनवितरण योजना के अन्तर्गत मिलने वाले अनाजों का कूपन वितरित करना।
- महादलित परिवारों को मनरेगा योजना से जोड़ना।
- महादलित लाभान्वित परिवारों को प्रखंड विकास कार्यालय से जोड़ना।

व्यवहार में विकास मित्र की डियुटी जिला के अनुसार अलग–अलग है। जिलाधिकारी (DM-District Magistrate), अनुमंडलाधिकारी (SDO – Sub Divisional Officer) और प्रखंड कल्याण अधिकारी (BWO-Block Welfare Officer) विकास मित्र को जिम्मेदारी देने में मुख्य भूमिका निभाते है, प्रखंड कल्याण अधिकारी सप्ताह में एक बार बैठक (Meeting) करके विकास मित्र के द्वारा किये जाने वाले कार्यों की समीक्षा करते है, तथा इनके कार्यों की समीक्षा महीने में एक बार अनुमंडल पदाधिकारी के द्वारा की जाती है।

शोध प्रविधि :– विकास मित्र के द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा के लिए शोधार्थी ने मधेपुरा जिला के दो प्रखंडों के 11 विकास मित्र का चुनाव किया, जिसमें एक प्रखंड का नाम उदाकिशुनगंज एवं दूसरे प्रखंड का नाम बिहारीगंज है। उदाकिशुनगंज प्रखंड में कुल 16 पंचायत एवं बिहारीगंज प्रखंड में कुल 14 पंचायतें हैं। इन दोनों पंचायतों में मुसहर विकासमित्र द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं का अध्ययन किया गया। उदाकिशुनगंज पंचायत में कुल 10 मुसहर विकासमित्र हैं, जिनमें 06 पुरूष एवं 04 महिला हैं। बिहारीगंज प्रखंड में 01 मुसहर विकास मित्र हैं जो पुरूष हैं। उदाकिशुनगंज के 10 विकास मित्र में से 03 इंटर, 03 मैट्रिक एवं 04 आठवां तक पढ़ा है। जबकि बिहारीगंज प्रखंड के 01 विकासमित्र की शिक्षा बी.ए. है। सभी विकास मित्र से शोधार्थी द्वारा खुद सम्पर्क किया गया एवं उसका आमने–सामने बैठकर साक्षात्कार किया गया।

विकासमित्र की वास्तविक स्थिति :– साक्षात्कार के दौरान शोधार्थी को पता चला कि सिर्फ एक विकास मित्र को सरकार द्वारा निर्धारित सभी कार्यों के बारे में पूर्ण जानकारी हैं। चार को कुछ जिम्मेदारी के बारे में पता है एवं कुछ के बारे में पता नहीं है। बाकी बचे छः विकासमित्र को तो कुछ पता हीं नहीं है।

साक्षात्कार के दौरान यह भी पाया गया कि जो महिला विकास मित्र हैं वो कभी अपने प्रखंड नहीं गयी है और ना हीं उसको अपने कार्य के बारे में कुछ जानकारी है। उनका सारा कार्य उनके पति के द्वारा किया जाता है, तथा उनके पंचायत में आनेवाली जनता भी विकास मित्र का नाम पूछने पर उनके पति का हीं नाम बताते हैं।

यहाँ यह भी देखा गया कि महिला विकास मित्र के पति यदि शैक्षणिक योग्यता में उनसे कम है तो भी निर्णय का अधिकार उसके पति के पास हीं है। जिससे यह साबित होता है कि किसी सरकारी पद धारण की हुई महिला का यदि ये हाल है तो बाकी का हाल तो और बुरा होगा, जो महिला सशक्तिकरण के दिशा में एक प्रश्नचिन्ह है।

मुसहर जाति के जनजीवन पर विकासमित्र का प्रभाव :– विकास मित्र से साक्षात्कार के बाद शोधार्थी वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिए पंचायत के महादलित परिवारों से मिला एवम् लोगों से विकास मित्र द्वारा प्रदान की जानेवाली सेवा के बारे में पूछा। ज्यादतर उत्तरदाता विकासमित्र के द्वारा प्रदान की जानेवाली योजना एवं सेवा से अनभिज्ञ थे।

जब शोधार्थी ने लोगों से पूछा कि क्या विकास मित्र आपलोगों को सरकार की ओर से मिलने वाली इंदिरा आवास योजना दिलवाने में मदद करता है, तो उन्होंने बताया कि इंदिरा आवास योजना पाने के लिए विकास मित्र को बीस से पच्चीस हजार रूपये का घूस (रिश्वत) देना पड़ता है, जो पहले घूस देता है, उसको इंदिरा आवास योजना का लाभ मिलता है, नहीं तो नहीं तो मिलता है।

जितने भी उत्तरदाता से मिला किसी के भी घर में शौचालय की व्यवस्था नहीं थीं, न हीं उस टोले में कोई सामुदायिक शौचालय की व्यवस्था थी। लोग खुले में शौच जाते हैं, पीने के साफ पानी की व्यवस्था नहीं हैं। एक टोले पर तीन–चार घरों में चापाकल (हैंडपम्प) हैं, जो खुद के पैसे से लगाया गया है, उसी चापाकल से टोले के सभी लोग पानी पीते हैं। उस चापाकल के पास काफी गंदगी फैली रहती है, जो बीमारी का एक कारण हो सकता है।

विकास मित्र द्वारा कभी भी किसी स्कूल का सर्वेक्षण नहीं किया गया और न हीं कभी बस्ती में जाकर महादलित परिवारों को शिक्षा का लाभ बताया और न हीं उन्हें अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित किया। एक प्रश्न के जवाब में उत्तरदाता ने कहा कि "गरीब को कौन पूछता है साहेब, विकास मित्र तो अपना पैसा बनाने में लगा रहता है।"

महादलित परिवारों को सरकार की ओर से मिलने वाली योजना जैसे कि मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना, वृद्धा पेंशन इत्यादि में नाम जुड़वाने के लिए भी घूस देना पड़ता है। सबसे कठिन कार्य जो महादलित परिवारों के लिए है, वो है विकास मित्र से मुलाकात होना। कई बार तो विकास मित्र से भेंट हुए लोगों को साल–साल भर तक हो जाता है।

अध्ययन के दौरान यह भी पाया गया कि लगभग सभी विकास मित्रों के खुद के जीवन स्तर में सुधार आया है, सभी के पास कुछ न कुछ अपनी जमीन है, इनके घर अपनी खुद की जमीन पर है, इनका घर साफ–सुथरा रहता है, कईयों के घर पक्के बने हुये हैं, कईयों के पास मोटरसाईकिल एवं कारें हैं, इनके घरों में पीने के साफ पानी की व्यवस्था है, घर में शौचालय हैं, बच्चे निजी स्कूल (Private School) में पढ़ते हैं। इन सभी चीजों पर विचार करने से ये बात तो स्पष्ट होती है कि 12,000 रू. पाने वाला विकास मित्र का जीवन स्तर इतना अच्छा नहीं हो सकता है। जो उत्तरदाता के घूस लेने वाली बातों की पुष्टि करता है। विकास मित्र से बातचीत के दौरान यह तथ्य भी सामने आया कि अब ये अपने बाकी महादलित परिवार (पड़ोसी) से अपने आप को उच्च मानते हैं, तथा उनको घृणित भावना से देखते हैं और यह बोलते हैं कि "ये लोग सुधरने वाला नहीं हैं।"

निष्कर्ष :– यद्यपि महादलित परिवारों के जीवन स्तर में सुधार हेतु यह सरकार द्वारा उठाया गया एक सकारात्मक कदम है, परंतु सरकारी कर्मचारी और विकास मित्र के मिलीभगत के कारण सिर्फ विकास मित्र के हीं जीवन स्तर में सुधार आ पाया। महादलित आयोग की अनुशंसा थी कि महादलित समाज से आनेवाले विकास मित्र अपने लोगों के जीवन स्तर में सुधार के लिए कार्य करेगा, जो कि पूर्णतः सफल नहीं रहा। इसका एक कारण विकास मित्र को मिलने वाली कम वेतन भी है। क्योंकि विकासमित्र का कार्य पूरे पंचायत को देखना रहता है, पूरे पंचायत की दूरी लगभग 2 किमी के आसपास होती है। फिर बैठकों में भाग लेने के लिए प्रखंड जाना पड़ता है, जिसकी दूरी करीब 10 किमी है। अनुमानतः इस प्रक्रिया में विकास मित्र का करीब 1500 से 2000 रूपये का पेट्रोल खर्चा हीं आ जाता है। जिसके लिए सरकार की ओर से कोई अलग भत्ता या मानदेय नहीं मिलता है। इस तरह से देखा जाये तो, यदि विकास मित्र निष्ठावान होकर कार्य करे तो उसे अपना पेट भी भरना मुश्किल हो जायेगा।

सुझाव :– विकास मित्र के ज्ञानाअर्जन में वृद्धि के लिए उसे अधिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है जिससे कि वो अपने कार्य को भलीभाँति समझ सके और उसे ईमानदारी से निभा सकने में सक्षम हो सके। पंचायतों के अंदर विकास मित्र का एक कार्यालय निश्चित होना चाहिए, जहाँ पर आम महादलित आसानी से उनसे मिलकर अपनी समस्या का समाधान पा सके। विकास

मित्र को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। विकास मित्र के नियोजन से महादलित परिवारों को कितना लाभ पहुँचा है इसका समय–समय पर सर्वेक्षण होना चाहिए, जिससे विकास मित्र द्वारा प्रदान की जानेवाली सेवा में आने वाली कमियों को दूर किया जा सके। विकास मित्र को सामाजिक कार्य में बढ़ चढ़कर हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bihar state Mahadalit Commission (2007): Interim report no- 1 Patna, Bihar: Government of Bihar.
2. Letter reference no- BMVM/05/08-66 dated 01 February 2010.
3. Banerjee, Abhijit and Rohini Somanathan (2007): The political economy of public goods : Some evidence from India, in journal of Development economics 82-2, pp 287-314
4. Bihar Mahadalit Vikas Mission (2011): Vikas Mitras handouts for trainers Patna, Bihar.

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020

2020

प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. क्रान्ति कुमार सिंह
प्रवक्ता (मनोविज्ञान) हंडिया पी.जी. कॉलेज, हंडिया, प्रयागराज

शोध सार :– शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो मानव को जीवन जीने की कला सिखाती है वह समाज में अपनी भूमिका किस प्रकार अदा करे इसके लिए उसे परिपक्व बनाती है। शिक्षा द्वारा ही बालक धर्म, राज्य, समुदाय, सभ्यता और संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करता है जिससे उसमें राष्ट्रीय विकास के लिए आवश्यक तत्व एवं अनिवार्य घटक ''समाज के साथ समायोजन'' की क्षमता का विकास होता है। परन्तु यह तभी सम्भव है जब वह शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ हों। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य उत्तम होने पर ही वह अपने जीवन, समाज, राष्ट्र के प्रति पूर्ण योगदान कर सकता है।

परिवेश की उपेक्षाओं के कारण व्यक्ति द्वारा की गई अनुकूलन परक अनुक्रियाएं तथा इसके साथ सामंजस्य बनाए रखन को समायोजन कहते है। अतः उचित समायोजन होने पर ही शैक्षिक क्रियाएं उचित रूप में हो सकती है। व्यक्ति समायोजन के माध्यम से ही अपनी आवश्यकताओं इच्छाओं एवं प्रेरणाओं तथा उन्हें संतुश्ट करने वाले कारकों के बीच एक संतुलन कायम करता है। अतः एक अध्यापक विद्यार्थी की आवश्यकता, क्षमता, रूचि, योग्यता, विशेषता आदि को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान करता है। तथा विद्यार्थियों में विभिन्नता के कारण समायोजन प्रभावित होता है। बहुत से बालक संवेगात्मक रूप से मजबूत नहीं होते जिससे कक्षा तथा कक्षा के बाहर समायोजन नहीं कर पाते जिसके कारण उनकी `शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है और उनका सर्वांगिण विकास नहीं हो पाता है। प्रस्तुत अध्ययन में माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं और शैक्षिक समायोजन, शहरी एवं ग्रामीण छात्र–छात्राओं का शैक्षिक समायोजन, तथा कला एवं विज्ञान वर्ग के छात्र–छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

शोध का उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य है।

1. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।
2. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण छात्र–छात्राओं के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।
3. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं (कला एवं विज्ञान वर्ग) के शैक्षिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना :– अध्ययन में जो परिकल्पना निर्मित की गयी निम्नलिखित है।

1. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक समायोजन के स्तर में सार्थक अन्तर पाया जाता है।
2. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण छात्र–छात्राओं के समायोजन के स्तर में सार्थक अन्तर पाया जाता है।
3. प्रयागराज जनपद के कला एवं विज्ञान वर्ग के छात्र–छात्राओं के शैक्षिक समायोजन के स्तर में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

समस्या सम्बन्धी साहित्य का सर्वेक्षण :– समस्या सम्बन्धी भारतीय एवं विदेशी साहित्य का सर्वेक्षण किया गया है जिसमें ए.आशा.टी. (1980), सक्सेना आर. (1983), सी.आर. परमेरा (1973), एस गरवार (1974), जैकोवविट्रज (1988), युग किंबल प्रमुख है।

अनुसंधान की योजना एवं विधि :– इस शोध में अनुसंधान विधि के रूप में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। उपकरण के रूप में स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श के चयन में प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के 100 विद्यार्थियों को लिया गया। तथा उनको लिंग, क्षेत्र एवं जाति में वर्गीकृत किया गया। स्वतन्त्र चर विद्यार्थी एवं आश्रित चर शैक्षिक समायोजन।

प्रदत्तो के विश्लेषण के लिए सांख्यिकीय विधि के रूप में मध्यमान, प्रमाणिक विचलन, क्रान्तिक अनुपात का प्रयोग किया गया।

आँकड़ो का सारणीयन एवं विश्लेषण :–

(क) प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात।

तालिका संख्या–1

कुलविद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
छात्र	50	62.88	8.67	2.2	0.05 तथा 0.01 स्तर पर क्रान्तिक अनुपात का मान अधिक है।
छात्राएं	50	60.02	3.54		

(ख) प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थी के शैक्षिक समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात।

तालिका संख्या–2

कुलविद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
ग्रामीण विद्यार्थी	50	56.10	4.7	2.61	0.05 तथा 0.01 स्तर पर क्रान्तिक अनुपात का मान अधिक है।
शहरी विद्यार्थी	50	53.8	4.2		

(ग) प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के कला एवं विज्ञान वर्ग के छात्र–छात्राओं के शैक्षिक समायोजन का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात।

तालिका संख्या–3

कुलविद्यार्थी	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
कला वर्ग के विद्यार्थी	50	53.94	4.98	3.12	0.05 तथा 0.01 स्तर पर क्रान्तिक अनुपात का मान अधिक है।
विज्ञान वर्ग के विद्यार्थी	50	51.25	3.56		

व्याख्या :– उपर्युक्त तालिका संख्या–1 से स्पष्ट है कि छात्रो का मध्यमान, मानक विचलन क्रमांक 62.88 एवं 8.67 प्राप्त हुआ है जबकि छात्राओं का मध्यमान व मानक विचलन क्रमशः 60.02 एवं 3.54 प्राप्त हुआ है तथा इन दोनों का क्रान्तिक अनुपात का मान 2.2 प्राप्त हुआ। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात का मान सार्थकता से अधिक है। अधिक मान सार्थक अन्तर का स्पष्ट करता है जिससे स्पष्ट होता है कि प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं शैक्षिक समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया है। अतः हमारी परिकल्पना संख्या–1 स्वीकार की जाती है।

उपर्युक्त तालिका संख्या–2 से स्पष्ट है कि ग्रामीण विद्यार्थियों का मध्यमान, मानक विचलन क्रमांक 56.10 एवं 4.7 प्राप्त है। जबकि शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान व मानक विचलन 53.8 तथा 4.2 प्राप्त हुआ है। दोनों का क्रान्तिक अनुपात 2.61 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात का मान सार्थकता स्तर से अधिक है। अतः ग्रामीण विद्यार्थियों एवं शहरी विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया है। अतः हमारी परिकल्पना संख्या–2 स्वीकार की जाती है।

उपर्युक्त तालिका संख्या–3 से स्पष्ट है कि कलावर्ग के विद्यार्थियों का मध्यमान मानक विचलन क्रमांक 53.94 एवं 4.98 प्राप्त हुआ है। जबकि विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों का मध्यमान व मानक विचलन 51. 25 तथा 3.56 प्राप्त हुआ है। इन दोनों का क्रान्तिक अनुपात का मान 3.56 प्राप्त हुआ है। प्राप्त क्रान्तिक अनुपात का मान सार्थकता स्तर से अधिक है। अतः कला वर्ग के विद्यार्थियों एवं विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के शैक्षिक के समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया। अतः हमारी परिकल्पना संख्या– 3 स्वीकार की जाती है।

शोध निष्कर्ष :–

1. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं शैक्षिक समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया। अतः हमारी परिकल्पना स्वीकार की जाती है।
2. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में

सार्थक अन्तर पाया गया। अतः हमारी परिकल्पना स्वीकार की जाती है।

3. प्रयागराज जनपद के माध्यमिक स्तर के कला वर्ग एवं विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के शैक्षिक समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया। अतः हमारी परिकल्पना स्वीकार की जाती है।

उपर्युक्त परिणाम का आधार समान अवसर उपलब्ध न हो पाना है। यदी समान अवसर उपलब्ध कराया जाय तो शैक्षिक समायोजन में समानता देखने को मिलेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

- **कपिल एच.के.** – अनुसंधान विधियाँ–भार्गव प्रिन्टर्स आगरा।
- **युंग किबंल** – शिक्षा मनोविज्ञान की आधारशिला, विनोद पुस्तक मन्दिर,
- आगरा।
- **शर्मा आर.**– चाइल्ड साइकोलॉजी एटलान्टीक प्रकाशन एवं वितरक, दिल्ली।
- **मंगल एस.के.**– शिक्षा मनोविज्ञान एवं सांख्यिकी विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- **श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीती**– मनोविज्ञान और शिक्षा मे सांख्यिकी विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
- **देसाई एन.एन.** – 'ऐन इन्टेस्टिगेशन इन टू द क्रिएटिव थिंकिंग एबल्टी ऑफ स्टूडेन्टस् ऑफ हायर सेकेन्ड्री ऑफ गुजरात स्टेट इन द कान्टेक्सट ऑफ सम साइकोसोसिफैक्टर' पी.एच. डी. एजूकेशन एस.पी.यू.(1987)

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति का अध्ययन

डॉ. कविता रायकवार
प्राचार्या, भोपाल डिग्री कॉलेज, भोपाल
शिव कुमार सेजकर
शोधार्थी, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल

प्रस्तुत शोधकार्य में बुरहानपुर शहर के प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया है। इस हेतु निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इसके लिए प्रतिभागियों को प्रश्नावली दे उन से उत्तर प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोधकार्य हेतु बुरहानपुर शहर के प्राथमिक विद्यालयों को लिया गया है इन चयनित विद्यालयों में से 50 ग्राम शिक्षा समिति सदस्यों एवं 50 पालक शिक्षक संघ सदस्यों अर्थात कुल 100 सदस्यों को यादृच्छिक न्यादर्श विधि के अन्तर्गत चुना गया। सांख्यकीय गणना हेतु काई वर्ग परीक्षण उपयोग में लाया गया है जिससे स्पष्ट होता है कि 'शिक्षा बच्चो के लिए अति आवश्यक है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ के सदस्यों की अभिवृत्तियों के विभिन्न मतों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। वहीं 'देश में प्राथमिक शिक्षा प्रगति पर है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ के सदस्यों की अभिवृत्तियों के विभिन्न मतों में सार्थक अंतर पाया गया। अतः पहली परिकल्पना स्वीकृत एवं द्वितीय परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है।

तथ्यात्मक पद :– प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण, ग्राम शिक्षा समिति सदस्या एवं पालक शिक्षक संघ सदस्य, अभिवृत्ति

प्रस्तावना :– सैकड़ों वर्षों से पहले के विभिन्न नागरिक प्रतिष्ठानों के माध्यम से मानव सुधार के क्षेत्र में एक व्यक्ति को एक उपयोगी नागरिक में बदलने के लिए एक आवश्यक कार्य माना गया है। प्रत्येक समाज में, शिक्षा व्यक्ति और समुदाय दोनों के लिए जीवन को सुखी, समृद्ध और सुखद बनाती है। आम जनता की उन्नति और सुधार इस बात पर निर्भर करते हैं कि बच्चे कैसे बदल सकते हैं और सीखने के विशिष्ट भागों को तैयार कर सकते हैं।

शिक्षा के सामाजिक तत्व सामाजिक सम्मान, दृढ़ संकल्प, योग्यता और अनुभव के संचरण को रोजमर्रा की जिंदगी में काम करने की व्यवस्था के प्रसारण के रूप में शामिल करते हैं। जीवन के प्रत्येक भाग से व्यक्ति एक सामाजिक व्यवस्था में जी रहा है। यह एक समाज में सभी लोगों के ज्ञान, कौशल, कार्य क्षमता और जन्मजात क्षमताओं के निर्माण की प्रक्रिया में मानव संसाधन विकास है।(हर्बिरोन 1964)

वर्तमान समय में लोग यह मानते हैं कि शिक्षा का सीधा संबंध जीवन और स्वतंत्रता की दिशा के साथ मानक होना चाहिए। शिक्षा को हर एक सुसंस्कृत समाज में जाति, धर्म, और स्थिति के आधार पर अलग न होने के साथ, हवा और पानी की तरह मुक्त होना चाहिए और सभी के लिए सुलभ होना चाहिए।

मनुष्य एक जिज्ञासू प्राणी है और इसी जिज्ञासा के फलस्वरूप वह विभिन्न तथ्यों को ज्ञात करने हेतु अपने ज्ञान को बढ़ाता है। जैसे जैसे ज्ञान की मात्रा बढ़ती है वह उसे सुनियोजित करने का प्रयास करता है और यही प्रयास शोध का रूप ले लेता है। व्यक्ति अपने पूर्व ज्ञान को प्रामाणिकता प्रदान करने हेतु शोध करता है तथा इन शोधों के निष्कर्ष ही समाज के लिए उपयोगी होते हैं।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति उस देश की शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप एंव स्थिति के मापदण्ड के रुप में देखा जाता है। आगे यही दृष्टिकोण के प्राथमिक शिक्षा की ओर अपनी दृष्टि उन्नमुख करती है। क्योंकि यही शिक्षा की प्रथम सीढ़ी होने के नाते राष्ट्र की भावी उच्च शिक्षा की नीवं का निर्माण करती है। राष्ट्रीय जीवन से निरक्षरता का प्रजातंत्र के निर्माण के लिये प्रगतिशील मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से भारतीय संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान की धारा 45 में संवैधानिक निर्देशो का इस प्रकार से प्रतिपादन किया है। ''राज्य इस संविधान के क्रियान्वित किये जाने के समय से दस वर्ष के अंतर्गत जब तक कि सभी बालक 14 वर्ष की आयु पूर्ण नही कर लेगें, निशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा''। इस संवैधानिक निर्देश के प्रतिरोपण से स्पष्ट होता है कि इसका मूल उददेश्य शिक्षा को सार्वभौम बनाना था।

लेकिन संविधान के लागू होने के 10 साल तक भी भारत अनेक सामाजिक एंव आर्थिक समस्याओं के चलते अपने सभी 6–14 साल तक के बच्चो के लिए प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करवाने में असमर्थ रहा। जिसके चलते यह समय सीमा समय–समय पर बढाई जाती रही। संवैधानिक रूप से भारत सरकार शिक्षा को मूलभूत अधिकार के रूप में (अनुच्छेद 21 (ए) संविधान के 86 वे संशोधन में दिसम्बर 2002 में जोडा गया, एंव संसद द्वारा जुलाई 2009 में पारित किया गया) स्वीकार कर 6–14 साल के प्रत्येक बच्चे को मुफ्त एंव अनिवार्य शिक्षा देने के लिये बचनबद्ध है।

इस हेतु भारत सरकार के कई प्रयासों में ऑपरेशन ब्लेक वोर्ड (1986), नॉन फार्मल एजूकेशन स्कीम(1986), शिक्षा कर्मी प्रोजेक्ट(1987), महिला सामख्य (1989), लोक जुम्बीश(1992), जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम(1994), मध्यान्ह भोजन(1995), स्कूल चलो अभियान(1996), एवं सर्व शिक्षा अभियान(2001) प्रमुख है। अधिक आबादी, अनेक सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं, एवं क्षेत्रिय विभिन्नता के चलते विस्तृत स्तर पर शिक्षा प्रदान करना कठिन कार्य है। शर्मा (1996) के अनुसार पूर्व के कुछ वर्षो में शिक्षा संबंधी कार्यो में मात्रक और सामाजिक महत्व की दृष्टि से वृद्धि हुई है। किंतु उनकी उपलब्धि के लिये प्रावधानों में अनुपातिक रूप से वृद्धि नही हुई है। शैक्षिक योजनाओं का लाभ निचले स्तरों तक पहुँचानें, योजनाओं का सही रूप से कार्यन्वित होने सरकारी खजाने के सही उपयोग, स्थानीय निकायों का सरकारी निकायों के साथ मिलकर कार्य करने तथा इन योजनाओं का मूल्यांकन, संचालन रख रखाब आदि करने की दृष्टि से शैक्षिक प्रशासन का कार्य जटिल हुआ है।

इसी जटिलता को दूर करने के लिये भारत सरकार ने सभी की सरकारी कार्यो मे भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु संविधान में 73 वाँ. एवं 74 वाँ संशोधन किया संविधान के 73 वाँ संशोधन (1982) के अनुसार स्थानीय पंचायतों के निर्माण एवं पंचायतों का ग्रामीण स्तर पर संधीय कार्यो में सामाजिक भागीदारी को सुनिश्चित किया गया। 74 वाँ संशोधन में शहरों में नगर पालिका का निर्माण भी इसी उद्देश्य के लिये किया गया। राज्यों से अपेक्षा की गई है कि वह इन स्थानीय निकायों के साथ मिलकर इन्हे अधिकार, कर्तव्य एवं वित्तिय संबंधी हस्तक्षेप करने की भागीदारी सुनिश्चित करें। इसी से भारत में शिक्षा के विर्केन्द्रीकरण की शुरूआत मानी गयी।

सर्व शिक्षा अभियान की सफलता हेतू सरकार ने पहले से ही शिक्षा में समुदाय की भागीदारी पर बल दिया है। इसके फलस्वरूप राज्य, जिला, तहसील एवं ग्राम स्तर पर प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अधिकारो एवं कर्तव्यों का विकेन्द्रीकरण कर सामुदायिक भागीदारी को सुनिश्चित किया गया है। ग्राम स्तर पर विद्यालय के प्रमुख फैसले लेने अमलीकरण करने एवं कार्य प्रणाली पर निगरानी करने हेतु स्थानीय निकायों ग्राम शिक्षा समिति, पालक शिक्षक संघ, स्कूल प्रशासन समिति, माता शिक्षक संघ, आदि समितियों का निमार्ण सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत किया गया है। प्रस्तुत शोध में इन्ही स्थानीय निकायों की ओर से प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में और सफल बनाने में किये गये प्रयासों को वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने का प्रयास किया गया ह।

चूंकि शोधार्थी मध्यप्रदेश के एक जिले में निवास करता है। और शिक्षा के क्षेत्र में कई वर्षो से संलग्न ही अतः उसे प्राथमिक शिक्षा की जमीनी सच्चाई दिखाई दी और उसने इस विषय को शोध हेतु चयन किया। जिससे वह यह जान सके कि ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ के सदस्य शिक्षा के प्रति अपनी क्या अभिवृत्ति रखते है, यह जान सके। जिससे प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में कोई अवरोह उत्पन्न नही हो और वह निरन्तर अपने लक्ष्य प्राप्ति की और बढ़ सके।

किसी भी शोध की संकल्पना पूर्व शोधों के अध्ययन के बिना असभंव होता है। प्रस्तुत शोध की संकल्पना निम्न पूर्व शोधों के अध्ययन के आधार पर की गई है। **मेनन (1999)** ने हरियाणा में ग्रामीण शिक्षा समितियों का अध्ययन, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत किया। शोध के प्रमुख निष्कर्षो में से ग्रामीण शिक्षा समिति के मानकों का सही ढंग से पालन न होना, महिला सदस्यों का उदासीन रवैया, एवं महिला सदस्यों का तयशुदा आरक्षण (50 प्रतिशत) से भी कम होना प्रमुख थे। **फरेनकोईस (2002)** ने पेरिस विश्वविद्यालय तथा सेंटर ऑफ सांईसेस व हयूमेनिटिस नई दिल्ली के सोजन्य से 'Impact of the Educational Reform on the School Education System: The Field of Educational Gurantee Scheme (EGS) and other primary School in Madhya Pradesh" नामक शोध किया और पाया कि सरकारी तंत्र की निष्क्रियता शिक्षा गारंटी योजना के सफल होने की राह का प्रमुख अवरोध है।

सांख्यकीय विश्लेषण :– संकलित न्यादर्श का सारणीकरण करके उसका सांख्यकीय विश्लेषण किया गया। शोध की आवश्यकता के अनुसार काई वर्ग से सांख्यकीय गणना एवं परीक्षण किया गया।

न्यादर्श :– प्रस्तुत शोधकार्य में बुरहानपुर जिले के प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया है। इस हेतु निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इसके लिए प्रतिभागियों को प्रश्नावली दे उन से उत्तर प्राप्त किया गया है। प्रस्तुत शोधकार्य हेतु बुरहानपुर शहर जिले के प्राथमिक विद्यालयों को लिया गया है इन चयनित विद्यालयों में से 50 ग्राम शिक्षा समिति सदस्यों एवं 50 पालक शिक्षक संघ सदस्यों अर्थात कुल 100 सदस्यों को यादृच्छिक न्यादर्श विधि के अन्तर्गत चुना गया।

शोध के परिकल्पना :–

1. 'शिक्षा बच्चो के लिए अति आवश्यक है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ के सदस्यों की अभिवृत्तियों के विभिन्न मतों में सार्थक अंतर नहीं है।
2. 'देश में प्राथमिक शिक्षा प्रगति पर है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ के सदस्यों की अभिवृत्तियों के विभिन्न मतों में सार्थक अंतर नहीं है।

व्याख्या :–

सारणी क्रमांक 01

'शिक्षा बच्चो के लिए अति आवश्यक है', के प्रति', ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्तियों संबंधी तुलनात्मक परिणाम

अभिभावक	संख्या	प्रतिक्रिया		'काई वर्ग' मान	सार्थकता स्तर
		सहमत	असहमत		
ग्राम शिक्षा समिति सदस्य	50	29	21	2.15	>0.01
पालक शिक्षक संघ	50	36	14		

स्वतंत्रता के अंश –02 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान –9.21

प्रस्तुत सारणी में प्रदर्शित परिणामों से यह स्पष्ट है कि प्राप्त 'काई वर्ग' का मान 2.15 स्वतंत्रता के अंश 02 पर सार्थकता के 0.01 स्तर के लिए निर्धारित मान 9.21 से कम है, जो सार्थक नहीं है। अर्थात् ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति के मत समानताएं पाई गईं तथा पालक शिक्षक संघ सदस्यों में इस बात के प्रति अधिक सकारात्मक अभिवृत्ति पाई गई। वहीं ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों में इस बात के प्रति कम सकारात्मक अभिवृत्ति पाई गई। अतः परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। उपरोक्त परिणामों को आरेख क्रमांक 01 में प्रदर्शित किया गया है।

आरेख क्रमांक 01

'शिक्षा बच्चो के लिए अति आवश्यक है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्तियों संबंधी तुलनात्मक आरेख

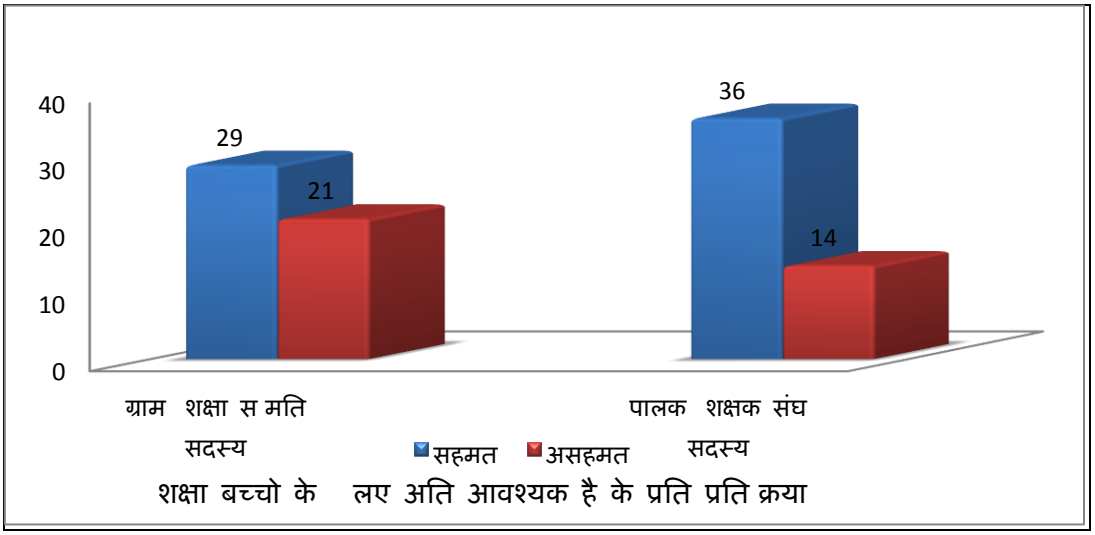

सारणी क्रमांक 02

'देश में प्राथमिक शिक्षा प्रगति पर है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्तियों संबंधी तुलनात्मक परिणाम

अभिभावक	संख्या	प्रतिक्रिया		'काई वर्ग' मान	सार्थकता स्तर
		सहमत	असहमत		
ग्राम शिक्षा समिति सदस्य	50	38	12	16.23	<0.01
पालक शिक्षक संघ	50	18	32		

स्वतंत्रता के अंश –02 0.01 स्तर के लिये निर्धारित न्यूनतम मान –9.21

प्रस्तुत सारणी में प्रदर्शित परिणामों से यह स्पष्ट है कि प्राप्त 'काई वर्ग' का मान 16.23 स्वतंत्रता के अंश 02 पर सार्थकता के 0.01 स्तर के लिए निर्धारित मान 9.21 से अधिक है, जो सार्थक है। अर्थात् ग्राम शिक्षा समिति, एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्ति के मत भिन्नताएं पाई गईं तथा ग्राम शिक्षा समिति सदस्यों में इस बात के प्रति अधिक सकारात्मक अभिवृत्ति पाई गई। वहीं पालक शिक्षक संघ के सदस्यों में इस बात के प्रति कम सकारात्मक अभिवृत्ति पाई गई। अतः परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। उपरोक्त परिणामों को आरेख क्रमांक 02 में प्रदर्शित किया गया है।

आरेख क्रमांक 02

'देश में प्राथमिक शिक्षा प्रगति पर है', के प्रति ग्राम शिक्षा समिति एवं पालक शिक्षक संघ की अभिवृत्तियों संबंधी तुलनात्मक आरेख

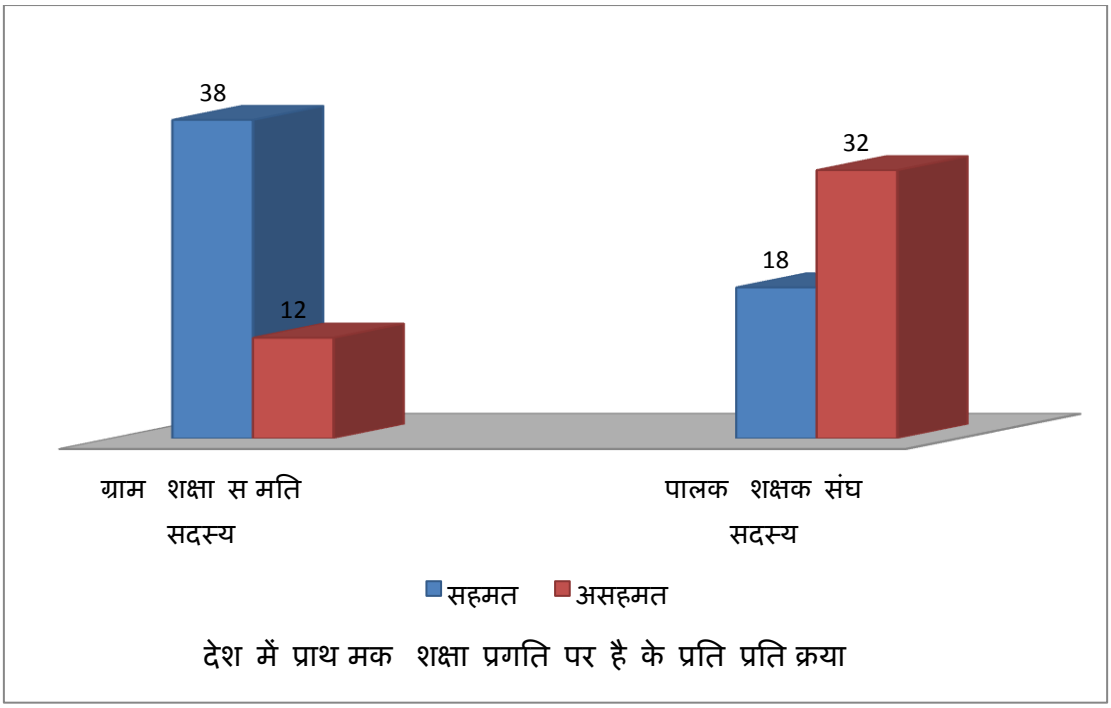

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- भारत सरकार (2006), सर्व शिक्षा अभियान, अधिसूचना 2004 व 2005 नई दिल्ली भारत सरकार।
- अग्रवाल, जे.सी. (2012) : उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा
- भटनागर, आर.पी. (1995): शिक्षा अनुसंधान : विधि एवं विश्लेषण, ईगल बुक्स इंटरनेशनल, मेरठ
- गुप्ता, एस.पी. (2005): सांख्यिकीय विधियाँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
- कपिल. एच.के. (2008): सांख्यिकीय के मूल तत्व, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा–7
- मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ(2012): सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन जवाहर नगर,

दिल्ली–7

- पाण्डेय, रामशकल एवं मित्र करूणाशंकर (2008) : मूल्य शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा 7
- रूहेला, एवं भार्गव, (2012): उभरते भारत में शिक्षा, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा –4
- सरीन, एस एवं सरीन, ए (2007) शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा – 2
- शर्मा, आर.के.,एवं एट अल, मूल्य शिक्षा एवं मानवाधिकार, राधा प्रकाश मन्दिर प्रा.लि., आगरा
- श्रीवास्तव, मेद्या (2008–09) "विद्यार्थियों के सामाजिक आर्थिक स्तर का नैतिक मूल्यों पर पड़ने वाले प्रभाव का एक अध्ययन" देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (लघु शोध प्रबन्ध)
- श्रीवास्तव. पी, (2017) "निचली बस्ती के किशोरों के मध्य नैतिक निर्णय बिहेवियरल साइनाटिस्ट (बाइ–एनुअल)" वाल्यूम 18. नं 2, पृ. क्र. 131–136
- Buch, M.b. (1988, 1992) : Fourth Survey of Research in Education, National Council of Education Research and Training, New Delhi, Vol. I & II.
- Deka T. (2003) Panchayati Raj for developing Rural India, Retrieved from www.Edcuationforallindia.com Page 44
- Francois, L (2012) Impact of the Educational Reform on school system. The field study of EGS and other primary school in Madhya Pradesh, New Delhi. French Research Institute of India.

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

रसवदादि अलंकार

डॉ. आनन्द कुमार दीक्षित
प्राचार्य, विवेकानन्द इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेन्ट एण्ड टेक्नोलॉजी, इटावा

संक्षेपिका :– आचार्य भरत की ''न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते'' इस उक्ति के अनुसार रस का प्राधान्य व्यक्त किया गया है और आचार्य विश्वनाथ के ''वाक्यम् रसात्मकं काव्यम्'' में रस को काव्य की आत्मा कहा गया है और अलंकारो को कटक कुण्डलवत (हार केयूरवत)। भारतीय अलंकार शास्त्र में ज्वलन्त प्रश्न सदैव उठता रहा है कि क्या अलंकार को भी रस के समान मान्यता प्राप्त हो सकती है? इस प्रश्न की जिज्ञासा की शान्ति हेतु प्रस्तुत शोधपत्र में आचार्य भामह से लेकर अलंकारसर्वस्वम् के टीकाकार श्रीविद्याचक्रवर्ती तक की विचारसरणि में आवगाहन कर रसवदादि अलंकारों की सत्ता की सिद्धि हेतु प्रयास किया गया हैं।

की–वर्ड :– रसवत, प्रेय, ऊजस्वि, समाहित, रस, रसाभास, भाव, भावाभास, भामह, उद्भट, आनन्दवर्धन, मम्मट, रूय्यक, जयदेव, विश्वनाथ, अप्पयदीक्षित, श्रीविद्याचक्रवर्ती, नारायणदासबनहट्टी, कुमारीएस.एस. जानकी।

आचार्य आनन्द वर्धन ने रस आदि को चित्तवृत्ति का विभिन्न रूप माना हैं–

''चित्तवृत्ति विशेषा हि रसादयः''। इसी प्रकार के आधार मानकर संभवतः रूय्यक ने चित्तवृत्तिगत के रूप में एक नवीन श्रेणी स्थापित की। इसमें रसवद्, प्रेय, ऊर्जस्वि, समाहित, भावोदय, भावसन्धि तथा भावशबलता इन अलंकारों की गणना की। इन अलंकारों का विकास क्रम कला और अनुभूति के दो पक्षों में विभक्त मिलता है। कला पक्ष के पोषक, भामह, दण्डी तथा उद्भट आदि हैं। अनुभूतिवादी आचार्यों में आनन्दवर्धन, मम्मट, पण्डितराज आदि आते हैं।

भामह ने रसवद् अलंकार, प्रचछन्न श्रृंगार आदि रस का चमत्कार पूर्ण उद्घाटन माना हैं। उन्होंने उदाहरणों से ही इन अलंकारों को स्पष्ट किया है।

''रसवद्दर्शितस्पष्ट श्रृंगारादि रसं यथा।।''1

प्रेयस् का निरूपण करते हुए भामह का मत हैं–

प्रयोगृहागतं कृष्णमवादीद् विदुरो यथा।
अद्य या मम गोविन्द जाता त्वयि गृहागते।
कालेनैशा भवेत्प्रीतिस्तवैवागमनात्पुनः।।2

ऊर्जस्वी को बताते है–''

ऊर्जस्वि कर्णेन यथा पार्थाय पुनरागतः।
द्विः सन्दधाति किं कर्णः शल्येत्यहिरपाकृतः।।

दण्डी ने प्रियतर कथन स्पष्टतः चाटु या भक्ति प्रेय, रस से सुन्दर कथन रसवत् रूढ़ अहंकार से युक्त कथन ऊर्जस्वि माना हैं। इन तीनों में वाच्य शोभारूपी उत्कर्ष रहता है अतः ये तीनों अलंकार कहे जाते है।

''प्रेयः प्रियतराख्यानं रसवद् रसपेशलम्।
ऊर्जस्वि रूढाहंकारं युक्तोत्कर्श च तत् त्रयम्।।3

उद्भट ने प्रेय, रसवद् और ऊर्जस्वि को सम्यक् रूप से प्रतिपादित किया है। उनका विवेचन निम्नवत् है–

''रत्यादिकानां भावानांमनुभावादि सूचनैः।
यत्काव्यं वध्यते सद्भिस्तत् प्रेयस्वदुदाहृतम्।।''[4]

अर्थात् रत्यादि भावों के अनुभाव आदि की सूचना द्वारा जो काव्य ग्रंथित होता है उसे विद्वज्जन प्रेयस्वद संज्ञा देते हैं। उदाहरण दिया है–

''इयं च सुतवाल्ल्भ्यान्निर्विशेषस्पृहावती।
उल्लापयितुमारब्धा कृत्वेमं क्रोड आत्मनः।।''[5]

भट्टोद्भट सम्मत रसवद् अलंकार का लक्षण है–

''रसवद्दर्शित स्पष्ट श्रृंगारादिरसादयम्।
स्वशब्द स्थायि संचारि विभावाभिनयास्पदम्।।''[6]

अर्थात् श्रृंगारादि रसों के स्पष्ट प्रतिपादन से यह अलंकार रसवद् कहलाता है। इसमें रस का स्ववाचक शब्द, स्थायीभाव, संचारीभाव, विभाव तथा अभिनयात्मक अनुभाव रहते हैं। प्रेयस्वत् का सम्बन्ध स्थायीभाव से है, रसवत का रस से। प्रेयस्वत् में अनुभावों के द्वारा स्थायीभाव सूचित होता है। रसवत् में रस की पूर्णता के लिए इसका पंचरूप वर्णन होता हैं। इसमें रसवाचक शब्द का कथन ध्वनिवादियों की दृष्टि में रसापकर्षक दोष माना गया है। उद्भट रसविवेचन के साथ ही नौ रसों की भी गणना कराते हैं–

श्रृंगाहास्यकरूणरौद्र वीरभयानकाः
वीभत्साद्भुतशान्ताश्च नव नाट्ये रसाः
स्मृताः।।''[7]

यहाँ दण्डी द्वारा त्याग दिये गये शान्त रस का संग्रह भी सभी रसों के साथ ही कर दिया गया है। इस विशिष्टता का प्रतिपादन आचार्य मम्मट जैसे आलंकारिक की कृति में भी नहीं प्राप्त होता, मम्मट ने भी शान्त को अलग से बताया है।

उद्भट ने रसवत् का जो उदाहरण दिया हैं उससे ''स्वशब्द'' का अर्थ रति या श्रृंगार आदि शब्द नहीं अपितु काम, कन्दर्प, मन्मथ, कामप्रिया आदि शब्द भी है जो प्रायः श्रृंगार प्रसंग में ही प्रयुक्त होते हैं।

उद्भट कृत रसवद् का उदाहरण हैं–

''इति भावयतस्तस्य समस्तान्पार्वतीगुणान्।
संभृतानल्प संकल्पः कन्दर्पः प्रबलो भवत्।।
स्विद्यतापि स गात्रेण बभार पुलकोत्करम्।
कदम्ब कलिकाकोष केसर प्रकरोपमम्।।
क्षणमौत्सुक्य गर्भिपया चिन्तानिश्चलया क्षणम्।
क्षणं प्रमोदालसया दृशास्यास्यमभूष्यत।।[8]

यहॉ भगवान शंकर का अभिलाषिक विप्रलम्भ श्रृंगार निबद्ध है। यहॉ स्वशब्द हैं– प्रबल कंदर्प या काम (रति)। वही स्थायी 'कंदर्प' शब्द से स्पष्ट कर दिया गया है कारण यह है कि श्रृंगार रति का परिपोष ही तो है। रति युवा और युवक का काम ही है। इसलिए रति विशेष का वाचक 'केदर्प' शब्द यहॉ स्थायी का वाचक शब्द हैं। औत्सुक्य चिन्ता एवं हर्ष नामक संचारी तो स्पष्ट ही शब्दोक्त हैं। इसी प्रकार स्वेद और रोमांच सात्विक भाव भी शब्दोपात्त हैं। वे भी संचारी ही है कारण, सात्विक भी स्थायी भाव की एक विशेष अवस्था है अतः निर्वेद आदि की ही प्रकार वे भी एक प्रकार के संचारी ही हैं। 'इति भावयतस्तस्य.....' के द्वारा विभाव का निर्देश किया गया हैं। तत्तत् गुणों से विभूषित भावनागोचर भगवती ही विभाव हैं। 'दृशा' द्वारा यहॉ अभिनय के नाम पर कटाक्षाभिनय कहा गया है। अतः यहॉ स्ववाचक शब्द आदि पॉच साधनों द्वारा अभिलाषिक श्रृंगार की अभिव्यजंना की गई है।

ऊर्जस्वी की स्थापना के सम्बन्ध में उद्भट का विवेचन मम्मट आदि के निरूपण का मूल आधार बना। उद्भट ने ऊर्जस्विता के लिए अनौचित्य को आवश्यक माना था।

उद्भट कृत ऊर्जस्विता का लक्षण हैं–

''अनौचित्य प्रवृत्तानां कामक्रोधादि कारणात्।
भावानां च रसानां च बन्ध ऊर्जस्वि कथ्यते।।[9]

अर्थात् काम एवं क्रोधादि के कारणवश अनुचित ढंग से जहॉ रस या भाव प्रवृत्त हो वहॉ ऊर्जस्वि नामक अलंकार होता है।

प्रतिहारेन्दुराज इसे स्पष्ट करते है कि कहीं तो रस एवं भाव का शास्त्रीय ज्ञान के अनुरूप उपनिबंध होता है और कहीं विरूद्ध। जहॉ शास्त्रीय ज्ञान के अनुरूप उपनिबंध होता है। वहां तो प्रेयान अलंकार तथा रसवद् अलंकार होता है और जहॉ तद्विरूद्ध होता है या तन्मूलक लोक व्यवहार विरूद्ध अभिधान होता हैं वहॉ रसभाव की जब बंधान होती है तब ऊर्जस्वित् काव्य होता है। कारण यह है कि वहॉ राग द्वेश एवं मोह के कारण अनुचित ढंग से रसभाव आदि का उपनिबंध होता है। इसीलिए अपनी कल्पना से परिकल्पित होने के कारण ऊर्ज या बल की विद्यमानता होती है। अतः यहॉ ऊर्जस्वि का व्यवहार होता है।

ऊर्जस्वि का उद्भट ने उदाहरण दिया हैं–

''तथा कामोऽस्य बवृधे यथा हिमगिरेः सुताम्।
संग्रहीतुं प्रववृते हठेनापास्य सत्पथम्।।''[10]

यहॉ सम्पूर्ण विश्व का अतिक्रमण करने वाले भगवान शिव के प्रति अविवाहित कुमारी को विषय बनाकर काम का जो हठसंग्रह है–वह शास्त्रीय अंकुश के विरूद्ध है और यह सब बढ़े हुए राग के कारण है इसीलिए यहॉ ऊर्जस्विता हैं। इस प्रसंग में 'काम बढ़ा' यह प्रयोग स्ववाचक श्रृंगार का शब्द है। श्रृंगार का कारण यह है कि रतिपोषात्मक होने के कारण कामवृद्धि उसका स्वभाव ही है। यहॉ प्रयुक्त काम शब्द श्रृंगार रस के स्थायीभाव रति का ही वाचक स्वशब्द हैं। हिमगिरि की सुता आलम्बन विभाव हैं हठेन कहने से आवेगरूप व्यभिचारी भाव का प्रतिपादन हैं। सत्पथ का त्याग करने से मोह ध्वनित होता है। 'संग्रहार्थ प्रवृत्त हुए' इस उक्ति से आंगिक अनुभाव कहा गया। इस प्रकार स्ववाचक शब्द आदि पॉचों सामग्री से ऊर्जस्वि रूप श्रृंगार सूचित हो रहा है।

समाहित अलंकार का जो रूप मम्मट के काव्यप्रकाश या रूय्यक के अलंकारसर्वस्व में प्राप्त होता है। उसका आधार भी उद्भट प्रतिभा प्रसूत है। लक्षण हैं–

''रसभावतदाभासवृत्तेः प्रशमबन्धनम्।
अन्यानुभावनिःशून्य रूपं यत् तत् समाहितम्।।''[11]

अर्थात् रस, भाव एवं रसाभास तथा भावाभास की वृत्ति का जहां प्रशम बताया जाय और अतिरिक्त रसादि के अनुभावादिकों की पूर्णरूपेण भून्यता हो। वहॉ समाहित नामक अलंकार होता है।

प्रतिहारेन्दुराज समाहित को स्पष्ट करते हैं–''यत्र पूर्वेशां रसादीनां वासनाया दाढ्र्येन तेशूपषान्तेश्वपि रसाद्यन्तराणां न स्वरूपमाविर्भवति आविर्भवदपि वा कार्यवशेन केनचित्तिरोधीयते तत्र समाहितालंकारो भवति।''[12]

अर्थात् जहां पूर्ववर्ती रस आदि की वासना दृढ़ होने से उनके शान्त हो जाने पर भी अन्य रसों का स्वरूप आविर्भूत नहीं हो पाया अथवा आविर्भूत होता हुआ भी कार्यवशात् किसी के द्वारा तिरोहित कर दिया जाता है उसे समाहित नामक अलंकार माना जाता है। इसका उदाहरण उद्भट के शब्दों में–

''अथकान्तां दृशं दृष्ट्वा विभ्रमाच्च भ्रमं भ्रुवोः।
प्रसन्नं मुखरागंच रोमांच स्वेदसंकुलम्।।
स्मर ज्वरप्रदीप्तानि सर्वाङ्गानि समादधत्।
उपासर्पद्गिरिसुतां गिरिशः स्वास्ति पूर्वकम्।।[13]

यहॉ समादधत् से अभिप्राय हैं–स्वरूपस्थ करते हुए। ''समादधत्'' में यद्यपि 'नुम्' का आगम

होना चाहिए, फिर भी अभ्यास संज्ञा प्राप्त को नुम् नहीं होता इस निशेध से यहॉ नुम की प्रवृत्ति नहीं हुई। यहॉ भगवान शंकर के जो कांत दृष्टि आदि अनुभाव कहे गये हैं–उनका अवहित्थाया आकार प्रच्छादन द्वारा तिरोधान ही कहा गया हैं।

उद्भट के उपरान्त आचार्य आनन्दवर्धन का रसवदलंकार वर्णन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये अनुभूतिवादी आचार्यों की कोटि में आते है तथा 'रसवद अलंकार' शब्द के स्थान पर 'रसालंकार' शब्द प्रयोग करते है। ध्वन्यालोककार की उक्ति हैं–

''प्रधानेऽन्यत्र वाक्यार्थे यत्रांङ्गं तुरसादयः।
काव्ये तस्मिन्नलंकारों रसादिरिति मे मतिः।।[14]

अर्थात् जहॉ रसादि अंग हों और कोई अन्य तत्त्व प्रधान हो तो रस आदि उसी काव्य में अलंकार होते है। यहॉ आनन्दवर्धन कृत अंगभूत रस की चर्चा में रस शब्द का अर्थ अंगभूत स्थायिभाव माना जाता है क्योंकि रस जब अनुभूति रूप है और विश्रान्ति रूप भी तब तो रस के अतिरिक्त कुछ भी नहीं रहता फलतः रस किसी के अलंकार नहीं होते। अपितु स्थायी भी आस्वाद के कारण रस के समान ही होता है अतः उन्हें भी रस कह दिया जाता है।

आचार्य मम्मट असंलक्ष्यक्रमव्यंग्य ध्वनि में रस, भाव, रसाभास, भावाभास तथा भाव शान्ति आदि की गणना कराते हुए बताते है कि जब वे रसादि अलंकार से भिन्न हों और अलंकार्य रूप से स्थित हों–

''रसभावतदाभासभावशान्त्यादिरक्रमः।
भिन्नो रसाद्यलंकारादलंकार्यतया स्थितः।''[15]

वृत्ति में स्पष्ट करते हैं– ''प्रधानतया यत्र स्थितो रसादिस्तत्रालंकार्यः, यथोदाहरिष्यते। अन्यत्र तु प्रधाने वाक्यार्थे यत्राङ्गभूतो रसादिस्तत्रगुणीभूतव्यङ्गये रसवत् प्रेय ऊर्जस्वि समाहितादयोऽलंकाराः।''[16]

अर्थात् जहॉ रस आदि प्रधान रूप से स्थित होते है वहॉ ये अलंकार्य कहलाते हैं। जैसे कि उनके उदाहरण आगे गुणीभूत व्यंग्य के प्रकरण में पंचम उल्लास में दिये हैं। तथा जहां अन्य वस्तु या अलंकार आदि रूप वाक्यार्थ के प्रधान होने पर रसादि, उन वस्तु या अलंकार आदि के अंग होते है, उनमें रसादि के गुणीभूत व्यंग्य होने पर रसवत्, प्रेय ऊर्जस्वि और समाहित आदि चार प्रकार के अलंकार होते हैं।

रूय्यक ने रसवत्, प्रेय, ऊर्जस्वि तथा समाहित अलंकारों का एक साथ वर्णन किया है क्योकि इन चारों अलंकारों में रस आदि का अलंकारत्व है। जहॉ रसादि विशय अंग बनकर प्रयुक्त हों वहॉ रसवत् अलंकार है। भाव के अलंकारत्व में प्रेय अलंकार है। रसादि के अनौचित्य के कारण अलंकारत्व में ऊर्जस्वि। रसादि के प्रशम में समाहित अलंकार है। रूय्यक के ही शब्दों में –''.....**रत्यादिश्चित्तवृत्ति विशेषो रसः।.....देवादि विषयश्च रत्यादिर्भावः।** तदाभासो रसाभासो भावाभास" च। आभासत्वम् अविषयप्रवृत्यानौचित्यम्। तत्प्रशम उक्त प्रकाराणाम् निवर्तमानत्वेन प्रशाम्यदवस्था। ..... **एशामुपनिबन्ध क्रमेण रसवदादयोलंकाराः।** रसोविद्यते यत्र निबन्धने व्यापारात्मनि तद् रसवत्। प्रियतरं प्रेयो निबन्धनमेव दृष्टव्यम्। एवमूर्जो बलं विद्यते तत्र, तदपि निबन्धनमेव। **अनौचित्यप्रवृत्तत्वादत्रबलयोगः। समाहितं परिहारः।** स च **प्रकृतत्वाद् उक्तभेद विषयः प्रशमापरपर्यायः।''**[17]

रूय्यक कृत रसवदादि का लक्षण है–

''रसभावतदाभास तत्प्रशमानां निबन्धनेन
रसवत्प्रेयऊर्जस्वि समाहितानि।''[18]

रसवत् का उदाहरण है– **''किं हास्येन न में प्रयास्यसि.....रिक्त बाहुबलयस्तारं रिपुस्त्रीजनः**[19] **यहॉ प्रधान है करूण रस और अंग भूत है विप्रलम्भ श्रृंगार।** अतः यह दोनों ही मतों में उदाहरण माना जा सकता है।

प्रेयोलंकार का उदाहरण–''गाढ़ालिङ्गनवामनीकृतकुच .....
....लीनाविलीना नु किम्।''[20]

यहॉ नायिका में हर्ष नामक व्यभिचारीभाव संयोग श्रृंगार का अंग है।

ऊर्जस्वि का उदाहरण–दूराकर्षणमोहमन्त्र. ..... एतन्न वेद्मि स्फुटम्।''[21]

यहॉ सीता के लिए रावण की निम्न अभिलाषा से निष्पन्न विप्रलम्भ श्रृंगार तथा औत्सुक्य नामक संचारी भाव अनौचित्यपूर्वक आगे बढ़े हैं।

समाहित का उदाहरण है– **''अक्ष्णोः स्फुटास्रकलुशो.....प्रसरं ददति।''**[22]

यहां कोप का प्रशम (श्रृंगार का अंग है) अतः समाहित अलंकार है।

जयदेव ने रूय्यक का अनुसरण करते हुए रसवद् आदि अलंकारों का एक छन्द में वर्णन कर दिया है–

''रस–भाव तदाभास भावशान्ति निबन्धनाः।
रसवत् प्रेय ऊर्जस्वित् समाहितमयाभिधाः।।''[23]

आचार्य विश्वनाथ ने भी रसवत् आदि अलंकारों का वर्णन रूय्यक की ही शैली में किया है–

''रसभावौ तदाभासौ भावस्य प्रशमस्तथा।
गुणीभूतत्त्वमायान्ति यदालंकृतयस्तदा।
रसवत्प्रेय ऊर्जस्वि समाहितमिति क्रमात्।।[24]

वृत्ति में कुछ तथ्यों को स्पष्ट करते है– ''प्रकृष्ट प्रियत्वात् प्रेयः'', ऊर्जो बलम्, अनौचित्य प्रवृत्तौ

तदत्रास्तीनि ऊर्जस्वि, समाहितं परिहारः।''[25]
अप्पयदीक्षित ने चन्द्रालोक की ही शैली में प्रायः अनुकरण मात्र प्रस्तुत किया है–

रसभाव तदाभास भावशान्ति निबन्धनाः।''
चत्वारो रसवत् प्रेय ऊर्जस्वि च समाहितम्।[26]

श्रीविद्या चक्रवर्ती की रसवदालंकारों पर निष्कृष्टार्थ कारिका है–

''रसभाव गुणीभावादनौचित्य प्रवृत्तितः।
रसवत्प्रेय ऊर्जस्वि समाहित चतुष्टयम्।।
रसवत्व प्रियत्वाभ्यामूर्जः प्रशमयोगतः।
निबन्धनं रसवदाद्याख्यां संप्रतिपद्यते।।''[27]

इस प्रकार उद्भट से पूर्व भामह तथा दण्डी ने रसवत् का विवेचन किया। उद्भट की वैज्ञानिक व्याख्या को उत्तरवर्ती आचार्यों ने स्वीकार कर लिया और इन चारों अलंकारो का एक साथ वर्णन किया।

रस, भाव, आभास तथा प्रशम में क्रमशः रसवत्, प्रेयस्, ऊर्जस्वि तथा समाहित नामक अलंकार होते हैं। रस जहां अंगी न बनकर अंग बन जाता है वहॉ रसवत् है। इसी प्रकार भाव के अंगत्व में प्रेयस अलंकार है। रसाभास एवं भावाभास के अंगत्व में ऊर्जस्वि, रसभाव के प्रशम में समाहित अलंकार होता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. काव्यालंकार–भामह–3/6
2. तदेव–3/5
3. काव्यादर्श–2/275
4. काव्यालंकारसारसंग्रह–4/2
5. तदेव–पृ.–353, साहित्य सम्मेलन प्रयाग संस्करण।
6. तदेव–4/3
7. तदेव–4/4
8. काव्यालंकार सार संग्रह–पृ.–53, बनहट्टी संपादित।
9. काव्यालंकारसारसंग्रह–4/5
10. तदेव–पृ.–54, बनहट्टी संपादित।
11. काव्यालंकार सार संग्रह–4/7
12. तदेव–पृ.–56, बनहट्टी संपादित।
13. तदेव–पृ.–56, तदेव।
14. ध्वन्यालोक–आनन्दवर्धन–2/5
15. काव्यप्रकाश–4/26
16. तदेव–पृ.–94, विश्वेश्वर कृत टीका।
17. अलंकारसर्वस्व–पृ.–213–214, कु. जानकी संपादित।
18. तदेव–सूत्र–83
19. तदेव–पृ.–215–कु. जानक संपादित।
20. तदेव–पृ.–216–वही।
21. तदेव–पृ.–217, वही।
22. अलंकारसर्वस्व–पृ.–217, कु. जानकी संपादित।
23. चन्द्रालोक–जयदेव, 5/117
24. साहित्यदर्पण–10/95–96
25. तदेव–पृ.–61, पी.वी.काणे संपादित 1, 2, व दशम् परिच्छेद।
26. कुवलयानन्द–170
27. अलंकार सर्वस्व संजीवनी–पृ.218, कु. जानकी संपादित।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

रहीम के दोहे आज के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. कनक रागिनी
स्नातकोत्तर प्रशिक्षित शिक्षक, हिंदी, उत्क्रमित + 2 उच्च विद्यालय चौबे, चलकुशा, हजारीबाग, झारखंड

हिंदी साहित्य प्रेमियों में भला रहीम का नाम कौन नहीं जानता ? कबीर, सूर, तुलसी, रहीम, मीरा आदि तो जन–जन के कंठहार रहे हैं। आज इनकी पंक्तियाँ सुक्तियाँ बन गई हैं जो मानवता का पग–पग पर पथ प्रदर्शन करती है। मनुष्य को मनुष्यत्व से जोड़ती है इनकी पंक्तियाँ। सत्य–असत्य, पाप–पुण्य, धर्म–अधर्म, प्रेम–प्रतिष्ठा, सज्जन–दुर्जन, नीति–अनीति, पात्र–कुपात्र, न्याय–अन्याय इत्यादि अत्यंत कठिन दर्शन को जिस सहजता, सरलता और सरसता से इन्होंने आम–जन जीवन और प्राकृतिक दृष्टांतों एवं उदाहरणों से समझाया है वह अद्‌वितीय अविस्मरणीय और सहज अनुकरणीय हैं।

दोहा छंद के संदर्भ में रहीम कहते हैं–

"दीरघ दोहा अरथ के, आखर थोरे आहिं।
ज्यों रहीम नट कुंडली, सिमिटि कूदि चढ़ि
जाहिं।।"

रहीम कहते हैं– दोहों में भले ही कम अक्षर या शब्द हैं, परंतु उनके अर्थ बड़े गूढ़ और विस्तृत होते हैं। अर्थात् कम शब्दों में बड़े से बड़े रहस्य को दोहे छंद में प्रस्तुत करना सरल है। इसलिए रहीम ने जीवन–जगत से संबंधित अपने दृष्टिकोण दोहों के माध्यम से व्यक्त किया है जो प्रत्येक युग में संदर्भित की जाती रहेंगी। इनके दोहों से मानव जाति सीख लेकर अपने जीवन की जटिल समस्याओं को सुलझाने में समर्थ होगा। इस आलेख में रहीम के उन दोहों को लिया जा रहा है जो अति लोकप्रिय हैं और इन दोहों को आज के परिप्रेक्ष्य में समझने की कोशिश की जा रही है।

"रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय।
तोड़े से फिर न जुरै, जुरै गाँठ पड़ जाए।।"

प्रेम की व्यापकता का वर्णन सभी कवियों ने किया है। किन्तु प्रेम रूपी धागे को संजोने की बात रहीम ने बताई है। उन्होंने यह भी समझाया है कि प्रेम रूपी धागे को तोड़ना नहीं चाहिए क्योंकि यदि यह धागा एक बार टूट जाए तो फिर जुड़ता नहीं और यदि जोड़ने की कोशिश भी की जाए तो उसमें गाँठ लगाकर ही जोड़ा जा सकता है।

मानव का मन बड़ा ही नाजुक होता है। यदि उसमें गाँठ पड़ जाए तो वह गाँठ आजीवन नहीं खुल पाता है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य की कोशिश यह होनी चाहिए कि हमारे प्रेम–संबंधों में गाँठ न पड़े।

वर्तमान समय में व्यक्ति को इन पंक्तियों को ऐसे कुंजी के रूप में प्रयोग करने की आवश्यकता है जो व्यक्ति के मन में गाँठों को पड़ने ही न दे। संबंधों की नाजुकता, कोमलता, स्निग्धता आदि के प्रति व्यक्ति को अत्यधिक सर्तक रहना चाहिए। आज संबंधों के प्रति सर्तकता में भारी कमी आई है। परिणामस्वरूप संबंध टूट रहे हैं और यदि टूटने से किसी तरह बच भी जाए तो संबंधों में शीथिलता, जड़ता और उदासीनता का समावेश हो गया है। ऐसा लगता है– जैसे लोग संबंधों को नहीं संभाल रहे हैं, संबंधों को ढो रहे हैं। संबंधों में टूटन की बड़ी व्यापक और सूक्ष्म प्रक्रिया का नतीजा है एकल परिवार। प्रेम संबंधों में आई गाँठ का ही परिणाम है परिवार में बिखराव। ऐसे में यह पंक्तियाँ प्रेम संबंधों को संजोने का आधार बन सकती हैं।

"रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न उबरै, मोती, मानुस, चून।।"

रहीम ने व्यक्ति की प्रतिष्ठा को ही उसका सब कुछ माना है। जैसे कांतिविहीन मोती का कोई मोल नहीं रह जाता है वैसे ही मनुष्य की प्रतिष्ठा एक बार चली जाए तो वह मृतक के समान है।

आज के संदर्भ में रहीम की पंक्तियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण और अनुकरणीय हैं। चूँकि आज व्यक्ति प्रतिष्ठा को अभिमान से जोड़ लिया है और अपनी प्रतिष्ठा के लिए उसे चाहे जितने भी भ्रष्ट आचरण करना पड़े वह उससे चूकता नहीं। आज धनवान, दौलतवान और सामाजिक रुतवे को प्रतिष्ठा से जोड़ कर देखा जाता है जबकि प्रतिष्ठा इन सबसे कहीं ऊपर है। प्रतिष्ठा मनुष्यता के जीवंतता का प्रतीकार्थ है। प्रतिष्ठा मानवता की कांति है और इस जीवंतता और कांतिमयता से समस्त जड़–चेतन में प्रति पल नवीनता का संचरण होना ही मनुष्य की वास्तविक प्रतिष्ठा है। जहाँ हर ओर एक–दूसरे को धक्के देकर और यदि संभव हो तो धक्के देकर गिराए गए व्यक्ति के ऊपर से गुजर कर आगे बढ़ जाने की होड़ मची हुई है। ऐसे समय में रहीम की पंक्तियाँ मनुष्य को प्रतिष्ठा के असल अर्थ को समझाता है ताकि मनुष्य, मनुष्य को हानि पहुँचाकर प्रतिष्ठा प्राप्त न करें। मनुष्य, मनुष्य का सहयोग कर उसे अपनी दया एवं करुणा से सराबोर कर प्रतिष्ठा का मार्ग प्राप्त करें। यह प्रतिष्ठा उसे सदैव के लिए जीवंतता या अमरत्व प्रदान करेगी।

"रहिमन निज मन की व्यथा, मन ही राखो गोय।
सुन इठलैहै लोग सब, बाँट न लैहै कोय।।"

रहीम अपने मन की व्यथा मन में रखने की बात कहते हैं। चूँकि संसार में ऐसा कोई नहीं है जो आपसी व्यथा को समझे। जब भी उसे अवसर प्राप्त होगा, वह आपकी भावनाओं की हँसी उड़ाएगा।

अपने मन की पीड़ा, वेदना आदि को कवि ने किसी से न कहने की बात कही है। ये बातें वर्तमान समय में अत्यधिक प्रासंगिक हैं। चूँकि आज व्यक्ति, व्यक्ति की पीड़ा, दुख, दर्द, वेदना आदि का ही मजाक नहीं उड़ाता अपितु वह दूसरों को दुख, कष्ट और संकट में देखकर सुख प्राप्त करता है। मनुष्य अपनी पीड़ा दूसरों के समक्ष बाँटकर पीड़ा के भार से मुक्त महसूस करता था। कहा भी जाता है कि पीड़ा बाँटने से कम होती है किंतु रहीम के अनुसार यदि हम पीड़ा बाँटते हैं तो और बढ़ जाएगी क्योंकि हम जिन्हें अपना हमदर्द समझकर अपनी पीड़ा उनके समक्ष व्यक्त करते हैं। वे हमारी पीड़ा को दूर करने के बजाय हमारा मजाक उड़ाते हैं एवं लोगों के समक्ष हँसी का पात्र बना देते हैं। ऐसी स्थिति उत्पन्न न हो उसके लिए ही रहीम ने अपने मन की व्यथा को अपने मन में ही रखने की सलाह दी है।

"जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापे नहीं, लिपटे रहत भुजंग।।"

जिनकी प्रकृति उत्तम होती है, उन्हें कुसंगत से भी प्रभाव नहीं पड़ता जैसे चंदन से विषधर लिपटे रहते हैं तो चंदन में उनका विष नहीं फैलता बल्कि उन्हें ही शीतलता प्राप्त होती है जो जीवन में विष धारण करते हैं।

आज के परिप्रेक्ष्य में इन पंक्तियों को देखे तो व्यक्ति स्तर पर प्रकृति में अर्थात् व्यक्ति की प्रकृति में उत्तमता लाने की आवश्यकता है। यदि ऐसे उत्तम प्रकृति के व्यक्तियों के निर्माण में हमारा समाज सफल हो जाता है तो बुरे प्रकृति के लोग भी उन्हें कुछ हानि नहीं पहुँचा सकेंगे बल्कि उत्तम चरित्र वालों से प्रेरित होकर उनमें भी बदलाव आ जाए।

"तरुवर फल नहिं खात है, सरवर पियहिं न पान।
कहि रहीम पर काज हित, संपत्ति सँचहिं
सुजान।।"

प्राकृतिक उपादानों से सदैव सीख ही मिलती है। हाँ! इस बात की संभावना लेने वाले या सीखने वाले मनुष्य की चिंतनशीलता पर निर्भर है कि वह प्रकृति से क्या और कितना ले सकता है? धन कमाने और जमाने के इस होड़ वाली संस्कृति से मुक्ति के साधन ही नहीं साध्य भी है रहीम की यह पंक्ति। काश! आज भी संपत्ति संचय का उद्देश्य परहित और दूसरों की भलाई हो तो संपूर्ण विश्व का मानचित्र ही बदल जाए। तरुवर और सरवर के समान प्रकृति के लोगों की संख्या आधी भी हो जाए तो शेष आधे लोगों का स्वमेव कल्याण हो जाएगा।

"कहि रहीम संपत्ति सगे, बनत बहुत बहु रीति।
विपत्ति कसौटी जे कसे, ते ही साँचे मीत।।"

सच्चे संबंधों की पहचान की जो कसौटी रहीम ने निर्मित की है। वह आज के संबंधों के परख का मानक है। श्वास शरीर की जीवनदायिनी शक्ति है तो संबंध जीवन की जीवनदायिनी योग है। संपत्ति और विपत्ति के संग होने पर कच्चे और सच्चे संबंधों की परख होती है। यदि हम यह जानना चाहते है कि हमारे सच्चे मित्र कौन हैं तो इसकी सबसे सरल कसौटी यही है कि जो विपत्ति में भी हमारा साथ दे। चूँकि जब व्यक्ति धनवान होता है तो सब उसे पूछते हैं और जैसे ही विपत्ति आती है वे उनसे दूरी बनाने लगते हैं। आज के संदर्भ में यह अति आवश्यक है कि हम ऐसे सच्चे संबंधों को पहचाने और सदैव उनके साथ रहे।

"जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन की मोह।
रहिमन मछरी नीर को, तऊ न छाँडत छोह।।"

रहीम कहते हैं जब कोई मछुवारा मछली पकड़ने के लिए जाल फेंकता है और जब जाल में मछली फँस जाती है तो वह जाल खींचता है। जाल जैसे ही पानी से बाहर आता है तो जाल से पानी बह जाता है और मछली जाल में ही फंस कर रह जाती है और जल से वियुक्त होने के कारण तड़प–तड़प कर प्राण दे देती है। जल मछलियों से अपना मोह त्याग देता है लेकिन मछली जल का वियोग सहन नहीं कर पाती है। मीन के जल प्रेम से मनुष्यों को यह सीख लेनी चाहिए कि प्रेम जीवन का अनिवार्य तत्त्व है। उससे विलग होकर जीवन संभव ही नहीं है। मनुष्य और मछली के लिए क्रमशः हवा और पानी की अनिवार्यता को समझना और उसका संरक्षण करना भी अनिवार्य हैं मछली जल के बाहर श्वसन क्रिया नहीं कर सकती और मनुष्य जल के भीतर। प्रकृति की रचनात्मक भिन्नता के कारण मनुष्य हवा के बिना और मछली जल के बिना जीवित नहीं रह पाती है। आज का मानव प्रकृति प्रेम को भूला बैठा है। वह जल और हवा को दूषित कर अपने जीवन प्रेम को ही छल रहा है। ऐसे में मछली के जल प्रेम से हमें प्रकृति प्रेम की सीख लेने की आवश्यकता है। यदि हममें प्रकृति प्रेम न होगा तो आने वाले समय में मानव को अपने जीवन प्रेम के मोह को भी त्यागना होगा। प्रकृति प्रेम को अन्तःकरण में धारण कर ही मानव सांसारिक प्रेम में सफल हो सकता है।

"धरती की रीत है, सीत धाम औ मेह।
जैसे परै सौ सहि रहै, त्यों रहीम यह देह।।"

धरती के साथ–साथ मनुष्य के शरीर की सहन शक्ति धरती के समान है। जिस प्रकार धरती सर्दी–गर्मी–बरसात को अपने ऊपर झेल लेती है उसी प्रकार मनुष्य का शरीर भी जीवन में आने वाले सुख–दुख के पल व्यतीत करता है।

क्षिति, जल, पावक, गगन एवं समीर से रचित मानव शरीर इन पंच तत्त्वों के गुणों को भी धारण करता है। धरती, धीरता, सहनशीलता, निस्वार्थता जैसे गुणों को धारण करती है। मनुष्य का देह भी इन गुणों को धारण करता है किंतु मनुष्य अपने गुणों को भूलता जा रहा है। स्वार्थी, अधैर्यी और असहनशील होता जा रहा मानव को रहीम की इन पंक्तियों को आत्मसात करने की आवश्यकता है।

"खैर, खून, खाँसी, खुसी, बैर, प्रीत, मदपान।
रहिमन दाबे न दबै, जानत सकल जहान।।"

सकुशलता, हत्या खाँसी, खुशी बैर, प्रेम, मदपान को व्यक्ति चाहकर भी नहीं दबा सकता और सारे संसार को इसकी खबर लग ही जाती है।

सदृवृत्तियाँ हो या कुवृत्तियाँ इन्हें दबाना और छिपना उचित नहीं चूँकि एक न एक दिन इन वृत्तियों को जग जाहिर होना ही है। सद्वृत्तियाँ दबाने से मानव मन की सात्विकता समाप्त होती है। कुवृत्तियाँ दबाने से व्यक्ति आत्महीनता के बोध से भर उठता है। रहीम की यह पंक्ति उन खूनियों के लिए सर्वाधिक सीख लेने योग्य है जो इस भ्रम में जीते हैं कि वे अपने कुकृत्य को छुपा लेंगे। रहीम कहते हैं कि ऐसे निंदनीय कार्य छुपाना सरल नहीं है। एक दिन संसार को सत्य का पता चल ही जाएगा। मानव अपने सद्वृत्तियों का प्रसार कर सब को सुखी बनाए और कुवृत्तियों पर विजय पाकर मानवता को विजयिनी बनाए।

"रहिमन ओछे नरन सो, बैर भली न प्रीत।
काटे–चाटे स्वान के, दोऊ भाँति विपरीत।।"

जिस प्रकार कुत्ते का काटना और चाटना दोनों ही हानिकारक है ठीक उसी प्रकार बुरे स्वभाव के लोगों से प्रेम करना और बैर रखना दोनों ही विपरीत परिणाम देते हैं।

रहीम मनुष्य को सावधान करना चाहते है कि प्रेम या बैर करने से पूर्व व्यक्ति बैरी और प्रेमी की प्रकृति को अच्छी तरह जाँच परख लें। उच्छृखंल व्यक्ति से बैर या प्रेम करने से बचना चाहिए। आज व्यक्ति अपने प्रेमी या बैरी का व्यक्तित्व परखे बिना बैर या प्रेम कर बैठता है। यह उचित नहीं। अतएव श्वान प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों से दूर रहने में ही व्यक्ति की भलाई निहित है।

"टूटे सुजन मनाइए, जौ टूटे सौ बार।
रहिमन फिरि फिरि पोहिए, टूटे मुक्ताहार।।"

सच्चे प्रकृति वाले व्यक्ति यदि सौ बार रुठ या टूट जाए तो उसे सौ बार भी मानने और जोड़ने के लिए सज्ज रहना चाहिए। जिस प्रकार मोतियों की माला चाहे जितनी बार भी टूटे उसे हर बार संजोकर जोड़ लेते हैं। ठीक उसी प्रकार सज्जनों को प्रेम से मना लेना चाहिए। चाहे वे जितने बार भी क्यों न रुष्ट हो जाए। सज्जन जीवन के हरेक मोड़ पर पथ प्रदर्शक की भाँति होते हैं। वे हमारे शुभ चिंतक होते हैं। ऐसे व्यक्ति से रुष्ट रहना उचित नहीं। आज ऐसे लोग भी है जो सज्जनों के सत्य वचन से रुष्ट होकर अपनी हानि कर लेते हैं।

"मन, मोती, अरु, दूध, रस, इनकी सहज सुभाय।
फट जाए तो न मिले, कोटिन करो उपाय।।"

रहीम कहते हैं कि मन, मोती, फूल, दूध और रस का स्वभाव अत्यंत सहज है। किंतु यदि ये एक बार फट जाएँ तो करोड़ों उपाय करने के बावजूद भी ये फिर से सहज और सामान्य रूप में नहीं आते हैं।

मोती, फूल, दूध और रस के स्वभाव का उदाहरण कविवर रहीम ने मन की प्रकृति को स्थापित की है। ताकि मनुष्य इन प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से मन की गति, स्थिति, प्रकृति आदि को समझे और किसी का हृदय तोड़ने से पूर्व सौ, हजार या लाख बार नहीं अपितु करोड़ों बार सोच–विचार करे। चूँकि एक बार मन टूटने के बाद करोड़ों उपाय के बाद भी नहीं जुड़ता है। आज मनुष्य वस्तुओं को तोड़ने जैसा मानव मन को तोड़ता है। ऐसे में रहीम की इन पंक्तियों को जीवन में उतारने की आवश्यकता है।

आज के परिप्रेक्ष्य में रहीम द्वारा रचित ये कालजयी दोहे महाकालजयी हो गए हैं। मानव जीवन को पग–पग पर पथ प्रशस्त करती ये पंक्तियाँ जीवन को सफल बनाने के मंत्र से प्रतीत होते हैं। रहीम के दोहों की जीवंतता और संजीवनी शक्ति मानव को मानवता से जोड़ने में सहायक सिद्ध हुई थी, आज उपयोगी सिद्ध हो रही है और आगे कल्याणकारी सिद्ध होंगी।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरवय शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का अध्ययन

रूचि चौहान
शोधार्थी, शिक्षा शास्त्र विभाग, स्वामी विवेकानन्द विश्वविद्यालय, सागर
डॉ. शशिप्रभा त्रिपाठी
शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक, शिक्षा–शास्त्र विभाग, स्वामी विवेकानंद विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश :– प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरवय शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का अध्ययन करना है। शोध के लिए छतरपुर जिले की शासकीय व अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया है जिसमें 300 छात्र व 300 छात्राऐं हैं। व्यक्तित्व का अध्ययन के लिए डॉ. अशोक वर्मा एवं श्रीमती मीनू अग्रवाल द्वारा निर्मित ''व्यक्तित्व परीक्षण'' का प्रयोग किया गया है। तथ्यों का विश्लेषण, मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण द्वारा किया गया। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोरवय छात्र व छात्राओं के व्यक्तित्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

प्रस्तावना :– प्रत्येक व्यक्ति के बाह्य गुण उसके व्यवहार से ज्ञात हो जाते है। प्रत्येक व्यक्ति अपने गुणों द्वारा दूसरे लोगों को प्रभावित करता है वह दूसरे के गुणों से भी प्रभावित होता है चूंकि हर व्यक्ति के समस्त गुण उसके व्यक्तित्व में आ जाते है। अतः यही गुण उसके व्यवहार को भी व्यक्त करते है। व्यक्तित्व में व्यक्ति का स्वभाव, भाव, गुण, आचरण, विचार आदि का समावेश होता है उनके अनुसार उसका व्यक्तित्व दूसरों पर अच्छा या बुरा प्रभाव डालता है। विद्यार्थियों एवं शिक्षा के क्षेत्र की समस्त प्रक्रिया ही शिक्षक के व्यक्तित्व पर अवलंबित है प्रत्येक आयु समूह में व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को बेहतर बनाने का प्रयत्न करता है क्योंकि व्यक्तित्व का एक उपलब्धि मूल्य होता है। अच्छे और प्रभावकारी व्यक्तित्व होने पर व्यक्ति अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक उपलब्धि के पीछे व्यक्तित्व का प्रभाव कार्य करता है।

सीखने की प्रभावशीलता, पाठ्यक्रम, शिक्षण अवधि, कक्षा में वातावरण, शिक्षण विधियाँ, शिक्षण सामग्री आदि पर निर्भर होने के साथ ही विद्यार्थी के व्यक्तित्व पर पूर्ण रूप से निर्भर होती है। व्यक्तित्व के कुछ कारक ऐसे होते है जो कि सामान्य निम्न स्तर के होने पर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व को कमजोर बना देते है जिसका प्रभाव उसके सीखने की प्रक्रिया पर बुरा होता है। अगर प्रभावशील व्यक्तित्व वाला विद्यार्थी हुआ तो उसका प्रभाव अच्छा पड़ता है। वे कौन से कारक है जो विद्यार्थी के व्यक्तित्व को प्रभावशील बना देते है? व्यक्तित्व का अध्ययन केवल मनोवैज्ञानिकों ने ही नहीं बल्कि समाजशास्त्री, मानवशास्त्री एवं शिक्षाशास्त्रियों ने भी किया है। किसी भी कार्य में प्रभावशीलता उसमें कार्यरत व्यक्तियों के गुणों एवं विशिष्टता और अनुभवों पर आधारित गुण होते है। न तो हर व्यक्ति हर कार्य में प्रभावशील हो सकता है और न ही प्रत्येक कार्य के लिए प्रत्येक व्यक्ति उपयुक्त कार्यकर्ता बन सकता है।

किसी के व्यावहारिक गुण व्यक्तिगत तौर पर उस व्यक्ति से पूर्ण रूप से जुड़े नहीं होते बल्कि उसके पर्यावरण से जुड़े होते है जिस पर्यावरण में वह बड़ा हुआ हैं। सभी बच्चों को अच्छे पर्यावरण की आवश्यकता होती है। एक छोटे शिशु के लिए एक अच्छा पर्यावरण वह होता है जिस घर में उसकी परवरिश होती है और माँ उसे लगातार स्नेह, लाड़–प्यार देती है। अभिभावक प्रोत्साहन एक बच्चे के मानसिक, मनोवैज्ञानिक, मानसिक विकास और उसमें पैत्रिक स्वाभाविक गुणों के विकास में प्रभावी योगदान देता है।

अध्ययन की आवश्यकता तथा महत्व :– शिक्षा वह प्रकाश है जिसके द्वारा बालक का समग्र शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं अध्यात्मिक घटक एवं राष्ट्र का प्रखर चरित्र सम्पन्न नागरिक बनकर संस्कृति एवं सभ्यता को पुनः स्थापित रखता है। इस प्रकार शिक्षा व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए अति आवश्यक है। विद्यार्थियों के निर्माण एवं समाज के उत्थान में शिक्षा का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान है। व्यक्ति के व्यक्तित्व को निखारने और समाज की दिशा निर्धारण करने का सबसे महत्वपूर्ण साधन शिक्षा में शिक्षा भावनाऐं, प्रकृति के अनुरूप समायोजित करने के साथ रूचि को एक निश्चित दिशा देती है। शिक्षण एक विज्ञान है जिसमें न केवल एक पक्ष लेना मात्र ही महत्व नहीं रखता बल्कि उनकी व्यक्तिगत विशिष्टताओं का ज्ञान प्राप्त करना होता है।

'व्यक्तित्व' शब्द की उत्पत्ति :– 'व्यक्तित्व' अंग्रेजी

के पर्सनेल्टी शब्द का रूपान्तर है। अंग्रेजी के इस शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के पर्सोना शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है– नकाब या मुखौटा। यूनानी लोग नकाब पहनकर मंच पर अभिनय करते थे, ताकि दर्शकगण यह न जान सकें कि अभिनय करने वाला कौन है– दास, विदूषक, राजकुमार या राजनर्तकी। अभिनय करने वाले जिस प्रकार के पात्र का अभिनय करते थे, उसी प्रकार का मुखौटा पहन लेते थे।

व्यक्तित्व का अर्थ :– व्यक्तित्व में एक मनुष्य के न केवल शारीरिक और मानसिक गुणों का, वरन् उसके सामाजिक गुणों का भी समावेश होता है, किन्तु इतने से भी व्यक्तित्व का अर्थ पूर्ण नहीं होता है। कारण यह है कि यह तभी संभव है, जब एक समाज के सब सदस्यों के विचार, संवेगों के अनुभव और सामाजिक क्रियायें एक–सी हों। ऐसी दशा में व्यक्तित्व का प्रश्न ही नहीं रह जाता है। इसीलिए, मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि व्यक्तित्व–मानव के गुणों, लक्षणों, क्षमताओं, विशेषताओं आदि की संगठित इकाई है।

मार्टन प्रिंस :– ''व्यक्तित्व व्यक्ति की सभी प्रकार की जन्मजात प्रकृति, आवेगों, प्रवृत्तियों, इच्छाओं एवं मूल–प्रवृत्तियों और अनुभवों के द्वारा अर्जित बातों का योग है।''

अध्ययन के उद्देश्य :–

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का अध्ययन करना।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का अध्ययन करना।
3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का अध्ययन करना।

परिकल्पनाऐं :–

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

उपकरण :– प्रस्तुत अध्ययन में व्यक्तित्व को मापने के लिए डॉ. अशोक वर्मा एवं श्रीमती मीनू अग्रवाल द्वारा निर्मित ''व्यक्तित्व परीक्षण'' का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श :– प्रस्तुत अध्ययन के लिए छतरपुर जिले के शहरी एवं ग्रामीण हायर सेकेण्डरी स्कूलों के 16 से 18 वर्ष के कक्षा 11वीं एवं 12वीं के 600 विद्यार्थी सम्मिलित किए गए हैं जिसमें 300 छात्र एवं 300 छात्राऐं सम्मिलित हैं।

शोध विधि :– प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का सारणीयन

सारणी 1.1

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	चर	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	सार्थकता स्तर	
						0.05	0.01
1.	समग्र शहरी छात्र– छात्राओं का व्यक्तित्व मापनी अंक	300	60.45	6.25	1.32	सार्थक अंतर नहीं है।	सार्थक अंतर नहीं है।
2.	समग्र ग्रामीण छात्र– छात्राओं का व्यक्तित्व मापनी अंक	300	59.95	6.70			
	Df-598					1.96	2.58

तालिका क्रमांक 1.1 को देखने से ज्ञात होता है कि समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं का क्रांतिक अनुपात 1.32 पाया गया। प्राप्त मान की सार्थकता देखने के लिए 0.05 एवं 0.01 स्तर पर तालिका में दिए गए सार्थकता मानों से तुलना करने पर यह पाया गया कि 'सी.आर.' का प्राप्त मान 1.32, 0.05 के मान 1.96 एवं 0.01 के मान 2.58 के मानों से कम है। अतः इससे निष्कर्ष निकलता है कि समग्र छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है। अतः समग्र छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का स्तर समान है।

सारणी 1.2

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	चर	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	सार्थकता स्तर	
						0.05	0.01
1.	शहरी छात्रों का व्यक्तित्व मापनी अंक	150	59.25	6.25	2.03	सार्थक अंतर है।	सार्थक अंतर नहीं है।
2.	शहरी छात्राओं का व्यक्तित्व मापनी अंक	150	60.82	7.08			
	Df-298					1.97	2.59

सारणी क्रमांक 1.2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि किशोरवय शहरी छात्र एवं छात्राओं के व्यक्तित्व का क्रांतिक अनुपात 2.03 पाया गया। प्राप्त मान की सार्थकता देखने के लिए 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर तालिका में दिए गए सार्थकता मानों से तुलना की गई जिसमें यह पाया गया कि 'सी.आर.' का प्राप्त मान 2.03, 0.05 के मान 1.97 से अधिक है एवं 0.01 के मान 2.59 के मान से कम है। अतः निष्कर्ष निकलता है कि किशोरवय शहरी छात्र एवं छात्राओं के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है। अतः शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का स्तर समान है।

सारणी क्र. 1.3

उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	चर	न्यादर्श	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	सार्थकता स्तर	
						0.05	0.01
1.	ग्रामीण छात्रों का व्यक्तित्व मापनी अंक	150	58.73	6.70	0.02	सार्थक अंतर नहीं है।	सार्थक अंतर नहीं है।
2.	ग्रामीण छात्राओं का व्यक्तित्व मापनी अंक	150	58.75	6.56			
	Df-298					1.97	2.59

सारणी क्रमांक 1.3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का क्रांतिक अनुपात 0.02 पाया गया। प्राप्त मान की सार्थकता देखने के लिए 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थकता मानों से तुलना करने पर यह पाया गया कि 'सी.आर.' का प्राप्त मान 0.02, 0.05 के मान 1.97 एवं 0.01 के मान 2.59 के मानों से कम है। अतः निष्कर्ष निकलता है कि किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में सार्थक अंतर नहीं है। अतः किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व का स्तर समान है।

निष्कर्ष :–

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में अंतर नहीं है।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में कोई अंतर नहीं है।
3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं के व्यक्तित्व के स्तर में कोई अंतर नहीं है।

परिकल्पनाओं का सत्यापन :–

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के समग्र किशोरवय छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना क्र.1 स्वीकृत की जाती है।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय शहरी छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना क्र.2 स्वीकृत की जाती है।
3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोरवय ग्रामीण छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना क्र.3 स्वीकृत की जाती है।

सन्दर्भ सूची :–

1. कपिल, एच.के. (2009), सांख्यिकीय के मूलतत्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. पाठक, पी.डी. (2008), शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. मंगल, एस.के. (2010), शिक्षा मनोविज्ञान, पी.एच. आई., लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
4. सिंह, अरूण कुमार (2009), उच्चतर मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, बंगला रोड, इलाहाबाद।
5. हरलॉक, ई.वी. (1980), डेवलपमेंट साइकोलॉजी, टी.एम.एच. पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

सतत् विकास एवं पर्यावरणीय पर्यटन

Dr. Mohd Sadiq Ali Khan
Principal, School Education, Sanskriti University, Mathura, India

प्रस्तावना :– वर्तमान समय में मानव कार्य–कलापों में पर्यटन महत्वपूर्ण होता जा रहा है जिसके कारण ही पर्यटन का राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व भी बढ़ता जा रहा है। साथ ही यह देश की आर्थिक क्रियाओं को भी प्रोत्साहित करता है जो देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाती है। पर्यटन एक ऐसा शब्द है जो कुछ विशिष्ट उद्देश्यों को लेकर लोकजन की यात्रा और देश एवं विदेश के विविध हिस्सों से जुड़े सभी सम्बन्धित मामलों एवं प्राक्रमों को निरूपति करता है। पर्यटन में दो घटक शामिल होते हैं पर्यटक एवं पर्यावरण। पर्यटक का मकसद चाहे जितना भी सौम्य क्यों न हो फिर भी स्थानीय पर्यावरण पर उसका कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता जरूर है। पर्यटकों के व्यवहार सहित उनकी विभिन्न क्रियाएँ पर्यावरण पर निश्चित रूप से किसी न किसी प्रकार का दबाव डालती है।

अतः प्रयास यह होना चाहिए कि पर्यटकों के लौटने के बाद जल्द ही वह क्षेत्र पूर्व मूल स्थिति में आ सके, लेकिन ऐसा होता नहीं है। पर्यटन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आर्थिक क्रिया है क्योंकि इससे किसी देश की अर्थव्यवस्था कई गम्भीर समस्याओं जैसे – गरीबी, बेरोजगारी, आर्थिक विषमता एवं विदेशी मुद्रा अर्जन की समस्या को हल किया जा सकता है। इसी उद्देश्य से पर्यटन के विकास और विस्तार की बात पर दिनोंदिन जोर दिया जा रहा है किन्तु इसके विस्तार से पर्यावरण एवं प्रकृति के लिए अनेक नये संकटों का भी विस्तार होने लगा है। इसका एक उदाहरण वर्ष 2013 में हुई केदारनाथ त्रासदी है जिसका कारण वहाँ पर्यटन को बढ़ावा देने हेतु किया गया अन्धाधुंध निर्माण को बताया जाता है जो कि ऐसे क्षेत्रों में निर्माण के नियमों को परे रखकर किया जा रहा था। गोयल, राजेश, (2011)[1]

सतत् विकास की धारणा एवं पर्यटन :– यहाँ हम सतत् विकास की अवधारणा को पर्यावरण से जोड़ कर स्पष्ट कर रहे है चूंकि सतत् विकास की धारणा से स्पष्ट होता है कि वर्तमान विकास ऐसा होना चाहिए जिससे हमारी वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताएँ तो पूरी हो ही जाए साथ ही साथ भविष्य की आने वाली पीढ़ियों के लिए भी प्राकृतिक संसाधन बने रहे। इस अवधारणा को विकसित करने की आवश्यकता इसलिए हुई क्योंकि वर्तमान युग में हर देश तेजी से विकास करने की होड़ में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक विदोहन कर रहे है जिससे बढ़ती जनसंख्या का इन पर निरन्तर दबाव बढ़ता जा रहा है।

पूर्व साहित्य अवलोकन :–

शर्मा, कमल (1996)[2] पर्यटन एक बहुआयामी क्रिया है जिसमें पर्यटकों के मूल स्थान से लेकर गन्तव्य तक की विभिन्न अवस्थाओं में अलग–अलग सुविधाएँ एवं सेवाएँ अनिवार्य है। पर्यटन का सम्बन्ध केवल पर्यटक एवं उसके विकास भर से नहीं होता बल्कि इसके अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव प्राकृतिक वातावरण, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक वातावरण पर भी पड़ते है, जिनका अध्ययन एवं चिंतन आवश्यक है। भूतिया, शार्प (2005)[3], पर्यटन उद्योग की सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना है। जो पर्यटकों एवं स्थानीय लोगों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण पर निर्भर करता है। इस उद्योग में बड़े स्तर पर शिक्षित, प्रशिक्षित एवं योग्य व्यक्तियों की सदैव मांग बनी रहती है। इसके अतिरिक्त एक बड़ी समस्या नियंत्रण विहिन होटलों के अंधाधुंध निर्माण की है जो बिना किसी नियन्त्रण के पर्यावरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते है। गौतम, शिवानन्द, (1999)[4], पर्यटन स्थलों पर लगातार बढ़ते निर्माण कार्य प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए घातक है। पर्यटन एवं पर्यावरण पारिस्परिक रूप से अन्तर्सम्बन्धित है, अतः निर्माण कार्य से जुड़े प्रत्येक पक्ष (सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव) को ध्यान में रखना चाहिए।

उद्देश्य :– शोध पत्र का उद्देश्य सतत् विकास एवं इको टूरिज्म के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन कर इसके अनुकूल एवं प्रतिकूल प्रभावों का अध्ययन करना है।

इको टूरिज्म :– इन दिनों इको टूरिज्म का प्रयोग जोर–शोर से हो रहा है जिसमें प्रकृति के दोहन पर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है उसके संरक्षण पर कम दिया जा रहा है। पर्यावरणीय पर्यटन एवं पारिस्थितिकी पर्यटन प्रकृति पर आधारित है जो प्रकृति से प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त आनन्द से सम्बन्धित है। इसके पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के लिए स्थान विशेष की उपयुक्तता आवश्यक है। साथ ही पर्यटन को प्राकृतिक पर्यावरण में स्थाई ह्रास का साधन नहीं बनना चाहिए। पर्यटन का वास्तविक एवं प्राचीन स्वरूप धार्मिक एवं प्राकृतिक पर्यटन का ही रहा है बाकी के अन्य रूप

इन्हीं से सृजित हुए है और भारत में तो धार्मिक एवं इको टूरिज्म का अत्यधिक महत्व व सम्भावनाएँ है। क्योंकि भारत अपनी विविधता एवं जैव विविधता के लिए पूरे विश्व में जाना जाता है।

मीठे पानी की डॉल्फिनों में से एक सोंस या गंगेटिक डॉल्फिन भारत में पायी जाती है। सर्पों की अनेक प्रजातियाँ भी भारत में है जैसे – सबसे जहरीले सर्पों में किंग कोबरा यही पाया जाता है, इनके अतिरिक्त सालामंडर की कई प्रजातियाँ, पौधों की लगभग 47,000 प्रजातियाँ, जिसमें से 7000 तो केवल भारत में ही पाये जाते है। यहाँ 62 प्रतिशत वनस्पति सीमित है जो हिमालय, खासी की पहाड़ियों एवं पश्चिमी घाटों में पायी जाती है। भारत में 7500 कि.मी. लम्बी तटरेखा, नदी मुहानों और डेल्टा में जैव विविधता के अपार भण्डार है। भारत प्रवासी पशु–पक्षियों का भी महत्वपूर्ण आवास है।

उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि भारत में पर्यावरण परिस्थितिकी एवं पारिस्थितिकी तन्त्र आधारित इको टूरिज्म की अपार सम्भावनाएँ उपलब्ध हैं जिनके उचित विकास की आवश्यकता है जिससे सतत् विकास की धारणा एवं पर्यटन विकास में सन्तुलन स्थापित किया जा सके।

पर्यावरण एवं पर्यटन विकास के मध्य सन्तुलन :– इनके मध्य सन्तुलन के प्रयासों को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट कर सकते है –

- पर्यटन क्षेत्र की समग्र आर्थिक नीति तैयार करते समय स्थानीय स्थानीय समुदाय को शामिल किया जाना चाहिए।
- पर्यटन स्थलों पर कचरें एवं अपशिष्ट का उचित निपटारा किया जाना चाहिए।
- इको पर्यटन के लिए संसाधनों का उपयोग और स्थानीय निवासियों की आजीविका के मध्य सम्भावित संघर्ष की पहचान करना एवं उनके मध्य संघर्ष को न्यूनतम करना।
- इको टूरिज्म के विकास के प्रकार एवं पैमाने पर्यावरण तथा स्थानीय समुदाय की संस्कृति एवं उनके सामाजिक रहन–सहन के अनुकूल होना चाहिए।

पर्यटन के लाभ का आधार ही धार्मिक एवं पर्यावरणीय (इको) पर्यटन है किन्तु वर्तमान परिस्थिति इसे क्षीण करने वाली है। अन्तर्राष्ट्रीय नैतिक शास्त्र संहिता के अनुच्छेद तीन में कहा गया है कि ''पर्यटन विकास के सभी अंशधारकों को प्राकृतिक पर्यावरण को सुरक्षित रखना चाहिए ताकि वर्तमान और भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं को समान रूप से सन्तुष्ट करने वाले सक्षम, मजबूत और सतत् आर्थिक विकास का लक्ष्य हासिल किया जा सके।'' इस विचार का सैद्धान्तिक से अधिक इसका व्यावहारिक रूप में महत्व है जिसे प्रत्येक देश को अपनाना चाहिए। मासिक पत्रिका योजना, अगस्त (2002), पिछले 10 वर्षों में लोगों, निगमों तथा देशों के मध्य आय, संसाधन और आर्थिक संवृद्धि में निरन्तर वृद्धि देखी जा रही है। धनवान देशें में रहने वाले विश्व की आबादी के 5वें और निर्धन देशों में रहने वाले 5वें का अनुपात वर्ष 1960 में 30:1 था जो 1997 में बढ़कर 74:1 हो गया अर्थात् आर्थिक विषमता में भी बहुत अधिक वृद्धि पूरे विश्व में देखने में आयी है। अतः आर्थिक विकास में व्याप्त नैतिकता के मूल्य का विकास होना जरूरी है तभी यह आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय असन्तुलन एवं विषमता को दूर किया जा सकता है।

पर्यटन का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव :–

1. वायुमण्डल :–

कारण :– पर्यटन स्थलों की ओर यात्रा में वृद्धि से मोटर कार, जहाज, ट्रेन आदि से प्रदूषण में वृद्धि।

प्रभाव :– वायु और ध्वनि प्रदूषण, पौधों, पेड़ के ऊपर हानिकारक प्रभाव, मनोरंजन संसाधनों की क्षति।

2. वनस्पति :–

कारण :– मनोरंजन स्थलों के निर्माण हेतु वन क्षेत्र की कटाई, उद्यानों और वनों में आग का विचारहीन प्रयोग, उद्यानों एवं वनों में बढ़ता यातायात, फलों और पौधों पर कवक का संग्रहण।

प्रभाव :– इससे वन्य सम्पदा को अत्यधिक क्षति होती है जिसमें अनमोल लकड़ी, पेड़, पौधे तथा अनेक प्रकार की दुलर्भ जड़ीबूटियों तथा वन्य जीवों के जीवन पर घातक प्रभाव।

3. जल :–

कारण :– कूडे–कचरे और मलजल की निकासी झील, नदियों और समुद्री तटों में, पर्यटन पोत या नौकाओं से तेल की निकासी आदि।

प्रभाव :– प्रदूषित जल से स्वास्थ्य को संकट, समुद्री पौधों एवं जीव–जन्तुओं का विनाश, जलाश्यों में विशाक्तता के स्तर में वृद्धि, समुद्री खाद्य का दूषित होना आदि।

4. मानव बस्तियों एवं स्मारकों :–

कारण :– होटल, दुकानों आदि का निर्माण एवं विस्तार, मनोरंजन हेतु पर्यटन स्थलों का अत्यधिक प्रयोग।

प्रभाव :– जन विस्थापन यातायात का संकुचन, बढ़ा हुआ प्रदूषण आदि, अतिसंकुलता, विरूपण सुरक्षा के लिए बाधा।

उपरोक्त दर्शाये गये बिन्दुओं में पर्यटन के कारण प्रकृति एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को बताया गया है। जैसे–जैसे पर्यटन का पर्वतीय क्षेत्रों में विस्तार एवं विकास होता है वैसे–वैसे वहाँ के पर्यावरण पर उसका दबाव बढ़ता जाता है। अर्थात् पर्यटन विकास प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव को बढ़ाता है।

सामान्तया पेयजल एक बेहद महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है जिसे पर्यटन व्यवसाय अत्यधिक मात्रा में प्रयोग में लाता है जिससे पीने के पानी की कमी बढ़ती जा रही है और अत्यधिक मात्रा में अपशिष्ट जल में निगर्त होता है। इसके अतिरिक्त पर्यटन उद्योग का सीधा असर भूमि संसाधनों पर भी पड़ता है। जैसे – खनिज, जीवाश्यम ईंधन, जंगल, आर्द्र भूमि, वन्य जीव आदि सभी इससे प्रभावित होते हैं। पर्यटन का विकास एवं विस्तार करने के लिए इन संसाधनों का अंधाधुंध विदोहन हो रहा है जो सतत् विकास की धारणा की धज्जिया उड़ा रहा है। पर्यटन गतिविधियों के कारण पारिस्थितिकी तन्त्र में अनेक बदलाव देखे जा रहे है। जैसे – रामेश्वरम के पास का करोडेई द्वीप, जो किसी समय समुद्री जीव वैज्ञानिकों के लिए स्वर्ग माना जाता था, वह द्वीप अब किसी भी प्रकार के शैक्षिक एवं शोध गतिविधियों के लायक नहीं रहा। क्योंकि अत्यधिक पर्यटक आगमन के कारण वहाँ के कोरल एवं अन्य समुद्री जीवन समाप्त हो गया। इसके अतिरिक्त इन जीवों के प्राकृतिक भोजन से अलग पर्यटकों द्वारा मनोरंजन हेतु दिये जाने वाले जंक फूड के कारण इन जीवों के जीवन तथा आदतों पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ा है।

सुझाव :– पर्यटन एवं पारिस्थितिकी के मध्य सामांजस्य (सन्तुलन) स्थापित करने हेतु सुझाव निम्नलिखित हैं :–

- सर्वप्रथम पर्यटकों को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाया जाये।
- पर्यटन क्षेत्र की वहन क्षमता के अनुसार पर्यटन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- वन्य एवं समुद्री जीवों के प्राकृतिक भोजन एवं शैलियों से किसी प्रकार की छेड़छाड़ (हस्तक्षेप) न किया जाए।
- पर्यटन के अविवेकपूर्ण विकास पर प्रतिबन्ध एवं अतिसंवेदनशील क्षेत्रों जैसे – संरक्षित अभयारण्यों, पहाड़ी ढालों केदारनाथ जैसे पहाड़ी ढालों इत्यादि में पर्यटन एवं निर्माण के नियमों को सही ढंग से लागू किया जाना चाहिए।
- पर्यटन सम्बन्धी गतिविधियों के विपरीत प्रभाव की हरसंभव निगरानी सुनिश्चित की जानी चाहिए इसके लिए प्रशासन कैमरे के माध्यम से यह कार्य सुनिश्चित कर सके है।
- इसके अतिरिक्त मैं यहाँ एक महत्वपूर्ण सुझाव और देना चाहती हूँ जो पर्यावरणीय पर्यटन के स्वस्थ विकास से सम्बन्धित है इसके अन्तर्गत सरकार को ''पर्यटक बागीचा'' के नाम से एक थीम को विकसित किया जाना चाहिए जिसके अन्तर्गत पर्यटन स्थल पर आने वाले पर्यटकों को कम से कम एक पेड़ अथवा पौधा लगाने हेतु प्रोत्साहित किया जाये साथ ही उनके संरक्षण हेतु कुछ धनराशि इच्छानुसार दान करने की बात रखी जाए इसके अतिरिक्त पर्यटकों के द्वारा इस प्रकार से पौधोरोपण कराकर उस पर उनका नाम एवं स्थान अंकित किया जाए ऐसा करने से पर्यटक अधिक से अधिक वृक्षारोपण के लिए प्रोत्साहित होंगे। इसके अतिरिक्त पर्यटन स्थलों पर प्रकृति एवं मानव जीवन से सम्बन्धी सुन्दर एवं मूल्यपरक स्लोगन भी लिखे जाने चाहिए।

निष्कर्ष :– वर्तमान परिदृष्य को देखते हुए प्रकृति एवं पर्यटन के मध्य उचित सामांजस्य बनाने की आवश्यकता है जिसकी व्याख्या सतत् विकास द्वारा की जाती है। सतत् विकास की अवधारणा स्पष्ट करती है कि किस प्रकार से मनुष्य पर्यावरण एवं प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करके अपनी आवश्यकता को इस प्रकार से पूरा करें कि उसकी वर्तमान आवश्यकता की तो पूर्ति हो ही जाए साथ ही आने वाली भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी प्रकृति के निःशुल्क उपहार शेष बचे रहे। पर्यटन के आर्थिक महत्व से ज्यादा महत्वपूर्ण विभिन्न राष्ट्र एवं उनकी संस्कृति के प्रति सद्भावना का विकसित करना है। वर्तमान समय में पर्यटन बहुत बड़े व्यापार के रूप में उभर कर सामने आया है जिसका सरकार एवं निजी क्षेत्र को मिलाकर स्वस्थ एवं सुन्दर पर्यटन के रूप में विकास करना चाहिए।

सन्दर्भ सूची :–

1. गोयल, राजेश, (2011), ''पर्यटन के सिद्धान्त'', वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, ISBN : 978-81-89949-32-7, पेज नं. 151–161
2. शर्मा, कमल, (1996), ''पर्यटन विकास में समसामयिक विचारणीय प्रश्न एवं उनसे सम्बन्धित समस्याएँ'', आदित्य पब्लिशर, नई दिल्ली, ISBN : 81-87725-09-09, पेज नं. 1–3
3. भूटिया, शार्प, (2005), ''ग्रोथ एण्ड डेवलेपमेंट आफ टूरिज्म सेक्टर .....'', अमेरिकन इण्टरनेशनल जनरल आफ रिसर्च इन ह्युमनिटीज आर्ट एण्ड सोशल साइन्सेस, ISBN No. : 2328-3734
4. गौतम, शिवानन्द, (1999), ''पर्यटन स्थल पर बढ़ता निर्माण कार्य : प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए घातक .....'', आदित्य पब्लिशर, नई दिल्ली, ISBN : 81-87725-09-09, पेज नं. 33–36
5. डॉ. एल.के. इदनानी–पर्यावरण संरक्षण आज की जरूरत, कुरूक्षेत्र जनवरी 2008, पृ.क्र.11
6. अश्विनी कुमार लाल–धरती के बढ़ते तापमान का मुकाबला, योजना, जून 2008, पृ.क्र. 24
7. शंभूनाथ यादव–जलवायु परिवर्तन से निपटने को हम है तैयार, कुरूक्षेत्र, मार्च 2010, पृ.क्र. 3
8. प्रांजल धर – जलवायु परिवर्तन – कारण और प्रभाव, योजना, अप्रैल 2010, पृ.क्र. 23
9. संतोष कुमार–पर्यावरण, विकास एवं आपदा–पंचतत्व संतुलन योजना, मई 2012, पृ. क्र.9
10. चंद्रभान यादव – पर्यावरण संरक्षण का हो सामूहिक प्रयास, कुरूक्षेत्र, जून 2012, पृ.क्र. 3
11. अभिनीत कुमार–आर्थिक विकास में पर्यावरण का योगदान, योजना जून 2013, पृ.क्र. 33
12. डॉ. केशव टेकाम एवं तुलसीराम दहायत – पर्यावरण सहज विकास परियोजनाएं, कुरूक्षेत्र, फरवरी 2014, पृ.क्र. 4

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

औपनिवेशिक भारत में प्रेस की भूमिका

डॉ. श्रवण कुमार ठाकुर
एम. ए. पी–एच. डी. इतिहास, विभाग, ल. ना. मि. वि. दरभंगा

सार–संक्षेप :– साहित्य समाज के जीवन का दर्पण है और उसकी इच्छाओं आकांक्षा और सन्देहों को लिपिबद्ध करता है। इसलिए यह समाज में होनेवाले परिवर्तनों का एक अमूल्य रिकॉर्ड है। इस प्रकार से 19 वीं सदी में हुए भारत के सामाजिक और बौद्धिक परिवर्तनों का इतिहास हम इस युग में भारत की विभिन्न भाषाओ में प्रकाशित साहित्यिक कृतियों में खूबी के साथ पढ़ सकते हैं। उससे हमें समाज में चालू क्रांति के सम्बन्ध में पक्की गवाही प्राप्त होती है।

कूट–शब्द :– औपनिवेशिक भारत, समाचार– पत्र, प्रेस, सरकार, स्वंतत्रता।

प्रस्तावना :– भारत भाषाओँ में बंगला भाषा सबसे प्रथम थी जिसमे पाश्चत्य प्रभाव के परिणाम दृष्टिगोचर हुए। धीरे–धीरे दूसरी भाषाएं भी उन्हीं प्रभावों के अधीन आ गई और उनमे भी उसी प्रकार के विकास हुए। यधपि यह सत्य है कि सभी वर्ग भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना से प्रभावित थे, फिर भी समाज के विभिन्न हिस्सों में जो परिवर्तन हो रहे थे, वे एक से नहीं थे। जहाँ तक कि जनता का सम्बन्ध था, मध्ययुगीन कृषि और औद्योगिक पध्दतियों के टूटने से काफी परिवर्तन हो रहा था। "फिर भी उनसे सामाजिक रीतिनीति और धार्मिक रुखों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। चूँकि जनता सम्पूर्ण रूप से निरक्षर थी, इसलिए वह उस युग कि बौध्दिक धाराओं से लगभग अछूती रही। लोगों के पेशों था उत्पादन की पुराणी विधियों में बहुत कम परिवर्तन हुआ। अर्थ व्यवस्था जहाँ की तहां रुकी रही और जनता के तौर तरीकों में और जन –साहित्य में परम्परा से कोई विशेष टूटन दृष्टिगोचर नहीं हुई।"[1]

इसके विपरीत मध्यम वर्ग एक नए आर्थिक तथा बौद्धिक वातावरण में जोरों के साथ उठ रहा था। इसके तरुण सदस्य अधिकाधिक रूप से अंग्रेजी शिक्षा अपना रहे थे और उनके ग्रहणशील मनों में नए विचार बहुत जोरों के साथ अंकुरित होने लगीं तथा विचारों और भावनाओं के तरीके बदलने लगे। नया जीवन तथा नई शिक्षा, इन दोनों के प्रभाव से मध्यमवर्गीय समाज में आधुनिकता का बोलबाला हुआ। साहित्य में इसकी प्रतिध्वनि हुई।

"बंगला भाषा और साहित्य के विकास में यह दोहरापन बहुत स्पष्ट दिखाई पड़ता है। पाश्चात्य विचारों के प्रभाव पड़ने के पहले शिक्षित तथा सम्पन्न लोगों के बंगला साहित्य और साधारण लोगों के साहित्य में एक ही प्रकार कि विशेषताए थी और उनमे एक ही प्रकार के विषयों का वर्णन था। उनके रूप में भिन्नता बहुत अधिक नहीं थी ।"[2]

अभिजात साहित्य का सृजन ऐसे लेखकों के द्वारा होता था जो बड़े राजाओं और जमींदारों के दरवारों में रहते थे, जबकि जनता का साहित्य ग्रामीण चारणों का सृजन होता था। 18 वीं शताब्दी में दो दरबार ऐसे थे जो साहित्य और संस्कृति के बहुत मशहूर केंद्र थे। एक (कृष्णनगर) नदिया, जहाँ राजा कृष्णचन्द्र राय का शासन था और दूसरा ढाका का विक्रमपुर, जहाँ राजा राय बल्लभ का राज्य था। कवि भारत चन्द्र प्रथम दरबार में थे तथा जयनारायण तथा उनकी भांजी अन्नदामयी दूसरे राजदरबार में थी। भारतचंद्र को 'अन्दामंगल' नामक काव्य से ख्याति मिली जिसमे विद्या और सुन्दर कि कहानी है और जय नारायण को 'हरिलीला' नामक कृति से ख्याति मिली। ये दोनों परम्परागत महान शैली के अंतिम महाकवि थे।

"भारतचंद्र की मृत्यु के बाद कोई प्रतिभाशाली कवि नहीं हुआ। दरबारी कवियों या जन कवियों में हम भारतचंद्र, जय नारायण और राम प्रसाद की तरह कोई प्रमुख रचियता नहीं पाते हैं। ऐसा लगता है कि उनकी दृष्टि धुंधली और उनकी कला शिथिल पड़ रही थी। मध्ययुगीन परम्परागत कविता कि धारा गन्दी और पतली हो चुकी थी। बंगाल पश्चिम से आये विदेशी शासन में जा चुका था और पराजय के धक्के से ऐसा लगता है कि काव्य–प्रतिभा खण्डित हो गई थी।"[3]

सन 1903 ई० में बम्बई कि प्रेस रिपोर्ट में भारतीय पत्रों को निम्न श्रेणियों में बांटा है :–

- मराठी पत्र जो मुख्यतः चितपावन ब्राह्मणों के हाथों में है और ब्रिटिश शासन के प्रति शत्रुता से प्रेरित है।
- वे पत्र जो कांग्रेस का समर्थन करते हैं और 'तरुण भारत' के राजनैतिक अधिकारों की आकांक्षा समर्थन करते हैं और प्रश्नों पर संयम और बिना पक्षपात के विचार करते हैं।
- ऐसे पत्र जो ब्रिटिश नीति का बराबर समर्थन करते रहते हैं और सम्पूर्ण रूप से राजभक्त है।
- ऐसे पत्र जो नरम हैं और काफी राजभक्त है और प्रश्नों पर संयम और बिना पक्षपात के विचार

करते हैं।

- ऐसे प्रकाशन जो ऊपर बताई हुई श्रेणी में नहीं आते और साधारणतः निर्दोष है।

"काव्य नाटक और गद्य की आत्मा में परिवर्तन आया जो महाविद्रोह की आधी शताब्दी बाद परिपक्व हुआ। इस युग के ऐन पहले तक बंगला कविता अभी अपने बचपन से नहीं निकली थीं। पर 'संवाद प्रभाकर' के सम्पादक इश्वरचन्द्र गुप्त (1812–1859) की कविताओं के प्रकाशन के बाद यह परिवर्तन बहुत स्पष्ट हो गया।"[4] उनके एक साथी रंगलाल बनर्जी (1826–87) ने ऐसे काव्यों की रचना की जिनसे प्रेम, वीरता, तथा देशभक्ति कि भावना उत्पन्न होती है। उन्होंने राजपूत इतिहास से ली गई एक घटना पर आधारित 'पदमिनी उपाख्यान' में राजपूत रमणियों का बहुत गौरवमय दृष्टान्त प्रस्तुत किया। पदमिनी की ही तरह उनके दूसरे काव्य 'कर्मदेवी' और 'सुरसुन्दरी' में अंग्रेजी के काव्य कौशल और शैली अपनाई गई थी और ये काव्य देशभक्ति की भावना को बढ़ावा देते थे।

नवीनचन्द्र सेन (1848–1909) ने भी हेमचन्द्र के साथ–साथ हिन्दू समाज के पुनरुत्थान की बात सोची। उन्होंने तीन काव्य लिखे 'रैवतक' 'कुरुक्षेत्र' और 'प्रभास' उनमे कृष्ण के जीवन का वर्णन किया। इसमें राष्ट्रीय पतन के कारणों पर विचार किया गया और उसकी दवा सुझाई गई।

"एक ही धर्म हो, एक ही जाति हो. एक ही राज्य और एक ही कानून हो। सब का मूल मन्त्र हो सार्वजनिक हित।"

"बंगाल तथा भारत के दूसरे भागों में इन पुनरुज्जीवनवादी आन्दोलनों का एक असर यह हुआ कि हिन्दू समाज और भी अपने में सिमट गया और इतना आत्मपरक हो गया कि लोग भूल गए कि यहाँ हिन्दुओं के अलावा भी दूसरे लोग हैं। इस प्रकार से पूर्णरूप से अपने ही में सीमित रहने तथा अपने कल्याण के चिन्तन में डूबे रहने की प्रवृति ने देश में व्यापक राष्ट्रीय भावना के विकास पर बुरा असर डाला।"[5]

"जब 19 वीं शताब्दी के प्रथम चरण में अंग्रेजों के हाथों में पेशवा का राज्य चला गया तो बंगाल पर जिन राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक तत्वों का प्रभाव पड़ा था वे बम्बई प्रेसिडेन्सी में भी क्रियाशील हो गए। मराठी भाषा और साहित्य बंगला के ढंग पर ही परिवर्तित होने लगा।"[6]

1833 में सरकार की शिक्षा नीति में परिवर्तन हुआ और भारतीय भाषाओँ के प्रोत्साहन के बजाय अब अंगेजी पृष्ठपोषण होने लगा। सर एरस्किन पेरी की अध्यक्षता में बम्बई की शिक्षा बोर्ड अंग्रेजी का बहुत जबरदस्त हामी हो गया और उसने भारतीय भाषाओँ पर खर्च से हाथ खींच लिया। यह भारतीय लेखकों के लिए एक चुनौती थी और भारतीय लेखकों ने इसे स्वीकारने में देर नहीं की। बालशास्त्री जाम्भेकर, दादोबा पांडुरंग और परशुराम तात्या गोडबोले ने यह चुनौती मंजूर की। जाम्भेकर ने मराठी में कई पाठ्य पुस्तकें लिखीं।

निष्कर्ष :– उन्नीसवीं सदी के उतरार्ध में राजनीतिक संगठनों के निर्माण के बावजूद. राष्ट्रवाद का प्रमुख संवाहक प्रेस ही बना रहा। यहाँ तक कि तब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भी अपने कामकाज के लिए प्रेस पर निर्भर थी। राजनीतिक कार्यक्रम चलाने के लिए उस समय तक कांग्रेस का कोई संगठनात्मक आधार नहीं तैयार हो पाया था। इसके प्रस्तावों और कारवाईयों को भी जनता के बीच अखबार ही पहुंचाते थे। राष्ट्रीय आन्दोलन की बुनियाद रखने में अखबारों और पत्रकारों की कितनी महत्वपूर्ण भूमिका थी। भारतीय प्रेस के प्रति ब्रिटिश सरकार के दृष्टिकोण तथा समय समय पर लगाये गए प्रतिबंधो से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय प्रेस का इतिहास संघर्षों से पूर्ण है। सभी गवर्नर जनरलों ने प्रेस के प्रति अलग अलग दृष्टिकोण अपनाये जैसे लार्ड वेलजली, लार्ड मिंटो. लार्ड एडम, लार्ड कैनिंग तथा लार्ड लिटन भारतीय प्रेस की स्वंतत्रता का पक्ष में नहीं थे। वे उस पर प्रतिबन्ध लगाने को सफल भी हुए। भारतीय राष्ट्रीयता के विकास में प्रेस का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा।

सन्दर्भ सूची :–

1. इलियट एंड डासन, भारत का इतिहास
2. एल्फिन्स्टन, हिस्ट्री ऑफ इंडिया
3. कौशल, एन० प्रेस एण्ड डेमोक्रेसी इन इंडिया
4. श्रीनिवास, एम० एन० सोशल चेंज इन इंडिया
5. हिंदी पत्रकारिता के नए आयाम, डॉ बच्चन सिंह
6. जैन, एम, एस आधुनिक भारत का इतिहास, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली 1993

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिड्रोंम (पी.सी.ओ.एस.) के नियंत्रण में योग

बिन्दु सिंह पंवार
शोधकर्ता

परिचय :– ''पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिंड्रोम'' (पीसीओएस) या ''पॉलिस्टिक अंडाशय रोग'' (पीसीओडी) एक ऐसी स्थिति है जो एक महिला के हार्मोन के स्तर को प्रभावित करती है। पीसीओएस वाली महिलाएं पुरूष हार्मोन की तुलना में अधिक–सामान्य मात्रा में उत्पादन करती हैं। यह हार्मोन असंतुलन उन्हें मासिक धर्म को छोड़ने का कारण बनता है और इससे उन्हें गर्भवती होने में कठिनाई होती है। पीसीओएस भी चेहरे और शरीर पर बालों के विकास, और गंजापन का कारण बनता है। और यह मधुमेह और हृदय रोग जैसी दीर्घकालिक स्वास्थ्य समस्याओं का कारण बन सकता है।

पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिंड्रोम वाली महिलाओं में से लगभग आधी अधिक वजन वाली या मोटापे से ग्रस्त हैं और उनमें फैटी लीवर का खतरा बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त, पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिंड्रोम वाली कई महिलाओं में इंसुलिन का स्तर ऊंचा होता है, जो एक हार्मोन है जो रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है। 40 वर्ष की आयु तक, पॉलीसिस्टिक ओवरी सिंड्रोम से ग्रस्त लगभग 10 प्रतिशत अधिक वजन वाली महिलाओं में असामान्य रूप से उच्च रक्त शर्करा का स्तर (टाइप 2 मधुमेह) विकसित होता है, और 35 प्रतिशत तक प्रीडायबिटीज (उच्चतर सामान्य रक्त शर्करा के स्तर) का विकास होता है जो मधुमेह के लिए कटऑफ तक नहीं पहुंचता है।)। मोटापा और इंसुलिन के स्तर में वृद्धि (हाइपरन्सुलिनमिया) पॉलीसिस्टिक अंडाशय सिंड्रोम में एण्ड्रोजन के उत्पादन को बढ़ाता है।

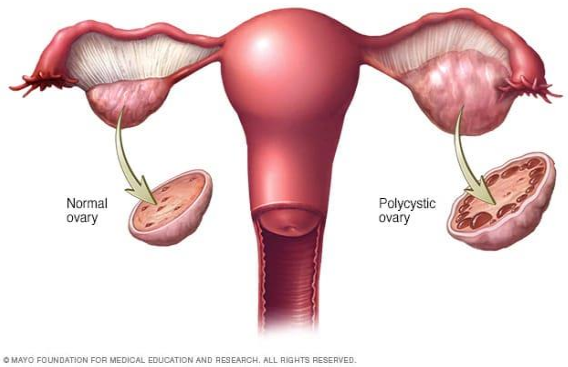

© MAYO FOUNDATION FOR MEDICAL EDUCATION AND RESEARCH. ALL RIGHTS RESERVED.

पॉलीसिस्टिक ओवरी सिंड्रोम (पीसीओएस)

महिला प्रजनन प्रणाली के हार्मोनल या अंतः स्त्रावी तंत्र से जुड़ा एक आम विकार है। भारत में कुछ अध्ययन किए गए हैं जो इंगित करते हैं कि 10 प्रतिशत भारतीय महिलांए इस विकार से पीड़ित हैं। सही समय पर निदान और विकार के बारे में जागरूगता इस बांझपन सिंड्रोम को रोकने में मदद कर सकती है। यह किशोरावस्था के दौरान होने वाली एक उभरती हुई स्वास्थ्य समस्या है। पीसीओडी रोग की रोकथाम और बेहतर प्रबंधन के लिए स्वस्थ जीवन शैली, आहार अनुशासन और नियमित व्यायाम के बारे में जागरूकता की आवश्यकता है। पीसीओएस और बांझपन पर काबू पाने के लिए चिकित्सा समग्र स्वास्थ्य की देखभाल करने में मदद करता है।

पीसीओडी के कारण :– जबकि पीसीओएस का कारण अज्ञात है, वहाँ परिवार के इतिहास, इंसुलिन प्रतिरोध और जीवन शैली या पर्यावरण के साथ संबंध प्रतीत होते हैं।

1. हार्मोन्स असंतुलन
2. पारिवारिक इतिहास
3. इंसुलिन प्रतिरोध और जीवन शैली
4. वनज
5. धूम्रपान
6. अत्यधिक शराब का सेवन
7. समयपूर्व यौवन

पीसीओडी के लक्षण :– पीसीओएस/पीसीओडी के लक्षणों में शामिल हो सकते हैं:–

1. पीरियड्स (समय पर मासिक धर्म का न आना)
2. अतिरिक्त बाल (hirsutism) (मुँह, कमर, पेट, हाथ व पैरो पर अधिक बालों का उगना)
3. बालों का झड़ना (खालित्य)
4. मुंहासे (चेहरे पर मुहासों का होना)
5. प्रजनन क्षमता में कमी
6. मनोवैज्ञानिक प्रभाव – (भावनात्मक उथल–पुथल)
7. मेटाबोलिक सिंड्रोम

PCOD/PCOS - यौगिक उपचार :– वर्तमान में बहुत सी महिलाएँ पीसीओडी से पीड़ित हैं, परन्तु यह समस्या उतनी बड़ी नहीं है, जितनी बड़ी लगती हैं। नेशनल इंस्टीट्यूट्स ऑफ हेल्थ रिसर्च के अनुसार

10–15 प्रतिशत महिलाएँ इस समस्या से जूझ रही हैं। योग इस समस्या के निदान हेतु सर्वोत्तम उपाय है। इस समस्या को योगाभ्यास द्वारा ठीक किया जा सकता हैं।

- योग – ''योगश्चित्त वृत्ति निरोधः'' – चित्त की वृत्तियों का निरोध होना ही योग है। चित्त वृत्तियाँ शांत होते ही मन/शरीर के समस्त तनाव दूर हो जाते हैं।
- योगासन – अष्टांग योग का तृतीय सोपान ''स्थिर सुप्तमासनम्''
- प्राणायाम – प्राण (जीवन शक्ति) का आयाम (विस्तार) ही प्राणायाम है। पूरक–कुम्भक–रेचक/गहरी श्वास–प्रश्वास।
- ध्यान – धारणा शक्ति की गहनता ही ध्यान है। किसी भी एक लक्ष्य पर गहन एकाग्रता ध्यान कहलाती है।

योग का विज्ञान शरीर पर सूक्ष्म व गहरे स्तर पर कार्य करता है। योग शरीर में अन्दर दबे हुए तनाव को बाहर निकाल देता है। पीसीओडी हेतु चयनित विशेष योगासन, श्रोणि के क्षेत्र को खोल देते हैं और इस क्षेत्र को आराम पहुंचाते हैं। प्राणायाम द्वारा मन को आसानी से शांत किया जा सकता है। आसन और प्राणायाम के साथ ध्यान शारीरिक और मानसिक तनाव से मुक्ति दिलाता है।

वे योगासन जो गर्भाशय, अण्डाशय, किडनी और शरीर के अन्य अंगों की मालिश कर उन्हें तन्दुरूस्त बनाते हैं, पीसीओडी हेतु बहुत उपयुक्त होते हैं, परन्तु यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि ये योगासन प्रशिक्षित योग प्रशिक्षक के निर्देशानुसार ही करना चाहिए। ऐसे योगासन जो कि पेट के निचले हिस्से पर अधिक दबाव डालते हैं, उनको नहीं करना चाहिए। ध्यान रखिए कि हर आसन के पश्चात् विश्राम (शवासन) अवश्य करें।

ये योगासन शरीर का वजन घटाने के लिए भी उत्तम हैं। इस रोग से पीड़ित महिलाएँ अधिकांशतः वनज बढ़ने की समस्या से भी जूझती है। यदि पीड़िता का 5–10 प्रतिशत वनज भी कम होता है तो यह मासिक धर्म के चक्र के नियमितीकरण में अत्यन्त सहायक हो सकती है।

पीसीओडी/पीसीओएस की समस्या को ठीक करने की एक ही चाबी है और वह है– ''विश्राम'' प्राणायाम एवं ध्यान तनाव को शरीर एवं मन से निकालने के श्रेष्ठ साधन हैं। छोटी उम्र में ही जीवन में योग को बपना अंग बनाने से स्वस्थ मन का विकास होता है और शरीर रोगों से मुक्त रहता है। वर्तमान समय में अच्छे परिणाम लाने के लिए योग एवम् चिकित्सा विज्ञान का सही तालमेल बिठाना आवश्यक है। दोनों को साथ–साथ चलना चाहिए। अच्छे परिणाम हेतु नियमित योगाभ्यास करना आवश्यक है। सही आहार, नियमित योगाभ्यास और जीवन शैली में सुधार करके समस्या से निजात पाई जा सकती है।

प्रस्तुत शोध में प्रश्नावली द्वारा आंकडो का संकलन किया गया है। शोधार्थी ने शोध में 60 महिलाओं का चयन किया है जो सामान्य पीसीओएस से पीड़ित है। सर्वप्रथम हमारा प्रश्न आपकी आयु इस शोध में 18 से 35 वर्ष की आयु वर्ग को लिया गया है। जिसमें से परिणाम स्वरूप देखा गया की 18–25 वर्ष की आयु वाली महिलओं में 38.3 प्रतिशत पीसीओएस की परेशानी है। 25–30 वर्ग में 38.3 प्रतिशत तथा 30–35 वर्ष की आयु वर्ग में 16.7 का परिणाम आया हैं।

पीसीओडी/पीसीओएस सामाजिक संबंधों के सम्बंध में वर्तमान अध्ययन उज्जैन एवं इन्दौर शहर के चार समूह 1. नियंत्रित समूह 2. प्रायोगिक समूह 3. प्राणायाम समूह 4. प्राणायाम एवं प्रायोगिक समूह को लेकर किया गया है। यह वास्तव में एक नई बिमारी नहीं है लेकिन इसे और अधिक महत्व दिया गया है अधिक रोगीरों को समय की कमी के साथ पीसीओएस के नियंत्रण में योग द्वारा निदान किया गया है। हालांकि सटिक पीसीओएस के कारण अभी तक पता नहीं चला है लेकिन मेडिकल शोध तक पहुचं गया है। अंतिम निष्कर्ष है कि पीसीओएस सबसे आम अंतःस्त्रावी ग्रंथी विकारों में से एक है। यह बिमारी महिलाओं की प्रजनन आयु में 5–10 प्रतिशत महिलाओं को प्रभावित करती है। इससे अलग तथ्य यह है कि पीसीओएस रोग तेजी से बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों की राय है कि खाद्य आदते जीवन शैली, तेजी से शहरीकरण और आधुनिकीकरण जैसे कारकों से बदलाव समाज की बदलती मुल प्रणाली से प्रभाव पड़ता है। महिलाओं को योग को दिनचर्या में शामिल न करने से यह बिमारी सामान्यों की तुलना मे ज्यादा बढ़ रही है।

वर्तमान अध्ययन मे जैविक पहलूओं को मानवशास्त्रीय मापदण्डों द्वारा मापा गया है जैसे शरीर का वजन, उचाई, पेट की त्वचा की खाल, कमर, कुल्हें का अनुपात और जैव रसायनिक माप जो कि सामाजिक जन सांख्यिकी पहलू में शामिल है। हमारे शोध में इन्हीं मापदण्डों को ध्यान में रखते हुए शोधार्थी द्वारा शोध में चार समूह बनाये गये है जिसमें कि 60 महिलाओं को लिया गया है जिनकी आयु 18 से 40 वर्ष तक कि है जो कि अलग अलग कार्यकारणी वर्गों से संबंधित है। जैसे कुछ इसमें विद्यार्थी है, कुछ

ग्रहणी है, कुछ कामकाजी महिलाऐं है। जिसमें की कामकाजी महिलाए 48.3 प्रतिशत है, ग्रहणी 28.3 प्रतिशत है एवं विद्यार्थी 23.3 प्रतिशत है।

इस शोध में यह देखा गया है कि कैसे कामकाजी महिलाए इस रोग से अधिक ग्रसित है। काम में अधिक व्यवस्तता के चलते आधुनिक जीवन शैली चलते स्वास्थ्य को नजर अंदाज कर देती है। वहीं ग्रहणी घर के आधुनिक तरीकों से जैसे धुलाई जैसे श्रम और समय की बचत करने वाले उपकरणों का उपयोग करते है मशीन, मिक्सर ग्राइंडर, ब्लेंडर और माइक्रोवेव आवेन अनेक घरेलु कार्यो में मशीनरी का उपयोग करती है। पुराने समय में इन उपकरणों के बीना घरेलू कार्य किये जाते थे जिससे कि महिलाओं के स्वास्थ्य में संतुलन बना रहता था। आधुनिकता के चलते ग्रहणीयों में भी बांझपन एवं प्रजनन संबंधी बीमारीयां बढ़ रहीं है इसकी रोकथाम के लिए शोधार्थी द्वारा इस शोध में योगासन, प्राणायाम बंध एवं मुद्राओं द्वारा योगिक उपचार कर पीसीओडी से ग्रसित महिलाओं पर सकारात्मक प्रभाव डालने की कोशिश की गई है।

विद्यार्थीयों मे बाजार में खानपीन का चलन बढ़ गया है। एक नई उभरती हुई प्रवृत्ति नए अंतर्राष्ट्रिय का समावेश है। आधुनिकता के चलते फास्ट फूड खाने का चलन भी बढ़ गया है। रेस्टोरेंट के ब्राण्ड जो लोगों के स्वाद की भावनाओं को बदल रहे है, पारम्परिक या घर के बने व्यंजन कम स्वादिस्ट होते है लेकिन उचित केलोरी मान के होते है। कस्बों और शहरों फास्ट फूड कामर्स के महशूर विकास ने इस बदलाव में योगदान दिया है। भोजन की आदतों ने जिससे परिणाम स्वरूप मोटापे की उच्च वृद्धि दर और अधिक संख्या में हैं। वनज प्रबंधन के लिए बहुविषयक दृष्टिकोण जो कि जीवन शैली को बदल देता है। उचित आहार, व्यायाम, व्यवहार संशोधन, योग और तनाव में कमी। इसके लिए शोध में शोधार्थी द्वारा योगिक क्रियाओं और जीवनशैली में योगासन और प्राणायाम को शामिल कर पीसीओडी से ग्रसित महिलाऐं योग द्वारा नियंत्रण कर सकती है।

शोधार्थी द्वारा शोध में 60 महिलाओं को लिया गया है जिनकों चार समूहों में बांटा गया है इसमें प्रत्येग समूह में 15 महिलाओं को लिया गया है।

प्रथम समूह : – नियंत्रित समूह
द्वितीय समूह : – प्रायोगिक समूह
तृतीय समूह : – प्रायोगिक प्राणायाम समूह
चतुर्थ समूह : – आसन प्राणायाम समूह

इन समूहों में प्रथम समूह नियंत्रित समूह को सामान्य दैनिक जीवन शैली का पालन करने को कहा गया था। जिसमें कि पोष्टिक आहार लेने पर जोर दिया गया था।

दूसरे समूह में प्रायोगिक समूह के अंतर्गत योगासनों जैसे कि सूर्यनमस्कार, भुजंगासन, मंडूकासन, सर्वांगासन, विपरित कर्णी आसन, हलासन, धनुर्रासन, तितली आसन, भद्रपूर्णासन, मार्जरीआसन, पश्चिमोत्तासन, बालासन, पवनमूक्तासन, शशांकासन, त्रिकोणासन आदि सामान्य योगासनों द्वारा प्रायोगिक समूह को करवाया गया।

तीसरे समूह में प्राणायाम पर जोर दिया गया था। जिसमें कि अनुलोम–विलोम, भस्त्रिका, भ्रामरी, प्रणव, उच्चारण, एवं स्वांस–प्रस्वास की सामान्य अभ्यास कराया गया।

चतुर्थ समूह में योगासन एवं प्राणायाम बंध एवं मुद्राए जैसे योनीमुद्रा, अश्विनीमुद्रा, हस्तमुद्रा, विपरितकर्णीमुद्रा एवं योगासनों में सूर्यनमस्कार, भुजंगासन, मंडूकासन, सर्वांगासन, विपरित कर्णी आसन, हलासन, धनुर्रासन, तितली आसन, भद्रपूर्णासन, मार्जरीआसन, पश्चिमोत्तासन, बालासन, पवनमूक्तासन, शशांकासन, त्रिकोणासन एवं बंध में मुलबंध, जालन्धरबंध, उड्यानबंध एवं महाबंध द्वारा योगिक उपचार एवं क्रियाएं कराई गई।

इन चारों समूहों की महिलाओं का आज की स्थिति का पूर्व परिक्षण करवाया गया, उसके पश्चात समूहों को बांटा गया। हरेक समूह को तीन –तीन माह के प्रशिक्षण एवं देखरेख के बाद पुनः पश्चात परिक्षण बारह सप्ताह का प्रशिक्षण कार्यक्रम दिया गया। प्रशिक्षण के पश्चात कि स्थिती को देखते हुए आगे की योगिक क्रियाएं लगातार 6 माह तक इन चारों समूहों को दिया गया। तत्पश्चात यह निकष्कर्ष निकला कि पहले समूह जो कि नियंत्रित समूह था उस पर सामान्य से कम प्रभाव देखने को मिला एवं द्वितीय, तृतीय, एवं चतुर्थ समूह वाली महिलाओं को सामान्य से अधिक एवं प्रभावकारी परिणाम प्राप्त हुए। इससे निष्कर्ष निकलता है कि इस शोध में जो योगासन, प्राणायाम एवं बंध द्वारा पीसीओडी रोग पर सकारात्मक एवं इस रोग से नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है एवं इस रोग की रोकथाम में योगिक क्रियाए लाभप्रद है।

परिणाम

शोधार्थी द्वारा जो परिकल्पना की गई थी जो कि योगासन, प्राणायाम, मुद्रा एवं बंध का पीसीओडी के नियंत्रण पर सकारात्मक प्रभाव होता है उस परिकल्पना को ध्यान में रखते हुए चौथे समुह में इसको अपनाते हुए और चारों समुहों की महिलाओं से प्रश्नावली (फीडबेक) लेते हुए उन पर किये गये शोध का

परिणाम जानने के लिए उनसे कुछ प्रश्नावली करवाई गई जिनका उत्तर परिकल्पना के अनुरूप पाया गया है। चार समूहों में से चौथे समूह की महिलाओं के उत्तर में 90 प्रतिशत महिलाओं पर योगिक क्रियाओं का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। और शेष 10 प्रतिशत महिलाओं में भी कुछ हद तक सकारात्मक प्रभाव मिले है। इस शोध से यह परिणाम निकला है कि हमारी परिकल्पना के अनुरूप शोध प्रविधि का उपयोग करते हुए पीसीओडी एवं अन्य महिला रोगों में योग द्वारा उपचार संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्वामी विवेकानंद, अनुसंधान संस्था, बेंगलोर
2. पतंजलि योग रिसर्च सेंटर, हरिद्वार
3. बिहार स्कूल ऑफ योग, मुगर, बिहार
4. मोरारजी देसाई राष्ट्रीय योग संस्थान, नई दिल्ली
5. सम्पूर्ण योग विद्या – राजीव जैन "त्रिलोक"
6. Book name: PCOS DIET, Publisher: Harper Collins, Published In: 200
7. Book Name: Awomen's guide to dealing with polycystic ovary syndrome, Publisher: Coltte Harris, Adam Carey, Published In: 2002
8. https://nirogam.com/yoga-for-pcos/
9. https://www.healthline.com/health/polycystic-ovary-disease#when-to-see-a-doctor
10. Book Name: Pcos the mood cure: your guide to ending the emotional rollercoaster Publisher: Psy.D. Gretchenkubacky, Published In: 2018
11. Book Name: A patient's guide to pcos: understanding and reversing polycystic ovary syndrome, Publisher: Georgeryan, Walter D. Futterweit, Published In: 2006

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

मनुस्मृति तथा याज्ञवलक्य स्मृति में वर्णित स्त्री सम्पत्ति का विवेचन

सोनी कुमारी
नेट, संस्कृत विभाग, दरभंगा हाउस, पटना विश्वविद्यालय

भारतीय संस्कृति का मूलाधार धर्म है। यह धर्म अलौकिक श्रेय की प्राप्ति का साधन है। साथ ही यह विशाल वृक्ष की भौति भारतीय धरातल पर अनादिकाल से लौकिक एवं पारलौकिक सुख के लिए पत्र, पुष्प, एवं फल के रूप में अर्थ, काम, मोक्ष प्रदान कर रहा है। इस धर्मरूपी वृक्ष का ज्ञान चौदह विद्याओं से प्राप्त होता है। इस विषय में याज्ञवलक्य स्मृति में कहा गया है–

''पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रंगमिक्षिताः।
वेदाःस्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुदेश।।''

इन्हीं विद्याओं को धर्म में प्रमाण माना गया है। मूलरूप से हमारा धर्म वेद एवं धर्मशास्त्र द्वारा प्रतिपादित है तथा अन्य विद्याएँ इसमें सहायिका है। वैदिक एवं धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ लोकातीत आर्षचक्षुर्मण्डि द्रष्टाओं की वाणी है जो सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक नैतिकता से परिपूर्ण है।

वेदों में सम्पूर्ण मानवजाति के लिए पूर्ण विकास के सिद्धान्त प्रतिपादित है। विकास के इन सिद्धान्त को ही धर्म नाम से अभिहित किया गया है। वेद ज्ञान के असीम भण्डार हैं। इसके उपदेश एवं आदेश मनुष्य को ज्ञान एवं धर्म की शिक्षा देते हैं। वेदों में बुद्धि की पवित्रता देखी जाती है। प्रज्ञा का आत्मस्य किया जा सकता है। गौतम धर्मसूत्र के अनुसार वेद धर्म का मूल है –

'वेदो धर्ममूलम्। तद्विदां च स्मृतिशीले।।

आमस्तम्ब धर्मसूत्र का कथन है – जो धर्मज्ञ है, वेदों को जानते हैं उसका मत ही धर्म प्रमाण है –

''धर्मज्ञसमयः प्रमाणं वेदाश्च''

प्राचीन समय से ही धर्मशास्त्र के अन्तर्गत जीवन की विविध पहलुओं की चर्चा विशद रूप से हुई है। सामाजिक वर्ग, आश्रम, उनके विशेषाधिकार, कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्व, सोलह संस्कार, ब्राह्मचारी के कर्तव्य, विवाह एवं तत् संबंधी अन्य बातों, गृहस्थ कर्तव्य, शौच, पञ्चमहायज्ञ, दान, मध्याभक्ष्य, शुदि, अंतयेष्टि, श्राद्ध, स्त्रीधर्म, स्त्रीपुसधर्म, क्षत्रियों एवं राजाओं के धर्म, व्यवहार (कानून, विधि, अपराध, दण्ड, दायभाग, गोद लेना, जुआ आदि) चार प्रमुख वर्ग, वर्णसंकर तथा उनके व्यवसाय, आपद्धर्म, प्रायश्चित, कर्मविपाक, शान्ति, वानप्रस्थ, कर्त्वय, सन्यासी आदि का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। इन सभी विषयों का विवेचन धर्मसूत्रों में भी प्राप्त होता है परन्तु ये क्रमवार रूप में नहीं हैं। धर्मशास्त्र संबंधी कुछ अन्य ग्रन्थों मं व्रतों, उत्सर्गों एवं प्रतिष्ठा (जनकल्याण के लिए मन्दिर, धर्मशाला आदि का निर्माण) तीर्थों काल आदि का विस्तार के साथ वर्णन प्राप्त होता है। दायभाग नामक व्यवहार पद में दो मुख्य विषयों तथा विभाजन तथा दाय का निरूपण किया गया है। लगभग एक सहस्त्र वर्ष से दायभाग का निरूपण करने वाले दो सम्प्रदाय भारतवर्ष में प्रचलित रहे हैं जिन्हें मिताक्षरा एवं दायभाग के नाम से जाना जाता है। दायभाग का प्रचलन बंगाल तथा असम में रहा है तो भारत के अन्य भागों में मिताक्षरा का प्राबल्य रहा है।

दाय शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य मे भी प्राप्त होता है। ऋग्वेद में कहा गया है , कि ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम्। सायण के अनुसार ऋग्वेद में वर्णित दाय को अर्थ अधिक सम्पत्ति बताया गया है। तैतरीय संहिता में दाय का तात्पर्य पैतृक सम्पत्ति के रूप में लिया गया है –

'मनुः पुत्रेभ्योः दायं व्यभजत।'

अथर्ववेद और तैतरीय संहिता में दायाद शब्द का प्रयोग किया गया है – 'सोमो हास्य दायादः'। दायाद शब्द का अर्थ है दायम् आदते अर्थात जो दाय (पैतृक सम्पत्ति) को लेता है। इस प्रकार पैतृक सम्पत्ति को दाय कहते है। और पैतृक सम्पत्ति को लेने वालों को दायद कहते है। मिताक्षराकार विज्ञानेश्वर ने दाय के संबंध में कहा है कि धन जो उसके स्वामी के संबंध से किसी अन्य की सम्पत्ति हो जाता है – तत्र दायशब्देन यद् धनं स्वामिसबन्धादेव निमित्ता दन्यस्य एवं भवति तद्च्यते। मिताक्षराकार ने दाय को दो भागों में विभाजित किया है – अप्रतिबन्ध एवं सप्रतिब्रन्ध। अप्रतिबन्ध दाय में पुत्र, पौत्र एवं प्रपौत्र अपने संबंध से ही माता, पितामह एवं प्रतितामह द्वारा आगत वंश परम्परा के धन को प्राप्त करते हैं। इसमें पिता या पितामह को उपस्थिति से पुत्रों एवं पौत्रों की कुल सम्पत्ति के अभिरूचि में कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाता क्योंकि वे उसी कुल में उत्पन्न हुए हैं। इसके विपरित जब कोई व्यक्ति अपने चाचा की संपत्ति पाता है या कोई पिता अपने पुत्र की सम्पत्ति संतानहीन

चाचा या संतानहीन पुत्र के मृत्यु हो जाने पर प्राप्त करता है तो यह सप्रतिबन्ध दाय कहा जाता है। क्योंकि इन परिस्थितियों में भतीजा या पिता क्रम से अपने चाचा या पुत्र की सम्पत्ति पर तब तक स्वामित्व नहीं पाता जब तक चाचा या पुत्र जीवित है, या जब तक चाचा या पुत्र का पुत्र जीवित रहता है –

पितृव्य – शत्रादीनां तु पुत्राभावे स्वाभ्यभावे च स्वं भवतीति सप्रतिबन्धों दायः।

दाय में स्व और स्वामिभाव की भावना नीहित रहती है। स्व से तात्पर्य है जो किसी का है अर्थात सम्पत्ति। तथा स्वःमि से तात्पर्य है – अधिकारी। अतः स्व और स्वामी शब्द परम्परा एक दूसरे से संबंधित है।

मिताक्षराकार ने विभाग के विषय में कहा है कि – जहाँ संयुक्त स्वामित्व हो, वहाँ सम्पूर्ण सम्पत्ति के भागों की निश्चित व्यवस्था ही विभाग है।

''विभागो नाम द्रव्यसमुदाय विषयाणामनेक सवाम्यानां तदेकशेषु व्यवस्थापनम्।''

दायभाग के विभाजन में मनु और याज्ञवलक्य के अनुसार ज्येष्ठ पुत्र को सम्पत्ति विभाजन में सबसे अधिक अंश मिलता है। गौतम, विज्ञानेश्वर और मनु ने विभाजन की तीन अवस्थाएँ बताई है–

1. जीवन काल में पिता की ईच्छा से।
2. जब पिता की सारी भौतिक इच्छाएं मृत हो गई है। वह संभोग से दूर रहता है और माता सन्तानोत्पत्ति के योग्य न रह गई हो उस समय पिता की इच्छा के विरूद्ध भी पुत्र यदि चाहे तो बँटवारा कर सकते हैं, या पिता की इच्छा से भी पुत्र यदि चाहे तो बँटवारा कर सकते है।
3. पिता की मृत्यु के उपरान्त – ''अतः उर्ध्व पितुः पुत्रा विभजेयुर्धनं समम्।

साधारणतया सम्पत्ति के दो प्रकार होते हैं –

1. **विभाज्य सम्पत्ति** :– विभाज्य सम्पत्ति के अन्तर्गत वे सम्पत्तियां आती हैं जिनका विभाजन सम्भव है। अर्थात ये वैसी सम्पत्तियाँ होती है जिनका विभाजन वंश परम्परा से या एक पीढ़ी दर पीढ़ी एक दूसरे के पास आती हैं। तात्पर्य है कि जो सम्पत्ति पिता से पुत्रों के पास आती है, उसे विभाज्य सम्पत्ति कहते हैं। मनु और याज्ञवलक्य के अनुसार इस प्रकार की सम्पत्ति के तीन भेद होते हैं –

1. भू (भूमिखण्ड या घर)
2. निबन्ध
3. द्रव्य (सोना, चाँदी तथा अन्य चल सम्पत्ति) कभी–कभी द्रव्य शब्द सभी प्रकार की सम्पत्तियों का द्योतक माना गया है, चाहे वे चल सम्पत्ति हो या अचल। इस विषय में याज्ञवल्क्य स्मृति कथन है, कि –

''भूर्या पिता महोपात्ता निबन्धो द्रव्यमेव वा। तत्र स्यात्सदृशं स्वाम्यं पितु पुत्रस्य चैव हि।''

बृहस्पति स्मृति के अनुसार –

''द्रव्ये पितामहोपात्ते स्यावरे जंगमेऽपि वा।''

विभाज्य सम्पत्ति को संयुक्त सम्पत्ति या पैतृक सम्पत्ति भी कहा जाता है। इस प्रकार की सम्पत्ति पैतृक सम्पत्ति या बिना पैतृक सम्पत्ति की सहायता से संयुक्त रूप में अर्जित की जाती है या अलग–अलग अर्जित होने पर संयुक्त कर भी जाती है। मनु के इस विषय में अपना मत प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि –

''यत किंचित पितरि प्रेते, धनं ज्योष्ठोऽधिगच्छति। भागो यवीयसां तत्र, यदि विद्यानुपालिनः।''

1. **अविभाज्य सम्पत्ति** :– यह वह सम्पत्ति है जिनका विभाजन सम्भव नहीं है। इस प्रकार की सम्पत्ति स्वार्जित होती है या पैतृक सम्पत्ति के विभाजन के पश्चात प्राप्त होती है। यह उस समय तक ही अविभाज्य होती है जब तक की सम्पत्ति को प्राप्त करने वाला पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र न हो। यदि ऐसा होता है तो वह पैतृक सम्पत्ति कहलायेगी। इस प्रकार की सम्पत्ति को पृथक सम्पत्ति भी कहते है। मिताक्षराकार के अनुशार संयुक्त सम्पत्ति का सदस्य हाते हुए भी और उसमें सम्पत्ति अभिरूचि रखते हुए भी व्यक्ति विविध उपायों द्वारा अर्जित धनों से पृथक सम्पत्ति के छः प्रकार होते हैं –

पितृद्रव्याविरोधेन यदन्त्स्वयमर्जितम्। मैत्रमौद्वाहिकं चैव दायादानां न तद् भवेत।। क्रमादभ्यागतं द्रव्यं तहतमण्युद्धरेत्त यः। दायादेभ्यो न तद् दद्याद् विद्यया लब्धमेव च।।

अर्थात–

1. वह सम्पत्ति जो पिता, पितामह, प्रपितामह से प्राप्त न हो अर्थात वह जो भाई या चाचा से प्राप्त हो।
2. वह सम्पत्ति जो पैतृक चल सम्पत्ति से स्नेहवश पिता द्वारा किसी भाग रूप में दान स्वरूप या प्रसाद के रूप में प्राप्त हो।
3. अपनी पृथक सम्पत्ति से पिता द्वारा पुत्रों को दिया गया दान या प्रसाद या उसके द्वारा मरते समय

जो कुछ दिया गया हो।

4. अन्य बन्धुओं या मित्रों द्वारा दिया गया दान। या जो धन विवाह के समय प्राप्त हो।
5. वह सम्पत्ति जो कुल से निकल चुकी हो और किसी सदस्य द्वारा अपने प्रयासों से किसी दूसरों से प्राप्त की जाए।
6. वह सम्पत्ति जो स्वार्जित हो तथा विद्या या ज्ञान से प्राप्त हो।

इसके अतिरिक्त उन्याधन को अविभाज्य सम्पत्ति माना गया है। कन्यादान को नारद, कात्यायन और बृहस्पति ने दो भागों में बाँटा गया है –

1. कन्यागत – जो अपनी जाति की कन्या से विवाह करते समय प्राप्त होता है।
2. वैवाहिक – वह धन जो पत्नी के साथ आता है। मनु और याज्ञवल्क्य इस धन को औद्वाहिक धन कहते है।

धर्मग्रनथों के अध्ययन तथा उपरोक्त विवेचनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि दायाद का उत्तराधिकारी पुत्र, पौत्र या प्रपौत्र को माना गया है। परन्तु क्या दाय का अधिकारी स्त्रियाँ धर्मशास्त्र के समय होती थी या न की इसे निम्न रूपों में समझा जा सकता है। इसके अन्तर्गत हम नारी के विविध रूपों यथा कन्या, दत्तक पुत्री, पत्नी, माता, बहन आदि का समावेश कर इस तथ्य को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। वर्तमान समय में भारतीय न्यायिक पद्धति के अनुसार हिन्दू स्त्री सम्पत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 तथा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 (धारा 14) के द्वारा तथा बाद के समय में हुए इनमें विभिन्न संशोधनों द्वारा स्त्रियों के सम्पत्ति में उत्तराधिकार का अधिकार प्राप्त हुआ।

धर्मशास्त्र के समय में पत्नी को विभाजन की माँग करने का अधिकार प्राप्त नहीं था। परन्तु पिता के रहते यदि पुत्र विभाजन की माँग करते हैं तब जिन पत्नीयों को पति या श्वसुर के द्वारा स्त्री धन प्राप्त नहीं हुआ है, उन पत्नियों को भी पुत्र के समान एक भाग प्राप्त होता था –

''यदि कुर्यात्समानंशान् पत्न्यः कार्याः समांशिकाः।
न दत्तं स्त्रीधनं यासां भर्त्रा वा श्वसुरेण पा।।''

इसके विपरीत मिताक्षराकार विज्ञानेश्वर का मत है कि यदि व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है एवं धर्मशास्त्र में प्रतिपादित बारह प्रकार के पुत्रों के न रहने पर उस व्यक्ति के धन का अधिकारिणी उसकी पत्नी होती है –

''तत्र प्रथम पत्नी धनभावक्।''

जिस स्त्री को पिता आदि ने स्त्रीधन नहीं दिया है और उसके रहते यदि पति दूसरा विवाह करता है तो दूसरे विवाह में किए हुए द्रव्य व्यय के बराबर धन उस स्त्री को देना चाहिए यदि स्त्रीधन दिया गया हो तो उस वैवाहिक व्यय का आधा द्रवय पहली पत्नी को देना चाहिए –

अविविभस्त्रियौ दद्यादाधिवेदनिकं समम्।
न दत्तं स्त्रीधनं यस्यै दत्तै त्वधं प्रकल्पयेत्।।

पिता के मृत्यु के पश्चात सम्पत्ति के विभाजन होने पर माता सम्पत्ति में पुत्र के बराबर भाग ग्रहण करने की अधिकारी है। इस विषय में कहा गया है –

''पितुरूर्ध्व विभजतां माताण्यशं समं हरेतफ।''

मनुस्मृति के अनुसार पुत्र और पुत्री दोनों ही आत्मारूप है। उस आत्मारूप पुत्री के रहते हुए कोई दूसरा धन को कैसे प्राप्त कर करता है ? अर्थात पुत्र के अभाव में पुत्री ही धन की अधिकारिणी होगी –

''यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा।
तस्याभात्मनि तिष्ठान्तयां कथमन्यो धनं हरेत्।।''

ध्यातव्य है कि मनु ने पुत्र के अभाव मे पुत्री को दाय का अधिकारिणी माना गया है। इसके विपरित मिताक्षराकार ने कात्यायन के मत को प्रस्तुत करते हुए कहा है कि पति के मृत्यु के बाद यदि पत्नी स्यभिचारिणी नहीं है तो वह पति के धन को ग्रहण करती है और उसके न रहने पर अविवाहिता पुत्री धन की अधिकारिणी होती है।

''पत्नी पत्युर्धनही या स्यादव्यभिचारिणी।
तदभावे तु दुहिता यद्यनूढ़ा भवेत्तदा।।''

उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता है कि धर्मशास्त्र के समय में स्त्रियों के विविधरूपों को आंशिक या पूर्ण रूप से दाय प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु उस समय मे कोई पत्नी व्यवस्था नहीं थी कि पुत्रों के समान ही स्त्रियों को सम्पत्ति में बराबर का अधिकार प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त उन्हें स्त्रीधन रखने का भी अधिकार प्राप्त था।

वर्तमान समय में स्त्रियों को सुरक्षा प्रदान करने तथा उनके हितों की रक्षा हेतु अनेक प्रकार के अधिनियम बनाए गये हैं –

हिन्दु स्त्री का सम्पत्ति अधिनियम 1937 के अनुसार विधवा के उत्तराधिकारों में विषमता को दूर करने के लिए सन् 1937 में हिन्दू स्त्री के सम्पत्ति में अधिकार अधिनियम पारित किया गया 1937 के इस अधिनियम ने विधवा विवाह, विधवा पुत्र वधु और विधवा पौत्र वधु को उत्तराधिकार के अधिकार प्रदान किए। 1937 में विधवा स्त्रियों को पति का धन प्राप्त था परन्तु इसमें भी अचल सम्पत्ति प्राप्त नहीं था।

1946 में स्त्रीधन पर स्त्रियों का पूर्णाधिकार प्राप्त हुआ तथापि इस कन्या के पुत्र का समानाधिकार प्राप्त नहीं था। परन्तु 2005 में हिन्दू सक्शेसन वहीं 1956 में संशोधन हुआ और स्त्रियों को हिन्दू अविभाजित परिवार सम्पत्ति में सम्पत्ति के हस्तांतरण का अधिकार मिला।

हिन्दू सक्शेसन एक्ट के सेक्शन 6 मे संशोधन कर कहा गया कि स्त्री उत्तराधिकारी को वो समस्त अधिकार प्रापत होंगे जो पुरूष उत्तराधिकारी को प्राप्त है। वर्तमान समय मे 2005 के अधिनियम के तहत चल अचल सभी प्रकार के सम्पत्तियों पर लड़कों के समान लड़कियों को भी 50 प्रतिशत सम्पत्ति मं अधिकार प्राप्त है।

संदर्भ सूची :–

1. पुराणन्याय याज्ञवल्क्य स्मृति 1/3
2. धर्मज्ञसमयः आपस्तम्ब धर्मसूत्र – 1/1/1/2
3. मनुः पुत्रेभ्योः तै.स. 3/31/2
4. ज्येष्ठस्य विशं उद्धार म. स्मृ – 9/112
5. विभागं चेत्पिता कुर्यादिच्छया या स्मृत – 2/114
6. भूर्या पितामहोमाता याज्ञवलक्य स्मृति – 2/121
7. तत्र प्रथम पत्नी धनभाक् याज्ञवलक्य स्मृति – 1/135
8. पितृमातृ पतिभ्रातृदत्तम याज्ञवलक्य स्मृति – 2/196
9. आधुनिक हिन्दू विधि की रूपरेखा – पृ0 सं0 374

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020

2020

औद्योगिक विकास का पर्यावरण पर प्रभाव

समरजीत कुमार सिन्हा
नवरंगा, अमनौर, जिला–सारण, बिहार

सारांश :– 21 शताब्दी के प्रारम्भ होते ही पर्यावरण व मानव का सन्तुलन गड़बड़ाने लगा है। भारत में तेजी से बढ़ती जनसंख्या ने मानव की आवश्यकताओं का अम्बार लगा दिया जिसकी पूर्ति हेतु उसने प्रौद्योगिकी का दामन थामा, फलतः नई–नई प्रौद्योगिकी का विकास हुआ और प्रौद्योगिकी के नवीनीकरण की यह रफ्तार इतनी तेज हुइ कि घरती से लेकर वायुमण्डल तक और जलमण्डल से लेकर अंतरिक्ष मण्डल तक पर्यावरण का हर कोना अतिक्रमित होता चला जा रहा है। वह सूक्ष्म सन्तुलन बहुत पीछे छूट गया, और उसकी जगह गहन स्वार्थ और उपभोक्तावादी प्रवृति छा गई है। इस प्रवृति ने पर्यावरण के अस्तित्व पर ही संकट खड़ा कर दिया है। पर्यावरण, बढ़ते प्रौद्योगीकरण के सन्मुख कमजोर और असहाय नजर आने लगा है। आधुनिक समय में जब भारत में पर्यावरण प्रदूषण का प्रभाव देख रहे हैं तो प्रौद्योगिकी व औद्योगिक विकास की कीमत पर पर्यावरण विनाश नजर आ रहा है। भारत में भी औद्योगिक विकास अपनी चरम सीमा तक पहुंच गया है। उसके अनुपात में पर्यावरण प्रदूषण भी अपनी अधिकतम सीमा तक पहुंच चुका है।

विशिष्ट शब्द :– औद्योगिक, विदोहन, गुणवत्ता, सान्द्रण, प्रदूषण।

भूमिका :– वर्तमान समय में औद्योगिक विकास ने हमारे भौगोलिक वातारण के लिए खतरा पैदा कर दिया है। भारत में पर्यावरण प्रदूषण एक विकट समस्या बन चुकी है। औद्योगिक विकास ने आर्थिक समृद्धि प्रदान की है सामाजिक आर्थिक संरचना को नया आयाम दिया है तथा लोगों को भौतिक सुख प्रदान किया है। परन्तु इसने कई प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं को भी जन्म दिया है। औद्योगिक विकास के दो प्रमुख संघटकों अर्थात प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से विदोहन तथा औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है तथा कारखानों में कच्चे पदार्थो में वृद्धि का भी पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। कारखानों में कच्चे पदार्थों के उपयोग के लिए प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक विदोहन के कारण निम्न परिणाम उत्पन्न होते हैं जो पर्यावरण की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। 1. पेड़–पौधें की कटाई के कारण वन क्षेत्रों में ह्रास। 2. औद्योगिक विस्तार के कारण कृषि भूमि में ह्रास। 3. भूमिगत जल के अत्यधिक निष्कासन के कारण भूमिगत जल–तल में गिरावट। 4. अत्यधिक औद्योगिक विस्तार के कारण वातावरण प्रदूषित होना आदि। ज्ञातव्य है कि भारत में स्थापित कारखानों में वांछित उत्पादन के अलावा कुछ अनिश्चित उत्पाद भी निकलते हैं जैसे औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ, प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवक्षेप, एयरोसॉल, धूल एवं राख तथा धूम्र आदि।[1] औद्योगिकृत क्षेत्रों ने कारखानों की चिमनियों से निकले प्रदूशकों का जल, मिट्टियों, भूमि तथा वायु में सान्द्रण इतना अधिक बढ़ा दिया है कि पर्यावरण प्रदूषण एवं अवनयन नाजुक सीमा पर पहुंच गया है।

भारत में स्थापित रासायनिक कारखानों से उत्पादित खादों एवं कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के खेतों में प्रयोग के कारण आहार श्रृंखला तथा मिट्टियों के रसायनिक एवं भौतिक गुणों में भारी परिवर्तन हो रहे हैं। कारखानों से निकले अपशिष्ट पदार्थो से तालाबों एवं जलाशयों के स्थिर जल तथा नदियों में विमोचन के कारण जल प्रदूषित हो रहा है। जिस कारण अनेक जीवों की मृत्यु भी हो रही है तथा जलीय पारिस्थितिक तंत्रों का प्राकृतिक सन्तुलन अव्यवस्थित हो रहा है। निरन्तर बढ़ते औद्योगिक प्रसार के कारण अनेक प्रकार के प्रदूषकों का जनन हो रहा है जैसे कलोरीन, सल्फेट बाइकार्बोनेट, नाइट्रेट सोडियम, मैग्नीशियम, फॉस्फेट आदि के आयन। इन आयनों का वाहित मल नालियों द्वारा जलाशयों, नदियों व तालाबों में विमोचन हो रहा है। भारत में लगातार वनों का प्रतिशत घट रहा है। जिसके परिणामस्वरूप आक्सीजन की कमी वन्यजन्तु का पलायन वनों से सम्बन्धित पशुपक्षी व जीवों का ह्रास स्वाभाविक रूप में हुआ है।[2] भारत में बढ़ते जनसंख्या दबाव के कारण नम क्षेत्रों में कमी अंकित की गयी है। एक अध्ययन के आधार पर भारत में लगभग प्रत्येक गांव के अन्तर्गत एक छोटे व बड़ा जलाशय थे। परन्तु वर्तमान समय में उनका अतिक्रमण हो चुका है और नम क्षेत्र निरन्तर घटते जा रहे है। परिणामस्वरूप भूमिगत जल का स्तर कम होता जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप टयूबबैल की गहराई निरन्तर बढ़ती जा रही है जो कि चिन्ता का विषय है।

शोध प्रविधि :– प्रस्तुत शोध आलेख विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक प्रकृति का है। शोध कार्य के लिए द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। इसके लिए मुख्यतः इंटरनेट से प्राप्त सामग्रियों, प्रकाशित ग्रंथ, पत्र–पत्रिकाओं में छपे विवरण, निबंध एवं लेख तथा विभिन्न शोध ग्रंथों को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

तथ्य विश्लेषण :– भारत में निरन्तर बढ़ती हुई विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने जहाँ अनेक उपलब्धियां दी है। सुख सुविधाओं से भरपूर साधन भी उपलब्ध कराएँ है और जनसाधरण को वैज्ञानिक सोच का आधार दिया है, वहीं अनेक जटिल समस्याएं भी दी है। औद्योगिक विकास के परिणाम–स्वरूप पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। भारत में जितनी जन सुविधाएं बढ़ रही हैं उसके अनुपात से कहीं ज्यादा जनसंख्या बढ़ रही है। परिणामस्वरूप जनसंख्या एवं जनसुविधाओं का अनुपात निरन्तर दबाव युक्त होता जा रहा है।

बढ़ते औद्योगीकरण के कारण भारत में जनसंख्या वृद्धि व घनत्व भी बढ़ता जा रहा है। उद्योगों के कारण व्यक्तियों को रोजगार आसानी से प्राप्त हो रहे है।

भारत में अत्यधिक औद्योगिकरण होने से यहां की अधिकांश भूमि पर उद्योग स्थापित है तथा इन उद्योगों से जो अपशिष्ट व बेकार पदार्थ निकलते हैं उन पदार्थो से आस–पास के क्षेत्रों का वातावरण अशुद्ध होता जा रहा है। इन अपशिष्ट पदार्थों से प्रभावित क्षेत्रों में गन्दगी बढ़ रही है। औद्योगिक ईकाईयां आस–पास ही गड्ढा खोदकर रासायनिक कचरे का पानी निस्तारित कर देती है यह पानी भूजल में मिल रहा है।[3] जिससे पानी की गुणवत्ता में भारी गिरावट आ रही है। यहां रासायनिक कचरों का जहर जल में घुल रहा है। जिस कारण यहां के निवासियों को अनेक स्वास्थ सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

भारत में औद्योगिक विकास से तीव्र गति से वाहनों की संख्या में भी भारी वृद्धि हुई है। इनसे निकलने वाले धुएं व शोर से वायु व ध्वनि प्रदूषण की समस्या भी उठ खड़ी हुई है। वायु प्रदूषण में घरों से निकलने वाला धुआं भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। बढ़ती जनसंख्या व औद्योगिक विकास के कारण नगर में श्रमिक वर्ग, आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण घरों में प्रायः भोजन पकाने के लिए चूल्हा या स्टोव का प्रयोग करते हैं। लकड़ी, मिट्टी का तेल व कोयला प्रयोग में लाया जाता है जो अत्यधिक धुआं छोड़ता है। धुआं से पूरे क्षेत्र के निवासियों पर बहुत बुरा असर पड़ा रहा है जैसे आंखों में जलन, श्वांस नली में सूजन आना, एलर्जी, सिरदर्द व अन्य स्वास्थ्य सम्बंधित समस्याएं उत्पन्न हो रही है।[4]

औद्योगीकरण और नगरीकरण बढ़ने से विभिन्न प्रकार के परिवहन के साधनों में वृद्धि हुई है। साधनों से निकले प्रदूषकों के कारण मानव जीवन का आधार कही जाने वाली प्राण वायु ऑक्सीजन बुरी तरह से प्रदूषित हो गई है, साथ ही साथ मानव जीवन का आधार जल जिसकी महत्ता एवं आवश्यकता को देखते हुए कहा जाता है कि जल ही जीवन है, वर्तमान समय में भयंकर रूप से प्रदूषित हुआ है। मावन जीवन के आधार इन भौतिक तत्वों–जल एवं वायु के प्रदूषित होने के कारण मानव समाज में अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हुइ है।[5] साथ ही आर्थिक सामाजिक विकास भी नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है।

भारत में बढ़ते औद्योगिक विकास के कारण प्रकृति प्रदत्त संसाधन चाहे जल, मृदा, वायु कोई भी तत्व हो खतरनाक स्तर तक प्रदूशित हो चुके हैं। औद्योगिक विकास में जल, मृदा तेजी से उपयोग में लाये जा रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं हैं कि ह्रासमान पर्यावरण का कुप्रभाव विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रदूषण जैसे जल प्रदूषण, वायु प्रदषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जैवीय प्रदूषण, मौसम व जलवायु में परिवर्तन पेड़ पौधें की कमी आदि पर्यावरणीय पारिस्थितिकी अवक्रमण तथा प्राकृतिक विपदाओं के रूप में दिखाई दे रहा है।[6]

वर्तमान में पेड़–पौधे तेजी से कटते जा रहे हैं, चारागाह एवं घास के मैदान समाप्त हो रहे हैं, जिस कारण वर्तमान में वनों का प्रतिशत घटता जा रहा है। वनों के आभाव के कारण जीव जन्तुओं का प्राकृतिक आश्रय छिनता जा रहा है। नदियां गन्दे नालों के रूप में परिवर्तित होती जा रही है। जलाशय तेजी से सुख रहे हैं और भूमिगत जल का स्तर लगातार गिरता जा है। हवा में जहर घुलता जा रहा है। वर्षा की बूंदों में भी तेजाब बरस रहा है। मैदानी उपजाउ भूमि शुष्क और बंजर होती जा रही है। चारों ओर कंक्रीट के जंगल उगते जा रहे हैं। ये सारा का सारा परिवर्तन प्रौद्योगीकरण के कारण हो रहा है। आज पर्यावरण प्रदूषण के कारण पूरी दुनिया पर ग्लोबल वार्मिग का खतरा मंडरा रहा है।

पर्यावरण प्रदूषण :– आज भारत औद्योगिक विकास के साथ–साथ पर्यावरणीय समस्याओं से अछूता नहीं है। मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तत्वों में प्रमुख रूप से सल्फयूरिक एसिड, नाइट्रिक एसिड, पोटाश, सोड़ा एसिड, कास्टिक सोड़ा आदि आते हैं। इन तत्वों

के प्रयोग में धुंआ, धूल व दुर्गन्ध जैसी अनेक समस्याएं आती हैं। इसी प्रकार भारत में काफी औद्योगिक इकाईयाँ, रंग, डाई आदि का प्रयोग करती हैं उनसे निकलने वाला पानी काफी अम्लीय व क्षारीय होता है। सिन्थेटिक, प्लास्टिक, रेसिन, नायलॉन, कीटनाशक आदि का प्रयोग करने वाली औद्योगिक इकाईयां अपने आस–पास के वातावरण को गन्दा कर रही है। कुछ औद्योगिक इकाईयाँ विषैले पदार्थो का भण्डारण कच्चे माल के रूप में करती है जैसे–अमोनिया, सल्फासाइनाइड, आर्सेनिक, फेरियम ब्रोमाइड आदि जो अपने आस–पास के वातावरण व सम्पर्क में आने वाले अन्य पदार्थों को विषाक्त कर रही हैं। इनसे दुर्घटना की सम्भावना भी हमेशा बनी रहती है।[8]

जहां एक ओर औद्योगीकरण के कारण व्यक्तियों को अच्छे रोजगार मिल रहे है जिससे उनका जीवन स्तर को सुधरने के लिए सुविधाएं भी बढ़ रही है जैसे– विभिन्न प्रकार के वाहन, विद्युत आपूर्ति, जल–आपूर्ति, वातानुकूलित सयंत्र आदि। ये सुविधायें जीवन को सुगम तो बना रही है पर पर्यावरण को नुकसान भी पहुंचा रहीं है। पिछले कुछ वर्षों के सर्वेक्षण से स्पष्ट है कि पर्यावरण के विभिन्न अवयवों को औद्योगिक क्रियाकलापों द्वारा बहुत नुकसान पहुंच रहा है। पर्यावरण प्रदूषित होने के कारण अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। जिसका विवरण सारणी संख्या 1.1 में प्रस्तुत किया गया है–

सारणी 1.1: पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न प्रमुख समस्याएं

क्रं.	समस्याएं	कारण	प्रभाव
1	वायुमंडल में कार्बन डाई–ऑक्साइड की बढ़ती सान्द्रता	जीवाश्म इंधनों का अत्यधिक प्रभाव	वायुमंडल के औसत तापमान में बढ़ोतरी
2.	ग्रीन हाउस प्रभाव और वायुमंडल के तापमान में बढ़ोतरी	कार्बन डाईआक्साइड, मिथेन और नाइट्रोजन के आक्साइड की वायुमंडल में बढ़ती सांद्रता	औसत समुद्र तल में वृद्धि के कारण सागर तटीय शहरों के डूबने का खतरा, जलवायु में परिवर्तन
3.	वायुमंडल के उपरी सतह में स्थित ओजोन परत का क्षरण	सी.एफ.सी. वर्ग के रसायनों का उपयोग	सूर्य की किरणों के साथ पराबैगनी किरणों के पृथ्वी तक आने के कारण चर्म कैंसर में वृद्धि
4.	अम्लीय वर्षा	जीवाश्म इंधनों का अत्यधिक प्रयोग	कृषि, वन संपदा, प्राचभ्म इमारतों पर बुरे प्रभाव
5.	प्लास्टिक प्रदषण	प्लास्टिक वस्तुओं का अत्यधिक प्रयोग	नये–नये रोगों का जन्म
6.	जल प्रदूषण	तमाम मानवीय क्रियाएं, बढ़ता शहरीकरण, उद्योगों का कचरा, जलीय स्रोतों, सतही एवं भू–जलद के अत्यधिक दोहन के कारण नदी में कम पानी का बहाव और वनों की कटाई आदि	दूषित पानी से होने वाले अनेक रोग जैविक संपदा का नाश तथा उपयोग योग्य जल की कमी, भू–जल में कमी
7.	वायु प्रंदूषण	वाहनों का उत्सर्जन, जीवा" म इंधनों का अत्यधिक प्रयोग और तमाम औद्योगिक उत्सर्जन	शुद्ध हवा का अभाव तथा अनेक बीमारियां
8.	ध्वनि प्रदूषण	विभिन्न प्रकार के शोर	बहरापन और किसी कार्य में केन्द्रित नहीं कर पाना
9.	मृदा प्रदूषण	कीटनाशकों और रासानिक उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग और विभिन्न प्रकार के कचरों का भूमि पर संचय	भू–जल का प्रदूषित होना और भूमि की जैविक संपदा का ह्रास
10.	जैविक विविधता में कमी	विभिन्न मानवीय क्रियाएं और विभिन्न प्रकार के प्रदूषण	जल, चारा और इंधन की कमी और जन्तुओं एवं वनस्पतियों का विलुप्तिकरण

स्रोतः भारतीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, द्वारा प्रकाशित पत्रिका

वायु प्रदूषण :– औद्योगिक विकास व नगरीकरण के फलस्वरूप वायुमण्डल में विषैली गैसों, पदार्थों धूल के कणों आदि की उपस्थिति भी बढ़ रही है। जो मनुष्यों, जानवरों और वनस्पतियों के लिए हानिकारक है। वायुमण्डल में विभिन्न गैसों का एक निश्चित अनुपात होता है। और इस अनुपात में ऑक्सीजन के अतिरिक्त किसी अन्य गैस की वृद्धि हो तो इस प्रकार की वायु जीवन के लिए घातक सिद्ध होती है। वायु प्रदूषकों में

सर्व प्रमुख है–कार्बनडाइऑक्साइड, फ्लूरोकार्बन, नाइट्रोजन ऑक्साइड, सल्फर कम्पाउण्ड अपशिष्ट, उष्मा, जल वाष्प, अमोनिया, हाइड्रोकार्बन, मेथिल ब्रोमाइड, क्रिप्टॉन, एयरोसॉल आदि गैसों व तत्वों के बढते हुए अनुपात के कारण वायु प्रदूषित हो रही है।[9] पैट्रोलियम तथा डीजल से चलने वाले स्वचालित वाहन कार्बन मोनोक्साइड के उत्पादन के सर्वप्रमुख स्रोत हैं। इसके अलावा तेल शोधन शालाओं, धातुशोधन प्रक्रियाओं तथा कई प्रकार के दहन इन्जनों से भी कार्बन मोनो ऑक्साइड की उत्पत्ति हो रही है इस तरह स्पष्ट हो जाता है कि औद्योगिक प्रतिष्ठान तथा नगरीय क्षेत्र कार्बन मोनोक्साइड के प्रधान स्रोत है। वास्तव में कार्बन मोनोक्साइड व वायुमण्डल में स्थित वायु प्रदूषकों के 50 प्रतिशत भाग का प्रतिनिधित्व करती है। वायु को प्रदूषित करने वाली दूसरी प्रमुख गैस कार्बनडाई आक्साईड गैस है। कार्बन डाई ऑक्साइड गैस अपने आप में हानिकारक नहीं होती वरन् यह महत्वपूर्ण संसाधन है क्योंकि हरे पौधे के माध्यम से अपना आहार निर्मित करते हैं। परन्तु घट रहे पेड़ पौधों के कारण के उपभोग में निरन्तर कमी आ गयी है जिस कारण CO_2 का वाय में सान्द्रण बढ़ रहा है। जिससे अनेक समस्याएं उत्पन्न हो रही है। वायुमण्डल में समस्त वायु प्रदूषकों के सकल भार का लगभग 20 प्रतिशत भाग सल्फरडाई आक्साईड (SO_2) का होता है।[10] गन्धक का वायुमण्डल से सान्द्रण होने से यह पौधे तथा जन्तुओं के लिए हानिकारक हो जाता है। क्योंकि गन्धक की मात्रा में वृद्धि के कारण जल का pH मान काफी कम हो जाता है तथा जल की अम्लता में भारी वृद्धि हो जाती है। SO_2 गैस के निरन्तर बढ़ रहें अनुपात में सबसे अहम भूमिका परिवहन के साधनों, ताप शक्तिग्रह व तेल शोधन शालाएँ की है।[11] इन कारकों के द्वारा So_2 की मात्रा में बढ़ोत्तरी हो रही है। जिससे वायु की गुणत्ता का हास हो रहा है।

जल प्रदूषण :– बढ़ते नगरीकरण व औद्योगिक विकास से जहां जल की आवश्यकता बढ़ी है, वहीं जल प्रदूषण भी बढ़ा है जिससे शुद्ध जल की मात्रा कम हो रही है। कीटनाशकों के अधिक व अनुचित उपयोग के कारण भी जल प्रदूषित हो रहा है। कारखानों का अपशिष्ट, नदियों में बहाया जा रहा है। कई औद्योगिक इकाईयां पर्यावरण को काफी हद तक प्रभावित कर रही है कुछ कारखानों में छपाई व रंगाई का कार्य होता है, और रंग से प्रभावित जल नालों के सहारे नदियों में पहुंच जाता है जिससे जल का रंग बदल जाता है।

जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप डिटर्जेन्ट पाउडर, साबुन आदि का उपभोग बढ़ा है। ये अपमार्जक जल स्रोतों में पहुंचकर उसकी सतह पर एक पतली परत के रूप में एकत्रित हो जाते हैं जिससे वायुमण्डल की ऑक्सीजन उसमें नहीं घुल पाती है, जब ऑक्सीजन पानी में नहीं घुलती तो पानी हानिकारक हो जाता है।[12] भूमिगत जल में बहुत बड़ी मात्रा में रासायनिक तत्वों का मिश्रण होने के फलस्वरूप वह पीने योग्य नहीं रहा है इससे आसानी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध होते हुए भी स्वच्छ स्वास्थ्यप्रद एवं पेयजल की मात्रा बहुत कम है। क्योंकि औद्योगिक इकाईयां अपने स्वार्थों के वशीभूत होकर पानी को निरन्तर औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थ से प्रदूषित कर रही हैं। यह प्रदूषित जल विभिन्न प्रकार की बीमारियों के कीटाणुओं और रासायनिक तत्वों के साथ मिलकर दुर्गन्धित एवं विषैले स्वाद के रूप में सामने आता है। इस दृषित जल के प्रयोग से कई प्रकार का गम्भीर व घातक बीमारीयां हो रही है जैसे–वाइरल, इन्फेक्शन हैजा, टायफाइड, खुजली, मलेरिया पीत ज्वर एवं चर्म रोग आदि उत्पन्न हो रहे हैं। यह प्रदूषित जल निवासियों के स्वास्थ को रोग्रगस्त बना रहा है।

अन्य प्रदूषण :– जल व वायु प्रदूषण के अतिरिक्त भी अन्य प्रदषण जैसे ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ठोस अपशिष्ट प्रदूषण, प्लास्टिक प्रदूषण व सामाजिक प्रदूषण आदि भी विद्यमान है जिनके कारण भौगोलिक पर्यावरण पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इन प्रदूषणों का विवरण इस प्रकार से है।

ध्वनि प्रदूषण :– ध्वनि प्रदूषण भी एक गम्भीर समस्या के रूप मे विद्यमान है जो समय के साथ भयानक और विकराल होती जा रही है। औद्योगिक क्षेत्रों में कारखानों व फैक्ट्रियों से होने वाला शोर. सड़क पर दौड़ने वाले पेट्रोल व डीजल से चलने वाले वाहन सब मिलाकर सड़क पर ऐसा वातावरण का निर्माण करते हैं कि पैदल चलने वाले तो क्या स्वयं वाहनों पर चलने वाले व्यक्ति भी विषैले धुएं व शोर से परेशान हो जाते है। यह अनुमान है नगरों में 65 प्रतिशत प्रदूषण इन वाहनों के कारण ही होता है। इसके अलावा तेज ध्वनि करते यन्त्र, शादी उत्सव आदि में बजने वाले यन्त्र व त्योहारों पर होने वाली आतिशबाजियां भी इस ध्वनि में वृद्धि करने में साहयक सिद्ध हो रही हैं। मानवीय स्रोतों में मुख्य रूप से मोटरगाड़ियों, रेल वायुयान, जेट विमान, कल कारखानों से निकली आवाजें, नारेबाजी, पूजा, कीर्तन, धार्मिक, राजनीतिक सभायें, धार्मिक एवं राजनीतिक प्रचारों के समय पैदा होने वाली तेज

आवाजें, स्कूल तथा विद्यालयों में उत्पन्न शोरगुल तथा स्वंय भी मानव की ध्वनि प्रदूषण को उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। तेज रफ्तार का अभ्यस्त मानव आगे जाकर जाने कैसी–कैसी मशीनों का निर्माण कर लेगा, वातवारण की गूंज को कितना बढ़ायेगा और बहरेपन के कितना निकट चला जायेगा कोई आश्चर्य नहीं कि आगामी शताब्दी तक बहरापन एक राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय समस्या बन जाये। ध्वनि प्रदूषण से कई प्रकार के रोगों का सामना करना पड़ा है। व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार में अन्तर आ रहा। इसके कारण कार्यकुशलता में भी कमी आ रही है। जो मजदूरों अधिक शोर में काम करते हैं, वे ह्रदय रोग, रक्तचाप, शारीरिक शीथिलता आदि अनेक रोगों से ग्रस्त हो रहे हैं।

मृदा प्रदूषण :– प्राकृतिक स्रोतों या मानव जनित स्रोतों से मिट्टी की गुणवत्ता में ह्रास या अवनयन निम्न कारणों से हो रहा है–तीव्र गति से मृदा अपरदन मिट्टियों में रहने वाले सूक्ष्म जीवों में कमी, मिट्टियों में नमी का आवश्यकता से अधिक या बहत कम होना, तापमान से अत्यधिक उतार चढ़ाव, मिट्टियों में ह्यूमस की मात्रा में कमी तथा मिट्टियों में विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का प्रवेश एवं सान्द्रण।

मृदा प्रदूषण के कारकों में निम्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भूमि उपयोग में व्यापक परिवर्तन यथा–वन विनाश के कारण मिट्टियों का तीव्र गति से अपरदन, कृषि कार्य हेतु रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी, रोगनाशी तथा शाकनाशी कृत्रिम रसायनों का अत्यधिक प्रयोग, औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रों के प्रदूषित अपशिष्ट जल का सिंचाई के रूप में प्रयोग, औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रों के अपशिष्ट ठोस पदार्थों की डम्पिंग, जलभराव आदि।

अत्याधिक औद्योगिकरण होने के कारण अम्ल वर्षा होती है। जिसके कारण मिट्टियों में अम्लता की अधिकता हो जाती हैं। मिट्टियों में अम्लता की अधिक मात्रा का सांद्रण फसलों के लिए हानिकारक होता है। कारखानों से उत्सर्जित क्लोरीन तथा नाइट्रोजन गैस जल से संयुक्त होकर मिट्टियों को प्रदूषित कर रही है, जिससे मिट्टी के रासायनिक संगठन में परिवर्तन कर देती है। कारखानों चूने के भट्ठों, कोयले की खानों, ट्रकों तथा मालगाड़ियों में कोयले को भरते तथा उतारने, ताप शक्ति संयंत्रों आदि से उत्सर्जित कणिकीय ठोस पदार्थ मिट्टियों में पहुँच कर उन्हें प्रदूषित करते रहते हैं।

दूसरी ओर भूमि की किस्म, भौगोलिक परिस्थितियों तथा फसलों की जातियों के अनुसार उर्वरकों की उपयुक्तता निर्धारित किये बिना कुछ तत्वों की अधिकता तथा विषैलापन हो जाता है। कुछ तत्वों की कमी आ जाती है तथा भूमि में लाभकारी जीवाणुओं पर बुरे प्रभाव के कारण भूमि उत्पादन क्षमता में कमी आ जाती है। भूमि के पर्यावरण सुधार की दृष्टि से रासायनिक खादों का इस्तेमाल मिट्टी परीक्षण के आधार पर फसलों की किस्म, भूमि की किस्म, भौगोलिक परिस्थितियों आदि को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये।

ठोस अपशिष्ट प्रदूषण :– इसमें ठोस, जलीय, वायु व अपशिष्ट पदार्थ जैसे समाचार पत्रों, विभिन्न प्रकार के डिब्बे तथा कनस्तर, बोतल, टूटे काँच का सामान, राख, आवासीय कचरा व औद्योगिक अवशिष्ट पदार्थ आदि। इन ठोस अपशिष्ट पदार्थों की समुचित डम्पिंग तथा निपटान ना होने के कारण ये पदार्थ वातावरण को दूषित कर रहे हैं। बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिकरण एवं नगरीकरण में तेजी से वृद्धि हो रही है जिस कारण ठोस अपशिष्ट पदार्थो द्वारा उत्पन्न पर्यावरण प्रदूषण की समस्या विकराल होती जा रही है। रद्दी कागज, अपशिष्ट पदार्थ, काँच और टीन के टुकड़े तथा पोलिथीन की थैलियों से मिलकर इस मिट्टी को प्रदूषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। औद्योगिक कचरे, धुएँ और गर्द ने इस प्रदूषण को और अधिक बढ़ा दिया। इससे भूमि की उर्वरता कम होती जा रही है।[17] मिट्टी की साख घट गई और साथ ही उपज की क्षमता का ह्रास भी हुआ है। औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रों से निस्सृत अपशिष्ट पदार्थो के खेतों में डम्पिंग तथा नगरीय गन्दे नालों के प्रदूषित सीवेज जल से फसलों की सिंचाई के कारण मिट्टियों के भौतिक एवं रासायनिक गुणों में परिवर्तन होने के कारण मिट्टियों का अवनयन प्रारम्भ हो गया है।

प्लास्टिक प्रदूषण :– विज्ञान में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। प्लास्टिक एवं पॉलीथीन भी विज्ञान की ही देन है। घरेलू उपयोग में पॉलीथीन की थैलियों में पैकिंग की दुनिया में सुविधा के नये आयाम जोड़ दिये हैं। पॉलीथीन की थैलियां प्लास्टिक की ही बनती है, इसलिये प्लास्टिक का उपयोग वर्तमान में बहुत बढ़ गया है। दूध, घी, मसाले या अन्य कई उत्पाद सभी पॉलीथीन पैकिग में आने लगे हैं। प्लास्टिक व पॉलीथीन के अंधाधुंध प्रयोग ने न केवल कूड़ा निस्तारण के क्षेत्र में जटिल समस्या उत्पन्न की है, बल्कि इससे पर्यावरण प्रदूषण का खतरा भी बढ़ा दिया है। आज कूड़े–कचरे में इसकी मात्रा लगभग 20 से 25 प्रतिशत होती है। पॉलीथीन नष्ट न होने से सफाई कार्य में काफी व्यवधान उत्पन्न होता है।

प्लास्टिक को जैविक प्रक्रिया से नष्ट किया जाना अत्यन्त कठिन है। प्लास्टिक को जब हम धरती पर फेंकते हैं तब वह 200 से 300 वर्षों तक मिट्टी में नहीं मिल सकता है। साधारणतया कबाड़ी पुराने प्लास्टिक जैसे सीरिंज, मेडिसिन बोतले, पेस्टीसाइड कन्टेनर, जूते के सोल, पॉलीथीन बैग आदि कूड़े से या घरों से खरीद कर उद्योगों को बेच देते हैं, जिससे पुनः इस प्लास्टिक को गलाकर नयी प्लास्टिक की वस्तुएं तैयार की जा रही है। दुबारा प्लास्टिक की वस्तुएं कम तापक्रम पर लगभग 200 से 250 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम पर गलाकर बनाया जाता है। जिससे उससे तापक्रम पर संक्रमित अधिकांश कीटाणु जैसे हिपेटाइटिस–बी. एड्स सालमोनेला, कोलाई नष्ट नहीं हो पाते हैं जो अंततः उपभोक्ता को नये–नये रोगों को जन्म देते हैं।

निष्कर्ष :– औद्योगिक विकास के कारण कृषि फसलों वाली भूमि अन्य उपयोग में परिवर्तित हो रही है। यही कारण है कि भारत में हरित क्षेत्रों का विस्तार घट रहा है जिसका दुष्परिणाम प्रत्येक रूप से देखा जा सकता है। उद्योगों में वायु एवं जलशोधन की व्यवस्थाएं न होने के कारण वायु व जल प्रदूषण नगर क्षेत्रों में तथा प्रमुख राजमार्गों के सहारे निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यह आज भौगोलिक पर्यावरण के ह्रास का प्रमुख कारण बनता जा रहा है। बढ़ता हुआ प्रदूषण, घटते वन क्षेत्रों, घटते हुए नम क्षेत्रों तथा बढ़ती हुई आबादी का प्रतिकूल प्रभाव भारत के भौगोलिक पर्यावरण पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

उपरोक्त तथ्यों के परिपेक्ष्य में यह आवश्यक है कि भारत देश के अन्तर्गत जनजागरण का वृक्षारोपण के प्रति, नम क्षेत्रों के स्वच्छ एवं दीर्घ कालीन विकास के लिए तथा जनसंख्या को नियंत्रित कर ग्रामीण क्षेत्रों की ओर पुनः वितरण की व्यवस्था की जाये जिससे कि भारत का हरित क्षेत्र बढ़ सकें। नम क्षेत्र अधिक उपयोगी हो सकें तथा जनसंख्या दबाव नगरों के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में सुविधाएं बढ़ाकर व्यवस्थित किया जा सकता है। इसके साथ–साथ औद्योगिक ईकाईयों में शोधन प्रक्रियाओं की व्यवस्था तथा नगरों मे हरित पट्टी की, हरे–भरे पार्को की व्यवस्था भारत में इस पर्यावरण की समस्या को हल करने में विशेष रूप से प्रभावी हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा दीप्ति और महेन्द्र कुमार, पर्यावरण संरक्षण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस ,दिल्ली, 2009, पृ. 132
2. Mamoria C-B., Advance Gepography of India, Agra, 2008, p 292
3. वही
4. http://www.windows-ucar.edu/earth/climate/carbon_cycle-html
5. www.climateclassroom.org/
6. शर्मा दीप्ति और महेन्द्र कुमार, पर्यावरण संरक्षण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2009, पृ. 179
7. वही
8. http://www.earthportal.org/
9. वही
10. http://www.epa.gov/climatechange/kids/index.
11. www.edf.org/page.cfm?tagID=65/
12. कौशिक एस. डी., मानव भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, 2005, पृ. 157

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

असंगठित क्षेत्र में कार्यकारी महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में बदलाव का अध्ययन

डॉ. प्रतीक कुमार
महिला अध्ययन विभाग, मगध वि.वि. बोधगया, बिहार

परिचय :– असंगठित क्षेत्र मजदूर वर्ग का वह विशाल हिंस्सा है जिसमें खेतीहर मजदूर आते है जो खेती, (कृषि) मत्स्य पालन, वृक्षारोपन आदि में संलग्न है। भारत में 93 प्रतिशत कार्यबल अनौपचारिक क्षेत्र में कम मजदूरी पर नियोजित है और उनकी सामाजिक सुरक्षा के उपाय भी नगण्य है असंगठित क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का इंजन है। असंगठित क्षेत्र की महिलाएं वर्तमान युग की बदलती धारणाओं नवीन मूल्यों एवं नगरीकरण ने मन को झिकझोड़ा है। ये अब दोहरी भूमिका निभाती है और अपने परिवार को आर्थिक रूप से सक्षम बना रही है।

असंगठित क्षेत्रों में कृषि कार्य एक बड़ी आर्थिक गतिविधि है। 2011 जनगणना के मुताबिक 80% से अधिक महिलाओं कर्मी कृषि कार्य में संलग्न है। ग्रामीण क्षेत्र में करीब 87% महिलाकर्मी है। शहरी क्षेत्रों में इनका अनुपात मात्र 17.5% है।

इस क्षेत्र की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इन क्षेत्रों में कार्य करने वाले कर्मियों को किसी तरह का कानून संरक्षण प्राप्त नहीं है, न कोई मिनिमम वेजेज एक्ट है, न कोई चाइल्ड लेबर एक्ट है न कोई एम्पलाइमेन्ट इंश्योरेन्स प्रोग्राम है। ऐसा देखा गया है कि इन सेवाओं में अधिकांशतः महिलाएँ है जो निम्नवर्गीय परिवारों से आती है और बहुत गिरी हुई दशा में कार्य करती है।

नेशनल कमीशन ऑव लेबर जिसने गैर–सरकारी क्षेत्रों में काम करने वाली महिला की दिक्कतों के सम्बन्ध में कुछ विश्लेषण किये है, वे इस प्रकार है :–

1. नियोजन की अस्थायी प्रकृति
2. अशिक्षा एवं अनजानपन
3. बहुत छोटी संस्था जिसमें बहुत कम पूँजी लगी हुई हो।
4. नौकरी की जीर्ण–शीर्ण स्थिति।

कई भागों में जो अध्ययन किये गये हैं उससे पता चलता है कि महिला कर्मियों की स्थिति अत्यन्त ही दयनीय है। अनजानपन, परम्परागत दृष्टिकोण एवं प्रवृति, अशिक्षा, तकनीकी जानकारी का अभाव, नियोजन की अस्थायी प्रवृति, काफी अधिक शारीरिक श्रम, काम के अधिक घंटे उसपर कम वेतनमान, महिला तथा पुरूरूा कर्मियों के बीच नियोजन में भेदभाव, नौकरी की असुरक्षा, प्रताड़ना, भेदभाव इत्यादि स्थितियाँ है जो महिलाओं को सहनी पड़ती है। असंगठित क्षेत्रों में काम स्थानीय स्वभाव के होते है जिसमें स्थानीय नागरिक ही कार्ययशील होते है। ये सभी तरह के कानूनी सुरक्षा एवं आर्थिक लाभों से वंचित होते हैं। इनमें महिलाएँ बहुत असुरक्षित है और उनके काम करने के घंटे भी अधिक है और तनखाह बहुत कम है।

जैसा कि हम देख चुकें है, भारतवर्ष में असंगठित क्षेत्र में करीब 96% (2011 में) महिलाएँ है। इसमें वैसे लोग भी शामिल है जो गरीबी रेखा से नीचे का जीवन गुजर बसर कर रहे है। महिलाओं की स्थिति (2011–14) के अध्ययन हेतु नियुक्त कमिटी की रिपोर्ट है कि महिलाओं को असंगठित क्षेत्रों में नौकरियाँ में भागीदारी, उनकी समस्याएँ तथा उनकी अयोग्यताएँ इस बात पर निर्भर करती है कि संगठन कैसा है और नियोजन का क्षेत्र कैसा है। इसके नीति निर्माताओं द्वारा सामाजिक न्याय अपनाने की प्रक्रिया में निम्न टिप्पणियाँ की है–(1) वस्तु अधिक संख्या में यहाँ (73% करीब) महिलाएँ कार्यरत है (2) इस क्षेत्र में कम पैसे पर श्रमिक उपलब्ध हो जाते है।

शोध पत्र का उद्धेश्य :– यह अध्ययन का असंगठित क्षेत्र में महिलाओं की भागेदारी को दर्शाता है। इस हेतु मांग और पूर्ति के नियम को भी ध्यान में रखा गया है।

विश्लेषण :– पूर्ति की दिशा में कुछ त्रुटियाँ है जिनके कारण संगठित क्षेत्रों में महिलाओं के प्रवेश नहीं हो पाते है। ये इस प्रकार है– (अ) श्रमिकों में अंगतिशीलता यही इन्हें स्थानीय क्षेत्रों में ही नियोजन हेतु बांध कर रखता है। अलग से अनके अन्दर यह प्रवृति नहीं होती है कि वे एक जगह से दूसरे जगह नियोजन के लिए पलायन करें, यही कारण है कि कम वेतनमान मिलने के बावजूद ये स्थानीय सेवाओं यथा फूड प्रोसेसिंग, घरेलू सेवा इत्यादि में ही संलग्न होकर रह जाते हैं (ब) अशिक्षा अथवा कम तकनीकी ज्ञान भी इन्हें इस क्षेत्र में प्रवेश को रोकता है।

माँग की दिशा में कुछ तत्व ऐसे है जो नियोजन को असंगठित क्षेत्रों में महिलाओं को अधिक

संख्या में नियोजित करने के लिए मजबूर करता है। ऐसे क्षेत्र है कृशि फार्म घरेलू कार्य इत्यादि। जितनी तरह की सेवाएँ है, उनमें घरेलू कार्य से संबंधित कार्यो की स्थिति जिस तरह से गैर–सरकारी और अनियंत्रित है, वैसा कोई नहीं है।

पंचवर्षीय योजना के इस बात पर विशष बल दिया है कि सामाजिक लाभ को प्रश्रय देने के उद्देश्य से कई कार्यक्रम चलाये जाएँ। इसी के तहत सेन्ट्रल सोशल वेल्पफेयर बोर्ड, की स्थापना हुई। 1953 में जो इस बात की तहकीकात करेगा कि सोशल वेल्पफेयर एजेन्सीज की क्या जरूरतें है जिन्हें पूरा करने में समाज हित में अधिक कारगार साबित हो। इस बोर्ड ने अपनी भी कई योजनाएँ शुरू की है जिनमें महिलाओं हेतु कई प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी ताकि महिलाएँ अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। 1962 के अन्त तक ऐसे 75 प्रतिशत शिक्षण केन्द्र खुल चुके थे जिन्हें करीब 4,600 महिलाएँ कार्यरत थी। ऐसा अनुमान किया गया था कि 65–66 तक 25,000 से 30,000 तक और भी महिलाएँ इनमें नियोजन पा सकेंगी।

भवन एवं निर्माण कार्यो में प्रगति के साथ–साथ, सरकारी एवं निजी संस्थानों में महिलाकर्मियों की संख्याएँ काफी बढ़ी है, खासकर अप्रशिक्षित कर्मी के रूप में। 1951 के आंकड़ों के अनुसार करीब 2.4 लाख महिलाएँ इन निर्माणों में व्यस्त थी।

आजादी के बाद के वर्षो में महिलाओं की सफेदपोश सेवाओं में भर्ती बड़ी तेजी से हुई है यथा दुकानों, वाणिज्यिक संस्थानों, बैंकों तथा इंश्योरेन्स कम्पनियाँ में। योजना एवं प्रशिक्षण विभाग के महानिदेशक के द्वारा कराये गये सर्वेक्षण के अनुसार (1961 सितम्बर माह) 25 कर्मचारियों तक भी नियुक्त करने वाले निजी संस्थाओं में करीब 7,962 महिलाएँ क्लर्क के रूप में 3,138 महिलाएँ स्टेनोग्राफर के रूप में 933 महिलाएँ टाइपिस्ट के रूप में 51 महिलाएँ, बुक कीपर के रूप में 652 महिलाएँ कम्प्यूटर क्लर्क के रूप में तथा मशीन ऑपरेटर के रूप में और करीब 348 महिलाएँ सेल्स वोमैन तथा शॉप एसिस्टेन्ट के रूप में कार्यरत थीं।

शिक्षण एवं स्वास्थ्य विज्ञान के क्षेत्र में जहाँ महिलाएँ एक लम्बे अर्से से शिक्षा प्राप्त कर रही है, उन्हें एक बड़ा क्षेत्र अपने नियोजन के लिए मिला है। जैसा कि आंकलन किया गया है, 1960–61 तथा 1950–51 के बीच महिला शिक्षको की संख्या 86,200 से बढ़कर 1,74,500 तक प्राइमरी स्तर पर चली गयी है, वही मिड़ल स्तर पर 20,700 से बढ़कर 45,800 तक चली गयी और उच्च तथा उच्चतर स्तर पर 8,000 से बढ़कर 22,600 तक चली गयी। 1955–56 में जहाँ महिला डाक्टरों की संख्या 5,000 थीं, वह 1960–61 में करीब 7,130 हो गयी। जिन महिलाओं ने अपने आपकों नर्सिग अथवा दाइयों के रूप में प्रशिक्षित किया, उनके नियोजन के भी अवसर काफी बढ़े है।

खास काम के लिए औद्योगिक प्रशिक्षण एक अलग अध्याय ही आ गया जहाँ औघोगिक प्रतिष्ठान में महिलाओं के नियोजन का एक विशेष मार्ग खुल गया। एक साल के कोर्स का प्रशिक्षण विश्वविद्यालयों अथवा सरकारी विभागों में दिये जाने की व्यवस्था की गयी है। ब्यूरो ऑफ शोकेशनल गाइडेन्स में जितने लोगों को इस हेतु प्रशिक्षण दिया गया है उन लोगों के सारे विस्तृत विवरण विभाग के पास होते है।

बहुत सारी महिलाएँ रेडियों विभाग में भी उदघोशिका स्क्रीन कंट्रोलर स्क्रिट लेखक इत्यादि के रूप में कार्यरत है। इसी विभाग की अन्य सेवाओं यथा क्लर्क, टाइपिस्ट, स्टेनोग्राफर, नाट्य कार्यकर्ता इत्यादि कलकारों के रूप में भी कार्यरत है।

हवाई यात्रा के क्षेत्रों में भी एरहोस्टेस के रूप में महिलाएँ अधिक संख्या में कार्यरत है।

फिल्मी उद्योग में महिलाओं की भागेदारी में वृद्धि एक विवादास्पद विषय है फिर भी यह कहा जा सकता है कि हाल के वर्षो में उच्चवर्गीय परिवारों से भी फिल्मी उद्योग में महिलाओं का तेजी से आना शुरू हो गया है।

लाभकारी कार्यो में महिलाओं की संलग्नता के पीछे कई कारण है। घरों में रोजी और रोटी कमाने वाले पुरूषों की आमदनी इतनी नहीं होती है कि परिवार का संचालन बहुत अच्छे ढंग से हो सकें, इस तथ्य ने कई महिलाओं को किसी न किसी रोजगार की तलाश की ओर उत्सक किया है। इसके अलावे मुख्य रोटी कमाने वाले व्यक्ति के साथ घर जाने वाली अकस्मात घटनाएँ जिसमें वे कुछ दिनों के लिए अथवा हमेशा के लिए अपंग हो सकता है अथवा अकाल मृत्यु हो जाये तो महिलाओं को अपने बच्चों के भारण–पोशण के लिए आग आना उनकी विवशता हैं। इसके अतिरिक्त महिलाओं के अन्दर पनपी इच्छाएँ जिने तहत वे आर्थिक स्वरूप से आजाद होना चाहती है, वे किसी–न–किसी रोजगार की तलाश करती है ताकि पैसे कमाकर अपने पैरों पर खड़ी हो सकें। तुरत

वेतन पाने कार्यो में संलग्नता की दिशा' में प्रगति सबसे अधिक देखी गयी है यद्यपि कि वेतन स्तर बहुत कम है तथा न तो उनके लिए अथवा उनके ऊपर निर्भर करने वालों के लिए किसी तरह की भविष्य सुरक्षा योजना नहीं है।

घरेलू कार्यो से लेकर बाहर जाकर काम कर पैसे अर्जित करने में महिलाओं को कई तरह की मुसीबतों का सामना करना पड़ा है। यद्यपि कि इस स्थित से गुजरकर वे अब अभ्यस्त हो गयी है फिर भी तीव्र औद्योगीकरन ने उनके सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में कितना बदलाव ला दिया है, इन्हें इसका अन्दाजा नहीं है।

शुरू में काम में जब कार्यशील महिलाओं की हितों की सुरक्षा में सम्बन्धित विधन के बारे में सोचा भी नहीं जाता था, उस व्यक्ति गरीब परिवारों से आने वाली महिलाओं को कम वेतनमान पर नियोजकों ने बड़े पैमाने पर औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियुक्तियाँ हुई और धीरे–धीरे जब उनकी तकलीफें प्रकाश में आने लगीं जैसे– अधिक घंटे तक काम करना, मातृत्व काल में अनुपस्थिति के कारण सेवा से बंचित कर दिया जाना, रात्रिकाल मे कई तरह की उत्पीड़न और भारी कामों को असमर्थता के बावजूद करना इत्यादि, तो सरकार को विवश होकर उनके हित रक्षा में कई बिल पारित करना पड़ा और धीरे–धीरे महिलाकर्मी सुरक्षित क्षेत्रों में आती गयी और विशेष परिस्थितियों में उन्हें बिना सेवा समाप्ति के विशेष लाभ मिलने लगे।

भारतवर्ष सहित अन्य राष्ट्रों में महिलाओं के शोषण को रोकने से सम्बन्धित विधन पारित किये गये। इसमें सबसे बड़ा योगदान 'अतराष्ट्रीय श्रम संगठन' का है जिसने 1915 में पूरे विश्व के देशों के लिए 'मातृत्व रेखा', रात्रिकाल में कार्य करने पर रोक, खतरनाक कार्यो से उन्हें बंचित रखना, भारी अथवा स्वास्थ्यनाशक कार्यो में उन्हें नहीं लगाना, नियोजनों एवं प्रशिक्षणों में पुरूषों की तुलना में उनके साथ भेदभाव नहीं बरतना इत्यादि विधन पारित कर महिलाओं की हित रक्षा की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

''माइन्स एक्ट, 1952 तो माइन्स के अन्दर महिलाओं के नियोजन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया है। खतरनाक कामों पर लगायें जाने के सम्बन्ध में आवश्यक निर्देशक फैक्ट्रीज एक्ट से मिलते हैं जो स्पष्ट कहता है– किसी भी महिला और बच्चे को 'प्राइमभूवार' को साफ करने, इसे तैलीय करने अथवा इसके एडजस्टमेंट करने की इजाजत नही है और इसी तरह से ट्रान्समीशन पैशिन्स' के साथ भी और इस तरह कि किसी भी मशीन को साफ करने, तैलीय करने अथवा एडेजस्टमेंट करने पर पूर्ण प्रतिबन्ध है जहाँ खतरे की संभावना है।''

इसी तरीके से किसी भी महिला को जूट प्रेस करने पर नहीं लगाया जा सकता है, उस स्थिति को छोड़कर जहाँ कोई अवरोध गमन स्थल पर लगा हो। हॉ गर्मन स्थल के इर्द–गिर्द महिलाओं को काम पर लगाया जा सकता है। फैक्ट्रीज एक्ट और माइन्स एक्ट दोनों यह निर्देशित करता है कि वैसा भार महिलाओं को उठाने के लिए नहीं कहा जा सकता है जिससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़े और यह भार–सीमा केन्द्र सरकार व राज्य सरकार अपने किसी विधन द्वारा तय कर सकती है।

इसी तरह महिलाओं के लिए अलग बाथरूम एवं लेवेटरी पेशाबघर इत्यादि बनाये जाने है जहाँ यह आवश्यक है। कार्यस्थल पर महिलाकर्मी के बच्चों की देखभाल भी उचित व्यवस्था किये जाने की आवश्यकता बतायी गयी है। जहाँ 50 से अधिक महिलाएँ किसी फैक्ट्री में कार्यरत है वहाँ महिलाओं के बच्चों की देखभाल के लिए अलग से व्यवस्था किये जाने का प्रावधन फैक्ट्रीज एक्ट में है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत साफ सुथरे कमरे की व्यवस्था करनी है जहाँ कोई प्रशिक्षण महिला परिवारिका को जो ऐसे बच्चों (6 वर्ष से कम उम्र के) की देखभाल करती हो। पालना घर की व्यवस्था करना।

सबसे महत्वपूर्ण प्रावधन जो है वह मातृत्व लाभ के सम्बन्ध में है। प्रसूति काल एवं प्रसूत उपरान्त इस छुट्टी की अवधि का वेतनमान उन्हें दिये जाने का प्रावधन महिलाओं की हित रक्षा में उठाया गया सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम है। विकसित राष्ट्रों में मातृत्व लाभ उन्हें स्पेशल इन्श्योरेन्स फंड के अन्तर्गत दिये जाते है, अतः नियेाजकों पर इस सम्बन्ध में कोई विशेष बोझ नहीं रह जाता है। भारतवर्ष में कुछ फैक्ट्रीज, जो इम्प्लाईज स्टेट इन्श्योरेन्स स्कीम के तरह आते है को छोड़कर अधिकांश मामलों में नियोजकों को ही सीधे मातृत्व लाभ के राशि की अदायगी करनी पड़ती है। इस तरीके के कानून बने हुए हैं जहाँ प्रसूति पूर्व, प्रसूति काल एवं प्रसूति उपरान्त की छुट्टियों एवं अन्य सम्बन्धित लाभ एवं छुट्टियों के दिनों के वेतनमानकी अदायगी रोकड़ों में नियोजकों को करनी पड़ती है। यह करीब–करीब सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है। बिहार में मैटरनिटी बेनिपिफट एक्ट करीब। 1945 में पारित हुआ था जो यहाँ के राज्यपाल द्वारा लागू किया गया

था क्योंकि गर्वनमेंट ऑफ इन्डिया एक्ट, 1935 के तहत राज्यपाल को यह शक्ति प्रदत थी। 1947 में उसे पुनः पारित किया गया। इसमें बिहार एक्ट 18,1953 के द्वारा संशोधन भी किया गया। इस विधान के पारित होने से पूर्व यह सिर्फ कुछ नन सीजनल फैक्ट्रीज पर ही लागू होता था परन्तु अब ये सभी फैक्ट्रियों पर एक ही रूप में लागू होता है (सिपर्फ जूट पेसिंग फैक्ट्रीज, लाख और चीनी, उत्पादक फैक्ट्रीज जो फैक्ट्रीज एक्ट, 1948 से निर्देशित होते है। इस एक्ट के तहत कोई भी नियोजन किसी महिला को प्रसूति के तुरंतबाद नियोजित नहीं कर सकता है। हाँ प्रसूति के दिन से चार सप्ताह के बाद नियोजित कर सकता है और नहीं इस काल में कई महिला किसी फैक्ट्री में कार्य कर सकती है। प्रत्येक महिला जो फैक्ट्रीयों में काम करती है, अपने नियोजकों से 6 महीने का मातृत्व लाभ की दावेदार है और नियोजक उन्हें उनके प्रतिदिन के वेतन के आधार पर यह लाभ देने को बाध्य है इसकी एक शर्त यह भी है कि जब कोई महिला मातृत्व लाभ की नोटिस देती है तो उस तिथि के पूर्व उसे पिछले तीन महीने की अवधि में उनकी पूर्णकालिक सेवा होनी चाहिए।

चूंकि हर राज्य में मैटरनिटी बेनिपिफट एक्ट के स्वरूप अलग–अलग थे और लागू राशि की अलग–अलग थे इसीलिए भारत सरकार ने मैटरनिटी बेनिफिट एक्ट, 1961 के तहत पूरे देश में एकरूपता लाने के उद्देश्य से पारित किया जो पूरे दश की सभी फैक्ट्रियों, माइन्सों, प्लान्टेशन्स पर एक साथ लागू होता था, सिर्फ, स्टेट इम्प्लाईज इन्ययोरेन्स स्कीम को छोड़कर। वर्तमान में मैटरनिटी बेनिफिट–26 सप्ताह का कर दिया गया है।

मैटरनिटी बेनिफिट एक्ट, 1945, तथा मैटरनिटी बेनिफिट एक्ट, 1961 दोनों अपने–अपने क्षेत्र मे कार्यरत है। मैटरनिटी बेनिफिट एक्ट, 1961 के अन्तर्गत मातृत्व लाभ जितने दिनों तक ही महिलाओं की अनुपस्थिति होती है, उतने दिनों की दी जाती है (6 सप्ताह प्रसूति काल के पूर्व और 6 सप्ताह प्रसूति काल उपरान्त) प्रतिदिन के औसत वेतनमान के आधार पर और फिर। रू. प्रतिदिन में जो भी अधिक हो। मैटरनिटी एक्ट, 1961 के तहत यह भी प्रावधन है कि प्रसूति की तिथि से पूर्व एक साल में 160 दिनों तक उनकी कार्यविधि होनी चाहिए, तभी उन्हें मातृत्व लाभ दिया जायेगा। एक्ट बताता है–

1. प्रत्येक महिला कर्मी को उनके नियोजकों द्वारा मातृत्व काल के तुरंत पहले तथा प्रसूति के उपरान्त (6 सप्ताह अधिकतम) तथा प्रसूति काल की अवधि का वेतनमान उनके प्रतिदिन के औसत वेतनमान के आधार पर दिया जाएगा।

स्पष्टीकरण– औसत प्रतिदिन के वेतनमान से तात्पर्य प्रसूति के पूर्व के तीन महीनों में उठाये गये प्रतिदिन के औसत वेतनमान से है और फिर 1 रू. प्रतिदिन, इनमें जो भी बड़ा हो।

2. वैसी किसी भी महिला को मातृत्व लाभ नहीं मिलेगा जो प्रसूति तिथि के पूर्व के 1 वर्श के काल में कुल 160 दिनों तक काम नहीं किया हो।

इस प्रावधन से उन्हें वंचित रखा गया है जो आसाम क्षेत्र बाहर से आयी है अथवा जाने के समय ही गर्भवती थी।

व्याख्या इसमें यह देखा जाता है कि उक्त महिला ने कितने दिनों तक कार्य किया है और इस से कबतक अवकाश पर रही है और प्रसूति के पूर्व के 1 साल कितने दिनों तक काम किया गया है।

3. महिलाएँ मातृत्व लाभ के सम्बन्ध में महत्तम 12 सप्ताह तक का दावा कर सकते हैं यार्पन 6 सप्ताह प्रसूति पूर्व और 6 सप्ताह प्रसूति उपरान्त।

यदि प्रसूति के दरम्पान महिला की मृत्यु हो जाती है तो मृत्यु के दिन तक के वेतनमान की अदायगी उसे की जायेगी। अगर महिला ने किसी बच्चे का जन्म दिया है और, जन्म के समय अथवा उसकी मृत्यु हो जाती है तो उसे पूरे 6 सप्ताह की अवधि के राशि की अदायगी उसे की जायेगी और यदि इस अवधि के पूर्व महिला की मृत्यु हो जाती है परन्तु बच्चा जीवित रहता है उसकी कुछ दिनों बाद बच्चे की मृत्यु हो जाती है तो बच्चे की मृत्यु की अवधि तक का वेतनमान उसके परिवार वालों को दिया जायेगा।

निष्कर्ष :– उपरोक्त प्रस्तुति के अनुसार, यह कहा जा सकता है कि आधुनिक समाज सेवा हेतु ऐसे संगठनों की सेवा काफी प्रशंसनीय रही है। पब्लिक सेक्टर की तुलना मे प्राइवेट सेक्टर की गति परिवर्तन हुआ। अंसगठित क्षेत्र में कार्यकारी महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति में कई बदलाव आये है। महिलायें पुरूषों से कदम से कदम मिला कर साथ दे रही है।

श्रम का उचित मूल्य ही असंगठित क्षेत्र की गरीबी को दूर करने का प्रामाणिक उपाय है।

संदर्भ–सूची :–

1. मोहनदास करमंचद गांधी, वूमैन्स रोल सोसायटी, नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद, गुजरात वर्ष 1959, पृ.–5
2. सिविल सर्विसेज सस्परेंट्स टाइम्स, मासिक हिन्दी पत्रिका, अंसारी रोड, दरियागंज दिल्ली, अप्रैल 2008, पृ.–48
3. प्रभा आप्टे, भारतीय समाज क नारी, क्लासिक पब्लिकेशन जयपुर, वर्ष 1996, पृ.–11
4. सुमित्रा कुमारी, डायनेमिक्स ऑफ वूमन एम्पावरमेंट अल्फा पब्लिकेशन दिल्ली, 2006 पृ–15
5. योजना, हिन्दी मासिक पत्रिका, नई दिल्ली, जून 2012, पृ.– 18
6. वही पत्रिका
7. ऑफिस ऑफ द यूनाइटिड नेशस हाई कमिशनर फॉर ह्यूमन राइट्स
8. प्रतियोगिता दर्पण, हिन्दी मासिक पत्रिका, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा, जनवरी 2008, पृ.–1047

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

भारतीय न्याय व्यवस्था में महिलाओं के अधिकार

स्वीटी वर्मा
शोध छात्रा, जैन विश्व भारती इंस्टीट्यूट ऑफ लाडनूराजस्थान
डॉ. पुष्पा मिश्रा
सहायक प्रोफेसर, जैन विश्व भारती इंस्टीट्यूट ऑफ लाडनू, राजस्थान

सारांश :– महिलाओं का प्रश्न अब सिर्फ सामाजिक जीवन के विभिन्न प्रकरणों में पुरूष के साथ उनके अधिकारों की समानता अथवा परिवार में महिलाओं की स्थिति से ही सम्बन्धित नहीं रहा है। अपितु यह उसके परिवर्तन की दिशा में सम्बन्धित वृहद प्रश्न का अंश बन गया है और महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन समाज में पुरूषों व महिलाओं की बदलती हुई भूमिकाओं पर निर्भर करता है। दुनिया की आधी जनसंख्या महिलाओं की है किन्तु यह आधी जनसंख्या पुरूष प्रधान समाज में पुरूष निर्मित नियमों के तहत किसी तरह से अपना जीवनयापन कर रही है। विकास को सदैव समाज के विभिन्न वर्गों को प्रभावित करने वाली बहुआयामी प्रक्रिया होना चाहिए। महिलाओं की स्थिति में सुधार समाज के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक पहलुओं तथा सामाजिक ढाँचे को प्रभावित करेगा। महिलाओं के व्यक्तित्व में समाज के आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक पहलू स्वाभाविक रूप से निहित होते हैं। अतः उनसे सम्बन्धित मुद्दे अलग रखने व उपेक्षित करने के लिए नहीं हैं। अपितु सम्पूर्ण विकास की समस्याओं में भी सम्मिलित है।

भारत में महिलाएँ कमजोर वर्ग में आती हैं तथा असमानता, भेदभाव, क्रूरता शोषण आदि की घटनायें महिलाओं के साथ आम हैं शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा जनसंख्या की दृष्टि से देश में महिलाओं की हस्तक्षेप भागीदारी लगभग पुरूषों के लगभग बराबर हैं परन्तु विभिन्न क्षेत्रों में हिस्सेदारी निर्णय लेने के आर्थिक प्रस्थिति आदि में पुरूष वर्ग से पिछड़ी हुई हैं। देश में इनके स्तर के उच्ची करण हेतु काफी प्रयास किये गये हैं तथा लगातार हो रहे हैं विभिन्न तरह के कानून एवं योजनाएँ महिलाओं के आर्थिक सामाजिक, राजनैतिक स्तर को ऊँचा उठाने हेतु देश में प्रचलित भी हैं। इन कानूनों का ज्ञान होना देश की आधी आबादी के लिए आवश्यक है जिससे कि महिलायें अपने हित की लड़ाई स्वयं लड़ने में सक्षम हो सकें। महिलाओं की इस स्थिति को देखते हुए ह पारिवारिक न्यायालय का गठन किया गया है। महिला संरक्षण हेतु विभिन्न कानूनों की जानकारी देश की आधी आबादी तक पहुँचाये जोन के प्रयास किये जाने चाहिए। महिला कानूनों के उचित क्रियान्वयन एवं महिला संरक्षण हेतु आवश्यक है कि देश की अन्तिम महिला तक को अपनी बात कहने तथा स्वयं के लिए निर्णय लेने का अधिकार एवं छूट की जिम्मेदारी दायित्व समाज को सुनिश्चित करना होगा।

मुख्य बिन्दु :– महिला अधिकार, पारिवारिक न्यायालय, कानून योजनाएँ, संरक्षण।

सरल शब्दों में महिला सशक्तिकरण को महिलाओं को शक्ति देने के रूपमें समझा जा सकता है अपने स्वयं के जीवन का फैसला करें या उनमें ऐसी क्षमताओं को विकसित करें ताकि वे सक्षम हो सकें समाज में उनकी सही जगह पाते हैं। आधी मानव आबादी का गठन करने वाली महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता है और देश की परवाह किए बिना उनका शोषण किया जाता है व वे जिस धर्म में रहती हैं व उस धर्म के बारे में अनभिज्ञ होती हैं। हर जगह महिलाओं को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अधिक या कम डिग्री वाले सभी समाजों में महिलाओं और लड़कियों को शारीरिक व यौन और मनोवैज्ञानिक शोषण के अधीन किया जाता है जो आय व वर्ग और संस्कृति की रेखाओं में कटौती करते हैं। दुर्भाग्य से व भारत उन कुछ देशों में से एक है व जहां महिलाओं के खिलाफ अपराध जबरदस्त तरीके से बढ़ रहे हैं। वास्तव में युगों से भारत में महिलाओं की स्थिति और स्थिति एक विवादास्पद विषय है व क्योंकि यह भारतीय समाज के विरोधाभासी और विरोधाभासी स्वरूप को दर्शाता है। एक तरह से लोग भारतीय परंपरा से अधिक देवी के रूप में महिलाओं को प्रार्थना की पेशकश करते हैं व और संस्कृति कहती है कि ''यात्रा नारी पूज्यन्ते तत्र रमन्ते देवता''। लेकिन एक ही समय में और दूसरी तरफ महिलाओं को द्वितीयक स्थिति में माना जाता है और उन्हें जन्म से मृत्यु तक भी अत्याचार के लिए रखा जाता है। इस बीच व न्याय पालिका के माध्यम से संवैधानिक कानून और सामान्य कानून अत्याचारों से महिलाओं के उद्धारकर्ता के रूपमें काम कर रहा है और अपने जीवन के सभी भाले में महिलाओं की स्थिति के लिए कई तरीकों से मदद कर रहा है। हमारे देश में महिलाओं की स्थिति वर्तमान स्तर तक बढ़ गई है जो कि निशान तक नहीं हो

सकती है व लेकिन फिर भी संतोषजनक है क्योंकि सक्रिय न्याय पालिका के साथ–साथ सार्वजनिक उत्साही लोग हैं जिन्होंने हमारे देश की महिलाओं की स्थिति को सफलता पूर्वक वर्तमान स्तर तक पहुंचाया है। निष्पक्ष और स्वतंत्र न्यायपालिका ने हमेशा न्याय के सच्चे संरक्षक की भूमिका निभाई है। आजादी के बाद से कई बार न्यायपालिका ने समाज की आधी आबादी यानी व हमारे देश की महिलाओं के पक्ष में विधायी प्रावधानों के दायरे में सक्रिय रूप से व्याख्या और प्रवर्धन किया है।

संवैधानिक अधिकार महिलाओं की रक्षा करते हं सुरक्षात्मक भेद–भाव की अवधारणा :– भारत के संविधान ने न केवल पुरुषों के साथ महिलाओं की बराबरी का दर्जा दिया है व बल्कि राज्य को यह भी अधिकार है कि वह महिलाओं के पक्षमें सकारात्मक भेदभाव के उपायों को अपनाओ ताकि उनके द्वारा सामना किए जा रहे संचयी सामाजिक आर्थिक व शिक्षा और राजनीतिक नुकसान को बेअसर किया जा सके। सभी क्षेत्रों में महिलाओं की उन्नति के लिए संवैधानिक बंधुओं ने राज्य को लोकतांत्रिक राजनीति के भीतर विशेष कानून व नीतियां व योजनाएं और कार्यक्रम बनाने का अधिकार दिया। संविधान के निर्माताओं ने लिंग के बावजूद न्याय व स्वतंत्रता और समानता प्रदान करने का लक्ष्य रखा है व इसे प्रस्तावना, मौलिक अधिकार व राज्यनीति के निर्देशक सिद्धांत व मौलिक कर्तव्यों और अन्य प्रावधानों में देखा जा सकता है। प्रस्तावक निर्माताओं के दिमाग को खोलने की कुंजी है। संवैधानिक फ्रैमर का उद्देश्य लिंग व स्थिति, धर्म व पंथ और जाति आदि के बावजूद लोगों को न्याय व स्वतंत्रता और समानता प्रदान करना है व इससे कोई भी समझ सकता है कि फ्रैमर लैंगिक समानता वाले समाज की स्थापना करना चाहते हैं व जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इसे बनाए रखने की कोशिश करता है। महिला सशक्तिकरण भारत में महिलाको उपलब्ध अधिकारों को संवैधानिक अधिकारों और कानूनी अधिकारों के रूप में दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। संवैधानिक अधिकार वे हैं जो संविधान के विभिन्न प्रावधानों में प्रदान किए गए हैं व जो भूमि का मूल कानून है। दूसरी ओर व कानूनी अधिकार वे हैं व जो विभिन्न कानूनों में प्रदान किए जाते हैं। भारत का संविधान पुरुषों और महिलाओं को स्थिति और अवसर की समानता का वचन देता है।

भारत में महिलाओं के लिए संवैधानिक अधिकार–

1. समानता का अधिकार और कानूनों का समान संरक्षण (अनुच्छेद 14),
2. राज्य लिंग के आधार पर भारत के किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं करेगा (अनुच्छेद 15(1)
3. राज्य को महिलाओं के लिए कोई विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में व यह प्रावधान राज्य को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव करने में सक्षम बनाता है (अनुच्छेद 15(3)
4. कोई भी नागरिक व लिंग के आधार पर राज्य के अधीन किसी भी रोजगार या कार्यालय के लिए भेदभाव या अयोग्य नहीं होगा (अनुच्छेद 16(2)
5. मनुष्यों में जबरदस्ती और जबरन श्रमवर्जित है (अनुच्छेद 23 (1)
6. पुरुषों और महिलाओं के लिए सुरक्षित रूप से राज्य आजीविका के पर्याप्त साधनों का अधिकार (अनुच्छेद 39(ए)
7. भारतीय पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन को सुरक्षित करने के लिए राज्य (अनुच्छेद 39(डी)
8. राज्य को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि महिला श्रमिकों के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया जाता है और उन्हें आर्थिक मजबूती के लिए मजबूर नहीं किया जाता है ताकि वे अपनी ताकत के लिए अवोकेन में प्रवेश कर सकें (अनुच्छेद 39 (ई)।
9. राज्य काम और मातृत्व राहत की उचित और मानवीय स्थितियों को सुरक्षित करने के लिए प्रावधान करेगा (अनुच्छेद 42)।
10. राज्य विशेष रूप से लोगों के कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए बढ़ावा देता है (अनुच्छेद 46)।
11. पोषण के स्तर और अपने लोगों के जीवन स्तर को बढ़ाने के लिए राज्य (अनुच्छेद 47,। (10)
12. यह भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक प्रथाओं का त्याग करे (अनुच्छेद 51–ए (ई),।
13. प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा भरी जाने वाली सीटों की एक तिहाई संख्या महिलाओं के लिए आरक्षित होगी (अनुच्छेद 243–डी (3),।
14. प्रत्येक स्तर पर पंचायतों में अध्यक्षों की कुल संख्या का एक तिहाई हिस्सा महिलाओं के लिए आरक्षित किया जाएगा (अनुच्छेद 243–डी (4)।
15. प्रत्येक नगर पालिका में प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा भरी

जाने वाली सीटों की एक तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित होगी (अनुच्छेद 243–टी (3)।

16. नगर पालिकाओं में अध्यक्षों के कार्यालय ऐसे शिष्टाचार में महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे, जिन्हें राज्य विधान मंडल (अनुच्छेद 243–टी (4) प्रदान कर सकता है। आदि।
17. हर राज्य के विधानसभा और विधानसभा के चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे व कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जो भारत का नागरिक है और जो मतदाता होने के लिए लिंग व स्थिति आदि के अठारह वर्ष से कम आयु का नहीं है। (अनुच्छेद३२५ (११) और ३२६ (१२))।

महिलाओं के लिये सामाजिक विधायन :–

1. सती प्रथा निवारण अधिनियम 1829 (संशोधन 1987)
2. हिन्दू विवाह पुर्नविवाह अधिनियम 1856
3. हिन्दू स्त्रियों का सम्पत्ति पर अधिकार अधिनियम 1937
4. बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1929 (संशोधन 1978)
5. विशेष विवाह अधिनियम 1872 (संशोधन 1923, 1954)
6. हिन्दू विवाह तथा विवाह विच्छेद अधिनियम 1955 (संशोधन 1976)
7. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956
8. दहेज प्रतिबन्ध अधिनियम 1961 (संशोधन 1984, 1986)
9. मुस्लिम विवाह (विवाह के अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम
10. महिलाओं तथा लड़कियों का अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम 1956 (संशोधन 1986)
11. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005
12. मातृत्व लाभ अधिनियम 1961
13. समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976

निष्कर्ष :– भारत में विधायिकाओं द्वारा कई कानून व प्रशासक और न्यायिक घोषणाओं के नियम और अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति के साथ–साथ समूह महिला संगठन महिला सुरक्षा और सशक्तीकरण के लिए निरंतर संबंध रखते हैं व लेकिन महिलाओं के लिए गैर बराबरी व गैर हित के कारण उनके लिए बहुत कम न्याय और समाज में लोग महिलाओं को जागरूक और सशक्त बनाना समय की जरूरत है। एक सशक्त महिला न केवल अपनी सुरक्षा करती है बल्कि अपने आस पास के लोगों की भी रक्षा करती है।इसलिए व मौन तोड़ने का समय आ गया है व महिलाओं को इस पुरुष प्रधान समाज में अपनी जगह के लिए लड़ना चाहिए। इसकी शुरुआत परिवार से ही होनी चाहिए। मानसिकता और पितृ सत्तात्मक विचारों ने भारतीय लोगों की मानसिकता को जन्म दिया है क्योंकि उम्र में बदलाव होना चाहिए व तभी कानून का असली फल महिलाओं को मिलेगा। ''एक आवाज वाली महिला व परिभाषा के अनुसार व एक मजबूत महिला है।'' – मेलिंडागेट्स

ग्रन्थ सूची :–

1. महिला विकास और सशक्तिकरण, प्रज्ञा शर्मा (2001), अविष्कार पालि शर्मा डिस्ट्रीब्यूटर्स
2. राज्य की महिला नीति, महिला व बाल विकास विभाग, द्वारा यूनिसेफ, जयपुर (2004)
3. धावन हरिमोहन एवं कुमार अरूण, महिला आरक्षण व भारतीय समाज
4. सिंह (डॉ) निशान्त, महिला राजनीति और आरक्षण।
5. गर्ग (डॉ) वीना, भारतीय महिलाएँ।
6. यादव (डॉ) वीरेन्द्र , महिला स" ाक्तिकरण।
7. राठौर, कमल सिंह, महिलाओं का राजनैतिक जागरूकता।
8. http://www.socialresearchfoundation.com/upoadreserchpapers/1/44/1506261215321st%20sapna%20yadav.pdf
9. http://www.livelaw.in/women-laws-india/
10. http://www.legalserviceindia.com/legal/article-116-judicial-activism-in-protection-and-promotion-of-women-in-india-with-special-reference-to-indian-constitution.html

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

जैन दर्शन में स्मृति प्रमाण का समीक्षात्मक अध्ययन

कुँवर नीरज सिंह
शोध छात्र, दर्शनशास्त्र विभाग, टी.डी.पी.जी.कालेज(वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल वि.वि.), जौनपुर, उ.प्र.

जैन दर्शन में स्मृति को एक स्वतन्त्र प्रमाण के रूप में स्वीकार किया गया है। पूर्व में जाने हुए किसी पदार्थ का बाद में स्मरण कराने वाला ज्ञान स्मृति कहलाता है। इसमें हम पूर्व में जाने गये किसी पदार्थ का बाद में जब प्रत्यक्ष करते हैं तो वहाँ स्मृति आ जाती है। यहाँ पर प्रत्यक्ष ज्ञान को स्मृति का निमित्त कारण माना गया है। धारणा नामक संस्कार के कारण ही स्मृति ज्ञान उत्पन्न होता है। धारणा नामक संस्कार ही स्मरण को उत्पन्न करने का कारण बनता है। स्मरण में जो पदार्थ हमारे सामने आता है वह तो वर्तमान समय में हमारे सामने नहीं होता फिर भी वह पदार्थ हमारे पूर्व अनुभव का विषय तो रहा ही है और इसी अनुभव का दृढ़ संस्कार सादृश्यता आदि के माध्यम से पदार्थ को हमारे सामने ला देता है। स्मृति ज्ञान के माध्यम से ही हमारा सम्पूर्ण लोक व्यवहार चलता है। उदाहरण के लिए मेरे द्वारा कार को अपने पड़ोसी को कुछ दिन के लिए उधार पर दिया गया। पुनः यदि हमें वह कार लेना होगा तो स्मरण के आधार पर वह कार मुझे मिल पायेगी।

जैन दार्शनिकों का मानना है कि धारणा नामक अनुभूत पदार्थ में हमें 'इदम्' का बोध कराते हैं तथा संस्कार से उत्पन्न होने वाली स्मृति उसी अनुभूत पदार्थ को 'तत्' के रूप में जानती है। इस प्रकार जैन दार्शनिक संस्कार विषय से उत्पन्न होने वाले अनुभूत विषय को 'वह' रूप में जानने वाले ज्ञान को स्मृति कहते हैं। जैन दार्शनिकों ने इसे अन्य ज्ञानों से भिन्न माना है। जैसे–प्रत्यक्ष ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों से उत्पन्न ज्ञान होता है जबकि स्मृति ज्ञान पूर्व संस्कारों के अनुभूत होने से उत्पन्न होने वाला ज्ञान है। इन दोनों ज्ञानों का विषय तो एक है फिर भी इसमें भेद पाया जाता है। प्रत्यक्ष में जिस देवदत्त को देखकर हम कहते हैं 'यह देवदत्त' उसे ही स्मृति में 'वह देवदत्त' इस रूप में जाना जाता है। स्मृति का विषय सदैव अनुभूत पदार्थ होता है जबकि प्रत्यक्ष का विषय वर्तमान पदार्थ होता है। इस प्रकार प्रत्यक्ष एवं स्मृति में स्वरूप भेद पाया जाता है।

जैन दार्शनिकों द्वारा प्रत्यक्ष एवं अनुमान प्रमाण से भिन्न एक स्वतन्त्र प्रमाण के रूप में स्मृति को स्वीकार किया गया है। तत्वार्थ सूत्र में मतिज्ञान के पर्यायवाची शब्दों में स्मृति ज्ञान को गिनाया गया है।[1] मतिज्ञान के इसी पर्यायवाची शब्दों से अकलंक देव ने स्मृति को प्रमाण के रूप में स्थापित किया है। अकलेक देव से पूर्व स्मृति को जैन दर्शन में प्रमाण की संज्ञा नहीं मिली थी। अतः अकलंक देव ही स्मृति को प्रमाण के रूप में स्थापित करने वाले आचार्य माने गये हैं। विद्यानन्द के अनुसार– तत् (वह) आकार वाले एवं अनुभूत अर्थ को विषय करने वाले ज्ञान को स्मृति कहा जाता है।[2] माणिक्य नन्दी के अनुसार संस्कार की जागृति से 'तत्' अकारक ज्ञान स्मृति है।[3] संस्कार का तात्पर्य जैन दर्शन में धारणा भी होता है। अनुभूति में निर्णीय ज्ञान को दृढ़ता पूर्वक ग्रहण करना ही धारणा या संस्कार कहलाता है। संस्कार से ही स्मृति की उत्पत्ति होती है इसलिए अकलंक देव स्मृति को संस्कार या धारणा का फल मानते हैं। वादिदेव सूरि कहते हैं–संस्कार की जागृति से उत्पन्न अनुभूत अर्थ को विषय करने वाला एवं तत् आकार वाला ज्ञान स्मृति है।[4] हेमचन्द्र सूरि के अनुसार–वासना अर्थात् संस्कार के उद्बोध से उत्पन्न तत् आकार ज्ञान स्मृति है।[5]

जैन दर्शन को छोड़कर सम्पूर्ण भारतीय दर्शन में स्मृति को स्वीकार तो किया गया है परन्तु एक स्वतन्त्र प्रमाण के रूप में इसे केवल जैन दर्शन में ही स्वीकार किया गया है।

जैनियों के स्मृति प्रमाण को अप्रमाण मानने का सर्व प्रमुख कारण यह रहा है कि स्मृति 'गृहीतग्राही' होती है। मीमांसकों का मानना है कि अनुभव के द्वारा पदार्थ को जिस रूप ग्रहण किया जाता है स्मृति उससे अधिक कुछ भी ग्रहण नहीं करती है और न ही स्मृति के किसी नये अंश का बोध कराया जाता है। इस कारण स्मृति को एक स्वतन्त्र प्रमाण मानना उचित नहीं है। वैशेषिक दर्शन में स्मृति को विद्या का एक प्रकार बताया गया है। श्रीधर के अनुसार– स्मृति पूर्वानुभूत विषय के ही उपदर्शन से अर्थ का निश्चय कराती है, इसलिए वह पूर्वानुभूत के परतन्त्र होने से प्रमाण नहीं कही जा सकती है।[6] न्याय दर्शन में बौद्धों के क्षणिकवाद का खण्डन करने के लिए स्मृति को हेतु के रूप में स्वीकार किया गया है। यह न तो प्रमा ही है और न ही प्रमाण। वात्स्यायन का मानना है कि क्षणिक विज्ञानों के प्रवाह मात्र को आत्मा कहकर आत्मा की नित्यता का खण्डन करना न तो अनुभव और न ही स्मरण की सत्ता को सिद्ध करता है। अतः इनके आधार के रूप में नित्य

आत्मा की सत्ता को मानना आवश्यक है। अतः स्मृति को हेतु के रूप में स्वीकार करके ही आत्मा की सत्ता को स्थापित किया जा सकता है। जयन्तभट्ट द्वारा अर्थजन्य न होने के कारण स्मृति को प्रमाण नहीं माना गया है। इनका मानना है–स्मृति गृहीतग्राही ज्ञान होने से अप्रमाण नहीं है, अपितु पदार्थ से नहीं उत्पन्न होने के कारण अप्रमाण है।[7] यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात यह है कि न्याय–वैशेषिक दर्शन में धारावाहिक ज्ञान को गृहीतग्राही होने के बावजूद भी प्रमाण माना गया है। इस रूप में यह मीमांसकों के प्रमाण लक्षण अनधिगतार्थग्राही का खण्डन करते हैं। वाचस्पति मिश्र ने भी स्मृति को प्रमा नहीं माना है क्योंकि ये शब्द एवं अर्थ के सम्बन्ध को लोकाधीन मानते हैं।[8] आचार्य उदयन मानते हैं कि ऋषियों ने स्मृति ज्ञान के लिए कभी प्रमाण शब्द का प्रयोग नहीं किया है, इसलिए स्मृति ज्ञान प्रमाण नहीं है।

स्मृति को प्रमाण न मानने के सम्बन्ध में सबसे प्रबल तर्क बौद्ध दार्शनिकों द्वारा दिया गया है। ये तर्क निम्नलिखित हैं–

1.स्मृति गृहीतग्राही है अर्थात् ये प्रत्यक्ष आदि द्वारा गृहीत अर्थ का ज्ञान करती है। इस कारण यह प्रमाण नहीं है।

2.स्मृति की उत्पत्ति ज्ञान अर्थ से नहीं होती है। जो ज्ञान अर्थ से उत्पन्न होता है, वही अर्थ का अव्यभिचरित ज्ञान कराने से प्रमाण होता है।

3.स्मृति को यदि प्रमाण माना जाएगा तो इच्छा, द्वेष आदि को भी प्रमाण मानना पड़ेगा, जिससे अव्यवस्था होगी।

4.स्मृति ज्ञान विसंवादक है।

5.स्मृति ज्ञान से किसी प्रकार का कोई नया अर्थ नहीं निकलता है, इसलिए स्मृति ज्ञान प्रमाण नहीं है।

उपर्युक्त सभी प्रकार के आक्षेपों का निराकरण करते हुए स्मृति ज्ञान को प्रमाण के रूप में स्थापित करने के लिए अकलंक देव निम्नलिखित तर्क देते हैं।

1.स्मृति का सम्बन्ध अतिसंवादी ज्ञान से होता है, इसलिए स्मृति को प्रमाण कहा जाता है।[9] प्रत्यक्ष ज्ञान भी अर्थाकार होने के कारण प्रमाण नहीं माना जाता अपितु यह अविसंवादी होने के कारण ही प्रमाण माना जाता है। यदि प्रत्यक्ष को अर्थाकार होने से प्रमाण माना जाएगा तो व्यवस्था नहीं बन सकेगी क्योंकि प्रत्यक्ष का ग्राह्य एवं प्राप्य अर्थ भिन्न होता है।[10] इस प्रकार प्रत्यक्ष को अविसंवादी होने के कारण प्रमाण कहा जाता है। स्मृति द्वारा भी अर्थक्रिया में विसंवाद उत्पन्न नहीं होता। अतः उसे भी प्रत्यक्ष की भाँति प्रमाण मानना चाहिए।[11] जब स्मृति में किसी भी प्रकार का विसंवाद आएगा तो वह प्रमाणाभास कहलाएगा।

2.कथंचित् गृहीतग्रह ही होने से प्रत्यक्ष द्वारा गृहीत विषय का ग्राही होने से यदि स्मृति को अप्रमाण माना जाता है तो यह उचित नहीं है क्योंकि स्मृति को प्रमाण मानने का प्रत्यक्ष से भिन्न प्रयोजन है।[12] किसी के द्वारा ज्ञात अर्थ के सदृश आकार एवं भेद वि'ोषों की उत्तरोत्तर पर्याय विशेष की अर्थ क्रिया को सिद्ध करने की अभिलाषा होने पर स्मृति का प्रमाण अविरुद्ध रहता है।[13] स्मृति के द्वारा अज्ञान का निवारण तथा अपने विषय में प्रवृत्ति होने के कारण स्मृति को प्रमाण की संज्ञा दी जाती है। इसके अलावा यदि कालगत भेद से देखा जाए तो स्मृति का ज्ञान तो अगृहीतग्राही ही रहता है। अतः स्मृति प्रमाण है।

3.स्मृति को प्रमाण मानने के विषय में सबसे प्रबल तर्क यह है कि स्मृति को माने बिना व्याप्ति ज्ञान सम्भव ही नहीं हो सकता है और व्याप्ति ज्ञान के सम्भव न होने पर अनुमान की सिद्धि नहीं हो सकती है। यदि लिंग और लिंगी की समस्त क्षेत्र एवं काल में व्याप्ति जानने के पश्चात् अनुमेय का ज्ञान करने के लिए अनुमान प्रमाण की प्रवृत्ति होती है तो यह व्याप्ति ज्ञान स्मृति के बिना असिद्ध है।[14] पर्वत पर धुआँ है क्योंकि वहाँ पर आग है। इस व्याप्ति के सिद्ध हुए बिना अनुमेय अर्थ का ज्ञान नहीं हो सकता है। यदि ऐसा भी मान लिया जाए कि व्याप्ति के बिना ही अनुमान की प्राप्ति हो जाती है तो भी इसकी प्राप्ति स्मृति के बिना सम्भव नहीं है क्योंकि अनुमान प्रत्यक्ष के उपरान्त होने वाला ज्ञान है। अतः यह प्रत्यक्ष पर आधारित है। इस प्रकार लिंग एवं लिंगी के प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य की व्यवस्था का आधार स्मृति ही है। यदि देशादि से रहित सामान्य धूमादि को विषय करने वाली व्याप्ति से पर्वतादि विशिष्ट अग्नि आदि का ज्ञान हो जाता है तो फिर पूर्व अनुभूत स्मृति से भी उस प्रकार की व्याप्ति हो जाती है।[15]

4.स्मृति के द्वारा अज्ञान की निवृत्ति की जाती है तथा विषय का प्रकाशन किया जाता है। इस कारण स्मृति को प्रमाण कहना उचित है। अकलंक देव कहते हैं–'स्मृति प्रमाण है तथा प्रत्यभिज्ञा उसका फल है। बिना स्मृति के प्रत्यभिज्ञा सम्भव ही नहीं है।'[16] इनका मानना है कि स्मृति ज्ञान से ही स्मृति की प्रामाण्यता सिद्ध हो जाती है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि

अकलंक देव स्मृति को अविसंवादी होने से, कालगत दृष्टि से अनधिगतार्थ ग्राही होने से, लिंग–लिंगी के सम्बन्ध पर आधारित व्याप्ति की प्रमाणता एवं अप्रमाणता के आधार पर अनुमान की विवेचना करने से प्रमाण की कोटि में रखते हैं। अतः स्मृति ज्ञान स्मृति प्रमाण ही है।

यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जैन दर्शन में सभी स्मृतियों को प्रमाण की कोटि में नहीं रखा गया है। जैन दार्शनिकों द्वारा केवल उन्ही स्मृतियों को प्रमाण की कोटि में रखा गया है जो अविसंवादी हों, अनधिगतार्थग्राही हों, स्व तथा पर का नि"चायक ज्ञान कराने वाली हों और व्यवहार में उपयोगी हों। यद्यपि जैनाचार्यों द्वारा स्मृति की उत्पत्ति में ही स्मृति का प्रमाण स्वीकार किया जाता है परन्तु स्मृति की सबको अनुभति होने के बावजूद भी व्यावहारिक स्तर पर इसमें विसंवाद देखा जाता है। इस विसंवादकता का निराकरण स्वयं स्मृति द्वारा सम्भव नहीं है क्योंकि स्मृतियाँ सदैव धारणा या संस्कार के अनुरूप होती हैं। प्रत्यक्ष के द्वारा हमें जिस अर्थ का ज्ञान होता है, उस अर्थ या विषय के सम्बन्ध में यदि हमारा संस्कार धूमिल है अथवा अप्रमाणित है अथवा बहुत समय पहले विषय को देखे जाने के कारण शंकाग्रस्त है तो स्मृति ज्ञान कभी भी सम्यक् ज्ञान नहीं हो पाएगा। इस कारण स्मृति प्रमाण भी सम्भव नहीं हो पाएगा और अविसंवादकता के स्थान पर विसंवादकता पायी जाएगी। स्मृति की विसंवादकता का ज्ञान सदैव या तो प्रत्यक्ष से या प्रत्यभिज्ञान से ही किया जा सकता है।

स्मृति प्रमाण को लेकर किये गए सम्पूर्ण अध्ययन का सार यह है कि जैन दार्शनिकों द्वारा स्मृति को प्रमाण के रूप में स्थापित करने का प्रयास स्वयं इनका मौलिक प्रयास है। इनके अतिरिक्त अन्य किसी भी भारतीय दर्शन में स्मृति को प्रमाण के रूप में स्थापित नहीं किया गया है। इसका कारण है कि जैन दार्शनिकों को छोड़कर सभी भारतीय दार्शनिकों ने स्मृति ज्ञान की प्रामाणिकता को प्रत्यक्ष के द्वारा प्राप्त अर्थों एवं भूतकाल के आधार पर भविष्य का ज्ञान कराने के अर्थों में ही लिया है। इन्होने इसे किसी नवीन ज्ञान की प्राप्ति में सहायक नहीं माना है।

सन्दर्भ

1.तत्वार्थ सूत्र, 1/13
2.तदित्याकारानुभूतार्थविषया स्मृतिः। –प्रमाण परीक्षा, पृ0 42
3.संस्कारोद्बोधनिबन्धना तदित्याकारा स्मृतिः। –परीक्षामुख 3/3
4.तत्र संस्कार प्रबोधसम्भूतः अनुभूतार्थ विषयं, तदित्याकारं वेदनम् स्मरणम्।–प्रमाणनयतत्वालोक, 3/3
5.वासनोद्बोधहेतु का तदित्याकारा स्मृतिः। –प्रमाणमीमांसा, 1/2/3
6.अतएव न प्रमाणं तस्याः पूर्वानुभवविषयत्वोपदर्शनेनार्थ निश्चिन्वत्या अर्थपरिच्छेदे पूर्वानुभवपारतन्त्र्यात्। –न्यायकन्दली, पृ0 627
7.न स्मृतेरप्रमाणत्वं गृहीतग्राहिताकृतम्। अपित्वनर्थजन्यत्वं तदप्रामाण्यकारणम्।।–न्यायमंजरी, पृ0 21
8.न्यायवार्तिक तात्पर्यटीका, पृ0 21
9.प्रमाणमविसंवादात्।–सिद्धिविनिश्चय 3/3
10(1).प्रत्यक्षस्यापि प्रामाण्यमविसंवादात् न पुनरर्थाकारानुकारितया अति प्रसंगात्।–सिद्धिविनिश्चय वृत्ति, 3.2, पृ0 175
(2).प्रमाणमर्थसंवादात् प्रत्यक्षान्वयिनी स्मृतिः।–प्रमाण संग्रह कारिका 10
11.न हितयाऽर्थ परिच्छिद्य अर्थक्रियायां विसंवाद्यते।–सिद्धिविनिश्चय वृत्ति 1.9, पृ0 38
12.गृहीत ग्रहणान्नो चेन्न प्रयोजनभेदतः।–सिद्धिविनिश्चय, 3.2
13.क्वचित् सदृशाकारभेदविशेषामामुत्तरोत्तर पर्याय विशेषसाध्यार्थ क्रियावाच्छायां तथैव प्रामाण्यविरोधात्।–सिद्धिविनिश्चय वृत्ति, 3.2, पृ0 175
14.साकल्येनादितो व्याप्तिः पूर्व चेल्लिङ्.गलिङ्.गनोः। अनुमेयस्मृतिः सिद्धा न प्रमाणं विशेषवत्।।–सिद्धिविनिश्चय, 3.3
15.सिद्धिविनिश्चय वृत्ति, 3.3, पृ0 177
16.प्रत्यभिज्ञा फलं तस्याः प्रामाण्यं प्रतिपत्तितः।–प्रमाण संग्रह, 10

International Journal of Social Science & Management Studies - I.J.S.S.M.S.
Peer Reviewed - Refereed Research Journal & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 6, No. – 9, Oct. - 2020
2020

वैदिक काल में शिक्षा व्यवस्था –एक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन
सहा.प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान)
पं. देवी प्रसाद चौबे शास. महाविद्यालय, साजा जिला– बेमेतरा (छ.ग.)

सारांश– वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था भारतीय पद्धति की मूलभूत पहचान रही है, जिसके अंन्तर्गत बालको को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान की जाती । जिसका उद्देश्य बालको को भावी जीवन में एक सफल व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनाना था जिसके तहत आयु के अनुसार अनौपचारिक शिक्षा ''विद्यारम्भ'' नामक संस्कार से घर पर ही माता पिता के द्वारा बालकों को दी जाने वाली शिक्षा थी। गुरूकुल में प्रवेश के पश्चात बालको को वेदाभ्यास के साथ–साथ व्यवहारिक शिक्षा प्रदान करना , ब्रम्हचर्य का पालन कराना , गृहत्यागी तथा भीक्षाटन भी सिखाया जाता ताकि बालक अहंकार, वासनाओं से दूर रहकर अपना जीवन सहज बनाने की प्रेरणा प्राप्त कर सके। वैदिककालीन शिक्षा व्यवस्था अत्यंत उन्नत थी जहां नारी शिक्षा का भी प्रावधान था। नारी को वेदाध्यन तथा यज्ञ संपादन का अधिकार प्राप्त था। बिना पत्नि के कोई भी पुरूष यज्ञ का संपादन नही कर सकता था। वैदिक कालिन शिक्षा याज्ञिक एवं धार्मिक थी अतः स्त्रियों को भी यज्ञ करने का अधिकार था । वैदिक युग में पुत्रियों की शिक्षा पुत्रों के समान होती थी उपनयन संस्कार पुत्रों की भांति होते थे ।

शुद्रों को भी इच्छानुसार वैदिक साहित्य पढ़ने का अधिकार था तथा ज्ञान व विद्या प्रदान की जाती थी शुद्र शिक्षा ग्रहण कर सकते थे इसका उपनिषदो में उल्लेख भी मिलता था। जो कि धीरे–धीरे समय के साथ विलुप्त होता गया। वैदिक काल में शिक्षा के प्रारंभिक चरण में पिता या आचार्य मौखिक शिक्षा प्रदान करते थें जिसके तहत शुद्ध उच्चारण एवं पाठ सिखाने के साथ ही साथ वादविवाद को विशेष महत्व दिया जाता था। बालक अपने पाठ को बार–बार दोहराकर कंठस्थ करते थे। इसके साथ ही आरंभिक गणित, व्याकरण तथा ज्योतिष तथा छंद शास्त्र का बोध कराया जाता था। उपनयन संस्कार के पश्चात बालक वेदों का पठन–पाठन का अभ्यास करता था । वेदों को लिपिबद्ध करना प्रतिबंध होने के पर भी लिपि का समुचित ज्ञान कराया जाता था । जनभाषा संस्कृत का ज्ञान आवश्यक रूप से कराया जाता था ।

की वर्ड– वैदिक काल, शिक्षा, गुरूकुल, आचार्य, पठन पाठन, उपनयन संस्कार, वेद, वैदिक साहित्य, शिक्षा व्यवस्था अध्यात्म।

प्रस्तावना– भौतिकता के प्रति व्यक्ति का एक सहज स्वभाव है किन्तु उसका सत् से परिपूर्ण मन उसे सदैव अध्यात्म की ओर प्रेरित करता है यही कारण है कि व्यक्ति अपने मूल अंतस चेतना को सदैव जानना चाहता है जो उसे 'सत्' और 'असत' का भेद कराती है और निरंतर आगे बढ़ने को प्रेरित करती है । इसी चेतना के सबसे सहज स्वरूप को 'ज्ञान' के माध्यम से जान सकते है क्योंकि ज्ञान ही वह भाव है जो व्यक्ति के सहज विकास के साथ–साथ उसके अंतस स्थित चेतन तत्व को उजागर करती है। ज्ञान का सदविकास प्रत्येक अवस्था पर वाछंनीय है इसी कारण हमारे पुरातन मनिषियों ने ज्ञान की अवधारणा को शिक्षा के साथ जोड़ा ताकि बालपन से ही 'सत्' तथा अध्यात्मिक चेतना की प्राप्ति के उद्देश्य को बालक उपने संपूर्ण जीवन काल में प्राप्त कर सके। इसी उद्देश्य से वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था की स्थापना हमारे मनिषियों ने की जिसके अंतर्गत गुरूकुल के माध्यम से बालको को शिक्षा प्रदान किया जा सके। वैदिक कालिन ' शिक्षा के अनुसार शिक्षा ही मानव के सर्वागींण विकास का आधार रही जिसे अभीष्ट मानकर उसमें नैतिक चरित्र का निर्माण, व्यक्तित्व निमार्ण, सांस्कृतिक संरक्षण का बीजारोपण किया जाता था ।

वैदिक काल में प्रारंभिक शिक्षा– वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था में प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही माता पिता द्वारा दी जाती थी जिसके लिए 'विद्यारम्भ' नामक संस्कार का उल्लेख उपनिषदों में मिलता है। यह एक अनौपचारिक शिक्षा हुआ करती थी। जो व्यवहारिक ज्ञान तथा शिष्टाचार का बोध बालकों के भीतर कराती थी। यह कार्य आमतौर पर पिता का माना जाता था जिसके कारण पिता के कर्तव्यों में बच्चे के लालन पालन के साथ ही साथ शिक्षा प्रदान करना भी जोड़ दिया गया। विद्यारम्भ के साथ–साथ '' अक्षरारम्भ'' नामक संस्कार का उल्लेख भी मिलता है जिसके अंतर्गत किसी शुभ दिन तथा मुहुर्त देखकर सभी वर्णो के बालकों को अक्षर का अभ्यास प्रारंभ कराया जाता था जिसमें पहले श्री गणेश की पूजा, विद्या की देवी सरस्वती, लक्ष्मी तथा कुल देवता की विधिवत आराधना

की जाती थी। बालको को लकड़ी की काली पट्टीका पर स्वास्तिक बनाकर अक्षरारम्भ का विधिवत शुभारंभ किया जाता था। यह परंपरा बालकों की अनौपचारिक शिक्षा से संबंधित थी। किन्तु अक्षरों और वर्णमाला का ज्ञान इसी दौरान कराया जाता था किन्तु कोई विशेष पाठशाला की स्थापना इस समय नही है अक्षरों तथा वर्णमाला के ज्ञान के साथ ही शुद्ध उच्चारण एवं पाठ भी सिखाया जाता था । बालक अपना पाठ बार–बार दुहराकर कण्ठस्थ करते थे। प्रारंभिक शिक्षा मूलतः मौखिक थी इसी कारण बालकों के ज्ञान वर्धन हेतु वाद विवाद को अधिक महत्तव दिया जाता था किन्तु उत्तर वैदिक काल में लेखन कला से ज्ञान को पठन पाठन में सम्मिलित कर लिया गया। वेदों को लिपिद्ध करना निशिद्ध था उसके बाद भी बालकों को लिपि का अभ्यास कराया गया जिसके अन्तर्गत आरंभिक गणित उच्चारण, व्याकरण, ज्योतिष तथा छंद शास्त्र का सामान्य ज्ञान कराया जाता था हांलाकि लिपि का ज्ञान होने के पश्चात भी तात्कालिक प्रारंभिक शिक्षा मौखिक ही थी । वास्तव में इस प्रकार की प्रारंभिक शिक्षा बालकों के लिए पूर्णतः माता पिता के संरक्षण में अनौपचारिक प्रकार से होती थी जिसमें बालक जीवनोपयोगी सामान्य व्यवहार आस पड़ोस के साथ शिष्टाचार सामाजिक एवं धार्मिक व्यवहार सीखता।

वैदिक शिक्षा में उपनयन संस्कार–

वैदिक काल में शिक्षा, सामाजिक, मानसिक, आध्यात्मिक प्रगति का मूल आधार रही। शैक्षणिक संस्कारों के दिए जाने के पीछे यह प्रयोजन रहा कि बालको को उनके कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाकर उनके भावी जीवन को व्यवहारिक व सरल बनाया था सके ताकि वह स्वयं के जीवन को उत्कृष्ठ बनाने के साथ–साथ समाज का भी एक अभूतपूर्व व जिम्मेदार अंग बन सके। इस हेतु बालकों का गुरूकुल में प्रवेश कार्य उपनयन संस्कार के माध्यम से होना था। उपनयन का शाब्दिक अर्थ है गुरू के पास शिक्षा के लिए ले जाना। अथर्ववेद में उपनयन का अर्थ ब्रम्हचारी को आचार्य द्वारा ग्रहण करने के अर्थ में लिखा गया है। उपनयन संस्कार उनके लिए किया जाता है जो विद्या सीखना चाहता है। वास्तव में विद्यारम्भ के अनौपचारिक शिक्षण के पश्चात औपचारिक शिक्षा हेतु गुरूकुल में बालकों का प्रवेश किया जाता था। जिसमें उन्हे वेदों का अध्ययन कराया जाता जो बालको का मुख्य पाठ्यक्रम होता था जिसके अन्तर्गत प्रारंभ में '' त्रयी वेद '' अर्थात् ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद का अध्ययन किया जाता है तदान्तर अथर्ववेद को भी जोड़कर नया पाठ्यक्रम अर्थात् चारो वेदो का पठन पाठन किया जाने लगा । विद्यार्थी वैदिक ग्रंथों को अच्छी तरह कण्थस्थ करते थे छंद शास्त्रो का अध्ययन करने के साथ–साथ विद्यार्थियों को काव्यों की रचना हेतु भी प्रेरित किया जाता था। उपनयन संस्कार के अंतर्गत ही वैदिक संहिताओं, वेदांगों याज्ञिक विधाओं आदि के अतिरिक्त पराविधा तथा ब्रम्हविधा भी अध्ययन के अंग थे जिसका उल्लेख उपनिषदों में भी मिलता है। इसके साथ ही साथ वेद, इतिहास , पुराण, व्याकरण विधा, छंद विधा, वाक्योवाक्यम, निरूक्त छन्द शास्त्र , ज्योतिष राशि, एकायन विधा जैसे विभिन्न विषयों की शिक्षा उच्च शिक्षा के अंतर्गत प्रदान की जाती। वास्तव में यह शिक्षा मौखिक अधिक होती थी क्योंकि वेदों को लिपिबद्ध नहीं किया जाता था लेकिन उसके बाद भी बालकों को लिपि का समुचित ज्ञान कराया जाता था जिसके लिए भोजपत्र एंव ताड़पत्रों का इस्तेमाल किया जाता था , जिस पर आचार्य मयूर पंखों से लेखक कार्य किया करते थे।

गुरूकुल में शिक्षण कार्य का भी एक सत्र हुआ करता था शिक्षा का प्रारंभ अर्धवार्षिक तथा वार्षिक अवधि निर्धारित होती जिसे ''उपागम'' तथा ''उत्सर्जन'' संस्कार से संबोधित किया जाता था। शिक्षण सत्र मुख्यतः पाँच या छः मास का उपागम अर्थात् वेदाअभ्यास प्रारंभ करना एंव उत्सर्जन अर्थात् वेदाअभ्यास से विराम या किसी ऋतु विशेष में वेदाअध्यय का त्याग जिसे धर्मसूत्र में समापन भी कहा गया। इस प्रकार उपनयन संस्कार के अंतर्गत उच्च शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी अपना मानसिक व शारीरिक दोनों ही स्तर पर समाज का एक जिम्मेदार नागरिक बन पाता। इसके साथ ही विषय की समाप्ति के पश्चात् परीक्षा भी हुआ करती थी जो कि आमतौर पर मौखिक हुआ करती थी, वास्तव में यह परीक्षा किसी एक दिन विशेष की ना होकर प्रतिदिन गुरू द्वारा ली जाने वाली परीक्षा होती थी क्योंकि वैदिक काल में बालक आचार्य के सीधे संपर्क में रहता था तथा गुरू विद्यार्थियों की प्रतिभा, योग्यता तथा उत्कृष्ठता का सदैव अवलोकन करता था। कभी कभी स्नातक शिष्यों को विद्वत मंडली में उपस्थित किया जाता था जहाँ शिष्य, वादविवाद शास्तार्थ आदि में भाग लेकर स्वंय की योग्यता का परिचय तथा गुरूकुल के सम्मान की वृद्धि कर उत्कृष्ट प्रदर्शन करता।

<u>वैदिक काल में नारी शिक्षण</u> :– वैदिक काल में नारियों का सम्मान मर्यादायुक्त था तथा उनकी सामाजिक और धार्मिक स्थिति पुरूषों के समकक्ष भी वैदिक काल में नारियों की स्थिति का ज्ञान हमें वैदिक संहिताओं उपनिषदों से होता है। इस युग में पुत्रियों

को पुत्रों के समान अधिकार प्राप्त होते थे , उनको भी उपनयन, शिक्षा दीक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त था। वैदिक शिक्षा मुख्यतः धार्मिक और याज्ञिक होने के कारण स्त्रियों को भी यज्ञ संपादित करने का अधिकार था पत्नी अपने पति के साथ सहचरी रूप से यज्ञ का भाग बनती, यज्ञ करने हेतु निश्चित ही वेदों की ऋचाओं का ज्ञान आवश्यक था इसके लिए निश्चित रूप से स्त्रियों को शिक्षा दीक्षा प्राप्त होती थी। उपनयन संस्कार के अंतर्गत स्त्रियों जनेव भी धारण कर सकती थी व ब्रम्हचर्य का पालन करते हुए अपनी शिक्षा प्राप्त करती थी तथा ब्रम्हचारिणी का जीवन जीतीं थी। इस काल में वह अपनी शारीरिक व बौद्धिक क्षमता का विकास करते हुए संस्कृति तथा धर्म संबंधी अध्ययन करते हुए अपने भावी गृहस्थ जीवन को शुद्ध बना सकती थी। वैदिक काल में पुत्रियां अपने दाय भाग के लिए दावा कर सकती थी तथा न्यायालय में उपस्थित होकर अपना पक्ष रख सकती थी इसके अलावा वे सार्वजनिक समारोह में हिस्सा ले सकती थी जो उनके शिक्षित होने का पर्याप्त सबूत देते हैं। ऐसी कई विदूषी नारियां हुई हैं जिन्होनें ना केवल वेदाभ्यास किया अपितु वेदों के ऋचाओं की रचना भी की। अपाला, व्योपाकाक्षीवति, लोपामुद्रा, निवावरि, सिकता कुछ विदूषियाँ ने ऋगवेद की ऋचाएं तक रच डाली रोमसा , उर्वशी भी हुई, उनके द्वारा रचित मंत्र वैदिक साहित्यों में सम्मिलत किए गए ।

वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था व शूद्र शिक्षा :–

वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था पर नजर डाले तो हम देखते हैं कि संपूर्ण समाज का दो भागों में विभाजन वर्गीय एंव सांस्कृतिक मात्र था। उत्तर वैदिक काल में आर्य और अनार्य का विरोध और द्विवर्ण समाप्त हो चुका था उसके स्थान पर चतुर्वण्य का उल्लेख मिलने लगा। त्रिस्तरीय तथा ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य तथा रथकार जिन्हें वर्षा ऋतु में यज्ञ कराने का अधिकार प्राप्त था इससे स्पष्ट होता हैं कि वे अन्य तीन जातियां से भिन्न थी ये शूद्र नहीं थे अपितु उच्च जातियां से निम्न श्रेणी के अवश्य थें, किंतु वे पाणिनी की रचना में शूद्र कहलाएं। वैदिक समाज में शूद्रों को भी उचित स्थान प्राप्त था। सामान्यतः प्राचीन भारतीय आचार्यों के अनुसार शूद्रों को विशिष्ट सेवा द्विजातियों की करना तथा उनसे भरण पोषण पाना था। किंतु फिर भी वैदिक काल में शूद्रों को अत्यधिक निम्न नहीं माना गया उन्हें वैदिक साहित्य पढ़ने का अधिकार था वैस्तरीय संहिता अनुसार कहा गया ''हमारे ब्राम्हणों में प्रकाश भरों, हमारें मुख्यों (राजाओं) में प्रकाश भरों वैश्यों एंव शूद्रों में प्रकाश भरों और अपने प्रकाश से मुझसे भी प्रकाश भरो '' इसी आधार पर डॉ शर्मा ने यह मत रखा कि प्रारंभ में शूद्र का भी उपनयन संस्कार होता रहा होगा हालांकि इस युग के कई ऐसे विद्वान हुए जो अपनी विद्वता के कारण पूजजीय हुए । इतर शूद्र से उत्पन्न आचार्य ''महिदास'' ऐतरेय ने ''ऐतरेय' ब्राम्हमण की रचना की। श्वपाक नारी से पाराशर ऋषि, धीवर कन्या से व्यास ऋषि गणिका से वशिष्ट चांडाल नारी से कपि जाबाद एंव नाविक स्त्री से उत्पन्न ऋषि मदनपाल शूद्र होते हुए भी समाज में अपनी विद्वता के कारण पूजनीय थे। इस प्रकार उत्तर वैदिक युग तक उपनयन संस्कार से वंचित होने पर भी शूद्रों को शिक्षा का अधिकार पूरी तरह से छीना नहीं गया था।

निष्कर्ष :– वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था अपने आप में भारतीय शिक्षा व्यवस्था की पहचान है जो प्राचीनतम होने के साथ ही साथ महानतम भी है। वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था बालकों को केवल शब्द ज्ञान नहीं कराती अपितु उसे भावी जीवन में होने वाली व्यवहारिक कठिनाइयों के प्रति सचेत करते हुए शिक्षित करती हैं। वैदिक काल में शिक्षा के अंतर्गत संपूर्ण विकास का कार्य किया जाता जो बालक की प्रारंभिक शिक्षा से प्रारंभ होकर उपनयन संस्कार के अंतर्गत उच्च शिक्षा की ओर ले जाती।

जिसमे नारियों को भी समान अधिकार प्रदान करते हुए शिक्षा से वंचित नहीं किया गया। यहां तक की वैदिक काल में शूद्रों को भी शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था, इस प्रकार एक सहज व्यवस्था होते हुए भी वैदिक कालिन शिक्षा व्यवस्था महानतम शिक्षा पद्धति थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1) वृहदारण्यक उपनिषद 5.2.1
2)अ.स.अल्तेकर, प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्ति पृ. 202
3) वृहदाण्यक उपनिषद 6.2.7.1
4) आचार्य कुल वासिन। छान्दोग्य उपनिषण 2.23.2.1
5) अपनयनमानो ब्रम्हाचाारिणम्। अथर्ववेद 11.531
6) पी. वी. काणे धर्मशास्त्र का इतिकास पृ. 206
7) तेत्तिरीय संहिता 7.5.161
8) R.K. Mukerji, Ancient Indian Education.P.6